


















तमिऴ्

शिलप्पदिहारम्

लिप्यन्तरण एवं अनुवाद

आचार्य ति० शेषाद्रि
एम० ए० (भाषासेतु चक्रवर्तिन्)

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

मौसम बाग (सीतापुर रोड), लखनऊ—२२६ ०२०



'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की वानी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥'

प्रथम संस्करण— १९९० ई०

आकार— २२×३६÷१६ (डबल डिमाई)

पृष्ठसंख्या— ४४४

मूल्य— ६०.०० रुपया

मुद्रक:—
वाणी प्रेस
मौसम बाग (सीतापुर रोड), लखनऊ-२२६ ०२०

विश्वनागरी लिपि

॥ ग्रामे-ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे-ग्रामे कथा शुभा ॥

सब भारतीय लिपियाँ सम-वैज्ञानिक है।

All the Indian Scripts are equally scientific.

भारतीय लिपियों की विशेषता।

'संसार की लिपियों में नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक है', यह कथन बिलकुल ठीक है। परन्तु यह कहते समय हमें याद रखना चाहिए कि वह सर्वाधिक वैज्ञानिकता, केवल हिन्दी, मराठी, नेपाली लिखी जानेवाली लिपि में नहीं, वरन् समस्त भारतीय लिपियों में मौजूद है। क, च, त, प आदि के रूपों में कोई वैज्ञानिकता नहीं है। वैज्ञानिकता है, लिपि का ध्वन्यात्मक होना। स्वरों-व्यंजनों का पृथक् होना। अधिक से अधिक व्यंजनों का होना। सबको एक 'अ' के आधार पर उच्चरित करना। ['अ' अक्षर-स्वर, सकल अक्षरों का इस भाँति मूल आधार। सकलविश्व का जिस प्रकार 'भगवान्' आदि है जगदाधार।] एक अक्षर से केवल एक ध्वनि। एक ध्वनि के लिए केवल एक अक्षर। स्माल्, कैपिटल्, इटेलिक्स् के समान अनेकरूपा नहीं; बस एक ही रूप में लिखना, बोलना, छापना और प्रत्येक अक्षर का समान वजन पर एकाक्षरी नाम। उच्चारण-संस्थान के अनुसार अक्षरों का

तमिऴ-देवनागरी वर्णमाला

அ अ क	ஆ आ का	இ इ कि	ஈ ई की
உ उ कु	ஊ ऊ कू	எ ऎ कॆ	ஏ ए के
ஐ ऐ कै	ஒ ऒ कॊ	ஓ ओ को	ஔ औ कौ
ஃ अक्			
க क	ங ङ	ச च	ஞ ञ
ட ट	ண ण	த त	ந न
ப प	ம म	ய य	ர र
ல ल	வ व	ழ ऴ, ऴ	ள ळ
ற ऱ, ऱ	ன ऩ, ऩ	ஷ ष	ஸ स
ஹ ह	ஜ ज	க்ஷ क्ष	

कवर्ग, चवर्ग आदि मे वर्गीकरण। फिर प्रत्येक वर्ग के अक्षरो का क्रम से एक ही सस्थान मे थोड़ा-थोड़ा ऊपर उठते हुए अनुनासिक तक पहुँचना, आदि-आदि ऐसे अनेक गुण है, जो अभारतीय लिपियों मे एकत्र, एकसाथ नहीं मिलते। किन्तु ये गुण समान रूप से सभी भारतीय लिपियो में मौजूद है, अतः वे सब नागरी के समान ही विश्व की अन्य लिपियो की अपेक्षा 'सर्वाधिक वैज्ञानिक' है। सब ब्राह्मी लिपि से उद्‌भूत है। ताडपत्र और भोजपत्र की लिखाई तथा देश-काल-पात्र के अन्य प्रभावों के कारण विभिन्न भारतीय लिपियों के अक्षरो के रूप में यत्र-तत्र परिवर्तन, हिन्दी वाली 'नागरी लिपि' को कोई श्रेष्ठता प्रदान नही करता। भारत की मौलिक सब लिपियाँ 'नागरी लिपि' के समान ही श्रेष्ठ है।

नागरी लिपि को 'भी' अपनाना श्रेयस्कर क्यों ?

"नागरी लिपि" की केवल एक विशेपता है कि वह कमोवेश सारे देश में प्रविष्ट है, जबकि अन्य भारतीय लिपियाँ निजी क्षेत्रों तक सीमित है। वही यह भी सत्य है कि नागरी लिपि में प्रस्तुत हिन्दी (खड़ी बोली) का साहित्य, अन्य लिपियों मे प्रस्तुत ज्ञानराशि की अपेक्षा कम और नवीनतर है। अतः समस्त भाषाओ की ज्ञानराशि को, सर्वाधिक फैली लिपि "नागरी" में अधिक से अधिक लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से उठाकर सबको सारे राष्ट्र मे, यहाँ तक की विश्व में ले आना परम धर्म है। विश्व की सब भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान (सत्साहित्य) तो है आत्मा, और 'नागरी लिपि' होना चाहिए उसका पर्यटक शरीर।

अन्य लिपियों को बनाये रखना भी कर्तव्य है।

वस्तुतः यह परम धर्म है कि समस्त सदाचार साहित्य को नागरी मे तत्परता से प्राचुर्य में लिप्यन्तरित करना। किन्तु साथ ही यह भी परम धर्म है कि देशी-विदेशी अन्य सभी लिपियों को उत्तरोत्तर उन्नति के साथ बरकरार रखना। यह इसलिए कि सबका सब कभी लिप्यन्तरित नही हो सकता। अतः अन्य लिपियों के नष्ट होने और नागरी लिपि मात्र के ही रह जाने से विश्व की समस्त अ-लिप्यन्तरित ज्ञानराशि उसी प्रकार लुप्त-सुप्त होकर रह जायगी, जैसे पाली, प्राकृत और अपभ्रश, सुरयानी आदि का वाङ्‌मय रह गया। जगत् तो दूर राष्ट्र का ही प्राचीन आप्तज्ञान विलुप्त हो जायगा।

नागरी लिपि वालों पर उत्तरदायित्व विशेष !

इन दोनों परम धर्मों की पूर्ति का सर्वाधिक भार नागरी लिपि वालों पर है, इसलिए कि उनको 'सम्पर्क लिपि' का श्रेष्ठ आसन प्रदत्त है। मैं कह सकता हूँ कि उन्होंने अपने कर्तव्य का, जैसा चाहिए था, वैसा निर्वाह नही किया। परन्तु उसकी प्रतिक्रिया में अन्य लिपि वालों को भी "अपराध के जवाब में अपराध" नही करना चाहिए। 'कोयला' बिहार का है अथवा बंगाल का है, इसलिए हम उसको नही लेंगे, तो वह हमारे ही लिए घातक होगा। कोयले की क्षति नही होगी। अपनी लिपियों को समुन्नत रखिए, किन्तु नागरी लिपि को 'भी' अवश्य अपनाइए।

उपर्युक्त परिवेश में नागरी लिपि का पठन और समग्र श्रेष्ठ साहित्य का नागरी में लिप्यन्तरण तो आवश्यक है ही, किन्तु अन्य लिपियाँ भी अपनी लिपि में दूसरी भाषाओं के सत्साहित्य को लिप्यन्तरित तथा अनूदित कर सकती है। 'अधिकस्य अधिकं फलम्।' ज्ञान की सीमा निर्धारित नही है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने भी अवधी के रामचरितमानस को ओड़िआ भाषा में गद्य एवं पद्य अनुवाद-सहित, ओड़िआ लिपि में लिप्यन्तरित किया है। परन्तु सम्पर्क और एकीकरण की दृष्टि से 'नागरी लिपि' अनिवार्य है।

नागरी लिपि की वैज्ञानिकता मानव-मात्र की सम्पत्ति है।

अब एक कदम आगे बढ़िए। भारतीय लिपियो की सर्वाधिक वैज्ञानिकता, युगों की मानव-शृंखला के मस्तिष्क की उपज है। क्या मालूम अनादि से चल रहे इस जगत् में कब, क्या, किसने उत्पन्न किया? भारत संयोग से इस समय इस विज्ञान का कस्टोडियन् है, स्रष्टा नही। भारत भी न जाने कब, कहाँ तक और कितना था? अतः हम भारतीयों को नागरी लिपि के स्वामित्व का गर्व नही होना चाहिए। वह आज के मानव के पूर्वजों की देन है, सबकी सम्पत्ति है, सकल विश्व उसका समान गौरव से उपयोग कर सकता है। हमारा 'अहम्' उस लिपि की उपयोगिता को रुद्ध कर देगा, जिसके हम सँजोये रखनेवाले मात्र है। किन्तु विदेशो में बसनेवाले बन्धुओ को भी नागरी लिपि के गुणों को अपने ही पूर्वजो की उपज मानकर परखना चाहिए। ये गुण इस निबन्ध के प्रथम अनुबन्ध में अधिकाशतः वर्णित है। न परखने पर, उनकी क्षति है, विश्व की क्षति है। अरब का पेट्रोल हम नही लेंगे, तो क्षति किसकी होगी? पेट्रोल की नही, अपनी ही।

फिर याद दिला देना जरूरी है कि क, प आदि रूपों में वैज्ञानिकता नही है। बे, काफ, पे और के, पी जैसे ही रूप रख सकते है, किन्तु लिपि में 'अनुबन्ध प्रथम' में ऊपर दिये हुए गुणों और क्रम को अवश्य ग्रहण करें। और यदि एक बनी-बनाई चीज को ग्रहण करके सार्वभौम सम्पर्क में समानता और सरलता के समर्थक हो, तो 'नागरी लिपि' के क्रम को अपनी पैतृक सम्पत्ति मानकर, गैर न समझकर, मौजूदा रूप में भी ग्रहण कर सकते है। वह भारत की बपौती नही है। आज के मानव के पूर्वजों की वह सृष्टि है। इससे विश्व के मानव को परस्पर समझने का मार्ग प्रशस्त होगा।

नागरी लिपि में अनुपलब्ध विशिष्ट स्वर-व्यञ्जनों का समावेश।

हर शुभ काम में कजी निकालनेवाले एक दूर की कौडी यह भी लाते है कि "नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक होते हुए भी अपूर्ण है और अनेक स्वर-व्यजनों को अपने में नही रखती। उनको लिपि में कहाँ तक और कैसे समाविष्ट किया जाय?" यह मात्र तिल का ताड़ है। मौजूदा कर्तव्य को टालना है।

अलबत्ता अन्य भाषाओं में कुछ व्यंजन ऐसे है जो नागरी में नहीं है— किन्तु अधिक नही। भारतीय भाषा उर्दू की क़ ख़ ग़ ज़, फ़ ये पाँच ध्वनियाँ तो बहुत समय से नागरी लिपि में प्रयुक्त हो रही है। दुःख

है कि आजादी के बाद से राष्ट्रभाषा के पक्षधर ही उनको ग़ायब करने पर लगे है। इसी प्रकार मराठी ळ है। इनके अतिरिक्त अरबी, इब्रानी आदि के कुछ व्यञ्जन है, किन्तु उनको नागरी की दैनिक लिपि में, अनिवार्यत: रखना आवश्यक नही। विशिष्ट भाषाई कार्यो में, जरूरी मानकर, उन विशिष्ट भाषाई स्वर-व्यंजनों को चिह्न देकर दरसाया जा सकता है।

अंग्रेज़ी—व्यामोह भी ! आदर्श भी !

अंग्रेज़ी की लिपि-जैसी पंगु लिपि शायद ही संसार में कोई हो। 'डब्लू'— तीन अक्षर, चार मात्राएँ, किन्तु वास्तविक ध्वनि (व) का लोप ! शब्दावली इतनी निरीह कि उसमें ८०% से अधिक शब्द विदेशी भाषाओ के है। अपनी छोटी-सी धरती पर यह ग़रीब भाषा, फ्रेंच शाहशाही के आ धमकने पर, अपने फ्रेंच-भक्त अंग्रेज बन्धुओं ही द्वारा लताडी गई, जैसे हमारे अंग्रेजी-भक्त भारतीय उसी शान में राष्ट्रभाषा का तिरस्कार करते हैं। वे अंग्रेज़ी से नसीहत ले कि दुर्दशाग्रस्त, पंगु लिपि पर आधारित, शब्द-निर्धन होकर भी कैसे हौसला कायम रखकर उसने विश्व-साम्राज्य स्थापित किया। उस हौसले को आदर्श मानकर अपनी समृद्ध राष्ट्रलिपि और राष्ट्रभाषा को और अधिक समृद्ध करके विश्वसम्मान दिलाये।

तदर्थ अरबी लिपि का आदर्श सम्मुख।

और यह कोई नयी बात नहीं। नितान्त अपरिवतनशील कहे जाने वालों की लिपि 'अरबी' में केवल २७-२८ अक्षर होते है। भाषा के मामले में वे भी अति उदार रहे। "अिल्म चीन (अर्थात् दूर से दूर) से भी लाओ"— यह पैगम्बर (स०) का कथन है। जब ईरान में, फारसी की नई ध्वनियों-च, प, ग आदि से सामना पड़ा तो उन्होने उनको अरबी-पोशाक— चे, पे, गाफ पहना दी। जब हिन्दोस्तान आये तो ट, ड, ड़ आदि से सामना पड़ने पर अरबी ही जामे में टे, डाल, ड़े आदि तैयार कर लिये। यहाँ तक कि सिन्धी में नागरी के सब महाप्राण और अनुनासिक तथा सिन्धी के विशिष्ट अन्त:स्फुट चार अक्षरो को भी अरबी का लिबास पहना दिया गया। फिर 'नागरी' वाले तो औदार्य का दावा करते है, उनको परेशानी क्या है ? फिर नागरी में भी तो परिवर्तन होते रहे है। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र में प्रयुक्त ळ को छोड़ चुके है, और ड़, ढ़ आदि को अवर्गीय दशा मे जोड़ चुके है। नागरी लिपि मे कुछ ही व्यंजनो का अभाव है। उनमें से कुछ को स्थायी तौर पर और कुछ को अस्थायी प्रयोग के लिए गढ़ सकते है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने यह सेवा निष्ठा, सफलता और सुन्दरता से की है।

स्वर और प्रयत्न (लहजा) का अन्तर।

अब रहे स्वर। जान लीजिए कि प्रमुख स्वर तीन ही है— अ, इ, उ— उनसे दीर्घ, संयुक्त (डिफ्थांग) आदि बनते है। अतिदीर्घ, प्लुत, लघु, अतिलघु संवृत, विवृत आदि विश्व में अनेक रूपों में बोले जाते है। भारतीय वैदिक एवं संस्कृत व्याकरण में अनेक है। वे स्वतंत्र स्वर नही है, प्रयत्न है,

लहजा हैं। वे सब न लिखे जा सकते हैं, न सब सर्वत्र बोले जा सकते हैं। डायाक्रिटिकल मार्क्स कोशों में छाप-छापकर चमत्कार भले ही दिखा दिया जाय, प्रयोग में तो, "एक ही रूप में", अपने निजी शब्द निजी देशों में भी नही बोले जाते। स्वर क्या, व्यंजन तक। एक शब्द "पहले" को लीजिए। सब जगह घूम आइए, देखिए उसका उच्चारण किन-किन प्रकार से होता है। एक बिहार प्रदेश को छोड़कर कही भी "पहले" का शुद्ध उच्चारण सुनने को नही मिलेगा। पंजाब, बंगाल, मद्रास के अंग्रेजी के उद्‌भट विद्वान् अंग्रेजी में भाषण देते हैं—उनके लहजे (प्रयत्न) बिलकुल भिन्न होते है। फिर भी न उनका उपहास होता है, न अंग्रेजी भाषा का ह्रास।

शास्त्र पर व्यवहार को वरीयता (तर्जीह)।

शास्त्र और विज्ञान से हमको विरोध नही। लिपि की रचना, शोध, परिमार्जन, देश-काल-पात्र के अनुसार करते रहिए, परन्तु व्यवहारिकता को अवरुद्ध मत कीजिए। खाद्य पदार्थ के तत्त्वों का गुण-दोष, परिमाण, संतुलन, न्यूनाधिक्य, और खानेवाले की शक्ति के साथ उनका समन्वय, यह सब स्तुत्य है, कीजिए। किन्तु ऐसा नही कि उस शोध-समीक्षा के पूर्ण होने तक कोई भूखा रहकर मर ही जाय। थाली रखी है, उसे भोजन करने दीजिए। परस्पर एक-दूसरे की ज्ञानराशि को समझने के लिए सम्पूर्ण राष्ट्र में एक सम्पर्क लिपि का प्रयोग ही आज की सर्वोपरि आवश्यकता है।

'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने स्थायी और मुकामी तौर पर अनेक स्वर-व्यंजनों की सृष्टि की है। दक्षिणी वर्णमालाओं मे एकार तथा ओकार की ह्रस्व, दीर्घ —दोनों मात्राएँ हिन्दी मे बोलते हैं, किन्तु पृथक् लिखते नही। जहाँ आवश्यकता हो, उन्हे पृथक् दर्शाइये। समस्त भाषाओं के ज्ञान-भण्डार को निजी क्षेत्रों से उठाकर धरातल पर नागरी लिपि के माध्यम से पहुँचाइए। भारतीय लिपि मानव के पूर्वजों की सृष्टि है, मानव मात्र की है। यहाँ से यूरोप तक उसकी पहुँच है। यूरोपियों की लिपि-शैली नागरी थी। अक्षरों के रूप कुछ भी रहे हों। किन्ही कारणों से सामीकुलों में भटककर अलफ़ा-बीटा के क्रम को थोड़े अन्तर के साथ अपना लिया। फिर पुराने संस्कारो से याद आया, तो स्वर-व्यंजन पृथक् कर दिये। किन्तु उनके क्रम-स्थान जैसे के तैसे मिले-जुले रहे। सामीकुल की भाषाओं ने भी प्रमुख स्वर तीन ही माने है, जबर-ज़ेर-पेश (अ इ उ)। और ौ का उच्चारण अरबी, संस्कृत, ग्रीक, अपभ्रंश आदि का एक-जैसा है— (आइ, आउ)। किन्तु खड़ी बोली हिन्दी-उर्दू के ऐ, और औ, ऐनक, औरत-जैसे। यह स्वरों की भिन्नता नही है, वरन् लहजा (प्रयत्न) की भिन्नता है।

पूर्ण वैज्ञानिक कोई वस्तु मनुष्य के पल्ले नही पड़ सकती। "पूर्ण विज्ञान" भगवान् का नाम है। सा-रे-ग-म-प-ध-नि, ये सात स्वर; उनमें मध्य, मन्द, तार; कुछ में तीव्र, कोमल—बस, इतने में भारतीय संगीत बँधा है। उनमें भी कुछ तो अदा नहीं हो सकते, अनुभूति मात्र हैं। किन्तु क्या इतने ही स्वर है ? संगीत के स्वरों का उनके ही बीच में अनंत विभाजन

हो सकता है। जैसे अणु मे परमाणु का, और उसमें भी आगे। किन्तु शास्त्र एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी। व्यवहार में उपर्युक्त षडज से निषाद तक को पकड़ मे लाकर संगीत क़ायम है, क्या उसको रोककर इनके मध्य के स्वरों को पहले तलाश कर लिया जाय? तब तक संगीत को रोका जाय, क्योकि वह पूर्ण नही है? क्या कभी वह पूर्ण होगा? पूर्ण तो 'ब्रह्म' ही है। "बॅस्ट् इज् द ग्रेटॅस्ट् अनिमी ऑफ् गुड्।" शगल-शोब्दों की आड़ न ले। भारतीय लिपियो की प्रतिनिधि नागरी लिपि पर्याप्त सक्षम है।

विश्व-व्यापकता के संदर्भ में नागरी लिपि के स्वरों का रूप।

लिखने के भेद— यदि नागरी को हिन्दी क्षेत्र की ही लिपि बनाये रखना है तो इ, उ, ए, ऐ लिखने के अपने पुरानेपन के मोह में मुग्ध रहिए। और यदि उसे राष्ट्र-लिपि अथवा विश्व तक में, यहाँ तक कि सामीकुल में भी आसानी से ग्राह्य बनाना चाहते है तो गुजराती लिपि की भाँति अि, अु, अे, अै लिखिए। किन्तु कोई मजबूर नही करता। विनोबा जी ने भी इसका आग्रह नही रखा। आकार और रूप का मोह व्यर्थ है। पुराने ब्राह्मी-शिलालेखो को देखिए। आपके मौजूदा रूप वहाँ जैसे के तैसे कहाँ है?

संस्कृत के तिरस्कार से भाषा-विघटन।

मेरा स्पष्ट मत है कि "संस्कृत" राष्ट्रभाषा होने पर, भाषा-विवाद ही न उठता। सबको ही (हिन्दी-भाषी को भी) समान श्रम से संस्कृत सीखने पर, स्पर्धा-कटुता का जन्म न होता, संस्कृत का अपार ज्ञान-भण्डार सबको प्रत्यक्ष होता, और हिन्दी की पैठ में भी प्रगति ही होती। उर्दू-हिन्दी की अपेक्षा, अन्य सभी भारतीय भाषाएँ, संस्कृत के अधिक समीप हैं। संस्कृत देश-काल-पात्र के प्रभाव से मुक्त, अव्यय (कभी न बदलनेवाली), सदाबहार भाषा है। अन्य सब भाषाएँ देश-काल-पात्र के प्रभाव से नही बचती।

आज क्या करना है?

किन्तु संस्कृत राष्ट्रभाषा न होने पर अब "हिन्दी" ही सबको मान्य होना चाहिए। यह इसलिए कि अन्य भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एक भारतीय भाषा है, जो देश के हर स्थल मे कमोबेश प्रविष्ट है।

सार यह कि हुज्जत कम, काम होना चाहिए। शास्त्र पर व्यवहार प्रबल है। समय बडा बलवान है, वह आवश्यकतानुसार ढलाई कर देता है। हिन्दी-क्षेत्र मे ही घूम-घूमकर प्रतिमा-अनावरण, हिन्दी का महिमा-गान, अनुवादों की धूम, अमुक भाषा की हिन्दी को यह देन, अमुक भाषा में हिन्दी की यह छाप— यह सब दिशाविहीनता, किलेबन्दी और अभियान त्यागकर, नागरी लिपि मे विश्व का साहित्य लाइए। टूटी-फूटी ही सही, हिन्दी बोलना भी— ("ही" नही बल्कि "भी") बोलने का अभ्यास कीजिए। लिपि और भाषा की सार्थकता होगी। मानवमात्र का कल्याण होगा। हमारी एकराष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व चरितार्थ होगा।

(स्व०) नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)
(भू० पू०) मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-२०।

समर्पण

पद्मश्री नंदकुमार अवस्थी जी !

आप ही ने मुझे गर्द से निकाला

और काँच का हीरा बनाया !

फिर आपकी कृपा थी



स्व० नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)

कि विद्वज्जन-हार का मनका बनाया

आपने सुझाव दिया, प्रेरणा दी

और पथ-प्रदर्शन किया !

तभी यह शिलप्पदिहारम् का अनुवाद

मूल तमिऴ् के नागरी लिप्यंतरण सह

पूरा हुआ है !

मेरा यह अनुभव रहा है कि

आपकी तपोभूत-संकल्पशक्ति का जादू है

जिससे मेरे द्वारा यह महान कार्य संपन्न है !

पर क्या कहूँ ? मन रोता है !

आप अब नहीं रहे— पर आपकी

स्मृति है, यश है, साधना का प्रकाश है !

अब आप देवता-रूप में है।

कृपा करके इसे स्वीकार करें।

यह आपका ही आपको

सविनय समर्पित करता हूँ।

मदुरै
२७ मार्च १९९०

ति० शेषाद्रि

आशीर्वाद

महामहिम सी० सुब्रह्मण्यम्,
(संप्रति राज्यपाल, महाराष्ट्र)
भूतपूर्व वित्त-मन्त्री, केन्द्र सरकार

मद्रास—३१-१-१९९०



सी० सुब्रह्मण्यम्

प्रिय प्रो० शेषाद्रि—

सुप्रसिद्ध तमिळ कृति शिलप्पदिहारम का हिन्दी मे अनुवाद, हिन्दी जानने वाले लोगों के लाभार्थ प्रस्तुत करने के आपके प्रयास के लिए मेरी वधाइयाँ। मुझे आशा तथा विश्वास है कि आपका अनुवाद मूल काव्य के सार को सफल रूप से अभिव्यक्त करेगा।

आपका
(ह०) सी० सुब्रह्मण्यम्

(उनका अंग्रेजी पत्र यहाँ प्रस्तुत है।)

Dear Prof. Seshadri, Madras 31-1-1990

....My Congratulations for your effort to provide the Hindi Translation of the famous Tamil work Silappadhikaram for the benefit of the Hindi knowing people. I hope and turst that your translation brings out the essence of the original.

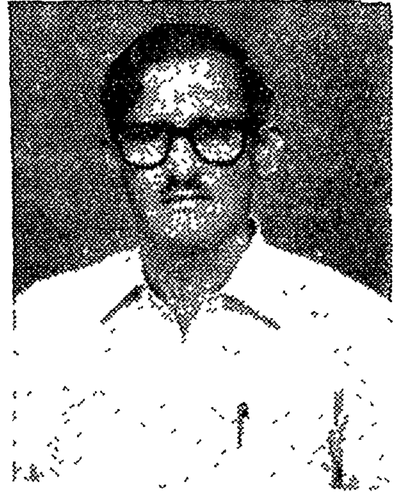
Yours Sincerely
(Sd.) C. Subramaniam.

"अभिनन्दन"

मु० गु० जगन्नाथ राजा।

कवि, बहु-भाषाविद तथा अध्यक्ष, मणिमेहलै मन्ऱम्, राजपालयम्।

(जगन्नाथ राजा विख्यात 'राजा' जाति के हैं। उस जाति के लोग, कहा जाता है, तेलुगु प्रदेश से आकर तमिलनाडु में बस गये। राजा लोग, राजनीति, उद्योग, शिक्षा आदि सभी क्षेत्रों में आगे है। जगन्नाथ जी उद्भट विद्वान् हैं और उन्हें पाली, संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान है। तेलुगु तो उनकी मातृभाषा है और उसके वे विद्वान भी है। तमिऴ् देशवासी होने के नाते तमिऴ् उनकी दूसरी मातृ-भाषा है और उसमें उनकी कई उत्कृष्ट पुस्तके छपी हैं। उनकी रचनाओ में कविता, निबंध आदि है। अभी इस साल साहित्य अकादमी ने उन्हे उनके कृष्णदेव-राय की काव्य-कृति आमुक्त-माल्यदा (जो तमिऴ् देश की मीरा जैसी भक्तिन आण्डाळ् का विवेचनापूर्ण चरित्र है) के तमिऴ् में अनुवाद के लिए पुरस्कृत किया है। वे मणिमेहलै तथा शिलप्पदिहारम् का खूब तथा गहरा अध्ययन कर चुके है।)



मु० गु० जगन्नाथ राज।

सुप्रसिद्ध आचार्य शेषाद्रि जी भाषा-सेतु चक्रवर्तिन् है। (भाषा-सेतु निर्माण के कार्य में काफ़ी योगदान देनेवाले है।) उनके पहले ही प्रकाशित कम्बरामायण तथा भारदियार् कविदैहळ के अनुवाद हिन्दी साहित्य के सहृदयों को उपलब्ध अमूल्य रत्न हैं। अब शेषाद्रि जी ने तमिऴ् भाषा के मौलिक तथा जुड़वे काव्यो (मणिमेखलै और शिलप्पदिहारम्) में से एक शिलप्पदिहारम् का हिन्दी में अनुवाद किया है। मैंने मूल ग्रंथ तथा हिन्दी अनुवाद दोनो का परिशीलन किया। मेरी राय है कि यह अनुवाद मूल के अनुसार है और सुबोध है।

अनुवाद करना एक कला है। कुछ लोग अनुवाद में मूलग्रथ की भाषा के सौंदर्य को छोड़ देते हैं। केवल भावो को व्यक्त करते है। अन्य कुछ लोग

भावों को छोडकर भापा की सजधज मे लगे रहते है। अनुवाद अच्छा होना हो तो उसमें भापा तथा भाव दोनो का समान रूप से सम्मान रहना चाहिए। आचार्य शेपाद्रि जी का अनुवाद मूल काव्य की भापा का परिचायक होने के साथ-साथ भाषा तथा भाव दोनो के सौदर्य का बोधक रहता है।

काव्य इतिवृत्तात्मक है और शैली तथा कथा को अधिक सुबोध बनाने के निमित्त गाथा को उपशीर्षको के अन्तर्गत प्रकरणो में विभक्त किया गया है। मूल ग्रथ मे उपशीर्षक नही पाये जाते। (हर अध्याय की सारी गाथा बराबर चलती रहती है।) तो भी अनुवाद मे किया गया यह विभाजन उचित ही है। रसास्वादन मे तथा कथा को समझने, स्मरण रखने में अधिक सहायक रहता है।

द्रविड भापाओ का कवि-सप्रदाय (काव्य परिपाटी या प्रणाली) तथा सस्कृत के आलकारिको का कवि-संप्रदाय अलग-अलग है। इस तथ्य का विवेचन करने के लिए यहाँ जगह नही है। द्रविड़ (तमिऴ्) कवि-संप्रदाय हिन्दी पाठको को सुपरिचित नही है। इसलिए मूल काव्य का वर्णन, ध्वनि योजना, 'औचित्य' आदि अलकार-गुण का चमत्कार अनुवाद में देना बहुत मुश्किल काम है। तो भी शेषाद्रि जी ने अनायास ही गद्यानुवाद होने से मूल काव्य के सौदर्य और चमत्कारो को अच्छी तरह दिखाया है। इसलिए मै उनका अभिनन्दन करता हूँ।

सन् १९८४ में मुझे भुवन वाणी के प्रतिष्ठाता पद्मश्री नदकुमार जी अवस्थी से लखनऊ में भेट करने का सौभाग्य मिला। तब मैने तमिऴ् के सर्वोत्तम मौलिक जुडवे काव्यो, शिलप्पदिहारम् और मणिमेखलै का हिन्दी में अनुवाद करने की जरूरत के सबध मे सुझाव दिया था। पद्मश्री ने मेरी बात मानी और शेपाद्रि जी ने मेरी अभिलाषा पूरी की। यह देखकर मै अतिशय आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ।

हिन्दी जाननेवाले लोग इसका समुचित स्वागत करेंगे, यह मेरा विश्वास है।

राजपालयम्
९-२-९०

इति शिवम्
(ह०) मु० गु० जगन्नाथ राजा
अध्यक्ष, मणिमेखलै मन्ऱम्
राजपालयम्
तमिऴ्नाडु

प्रकाशकीय

संसार की लिपियों में देवनागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक है। ऐसा कहते हुए गौरवान्वित होने के साथ-साथ हमें हठात् स्मृत हो जाता है कि संसार की विभिन्न लिपियों की अपेक्षा सभी भारतीय भाषाएँ एवं लिपियाँ वैज्ञानिकता में गुरुतर है। क, च, त, प आदि के रूपों में कोई वैज्ञानिकता नहीं है। वह तो निहित है लिपि की ध्वन्यात्मकता में, स्वरों-व्यंजनों के पृथक् होने में, अधिक से अधिक व्यञ्जनों के होने में और उच्चारण-संस्थान के अनुसार अक्षरो के कवर्ग, चवर्ग आदि में वर्गीकृत होने में। ये गुण अभारतीय लिपियों में समवेत होकर नही पाये जाते है, पर सभी भारतीय लिपियो में लश्य होकर उनकी गुरुता का उद्घोष करते है।

भारतीय लिपियों में 'नागरी लिपि' भले ही देश में व्याप्त अधिक हो, पर उसमें प्रस्तुत हिन्दी (खड़ी बोली) का साहित्य, अन्य लिपियों में प्रस्तुत ज्ञानराशि की अपेक्षा न्यून और नवीनतर है। अतः अन्य भारतीय भाषाओं में सन्निविष्ट ज्ञानराशि को, सर्वाधिक व्याप्त नागरी-लिपि में अधिकाधिक रूप में लिप्यन्तरित करके सभी को क्षेत्तीय स्तर से उठाकर राष्ट्रीय स्तर पर ले आना हमें सर्वथा अभीष्ट और उपादेय है। सुप्रसिद्ध तमिऴ कृति शिलप्पदिहारम् का सानुवाद नागरी लिप्यन्तरण इसी दिशा मे बढ़ा हुआ हमारा एक क़दम है।

इस अनुवाद-ग्रंथ मे प्रवेश करने से पूर्व पाठकों को दो बातो से अवगत होना आवश्यक है। पहली बात तमिऴ् भाषा की वर्णमाला की ध्वनि और लिपि से संबधित है। दूसरी अनुवाद की शैली के संबंध मे है।

वर्णमाला

(अ) तमिऴ् के बारह स्वर है :

"अ" "आ" "इ" "ई" "उ" "ऊ" "ऎ" "ए" "ऐ" "ऒ" "ओ" 'तथा' "औ"।

नोट—इसमे अ इ उ ऎ ऒ-ये पाँच एक मात्रा वाले ह्रस्व स्वर है; और आ ई ऊ ए ऐ ओ औ ये सात दो मात्राओ वाले दीर्घ स्वर है। 'इ' आदि की आधी मात्रा वाली ह्रस्व ध्वनियाँ भी है। पर उनके लिए अलग लिपिचिह्न नही है।

(ब) इस भाषा के निम्नलिखित अठारह व्यंजन हैं :

क ङ च ञ ट ण त न प म य र ल व ऴ ळ ऱ ऩ।

नोट—ये सब व्यंजन मात्रा वाले ही लिखे जाते है। तमिऴ् में 'मॆय्' 'ऒऴुत्तु' कहलाने वाले व्यंजन हलन्त रूप में लिखे जाते हैं। हलन्त बनाने का नियम अक्षर के ऊपर बिन्दी लगाना है।

संयुक्ताक्षर की व्यवस्था नहीं है।

संस्कृतज्ञ तमिऴ् के विद्वानों ने ज श ष स ह की ध्वनियों के लिए चिह्न (लिपि) बनाये है। पर ठेठ तमिऴ् के पक्षपाती इन्हें वर्ज्य मानते है। वे इनकी आवश्यकता नही मानते।

व्यजनों से 'आ' 'इ' आदि की ध्वनि मिलाने के लिए मात्राओं के चिह्न होते है।

तमिऴ् मे घोष ध्वनियो की लिपिचिह्न नही हैं; यद्यपि बोलते वक्त ये ध्वनियाँ निकलती ही है।

(स) ∴ यह "आय्द ऒऴुत्तु" है।

नोट—इसका उच्चारण कुछ 'ह्' या 'ह्क' के समान होता है। इसका उच्चारण ठीक-ठीक क्या था, यह कहना कठिन है।

यह अकेला नही आता या शब्द का पहला या अंतिम अक्षर नहीं बनता।

हिन्दी की वर्णमाला से भिन्नता, तज्जनित समस्याएँ और उनके हल

१ हिन्दी अक्षरो मे ऎ और ऒ नही है। भुवन वाणी ट्रस्ट 'अ' के ऊपर ॅ चिह्न और आ के ऊपर ॅ चिह्न लगाकर एक मात्रा वाले ह्रस्व अक्षर बना लेता है।

ऎ का उच्चारण Pen, Hen में E का-सा होता है।

ऒ का उच्चारण Won, One मे O का-सा होता है।

२ ऋ, लृ आदि स्वरों का तमिऴ् में स्थान नही है। लृ होता ही नही। ऋ को तमिऴ मे इरु या रि बना लिया जाता है। उदा : ऋषि— इरुडि (शुद्ध तमिऴ्) रिषि या इरुषि (उदार तमिऴ्)।

नोट—तमिऴ में हिन्दी का 'ष' ट या ड में वदल दिया जाता है। शब्द के प्रारंभ में 'र' अक्षर नही आता।

३ ऐ और औ की ध्वनियाँ क्रमश: अंग्रेजी के High, Tie; Vow, Love शब्दों में आनेवाली ऐ और औ के समान है। ये ध्वनियाँ "अय्" व "अव्"

के जितना निकट है उतना 'आए' 'आओ' 'आइ' 'अइ' आउ, अउ के निकट नही है। तमिऴ् के लिपि सुधारक भी अय्, अव् को रखकर ऐ और औ को छोड़ देने के पक्ष में है। वैसे 'औवै' को 'अव्वै' लिखने से तथा 'ऐयै' का 'अय्यै' लिखने से काम चल जायगा। आप 'मदुरै' को चाहें तो 'मदुरय्' पढ़ें; 'मणिमेहलै' को 'मणिमेहलय्' पढ़े, पर 'मदुराई' या 'मदुरई', 'मणिमेहलाइ' या 'मणिमेहलए' न पढ़े !

४ तमिऴ् की 'ऩ' 'ऱ', 'ऴ' और 'ळ' की ध्वनियाँ हिन्दी में नही हैं।

ऩ : दंत्य न के उच्चारण में और ऩ के उच्चारण में भेद स्पष्टत: मालूम नहीं होता। पर लिखते समय भेद करना ही पड़ेगा। निर्धारित नियम है जिनके अनुसार ये लिखे जाते हैं। जैसे 'ऩ' शब्द के आरम्भ में नहीं आता; 'न' शब्द के अंत में नही आता।

ऱ के लिए 'र' पर जोर देकर उच्चारण करना पड़ता है। इसके द्वित्व में वह 'ट्र' के समान उच्चरित होता-सा लगता है। पर वह ठीक नही। उसी समानता का आधार मानकर लोग ऱ्ऱ को ट्र मे लिप्यंतरित कर देते है। वह ठीक नहीं है।

'ऴ' : यह तमिऴ् की विशिष्ट ध्वनि है। कुछ लोग 'ष' भी लिखते है। यह असल में दोनों के बीच की ध्वनि है। जिह्वा लुठित होती है, पर मूर्धा को छुए बिना ही लौट आती है।

५ घोष अक्षरों की ध्वनियाँ तमिऴ् मे नहीं है। अघोष अक्षरों से ही काम लिया जाता है जैसे—

क से 'क', 'ग' और 'ह' का; 'च'से'च' 'ज' 'श' और 'स' का, ट से 'ट' और 'ड' का और 'त' से 'त' और 'द' का काम लिया जाता है। 'ज', 'ष' और 'स' की ग्रंथ-लिपिचिह्नों का आवश्यकतावश उपयोग चल रहा है।

नोट—इस तरह के भिन्न उच्चारण के कुछ नियम है; पर वे व्याकरण में लिखे नही मिलते। अत: आदमी-आदमी मे, स्थान-स्थान में उच्चारण-भेद दिखाई देता है। उदा: —कोई 'क' को 'ग' कहता है; दूसरा 'ह'; पर हाँ, यह उच्चारण-भेद हिन्दी से तमिऴ् के लिप्यतरण मे कोई अवांछित असर नही डाल सकता। क्योकि 'ह' हो या 'क' या 'ग', आपको 'क' ही लिखना पड़ेगा।

तमिऴ् के सारे शब्द लिप्यंतरण मे तमिऴ् के उच्चारण के अनुरूप ही लिखे गये है।

६ तमिऴ् मे संयुक्ताक्षर की व्यवस्था नहीं है। (यह पहले ही हम कह चुके है।) हलन्त व्यंजन का ही उपयोग करना है। तमिऴ् के हलन्त-

व्यंजन को हिन्दी मे संयुक्ताक्षर मे बदलकर लिखना ठीक नहीं होगा। उदा०—'कप्पम्' का कप्पम् या 'शट्टम्' का शट्टम लिखना गलत होगा। इसके दो कारण है: एक तो तमिऴ् मे पुनः लिप्यंतरण मे बाधा पड़ेगी,—दूसरा मात्राओ की गणना मे भी गलती हो जायगी। उदाः—शट्टम् की हिन्दी मे चार मात्राएँ गिनी जायेगी पर तमिऴ् में उसकी ३ मात्राएँ ही। क्योकि हलन्त व्यंजन की मात्रा आधी ही है।

७ हिन्दी में अकारान्त शब्दो के अंतिम 'अ' का उच्चारण नही होता। लिप्यतरण में हम वैसा नही लिखते जैसा हिन्दी मे; क्योकि अनेक हलन्त शब्द तमिऴ् में व्यवहार में है और पाठक उनमें फर्क नही कर पायेगे; दूसरा पुर्नलिप्यंतरण में गलती हो जायगी। उदाः—कोवलऩ्; तमिऴ्; इरुक्किऱाऩ् (=है)

८ प्रायः स्त्रियों के नाम (दीर्घ) ई-कारांत नही होते।

उदा :—मादवि, शुदमदि, कण्णहि आदि

९ सस्कृत-आधारित शब्द भी हम, तमिऴ् व्याकरण के अनुसार उनके बदले हुए रूप में ही लिखते है: उदा:—मणिमेहलै; मादवि; कनहऩ्; विशयऩ्; इमयम्, अदिहारम् आदि।

नोट—इस तरह करने के कारणों में एक प्रधान कारण यह है कि हिन्दी-भाषी तमिऴ् की प्रकृति तथा उसका धर्म जान ले; और कोई विद्याव्यसनी पाठक तमिऴ् से हिन्दी मे लिप्यतरण करे तो गलती का मौका न हो।

अनुवाद की शैली

हाँ, कही अनुवादक के पूर्वाभ्यासवश गलती हो गयी हो तो पाठक सुधार ले।

अनुवाद की शैली के सबंध मे एक चेतावनी भी है; क्षमायाचना भी। हिन्दी से तमिऴ् दूर है। द्रविड कुल की मलयाळम्, तेलुगु, कन्नड आदि भाषाएँ, सस्कृत से अधिक प्रभावित होकर वर्णमाला, उच्चारण, वाक्य-शैली आदि मे बहुत परिवर्तन पा चुकी है। अत. उन भाषाओं में हिन्दी के अनुवाद मे कोई अधिक अटकाने वाली या खटकने वाली बात नही होगी।

दूसरी बात : यह केवल अनुवाद नहीं है। लिप्यंतरण साथ है। केवल अनुवाद हो, तो तमिऴ् शब्दो तथा वाक्यों को किनारे करके केवल भावो के आधार पर बोलचाल के सरल वाक्यो की शैली वाली हिन्दी लिखी जा सकती है।

तीसरी बात : यह मूल काव्य ही पुरानी सश्लिष्ट (समस्त) शैली में

रचा काव्य है। कहीं-कही एक-एक वाक्य बीस-तीस पंक्तियों में जाकर अपने विराम पर आता है।

चौथी बात : अनुवादक अपने प्रदेश तथा भाषा की उपज है। उसकी अपनी हिन्दी पुस्तकों और कोशो से सीखी हुई है।

पाँचवी बात : हिन्दी विशाल भूभाग पर फैली है और फैलाने की कोशिश भी हो रही है। अत: स्वत: ही उसमें कई शब्दो-शैलियो का सगम हो गया है। राष्ट्रभाषा बनने की धुन में चलने वाली किसी भी भाषा को यह बहुरूपियापन अपनाना तथा सहना ही पड़ेगा। उसे लाभ समझना चाहिए, न कि हानि।

पाठक तात्पर्य समझ गये होगे। उन्हे इतना विश्वास दिलाया जा सकता है कि अनुवादक की भापा अव्याकरण-बद्ध भद्दी, बिलकुल समझ मे न आनेवाली नही होगी, न ही वह मूल के भावो को विकृत करती हुई रहेगी।

पाठक इतनी मानसिक तैयारी के साथ लिप्यतरण तथा अनुवाद पढे। इतना जान ले कि हिन्दी की श्रीवृद्धि में इसका भी एक मूल्यवान स्थान है।

अगस्त्यमालाधारी शोऴन् राजा के प्राचीन नगर पुहार् मे रहनेवाले कोवलन-नामक वणिक् और उसकी पत्नी कण्णहि के दाम्पत्य-मूलक उदात्त भावों की कान्ति शिलप्पदिहारम् की कथावस्तु में सर्वागव्याप्त है। एक ललित कलित कामिनी के हृदय की करुणा के अनन्तस्वर इसमे झकृत हुए है। एक सती साध्वी बाला के सतीत्व की शक्ति और प्रभाव के उद्घाटन और उदघोष ने इस कृति को महामहिम मनीषियो के लिए कमनीय, रमणीय और समादरणीय बना दिया है।

प्रस्तुत शिलप्पदिहारम् के अनुवाद के कर्णधार भाषासेतु चक्रवर्तिन् आचार्य श्री तिरुमलै अय्यगार शेषाद्रि जी के कृतित्व का मूल्याकन करते हुए जिन सुधीजनों ने उन्हे और हमे अपने अमूल्य अभिमतों के द्वारा प्रोत्साहित, आह्लादित और उपकृत किया है, उनमें माननीय श्री सी० सुब्रह्मण्यम, राज्यपाल, महाराष्ट्र, तथा मु० गु० जगन्नाथ राजा, अध्यक्ष, मणिमेखलै मन्ऱम्, राजपालयम्, (तमिऴनाडु), के प्रति हम शतश: आभारी हैं। इसी प्रकार गुणग्राहक अधिकारी साहित्यनिष्ठ मर्मज्ञजन हमें जन-हित के मगलकारी पथ पर बढने का सम्बल प्रदान करते रहेगे, यह हमारा विश्वास है।

लखनऊ
दिनाक २७ मार्च, १९९०

विनय कुमार अवस्थी
मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट,

अनुवादकीय

सर्वशक्तिमान सर्वनियंता भगवान श्रीमन्नारायण के नियमन का फल है कि यह सानुवाद लिप्यन्तरण भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा छपकर प्रकाशित हो रहा है। मेरे परम पूज्य श्री स्वामी चिन्मयानद जी का आशीर्वाद मेरा सतत साथी है। अत: उसकी विशेष चर्चा नही कर रहा हूँ।

दिवगत पद्मश्री नदकुमार जी अवस्थी के सुझाव पर यह कार्य आरम्भ हुआ। उनकी प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन में अनुवाद का काम उनके जीवन काल में ही पूरा हो गया था। पर छपने का काम वाद में हुआ। उसका श्रेय सुयोग्य पिता के सुयोग्य पुत्र, ट्रस्ट के न्यासी सभापति श्री विनय कुमार अवस्थी को है। और ट्रस्ट के कार्यकर्ता लोग भी कम धन्यवाद के पात्र नही है।

अब हम काव्य महल के अन्दर प्रवेश करेंगे। पर प्रधान मध्य भाग में जाने से पहले बैठक के कमरे मे कुछ देर ठहरकर इसका थोड़ा-सा परिचय पा ले कि अंदर क्या मिलेगा।

'शिलप्पदिहारम्' तमिऴ् भाषा के प्राचीन, मौलिक, वहुविश्रुत और अति लोकप्रिय पचमहाकाव्यो मे एक है, पहला है। अन्य चार है— "मणिमेहलै," 'शीवह शिन्दामणि', 'वळैयापति' और 'कुण्डलकेशि'। इनमें पहले तीन ही अव पूर्णरूप से प्राप्त है। इसका श्रेय स्वनामधन्य महान विद्वान, तमिऴ् के व्यास माने जानेवाले महामहोपाध्याय डाक्टर उ.वे. स्वामीनाथय्यर को है जिन्होने देश भर में पैदल या वैलगाड़ी पर घूम-घूमकर ताल-पत्र-ग्रथों को खोज निकालकर पुरानी टीकाओ के साथ अपने भी वक्तव्य मिलाकर उनके प्रामाणिक संस्करण निकाले थे। वाकी दो अन्य काव्य पुराने ग्रथो में या ग्रथो की टीकाओ में चर्चा के रूप में या अवतरणों के आकार में ही अपना अस्तित्व घोषित कर रहे है।

शिलप्पदिहारम् और मणिमेहलै जुड़वे काव्य कहे जाते है। उसके कई कारण है। दोनो की कथाओं मे आगे पीछे का क्रम है। कण्णहि 'शिलप्पदिहारम्' का प्रधान पात्र है और उसकी कहानी की अंतिम घटना "मणिमेहलै" मे बतायी गयी है। एक तरह से दोनों के रचयिता एक ही शात्तनार् है। मदुरै के उन्ही मेधावी कवि ने कण्णहि की कहानी शिलप्पदिहारम् के लेखक को बतायी थी। फिर उन्होंने मणिमेहलै काव्य को रचा। दोनो ने एक दूसरे की रचनाएँ आपस मे परस्पर सुनायी थी। स्वय शिलप्पदिहारम् के कवि-रचयिता ने अत मे कहा है कि मणिमेहलै मे जाकर अपनी उद्देश्य-पूर्ति पाने वाला शिलप्पदिहारम् अब समाप्त होता है।

'शिलप्पदिहारम्' शब्द दो शब्दो के मेल मे बना है। शिलम्बु और अदिहारम्। सधि तथा समास के नियमों से वे दोनो मिलकर शिलप्पदिहारम् बने। शिलम्बु, पैर का आभरण पैजनी या नूपुर है जो गोल, किञ्चित् वक्र आकृति का और (अदर से) पोला होता है। उसके अंदर मोती, मणियाँ या रत्न ककड़ो या कणिकाओ के रूप मे रहते है। अदिहारम् हिन्दी के अधिकार शब्द का तमिऴ् अपभ्रश है। अधिकार, प्रभाव या कार्य-व्याप्ति के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। शिलप्पदिहारम् की कथा मे नूपुर का ही प्रभाव है, घटनाओं का केन्द्र वही है और कोवलन् कण्णहि की कथा की गति और व्याप्ति शिलम्बु पर ही केन्द्रित है।

इसके रचयिता का नाम इळम् को अडिहळ् है। तीन शब्द है उसमें। वे तीनो शब्द मिलकर उच्चारण मे इळङ्गो अडिहळ् बन जाते है। इळङ्गो सन्यासी थे और अर्ह मंदिर मे रहते थे। अत· वे इळङ्गो अडिहळ् कहलाये। अडिहळ् साधु स्वामी को कहते है। शब्द का अर्थ होता है चरण, जिसका पूरा अर्थ होगा पूज्य-पाद या ईश्वर-चरण। शेरन् राजा इमयवरम्बन् नॅडुञ्जेरलादन् के दो पुत्र थे, जिनमे ये छोटे थे। इमयवरम्बन् नाम इसलिए पड़ा कि उसने हिमालय तक की भूमि को जीता था। बड़े पुत्र का नाम नॅडुञ्जॅळियन् था जिसकी चर्चा इस शिलप्पदिहारम् मे आती है। उसी ने कण्णहि का मदिर बनाया था। एक दिन राजा अपने दोनो पुत्रो के साथ दरबार मे विराजा था। तब एक पंडित आये। उन्होने राजा को देखकर कहा कि तुम्हारा छोटा पुत्र राजा बनने योग्य लक्षण रखता है। यह सुनकर बडा पुत्र शॅङ्गुट्टुवन् खीझ उठा। उसकी त्योरियो को चढते देखकर छोटे पुत्र ने उसको सात्वना देते हुए भीष्म प्रतिज्ञा की कि मै सन्यासी बन जाऊँगा। वे कुणवायिऱ्कोट्टम् मे जाकर रहने लगे। उसका अर्थ हिन्दी में पूरबी द्वार कोष्ठ होता है। शायद वह शेरन् की राजधानी वञ्जि राज्य के पूरब मे था। कोष्ठ मदिर, परिसर मडप, भवन आदि के लिए प्रयुक्त होनेवाला शब्द है। उ.वे. स्वामीनाथय्यर (तमिऴ् में उ.वे. सु कहते है) ने अपनी टोका में कोष्ठ का अर्थ अर्ह मदिर लिखा है।

उन्होंने शिलप्पदिहारम् की कथा के अनुसार अपने भाई तथा शात्तनार् के साथ पहाड पर रहते समय पहाड़ी लोगो से कण्णहि के स्वर्गारोहण की बात सुनी। विस्मित उन्हे शात्तनार् ने कण्णहि की कथा सुनाई। अडिहळ् ने प्रभावित होकर कहा कि मै इस कथा को लेकर एक काव्य रचूँगा और उसका उद्देश्य ये तीन पाठ होंगे :-पहला—धर्मच्युत राजा का स्वय धर्म (देवता) यम बनेगा, दूसरा पतिपरायणा सती उच्च लोगो (देवताओ) के लिए

भी पूज्य होगी; तीसरा : पूर्व कर्म यानी प्रारब्ध धमकाता हुआ आकर फल चखाकर ही छोड़ेगा।

इससे जाना जा सकता है कि लेखक का काल और कण्णहि-कोवलन् का काल लगभग एक है। उस आधार पर इतिहास के आचार्यो ने तथा तमिळ् के विद्वानो ने इसको ई दूसरी सदी के अंतिम चरण की रचना माना है। भारत मे किसी रचना का कालनिर्णय में कहा एक मत रहा है? जो हो, हम इसको उस काल की ही रचना मानकर चलते है।

यह कथा तीन राजवंशो के साथ ताल्लुक रखती है। त्रिदश अध्यायों के तीन काण्डो में फैली है। इस तरह की रचना को तमिळ् काव्य-शास्त्र में 'इयल् इशै नाडहप् पॅारुट्टीडर् निलैच् चॅय्युळ्' कहते है। इसका अर्थ हुआ गद्यगीत नाटकमय प्रबंध काव्य। इसको 'उरैयिडैयिट्ट पाट्टुडैच् चॅय्युळ्' भी कहा जाता है जिसका अर्थ होता है कि इसके मध्य 'उरै' भी होता है। उरै प्रभावमय गद्य है। यह ऐसी रचना है जिसमे नाटक के लक्षण भी निहित है। अतः यह "नाडहक्काप्पियम्" भी कहा जाता है। वाङ्मय के इयल्, इशै, नाडहम्, उरै आदि की व्याख्या आगे भी की जायगी। यह रचना एक तरह से संस्कृत के चम्पू काव्य की समानस्थिति को मानी जा सकती है।

इसका 'पदिहम्' (प्रस्तावना भाग) किसी परवर्ती कवि द्वारा लिखा गया है। उसमें ग्रन्थोदय का हेतु और तीसो अध्यायो के विषय-संकेत-कारी शीर्षक दिये गये है। पदिहम् के बाद "उरै पॅरु कट्टुरै" (प्रभावपूर्ण गद्य मे सार-निबन्ध) कहानी के घटने के बाद की बाते बताता है। पाण्डिय राजा ने तथा अन्य राजाओ ने देवी कण्णहि का कोप शांत करके अनुग्रह पाने के लिए जो बलि-कर्म किया, पूजा उत्सव आदि का प्रबन्ध किया उनका विवरण है।

इळङ्गो जैन थे या शैव? इस बात के निर्णय में बड़ा मतभेद है। 'कोट्टम्' का अर्थ अर्हमन्दिर देकर डाक्टर अय्यर् ने उन्हे जैन मानने का मार्ग खोल रखा है। रचना को छोड़कर उनका धर्म-निर्णय करने के लिए वंश की बात की जाय तो उनका राजवंश हिन्दू था। स्वयं रचना मे भी कोई ऐसा सबूत नही मिलता जिससे लेखक का धर्म-निर्णय हो सके।

अब इस रचना मे प्राप्त कुछ विशेष जानकारियों के संबध मे कुछ कहना चाहूँगा है।

पहले राजवंशो की बात ले। 'शोळ' राजवंश सूर्यवंशी कहा गया है। और पाण्डियवंश चंद्रवंशी; शेरन् को देववंश का कहा गया है। राजा शिवि और मुचुकुंद उत्तर के समझे जाते है। पर इधर ये शोळ वंश के राजा

कहे गये है। पाण्डियर् को पाण्डियर् के अलावा कौरियर भी (अडैक्कलक्कादै दूसरी पंक्ति में देखे) कहा गया है। अनुमान किया जाता है कि वे कुरुवंश के है। हाँ, यह केवल अनुमान है।

उत्तर दक्षिण के सपर्क की बात भी कुछ नई जानकारी है। उत्तर के राजा लोग दक्षिण में आते थे। वे या तो युद्ध करने के लिए आते थे या मिलता निवाहने के लिए। शेंड्गुट्टुवन्न के पिता के संबध में कहा गया है कि उसने पांडव और कौरवो के वीच के महाभारत-युद्ध में दोनो ओर के वीरो को विना ना किये खाना खिलाया था। दक्षिण के तीनो वशो के राजाओं के उत्तर भारत में युद्ध करने तथा हिमालय पर्वत पर अपने राज-चिह्नों, (धनु, मछली, वाघ) को खुदवाने की बात इसी ग्रंथ में कही गयी है। शेंड्गुट्टुवन्न राजा शतकर्णी (या शतकर्णियों) का मित्र था। उसने सिधु-तटीय राज्य मेरु पर्वत के पास का राज्य आदि पर अधिकार जमाया था। उसने कन्नहन्न, विशयन्न दोनों को उनके मित्र राजाओं सहित परास्त कर कैद ही नही किया, वरन् उनके सिरों पर शिला भी रखवा कर उठा लाने को मजबूर किया था। (इसके सवध मे तमिळनाडु मे ही गरम चर्चा है। यह एक तरह से कठिन भी है। तो भी परास्त राजाओ को कठोर दण्ड देने के उदाहरण तमिळनाडु के इतिहास में मिलते ही है।) अवन्ती, मगध और वज्र देश के राजाओं ने शोळन्न राजा को वहुमूल्य भेटे दी थी। इसका जिक्र शिलप्पदिहारम मे आया है।

देव-मानव का आपसी सबध भी कुछ दिलचस्प वात है। देवता की पूजा तो कुछ साधारण वात है। पर देवों का मानव-जीवन मे स्वत: भाग लेना कुछ अजीव वात लगता है। इंद्रोत्सव में देवता लोग आते थे। विद्याधर-दंपति की वात है जो मादवि का नृत्य तथा इद्रोत्सव आदि देखने आये थे। देवेंद्र ने अपने लोगो को विमान मे भेजा कण्णहि को ले आने। उसी ने मुचुकुद को एक भूत दिया जो हाट ('नाळङ्गाडी') मे रहकर वलि खाता था। मणिमेखला देवी ने कोवलन्न के पूर्वज को समुद्र मे डूवने से वचाया। यह देव-मानव सबध कभी विवाह तक भी बढ गया था। पाषण्ड शात्तन्न देवता ब्राह्मणी देवन्दि का पति (उसके पहले उसकी सौत मालदि का वच्चा) वना था। देवता मनुष्यों में अदृश्य रूप में प्रविष्ट होकर वाणी कहते थे। शालिनि वह स्त्री है जिसके द्वारा दुर्गा वोलती थी। मुरुगन्न का भक्त भी 'आवेश' का पात्र वन जाता था। इस तरह के कृत्य को वेरियाडल् कहा जाता है।

इसी सिलसिले मे कुछ विश्वास भी ध्यान देने योग्य है। अरुन्धती को उत्तर मे रहनेवाला नक्षत्र माना जाता है। पतिव्रता सती की उपमा उससे

दी जाती है। भोग भूमियाँ छः होती हैं जिनमें एक उत्तर कुरु की चर्चा इस काव्य में आयी है।

मदुरापदि, शम्बापदि आदि देवियाँ नगरों का संरक्षण करती बतायी गयी हैं। वे "नगर की देवी" ही कहाती हैं। इनके अलावा अन्य नगर-रक्षक देवता भी होते थे। आज भी ग्राम-देवताओं के मंदिर दक्षिण के ग्राम-ग्राम मे पाये जाते हैं।

भूतों की बात भी दिलचस्प है। भूत के भी चार वर्ण माने गये हैं। मदुरै-दहन के प्रसंग में इन चारों भूतो का विस्तृत वर्णन पाया जाता है। पुहार मे "नाळङ्गाडी" भूत हाट में रहकर 'बलि' भोग लेता था। उसके सामने वीर स्वय अपने सिरों की बलि राजा की विजय-सफलता के उद्देश्य मे देते थे। स्त्रियाँ माँस के साथ पके भात की बलि देती थी। वही एक भूत था जो झूठे गवाहों और चुगलखोरो को मारकर खा जाता था।

मंत्र जाप से देवता वश मे आते थे और जाप करनेवालो की मनोकामना पूरी करते थे, बशर्ते कि इच्छित काम उन देवताओं की शक्ति के अंदर का हो! कोवलन् ने हिरणारूढा देवी के मंत्र का जाप कर मोहनी मायाविनी अप्सरा का सच्चा रूप जान लिया था। ऐयै देवी व्याध लोगों के क्रूर कार्यों को भी सफलता दिलाती दरसायी गयी है। कुछ देवता मनुष्यों पर भी प्रवेश करके प्रश्नो का जवाब देते थे। शातृतन् देवन्दि पर आया। ऐयै 'शालिनि' पर आयी। मुरुगन् भी आवेश-पात्र पुरुष पर अप्रत्यक्ष रूप से प्रगट होकर बीमार नायिका का रोग दूर करते थे, ऐसा माना गया है।

पुराण के बहुत से विश्वास भी देश में जड़ जमाये बैठे थे। एक कुंड की बात है जिसमें स्नान करने से पूर्व जन्म के हालात जाने जाते थे। एक कुंड-स्नान "ऐंद्र" व्याकरण का ज्ञान यों ही दिला सकता था। कुण्ड-स्नान और देवपूजन बिछुड़े पति-पत्नी को मिला सकते हैं, यह विश्वास देवन्दि दिलाती है।

खैर, इन अलौकिक बातो को छोडकर हम अब लौकिक बात करेंगे।

शिलप्पदिहारम् महाकवि सुब्रह्मण्य भारती के शब्दो में दिल को "उठा लेनेवाला" (हृदय-ग्राही) काव्य है। सर्वसम्मति से वह महान काव्य माना जाता है। मणिमेहलै मे भी यह सुन्दर काव्य माना जाता है। इसका कारण उसका व्याकरण-पालन में और व्यंजना प्रकार-दोनों मे अति सुंदर रहना है। अब तमिळ् काव्य-लक्षण के अनुसार वर्णित विषय की बात लेते हैं।

तमिळ् के व्याकरण के पाँच प्रकार के विचारो मे— (स्वर, शब्द, वाक्य, छंद-पद्य रचना-अलंकार) इनके अलावा विषय का भी विवेचन आता है।

विषय के अन्दर मनुष्यों के पारस्परिक प्रेम या शत्रुता, मित्रता तथा उदासीनता, भगवान की सृष्टि के अन्य जीवों, पदार्थों और स्वयं ईश्वर की भावना के साथ संपर्क के फलस्वरूप उठनेवाले सारे मानसिक भावों तथा भावों के उद्दीपक पदार्थों का वर्गीकरण हुआ है। प्रधान रूप से एक पुरुष व स्त्री के पारस्परिक लगाव के कारण उठते प्रेम भाव तथा उस प्रणय के व्यापारों को "अहम्" के अंदर और अन्य व्यापारों को पुरम् की श्रेणी में लिया जाता है। दोनों के लिए वाह्य जगत् के पदार्थों की जरूरत है ही।

इनको "तिणै" और "तुरै" में श्रेणीवद्ध करते है। तिणै का अर्थ भूमि है तथा तुरै का अर्थ घाट जहाँ उतरकर जल (रस) का अवगाहन किया जाता है। भूमि के भूगोल के अनुसार पाँच भाग या परस्पर भिन्न पाँच प्रदेश माने जाते है। वे है "कुरिञ्जि" पर्वत तथा पार्वत्य प्रदेश; "मुल्लै" वन और वन्य प्रदेश; "मरुदम्"— खेत तथा कृषि योग्य सपाट मैदान; "नॅय्दल्"— समुद्र तटवर्ती प्रदेश; और 'पालै' जो या तो प्राकृतिक रेगिस्तान होता है या वर्षा हीनता के कारण इन प्रदेशो का विकृत होकर बना कंकड़ों का, कण्टकों का तथा बालू का जंगल होता है। इस भूमि-विभाजन से और उनमें बहनेवाली नदी से लाक्षणिकता का उपयोग करके "अहम्" और पुरम् को भी पाँच तिणैयों में समझा जाता है। अगर तिणै बड़ा प्रदेश है तुरै उसके अंदर होनेवाले छोटे-छोटे घाट। यानी साहित्य के संबंध मे बड़े तथा प्रधान भाग और उसके अंदर होनेवाले प्रकरण। हर प्रकरण प्रेम या युद्ध व्यापार-रूपी धारा तक ही ले जाता है; पर प्रकरणो में स्वत: अंतर है।

यह देखा जाता है कि हर पृथक् भू-भाग के रहनेवाले मानव, पशु-पक्षी, तरु, फूल, संगीत, वाद्य, उनसे पूजित देव अलग-अलग होते है। साहित्य में भी विवरण मे ये भेद लाये जाते है। उन भेदों के आधार पर ही साहित्य का तिणै निश्चित किया जाता है। विवरण के अंतर्गत मानव-व्यापार भी आते है और वाह्य पदार्थ भी, जैसे— "मुल्लै" में पतिव्रता नारी का गृह में पातिव्रत्य में रहने का और तत्सबधी 'निमित्त' का वर्णन; 'कुरिञ्जि' मे प्रसग (संभोग) तथा प्रसग निमित्त; "मरुदम्" में रूठन तथा रूठन का निमित्त, पालै में वियोग तथा वियोग के निमित्त। "निमित्तम्' शब्द ही तमिऴ् में प्रयुक्त है जिसका अर्थ कारण या हेतु है। उसका मतलव हुआ घटना के पहले के कारण और वाद उस घटना के कारण होनेवाले कार्य। इनके अलावा, 'कैक्किळै' और "पॅरुन्दिणै, —ये दो तिणै भी तिणै की श्रेणी में लिये जाते है। कैक्किळै" एकतरफा काम है और "पॅरुन्दिणै" असमान वय-वालों या स्थिति-वालों के वीच का प्रेम है।

पुरम् के नीचे सात या बारह तिणै माने जाते हैं। सात के नाम 'वेट्चि' 'वञ्जि' 'उळि ञै', 'तुम्बै' 'वाहै' काञ्जि', पाडाण्''। बारह के नाम 'वेट्चि' और 'करन्दै; 'वञ्जि और 'काञ्जि'; 'उळिञै और 'नोच्चि'; तुम्बै, वाहै' 'पाडाण्', 'पोदु इयल्' 'पेरुन्दिणै', और 'कैक्किळै।' पुरम् के विभाजन के नामकरणो मे अधिकाश फूलों के नामों का उपयोग किया गया है—जैसे अहम् में तिणै का सकेत निश्चित है, वैसे यहाँ हर फूल का सकेत निश्चित है। जैसे 'वेट्चि' मे शत्रु राजा की गायों के हरण का प्रयास गोहरण आदि का वर्णन रहता है। या यों कहिए वह प्रयत्न वेट्चित् तिणै का वर्णन कहा जाता है। 'करन्दै' में गायो को लौटाने से संबंधित वर्णन होता है। वञ्जि में शत्रु राजा के विरुद्ध कूच, युद्ध, उनपर विजय आदि का वर्णन रहता है। अब पाठक जब शेङ्गुट्टुवन्न के युद्ध-वर्णन में वञ्जि, वेट्चि आदि फूलों के नाम देखते है, तब समझ सकते है कि इनका तात्पर्य क्या है। वीर जब उक्त कार्यो के लिए निकलते है तब तत् तत् कार्य को द्योतित करनेवाले फूल या माला धारण कर लेते है।

इसके संबंध में दो एक विषय कहकर इस प्रकरण को समाप्त करूगा।

हर तिणै में उस भू-भाग के योग्य पशु पक्षी, मानव, तरु, फूल, आदि का वर्णन रहता है। एक का उदाहरण दे रहा हूँ:—

कुरिञ्जि तिणै में —देवता-मुरुगन्न (वेलन्न, शेयोन्न-षण्मुख, कार्तिकेय सज्ञित देव भी इनमें समा लिये गये है।), उच्च वर्ग के वासी-पोरुप्पन्न आदि, नीचे की श्रेणी के जन-कुरवर्, कानवर्, पक्षी-शुक मयूर; पशु-व्याघ्र रीछ, गज शेर, जलाधार-सोते; फूल-वेङ्गै कुरिञ्जि कान्दळ्; वृक्ष-चंदन सागौन, अगरु, पऱै यानी ढोलः तोण्डहप्पऱै; याळ्, कुरिञ्जि याळ् धन्धे आदि : आवेश पाकर भविष्य वाणी कहना, पहाड़ी धान बोना, कोदो के बाग पर पहरा देना, शहद का संग्रह करना, कंद खोदकर निकालना, सरिता-स्नान, सोते मे स्नान आदि। वैसे ही हर प्रदेश के वर्णन मे सभी बाते साफ़ तौर से पृथक्-पृथक् रहती है।

शहरो के वर्णन मे मिश्रण की बात देखी जा सकती है। उन दिनो में भी यह मिश्रण हो गया था। इसको यानी परस्पर मिश्रण को तिणैमयक्कम् कहा गया। यह नगरो की बात है। देहाती इलाको में सब बाते अपने शुद्ध रूप मे रहती थी।

उदाहरण के लिए पाठक पुहार् मे नेय्दल और मरुदम् प्रदेशो की विशिष्टताएँ देख सकते हैं। प्रधानतः मदुरै के प्रदेश में जंगल मुल्लै और

कुरिञ्जि की विशिष्टताएँ नजर आयेंगी। शेरन् की वञ्जि में कुरिञ्जि नेय्दल मशदम् आदि तिणैयों का वर्णन पाया जा सकता है।

अब पाठक को शिलप्पदिहारम् को पढते समय इन ऊपर लिखी विशेषताओं का ध्यान आयगा और उसके कारण काव्य रसास्वादन में आनंद की मात्रा बढ़ सकती है। इससे और विस्तार से वर्णन नहीं किया जा सका है, क्योंकि बहुत लंबी भूमिका लिखने पर भी स्थान की कमी रह गयी है। हर विषय एक शास्त्र है, दो तीन विषयो पर और भी कुछ बातें कहनी है।

पाठक कृपया प्रधान कथा का संक्षेप और उपकथाओं का सकेत परिशिष्ट भाग में पढ़ लें।

यह महाकाव्य है। महाकाव्य के प्रधान विषय-संबंधी लक्षणों में उद्देश्य का अधिक महत्त्व है। महाकाव्य का उद्देश्य चारों पुरुषार्थ होना चाहिए। शिलप्पदिहारम् प्रधान रूप से धर्म, अर्थ और काम के तीन पुरुषार्थो की ही चर्चा करता है। चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्ष का इसमें समुचित प्रतिपादन नही है। मोक्ष के अंदर, इस लोक में मोक्ष के लिए प्रयास और परलोक में स्थिति, दोनों तत्त्व लिये जाते है। इसी कारण लेखक को कहना पड़ा कि शिलप्पदिहारम् का उद्देश्य मणिमेहलै में जाकर सिद्ध होता है। मणिमेहलै का प्रधान लक्ष्य मोक्ष का रहता है, यद्यपि उसमें अन्य पुरुषार्थ का भी सम्यक् प्रतिपादन पाया जाता है।

शिलप्पदिहारम् में वर्णित विषयों में संगीत नाटक संबंधी विवरण तथा वर्णन एक विशेष महत्त्व रखते है। उसमे उन कलाओं के अलावा तमिऴ् भाषा की विशेषता की भी जानकारी मिलती है।

तमिऴ् के तीन रूप माने गये है। इसी के आधार पर त्रितमिऴ् ('मुत्तमिऴ्') शब्द का प्रचलन है। तमिऴ् शब्द तमिऴ् भाषा तथा इस भाषा के साहित्य दोनों को द्योतित करता है। वे तीन रूप है: इयल्, इशै और नाडहम्। 'इयल्' का अर्थ प्रकृत वाङ्मय है। इयल् के अंदर गद्य और पद्य दोनों आते है। इशै संगीत में प्रयुक्त भाषा है और नाटक में प्रयुक्त तमिऴ् नाडहत् तमिऴ् कही जाती है। गद्य में जोरदार, अलंकारपूर्ण गद्य को 'उरै' कहा जाता है। प्रभावी कट्टुरै गद्य में लिखे निबंध को कहते है जो सार, व्याख्या आदि होता है। शिलप्दिहारम् में उसके उदाहरण मिलते है। बाकी सब स्थानों में पद्य, गान तथा नाटक की ही भाषा है।

इशैत् तमिऴ् के उदाहरण अर्थात् गाने 'वरि' 'वारम' आदि में देखे जाते है जैसे वेट्टुव वरि, कानल् वरि आदि अध्यायो में पाया जाता है। कुन्ररक् कुरवै, आय्च्चियर् कुरवै में यद्यपि गीत भी है तो भी वे प्रधानतः नृत्य-नाटिकाएँ हैं।

नाडहत् तमिऴ् का उदाहरण हमें कुरवै तथा मादवि के नृत्य-प्रदर्शन के प्रसंग में मिलते है। मादवि के नृत्य-प्रदर्शन के दृश्य में तीनों का समावेश है। उसमें हम तीनों का शास्त्रीय विवेचन अरङ्गेरुक्कादै में देखते है। वहाँ सगीत के साधन, वाद्य और राग आदि के वहुत से तत्त्व जान सकते है। इन तीनों की सम्मिलित छटा की झाँकी उस अध्याय में मिलती है। वाद्यों में याऴ् की प्रधानता है। उसमें याऴ् की रचना, उसमें से मनोहारी नाद निकालने के उपाय आदि वताये गये है। वैसे ही चर्म वाद्य, मृदंग वादन का भी सफल रूप का वर्णन मिलता है। साथ साथ राग ताल आदि का भी विवेक मिलता है। तत्री-वाद्य और चर्म वाद्य के वादन की कला कडल् आडु कादै, कानल् वरि (सातवे अध्याय) में, फिर वेनिऱ्कादै (आठवे अध्याय में) और फिर पुरञ्जेरि इरुत्त कादै (तेरहवे अध्याय) मे सम्यक् दरसायी गयी है।

नृत्य, सगीत और वाद्य खासकर तंत्री वाद्य-इन तीनों के निकटतम संवंध के कारण भाषा भी घुलमिल गयी है। जैसे स्वर का अर्थ ध्वनि भी है और स्वर के द्योतक शब्द तार का भी अर्थ देता है। तमिऴ् में राग को पण् तथा तान को तिऱम् कहते है। पण् का अर्थ गीत भी है, राग भी है। याऴ् का अर्थ वाद्य भी है, सगीत भी। शिलप्पदिहारम् में संगीत, नृत्य, वाद्य आदि सभी का शास्त्रीय वर्णन पारिभाषिक शब्दो का सहारा लेकर इतनी सूक्ष्मता से प्रस्तुत किया गया है-कि साधारण पाठक उन्हे आसानी से समझ नही सकते। और फिर शब्दो को समझने के लिए दो बातो की जरूरत है। एक, वे शब्द प्रचलित हों। दूसरी, अनुवाद के लिए समानार्थी शब्द दोनों भापाओं के मिल जायँ। इनमें कितने ही शब्द तमिऴ् मे भी अप्रचलित है। या फिर शब्दों द्वारा द्योतित वस्तुएँ अब नही है। फिर इन शब्दो का अनुवाद हिन्दुस्तानी सगीत मे नहीं मिलता। फिर कठिनाई निश्चित क्यों न हो।

इसीलिए दीक्षितर् ने अपनी भूमिका में लिखा कि— The description is so technical in character that it is rather difficult to understand the full significance of the text in spite of elaborate commentaries on it. अर्थात् विवरण इतने शास्त्रीय है कि अनेक विस्तृत व्याख्याओ तथा टीकाओ के रहते हुए भी पाठ का पूरा ज्ञान प्राप्त कर लेना कठिन है।

हम एक दो उदाहरण देते है। 'याऴ्' शब्द अब अप्रचलित है। पर शब्द का पदार्थ भी अव अज्ञात है। कोई कोई याऴ् को वीणा ही मानते है और कुछ विद्वान् दोनों को अलग-अलग। राग के लिए जो पण् का शब्द व्यवहृत होता था वह शब्द गायब है। आजकल खोज करनेवाले संगीतज्ञ पण् को ही राग कहते है और पण्णियल् तिऱम, तिऱम्, तिऱत्तिऱम को पाडव,

ओडव, साधारणीकृत बतानेवाले शब्द। वैसे ही यहाँ षड्ज (सा) आदि का प्रचलन नही था पर अब है। पर नृत्य के विचार में उतनी कठिनाइयाँ नही है, क्योंकि मुद्राएँ, विषय, अगचालन के प्रकार, वृत्ति, बीज आदि तत्त्व-ऐसे अनेक अगों के बोधक शब्दों मे, समानता है, यद्यपि कठिनाई का बिलकुल अभाव है यह कहा नही जा सकता। वीणा के सबध मे ही खासकर वादन की कला के सबध मे अधिक कठिनाई सामने आती है। इतना होते हुए भी हम दो काम करने का साहस करते है।

पहला : याळ् को "शॅड्गोट्टियाळ्" का ही पुराना रूप मानकर जो विवरण कुछ अधिकारी विद्वानो द्वारा दिये गये है, उनको एक चित्र के साथ पाठको की सेवा मे हाजिर करते है। विज्ञ पाठक जितना सभव है उतना लाभ उठा ले।

हाँ, याळ् में स्वर, सगीत दोनो भी आ जाते है। अतः पहले हम स्वर सबंधी कुछ विवरण देते है।

अब प्रचलित	सात स्वर		तमिळ् के	पुराने	सात स्वर
संकेत अक्षर	**नाम**	**श्रुतियाँ**	**संकेत अक्षर**	**नाम**	**श्रुतियां**
आ	**कुरल्**	४	**स**	**षड्जम**	४
ई	**तुत्तम्**	४	**रि**	**ऋषभ**	३
ऊ	**कैक्किळै**	३	**ग**	**गांधार**	२
ए	**उळै**	२	**म**	**मध्यम**	४
ओ	**विळरि**	३	**प**	**पंचम**	४
औ	**तारम्**	२	**ध**	**धैवत**	३
			नि	**निषाध**	२

इन दोनो पृथक् तालिकाओं मे समानता बिठानी हो तो श्रुतियों की सख्या में भेद आडे आयगा। जैसे तुत्तम् को ऋषभ माने तो चार तथा तीन श्रुतिवाले स्वरो मे तालमेल नही बैठेगा। तमिळ् के कुरल् स्वर को प्रचलित सगीत के मध्यम स्वर के अनुरूप माना जायगा तो मंडल ठीक बैठेंगे। वैसा किया जाय या अलग-अलग माना जाय यह निर्णय हमारे लिए शक्ति और अधिकार के बाहर की बात है।

कुरल् स्थायी स्वर माना जाता है। और वैसे किसी भी स्वर को स्थायी बनाया जा सकता है। तब वह तमिळ् में कुरल् ही कहा जायेगा।

तमिळ् मे राग भी (यानी पण्) तिणै के नामो के ही अनुरूप रहते है जैसे कुरिञ्जिप्पण्, मुल्लैप्पण् आदि।

शिलप्पदिहारम् मे "पालैप्पण्" के ही विविध रूप दिये गये है।

अब याळ् के सबध मे और एक बात : चार प्रकार की याळो की चर्चा रहती है। यह विभाजन तारो की सख्या पर आधारित है।

मकर याळ्—१७ तार, शकोट याळ्— १४ तार
पेरि याळ्—२१ तार, शेंङ्गोट्टि याळ्— ७ तार

अत मे कही गयी इसी शेंङ्गोट्टि याळ् को वीणा का पुराना रूप माना गया है। पृ० ४४३ पर वीणा का चित्र दिया गया है।

अब हम 'विषय' के अश के अतर्गत आनेवाले अन्य जानकारी के कुछ तथ्यो की ओर ध्यान देते है।

समाज-रचना, सामाजिक प्रथाओ, रीति-रिवाजो, कुछ विश्वासो और प्रजा के कार्य-कलापो, प्रजा के काम-धधो, जीविका के व्यापारों आदि के सबध मे उस काल की स्थिति का मेधावी कवि ने बहुत सजीव चित्रण किया है। इन प्रथाओ पर ध्यान दीजिए। विवाह होने के बाद कुछ ही दिनो मे दपति को अलग घर मे रख दिया जाता था। गजारूढ सुदरी युवतियाँ लोगो को विवाह निमत्रण दे आती थी। विवाह के अत मे राजा को भी बधाई दी जाती थी। गृहिणियों के धार्मिक कर्तव्यो पर जोर दिया जाता था। राज्य मे कुछ भी अनिष्ट हुआ तो राजा जिम्मेदार मान लिया जाता था। राजमहल में बहरे गूँगे आदि रानी की परिचर्या के लिए तैनात थे। उत्सव के अवसर पर धर्म-प्रचार की सभाएँ होती थी। ब्राह्मण पुरोहित के मार्गदर्शन मे विवाह आदि होते थे। नृत्य, सगीत आदि को शासन-प्रजा दोनो से संरक्षण मिलता था। इसलिए लोक-गीत, लोक-नृत्य, राज-गीत, राज-नृत्य—दो प्रकार के नृत्यो और अन्य मनोरजन की कलाओ का प्रचलन तथा प्रोत्साहन होता था। धार्मिक क्षेत्र मे विविधता थी तो भी भेद का बिल्कुल अभाव था। पत्नियाँ (गृहिणियाँ) पति-परायणता के सामने देव-पूजन को अनावश्यक ही नही, पाप भी समझती थी। राजा शब परपरागत होता था पर उसके सहायक अष्ट महामडल और पच महावर्ग होते थे।

काव्य मे व्यक्त विषयो पर ध्यान देने के पश्चात् अब व्यजना की युक्तियो पर या कला सबधी विचार करेंगे। कला, लेखक का अपने आत्म-प्रकाशन का माध्यम रहती है। जो कहा जाता है उसके विवरण मे व्यक्ति-व्यक्ति में अधिक भेद नही रह सकता। पर क्या चुना जाय ? इसके निर्णय से लेकर कैसे कहा जाय— यहाँ तक व्यक्ति का ही निर्णय होता है। इसलिए कला का विवेचन भी लाभदायक होता है। अब सुगमता के लिए मै इस विषय को तीन भागों में विभक्त करता हूँ— शब्द, भाषा, युक्तियाँ।

शब्द:—शिलप्पदिहारम् में आये बहुत से शब्द पुराने काल में प्रचलित दैनिक व्यवहार के शब्द थे। जीवन बडे उच्च स्तर का होता था। क्या आभरण-पोशाक में, क्या घर के साज-सामानो मे, क्या मनोरंजन के साधनों में, क्या शासन के विधानो मे, —सब में लोगों का जीवन बड़ा ही सुख-सुविधामय रहा। वैसे ही आतरिक जीवन मे या प्रेम मे और युद्ध मे लोग दक्ष थे। अब तो जीवन बिलकुल बदल गया है। अब वे पद तथा पदार्थ कहाँ पाये जायँ? प्रकृति का भी चेहरा बदल गया है। शिलप्पदिहारम् आदि पुराने ग्रंथों में व्यक्त पेड़ पौधे आदि मे भी कितनों का लोप हो गया है। फिर आभूषणों, पोशाकों की बात क्या? व्याकरण के नियम भी बदल गये है। कहने का सार है कि शब्द बहुत कुछ अप्रचलित पाये जाते है। तो भी इतना अवश्य मालूम होता है कि राजकुल के होते हुए भी, सन्यासी होते हुए भी लेखक जनसाधारण की बोली से खूब परिचित थे। शायद स्वयं राजा का जीवन यद्यपि जन-साधारण के जीवन से ऊँचा था तो भी वह जनसाधारण के जीवन के सुख-सौभाग्यो, दुख-दर्दो से परिचित था।

सस्कृत के शब्द भी पाये जाते है। इतिहास विशेषज्ञ तथा तमिऴ् साहित्य-मर्मज्ञ आचार्य वी. आर् रामचद्र दीक्षितर् ने इस काव्य में पाये जाने वाले सस्कृत शब्दो की संख्याओ का अनुपात खोज निकाला है। वे उदाहरण के लिए "अदिमालै शिऱप्पुच् चेय् कादै" (चौथा अध्याय) लेते है। वह अध्याय सावधानी से सोचकर नही अपितु यों ही लिया गया है। उस अध्याय मे पायेजाने वाले सस्कृत के शब्द, उनकी गणना के अनुसार दो सौ अठासी है। 'अर्थ हुआ कि हर आठ तमिऴ् के शब्दो के मुकाबले में हमें एक संस्कृत शब्द मिलता है।" कहने का तात्पर्य है कि तमिऴ् भाषा मे सस्कृत के शब्द काफी मात्रा मे तभी आ मिले थे। बाद में तो भक्ति-साहित्य की प्रधानता के होते होते वे शब्द और अधिक अनुपात मे आ गये। आजकल उन्हे दूर करने का प्रयास 'शुद्ध तमिऴ्' के पक्षपातियों द्वारा किया जा रहा है।

सस्कृत शब्दों का ज्ञान लेखक को खूब था और वे शब्द प्रचलित थे। दोनो तथ्य पाये जाते है। इनके अलावा स्थान, विषय आदि के बिलकुल अनुकूल तथा अधिकाधिक प्रभावकारी शब्दों के चयन में वे दक्ष थे यह बात भी ग्रंथ के अवलोकन से साफ जाहिर हो जाती है। सगीत, साहित्य, नृत्य आदि कलाओं के प्रदर्शन के चित्रण मे लेखक ने उन दिनो प्रचलित शास्त्रीय पारिभाषिक शब्दों का पूर्णत: समुचित रीति से प्रयोग किया है।

भाषा— भाषा शब्दों से ही बनती है। तो भी शब्दो के चयन उनके प्रयोग की रीति, हर शब्द की सारी शक्तियों को प्रयोग में लाना, उन्हें वाक्यों

मे बदलना आदि के आधार पर भाषा का रूप बनता है। केवल कोप से भापा नही बनती। वैसे ही शैली के कारण भी भापा अपनी विचित्रता, विलक्षणता तथा कलात्मकता के अलावा पाठक या सुननेवाले के हृदय को या मन को अपने वश मे करने की शक्ति को पा लेती है।

शिलप्पदिहारम् प्रबंध काव्य है। जनसाधारण के दैनिक जीवन, तथा राजकुल के विशिष्ट जीवन, व सभ्रांत कुल का विलासमय जीवन, प्रजाजन का उत्सवमय जीवन आदि का प्रतिबिंब-काव्य है। और इयल् इशै और नाडहम् आदि तीन रूपों मे अपनी छटा दिखानेवाली त्रितमिऴ् रचना है। अतः हम छंद, रस तथा अलंकार तीनो मे भापा का सौंदर्य देखते है और उसकी उत्कृष्टता से आह्लाद पाते है। भाषा की शैली संबंधी विचार, काव्य की शैली या युक्तियों के विचार, दोनो मे अधिक पृथक्ता नही है। अतः काव्य युक्तियों के शीर्षक पर हम निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत करते है।

कवि कला के लिए कला के सिद्धात के अनुयायी नही है। पर जीवन की यथार्थता के चित्रण के साथ जीवनोद्धारक सिद्धांतों के आदर्श का प्रस्तुतीकरण भी कला-पूर्ण रीति से हो जाय यही कवि का प्रयत्न रहा है। इसमें तमिऴ् की काव्य परिपाटी के सम्यक् अनुसरण के साथ कवि की व्यक्तिगत कला-कुशलता यानी मेधा या प्रतिभा का समन्वय देखा जाता है।

ग्रंथ के आरम्भ में सूर्य चंद्र और मेघ की क्रमशः स्तुति की गयी है। साथ साथ राजा की महिमा भी बहुत कलापूर्ण ढग से मिला दी गयी है। हर अध्याय के अंत में अन्न का शब्द (या शब्द का टुकड़ा) रखा गया है।

रचना के अध्यायो के नाम रचना-पद्धति के अनुसार दिये गये है। साथ साथ विषय का सार भी मिला दिया गया है। वैसे बाईस अध्यायों के शीर्षक कादै है; पाडल् का एक है। वरि के तीन है। कुरवै के दो है। मालै के दो है। तमिऴ् में 'कादै' का अर्थ हिन्दी का गाथा शब्द का अर्थ दोनों मे समानता है। 'पाडल्' गान है। 'वरि' के दो विभाग है। एक गान है और दूसरा कूत्तु या नाट्य है। वरिप् पाडल् का उदाहरण कान्नल् वरि है। 'वरिक् कूत्तु' की व्याख्या वेट्टुव वरि और ऊर् शूऴ् वरि मे मिलती है। उसी प्रकार कुरवै के गीत और कूत्तु होते है। कुरवै वरि कुन्ऱक् कुरवै मे और कुरवैक्कूत्तु के स्पष्टीकरण आय्च्चियर् कुरवै मे पाये जाते है। वरिक् कूत्तु के स्पष्टीकरण में आठ प्रकार बनाये जाते है। वे आठों प्रकार का विवरण वेनिऱ् कादै (८वें अध्याय की ७४ से ११० वी पक्ति तक) मे मिलता है।

स्थान विशेष के अनुसार इनके लिए जो साहित्य रचा गया है वह कवि

की कल्पना-शक्ति, वर्णन-शक्ति और रस-परिपाक, रीति, ज्ञान आदि का परिचायक रहता है। वैसे ही मूसल गीत, अम्मान गीत, कंदुक गीत आदि मे भी राजा की प्रशंसा के साथ जो गान रचित हैं वे भी बहुत सुदर बन पड़े है।

घटनाओं का वर्णन, वस्तुओं का प्राकृत वर्णन, रसोत्पादक वर्णन, मार्मिक स्थलों की पहचान, ज्ञानदायी वर्णन आदि सभी प्रतिभाशाली रचयिता का ज्ञान तथा उनकी कला दोनो का श्रेष्ठ उदाहरण बने है। उदाहरण देकर समझाने के लिए अवकाश (स्थान का, समय का, दोनों का) नही है।

और एक बात है। जितना अधिक लिखना चाहता हूँ उतना लिखा जाय तब भी अवशेष उतना और अधिक रहता है, ऐसा लगता है। अतः मै यही समाप्त करके इतना कहे देता हूँ कि यह सब दृष्टि से विस्मयकारी अद्भुतता लिये हुए रसपूर्ण बना उत्कृष्ट काव्य है। पाठक पढ़कर जितना मिलता है उतना ग्रहण करे। वह लाभकारी ही होगा कथा का सार आपको अनुबंध में अलग मिलेगा। आनंददायक भी होगा।

इन बातों के अलावा पात्रों का सजीव तथा हृदयग्राही चरित्र-चित्रण आदि भूमिका में अपेक्षित है; तो भी हम छोड़ देते है। कारण साफ है। विज्ञ, सहृदय पाठक स्वयं उनको समझ सकेंगे। यह विश्वास है। परिश्रम-जनित-फल अधिक सुखदायी होता है।

मदुरै
२७ मार्च, १९९०

ति० शेषाद्रि

दो शब्द

तमिल का नव रसों से भरा प्राचीन ग्रंथ 'शिलप्पदिहारम्' अव नागरी लिपि पढ़ सकने वाले पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। हिन्दी अनुवाद में शेषाद्रि जी ने उचित स्थान पर चुन-चुनकर उपयुक्त शव्द रखे है। गद्यानुवाद किया है पर मूल पद्य का रसास्वादन करा दिया गया है। जिन शव्दों के हिन्दी पर्याय नही है, उनका विस्तृत वर्णन करके उन्हे समझा दिया है। साथ ही हिन्दी की शव्दावली में इनकी भरती करा दी है।



लाडली नाथ रेणु

'शिलप्पदिहारम्' में उस काल के समाज का सजीव चित्रण किया गया है। इसमें वनवासियों से लेकर राजप्रासाद-वासियों तक के रहन-सहन का, दुःख-सुख का, दिनचर्या का चित्र सजीव उभर आया है। शयन कक्ष से लेकर युद्धभूमि तक, मरुभूमि से लेकर उर्वरा भूमि तक, वनस्पतियो से लेकर पशु-पक्षियो तक, ग्रीष्म से लेकर वसत तक, जीवन के सभी पक्षों का चित्रण है। 'शिलप्पदिहारम्' वर्णन प्रधान है। कवि ने जिस जगह जो वर्णन आरम्भ किया है उसमें वह समाता चला जाता है। कथानक को उस समय उस वर्णन के चारो ओर मँडराना पडा है। जव कवि रस मे डुवकी लगाने लगता है तो चाहे शृगार हो चाहे करुण रस, वीर हो या वीभत्स, रौद्र हो या शात, विरह हो या मिलन, उसी में रँग जाता है और कथानक को मुड़कर खड़े होने को वाध्य कर देता है। कथानक को गौण वना देता है, फिर भी कथानक की डोर को सँवारे रखता है।

एक महत्वपूर्ण वर्णन जो "शिलप्पदिहारम्" मे आया है वह है तमिलनाडु की सीमा का। किसी एक राज्य की सीमा का नही, अनेक राज्यो वाले ऐसे भू-भाग का, जिसमें अनेकता में एकता का भाव उस समय था। इस ग्रथ के अनुसार दक्षिणी छोर कन्या कुमारी, उत्तरी छोर वेकट गिरि; पूर्व और पश्चिम में समुद्र।

सक्षेप मे यह कई दृष्टियो से महत्वपूण ग्रथ है।

७, 'निशिगंध', रूपनगर वान्द्रा (पूर्व),
वम्बई–४०००५१
६-४-१९९०

—लाडली नाथ रेणु

विषय-सूची

तमिळ्

शिलप्पदिहारम्

(इळङ्गो अडिहळ्)

1 पदिहम्

1 कुन्ऱक् कुऱवर् कण्डदु

कुणवायिऱ् कोट्टत्तु अरशुतुऱन्दु इरुन्द
कुडक्कोच् चेरल् इळङ्गो वडिहट्कुक्
कुन्ऱक् कुऱवर् ऑरुङ्गु कूडि
पॉलमब्बू वेङ्गै नलङ्गिळर् कॉळुनिळल्
ऑरुमुलै इळन्दाळ्ओर् तिरुमा पत्तिनिक्कु
अमरर्क्कु अरशन् तमर्वन्दु ईण्डि अवळ्
कादल् कॉळुनतैक् काट्टि अवळॊडु अम्
कट्पुलम् काण विट्पुलम् पोयदु
इऱुम्बूदु पोलुम्; अःदु अऱिन्दरुळ् नी ऎन 1–9

१ भूमिका

१ पर्वतीय कुरवरों ने जो देखा था

"तिरुक्कुण वायिल्" (पूर्वी-द्वार) के (कोष्ठ) मन्दिर में राज्य त्यागकर रहनेवाले "कुडक्कोच् चेरल् इळंगो" (पश्चिमी देश के राजा "शेरन्" या "चेर" वंश के युवराजा) के पास पर्वतीय कुऱवरों ने एकत्रित हो आकर निवेदन किया कि स्वर्णरंग के फूलों से लदे "वेंगै" तरु की घनी छाँह में खड़ी रही उस एक-स्तन-हीना श्रीमहासती के पास देवराज के निजी लोग आये; उसे उसके प्रेमी पति को दरसाकर, फिर हमारे देखते आकाश-लोक जो गये, वह अद्भुत दृश्य है। उसे आप जान लेने की कृपा करें। १-९

2 शात्तनारिन् विळक्कम्

अवण् उळै इरुन्द तण्तमिळ् शात्तन्
'यान् अऱिहुवन् अदु पट्टदु' ॲन्ऱु उरैप्पोन्
आरङ् गण्णिच् चोळन् मूदूर्प्
पेराच् चिऱप्पिन् पुहाअर् नहरत्तुक्
कोवलन् ॲन्बान् ओर् वाणिहन्; अव्वूर्
नाडहम् एत्तुम् नाडहक् कणिहै यॊडु
आडिय कॊळ्हैयिन् अरुम् पॊरुळ् केडुऱक्
कण्णहि ॲन्बाळ् मनैवि—अवळ् काल्
पण्अमै शिलम्बु पहर्दल् वेण्डिप्
पाडल्शाल् शिऱप्पिन् पाण्डियन् पॆरुञ्जीर्
माड मदुरै पुहुन्दनन् अदु कॊण्डु
मन्पॆरुम् पीडिहै मऱुहिर् चॆल्वोन्
पॊन्शॆय् कॊल्लन् तन्कैक् काट्ट
कोप्पॆरुन् देविक्कु अल्लदै, इच् चिलम्बु
याप्पुऱवु इल्लै; ईङ्गु इरुक्क' ॲन्ऱु एहिप्
पण्डुतान् कॊण्ड शिल् अरिच् चिलम्बिलैक्
कण्डनन् पिऱन्ओर् कळ्वन् कैॲन-
विनैविळै कालम् आदलिन् यावदुम्
शिनै अलर् वेम्बन् तेरान् आहिक्
कन्ऱिय कावलर्क्कुउय् "अक्कळ्वनैक्
कॊन्ऱु अच्चिलम्बु कॊणर्ह ईङ्गु ॲन
कॊलैक् कळम् पट्ट कोवलन् मनैवि
निलैक्कळम् काणाळ् नॆडुङ्गण् नीर् उहुत्तु
पत्तिनि आहलिन् पाण्डियन् केडुऱ
मुत्तार मार्विन् मुलैमुहम् तिरुहि
निलैकॊळ् कूडल् नीळ् ॲरि ऊट्टिय
पलर् पुहळ् पत्तिनि याहुम् इवळ् ॲन
'विनैविळै कालम् ॲन्ड्रीर्; यादु अवर्
विनै विळैवु ?' ॲन्न विऱलोय् केट्टि 10–38

२ शात्तनार का विवरण-कथन

तब वहाँ रहे शीतल तमिळ के कवि शात्तनार् ने कहा कि वह जो हुआ उसे मैं जानता हूँ। और वे आगे कहने लगे— अगस्त्यमालाधारी शोळन्

(राजा) के पुराने नगर पुहार् नगर में, जो बहुत ही श्रेष्ठ नगर है, कोवलन नाम का वणिक् था। उसकी नाटक-कला-प्रशंसित नाट्य-गणिका के साथ विलास से विपुल धनराशि का नाश हुआ। कण्णहि उसकी पत्नी थी। उसके पैर के मधुर शब्दयुक्त नूपुर को बेचने के लिए वह (कवियों की) कविताओं द्वारा प्रशंसित, पांडियन के बड़े यश से तथा सौधों से मंडित मदुरै में जा पहुँचा। उसने गौरवयुक्त बाजार में जाते हुए एक सुनार को (उसे) दिखाया। सुनार ने कहा—महारानी के सिवा इसे और कोई नहीं खरीद सकता। आप यहाँ रहे। कहकर वह गया और राजा के पास जाकर बोला, मैं पहले चोरी में खोये कारीगरी से युक्त नूपुर को एक अजनवी चोर के हाथ में देख आया हूँ। कर्म-फलन का समय आ गया। नीम के फूलों की मालाधारी पांडिय राजा ने विना कुछ सोचे अपने अनुभवी रक्षकों को बुलाया और आज्ञा सुनायी कि उस चोर का वध करके उस नूपुर को इधर लाओ। हत कोवलन की पत्नी ने कुछ आश्रय नहीं पाकर, आँसू की लगातार लम्बी धारा बहायी। फिर पतिव्रता सती होने के कारण उसने पांडियन् की हानि करते हुए मोती-माला मंडित वक्ष के एक स्तन के मुख (चूचुक) को नोच लिया और (फेंककर) मदुरै नगर भर को दीर्घ आग लगा दी। वही यह, बहुतों से प्रशंसित पतिव्रता सती है। शात्तन्नार के ऐसा कहने पर सन्त इळंगो ने पूछा कि जो आपने कहा कि पूर्व कर्म के फल के फलीभूत होने का प्रारब्ध समय आया तो उनके कर्मफल क्या है? १०-३८

3 विन्नैयिन् विळैवु

अदिराच् चिऱप्पिन् मदुरै मूदूर्
कॊन्ऱैयञ् जडैमुडि मन्ऱप् पॊदियिलिल्
वळ्ळियम् बलत्तु नळ्ळिरुट् किडन्देन्
आर्अञर् उऱ्ऱ वीरपत् तिनि मुन्
मदुरै मा तॆय्वम् वन्दु तोन्ऱिक्
"कॊदियळल शीऱ्ऱम् कॊडुंगैयिन् विळैत्तोय्
मुदिर्विनै नुङ्गट्कु मुडिन्ददु; आहलिन्
मुन्दैप् पिऱप्पिल् पैन्दॊडि कणवनॊडु
शिङ्गावण् पुहळ्च् चिङ्ग पुरत्तुच्
चङ्गमन् अन्नुम् वाणिहन् मन्नैवि
इट्ट शाबम् कट्टियदु: आहलिन्
वार् औलि कून्दल्! निन् मणमहन्—तन्नै
ईर्—एळ् नाळ् अहत्तु अल्लै नीङ्गि

वात़ोर्—तङ्गळ् वडिविल् अल्लवै
ईऩोर वडिविल् काण्डल् इल्'—ॲनक्
कोट्टम् इल् कट्टुरै केट्टनन् यान् ॲऩ— 39-54

३ कर्म का फल

शात्तऩार् बोले— हे शक्तिमंत ! सुनिए। अचल महिमामय मदुरै के पुराने नगर में, कोन्नरै सुमनमंडितजटाधारी (परमेश्वर) के मन्दिर के आँगन के आम स्थल रजतांवलम् में (मंडप-सह खुले मैदान में) अर्धरात्रि के समय मैं पडा रहा। तव अदम्य दुख पीड़िता वीरपतिव्रता के सामने मदुरै के महान देवता आ प्रकट हुआ। (और बोला :) जलते अंगारे के समान कोप को, स्तन द्वारा प्रकट करनेवाली ! पूर्व पुण्य पूरे हो गये। पूर्वजन्म में श्रेष्ठ तथा प्रकीर्तित 'शिगपुरम्' के 'संगमन्न' नाम के वणिक् की पत्नी ने जो श्राप दिया था वह आ मिल गया। इसलिए हे लम्बे, घने केश वाली ! अपने पति को, दो-सात (चौदह) दिनों के अन्त में, देव के रूप में—अब मानव के रूप में नही देख सकोगी—देखोगी। (ऐसा जो देवता ने कहा) वह निष्कपट वचन हमने सुना। ३९-५४

4 अडिहळ् नीरे अरुळुह

अरशियल् पिळैत्तोर्क्कु अऱङ्कूऱ्ऱु आवदूउम्
उरैशाल् पत्तिनिक्कु उयर्न्दोर् एत्तलुम्
ऊळ्विनै उरुत्तुवन्दु ऊट्टुम् ॲऩ्ऩवदूउम्
शूळ् वितैच् चिलम्बु कारण माहच्
'चिलप्पदि हारम्' ॲऩ्ऩुम् पॅयराल्
नाट्टुदुम् याम् ओर् पाट्टुडैच् चॅय्युळ्' ॲन
'मुडिकेळु वेन्दर् मूवर्क्कुम् उरियदु
अडिहळ् नीरे अरुळुह' ॲऩ्ऱाऱ्कु अवर् 55-62

४ महात्मा आप ही कृपा करें

(इळंगो ने कहा :) शासन-धर्म-च्युत का धर्म देवता यम बन जायगा —यह तथ्य और यशस्विनी पत्नी (पतिव्रता) की श्रेष्ठ लोग महिमा गायेंगे —यह तथ्य; और प्रारब्ध-कर्म सरोष घेर आकर फल दिला देगा —यह तथ्य —ये तीनों तथ्य सुन्दर नूपुर के द्वारा प्रकट हुए हैं। अतः हम 'शिलप्पदिहारम्' नाम से गीतयुक्त काव्य रचेंगे। ऐसा कहने पर शात्तनार् ने कहा कि यह

चरित्र तीनों किरीटधारी (पांडिय, शोळ, शेर) राजाओं से सम्बन्ध रखता है। हे पूज्यपाद ! आप ही (कृपा करे) रचें। ५५-६२

5 नूलिन् अमैप्पु

मङ्गल वाळ्त्तुप् पाडलुम् कुरवर्
मनैयऱम् पडुत्त कादैयुम् नडमुनविल्
मङ्गै मादवि अरङ्गेऱ्ऱु कादैयुम्
अन्दि मालैच् चिऱप्पुच्चय् कादैयुम्
इन्दिर विळवुऊर् ऍडुत्त कादैयुम्
कडलाडु कादैयुम्
मडल् अविळ् कानल् वरियुम् वेनिल् वन्दु इऱुत्तेन
मादवि इरङ्गिय कादैयुम् तीदु उडैक्
कनात्तिऱम् उरैत्त कादैयुम् विनात्तिऱत्तु
नाडु काण् कादैयुम् काडुकाण् कादैयुम्
वेट्टुव वरियुम् तोट्टलर् कोदैयोडु
पुऱञ्जेरि इऱुत्त कादैयुम् कऱङ्गु इशै
ऊर्काण् कादैयुम् शीर् शाल् नङ्गै
अडैक्कलक् कादैयुम् कॊलैक्कळक् कादैयुम्
आय्च्चियर् कुरवैयुम् तीत्तिऱम् केट्ट
तुन्ब मालैयुम् नण्पहल् नडुङ्गिय
ऊर्शूळ् वरियुम् शीर्शाल् वेन्द तोडु
वळक्कुरै कादैयुम् वञ्जित्त मालैयुम्
अळऱ्पडु कादैयुम् अरुन्दॆय्वम् तोन्ऱिक्
कट्टुरै कादैयुम् मट्टुअलर् कोदैयर्
कुन्ऱक् कुरवैयुम्—अन्ऱु इवै अनैत्तुडन्
काट्चि काल्कोळ् नीर्प्पडै नडुकल्
वाळ्त्तु वरम् तरु कादैयोडु
इवु आऱु—ऐन्दुम्
उरैइडै इट्ट पाट्टुडैच् चॆय्युळ्
उरैशाल् अडिहळ् अरुळ, मदुरैक्
कूल वाणिहन् शात्तन् केट्टनन्;
इडु—पाल्वहै तरिन्द पदिहत्तिन् मरबु—अन्न 63-90

५ ग्रन्थ की रचना (विषय-क्रम)

उन्होंने (इळंगो अडिहळ ने) निम्नलिखित प्रकार की रचना कर सुनायी। (१) मंगलाशासन की गाथा; (२) माता-पिताओं के (कोवलन्‌ तथा कण्णहि को) गृहस्थ-धर्म में लगाने की गाथा; (३) नर्तकी मादवि के "मंचारोहण" की (नृत्य-प्रदर्शन की) गाथा; (४) संध्या की प्रशंसा की गाथा; (५) (पुहार्) नगर के इन्द्रोत्सव मनाने की गाथा; (६) समुद्र-स्नान की गाथा; (७) उत्फुल्ल फूलों से भरे समुद्रतट पर कोवलन्-कण्णहि के समुद्र-गीत गाने की गाथा; (८) मादवि के ग्रीष्म के आने से दुखी होने की गाथा; (९) संकटदायी स्वप्न का प्रकार कहने की गाथा; (१०) प्रश्न करने योग्य कुतूहलवर्धक देश-दर्शन की गाथा; (११) वन-दर्शन की गाथा; (१२) शिकारियों के गीत की गाथा; (१३) प्रफुल्ल सुमन-मालाधारिणी कण्णहि के साथ कोवलन्‌ के नगर के बाहर बस्ती में जाकर रहने की गाथा; (१४) नगाड़े की ध्वनि से गुंजायमान पुराने नगर मदुरै को देख आने की गाथा; (१५) श्रीमती स्त्री (कण्णहि) के आश्रित स्त्री बनने की गाथा; (१६) वध-स्थल की गाथा और (१७) ग्वालिनों की कुरवै नाट्य-गाथा; (१८) भयंकर (कोवलन के वध का) समाचार सुनकर कण्णहि के रोने-कलपने की गाथा; (१९) मध्याह्न में नगर को कँपाते हुए (कण्णहि के) घूम आने की गाथा; (२०) श्रीयुक्त राजा के सामने न्याय-वाद सुनाने की गाथा; (२१) शपथ की गाथा; (२२) आग में (नगर के) जलने की गाथा; (२३) महनीया ईश्वरी के प्रकट होकर बात बताने की गाथा; (२४) मधुस्रावी सुमनमंडित स्त्रियों के 'कुन्नरक् कुरवै' (नाच) नाचने की गाथा; ऐसे सबके साथ (२५) दृश्य; (२६) शुभारंभ; (२७) स्नान कराना; (२८) मूर्ति-स्थापना; (२९) यशोगान; और (३०) वर-प्रदान की गाथा को मिला कर—पाँच के छः (तीस) भागों के गीतमिश्रित पद्य-प्रबन्ध को प्रकीर्तित सन्त ने रचकर सुनाया और उसे मदुरै के अनाज के व्यापारी शात्तन्‌ ने सुना। यही ग्रन्थ के प्रकरणों के बतानेवाले पदिहम (भूमिका) की पद्धति है। ६३-९०

2 उरै पॆरु कट्टुरै

(गद्य शैली में निबंध)

1 पाण्डियन् वऴिपट्टान्

अतुऴ तॊट्टु पाण्डियन् नाडु मऴै वऴम् कुऱ्न्दु, वऱुमै अय्दि, वॆप्पु नोयुम कुरुवुम् तॊडरक् कॊऴ्कैयिल् इरुन्द वऴ्ऴि वेऴ् चॆऴियन् नङ्गैक्कुप्

पीऱ्कोल्लर् आयिरवरैक् कोन्ऱु कळवेळ्वियाल् विळवोडु शान्ति शॅय्य, नाडु मलिय मळै पॅय्दु नोयुम् तुन्बमुम् नीङ्गियदु।

२ गद्य शैली में कथन (निबन्ध)

१ पांडियन् ने पूजा की

उस दिन से पांडिय देश में वर्षा सूख गयी। अकाल पड़ गया। गर्मी का रोग तथा फोड़े (खाज) का रोग फैला। कोर्कै में रहे 'विजयी भालाधारी शॅळियन्' ने (पांडिय देश के लोगों की पीड़ा से दुखी होकर) देवी के लिए (उसके कोप के शमनार्थ) सहस्र सुनारों को मिटाकर* बलि-यज्ञ कराया तथा उत्सव मनाया। तब देश को समृद्ध करते हुए पानी बरसा; रोग तथा कष्ट दूर हुए।

2 कोङ्गु इळङ्गोशर्

अदु केट्टु कोङ्गु इळङ्गोशर् तङ्गळ् नाट्टहत्तु नङ्गैक्कु विळवोडु शान्ति शॅय्य मळै तोऴिल् ऎन्ऱुम् माऱादायिऱ्ऱु।

२ कोङ्गु (कोंकण प्रदेश) के (युवा राजा लोग) 'कोशर'

वह (पांडिय राजा की बात) सुनकर इळम् कोशरों ने भी अपने-अपने राज्यों में सती देवी की, उत्सव के साथ, शांति का रस्म अदा किया। करने पर वर्षा का होना बराबर जारी रहा (रुका नही)।

3 कयवाहु वळि पट्टान्

अदु केट्टु कडल् शूऴ् इलङ्गैक् कयवाहु ऎन्बान् नङ्गैक्कु नाळ् बलि—पीडिहैक् कोट्टम् मुन्वुऱुत्तु—आङ्गु 'अरन्दै कॅडुत्तु वरम् तरुम् इवळ्' ऎन्न आडित् तिङ्गळ् अहवैयित्, आङ्गु ओर् पाडि विळाक् कोऴ् पन्मुऱै ऎडुप्प, मळै वीऱ्ऱिरुन्दु वळम् पल पॅरुहि पिळैया विळैयुळ् नाडु आयिऱ्ऱु।

३ 'कयवाहु' ने पूजा की

वह (बात) सुनकर समुद्रावृत लंका के 'कयवाहु' नाम के राजा ने सती देवी के लिए बलि देकर पूजा करने के लिए "पीठिका कोष्ठ" (मन्दिर)

* सुनारों को मिटाकर का अर्थ यह भी किया जाता है कि सुनारों की पुतलियाँ बनायी गयीं और उन्हें नष्ट किया गया।

बनवाया। और यह मानकर कि 'यह दुखनिवारिका वरदायिनी हैं, जेठ के महीने में वहाँ एक बड़े उत्सव का भी कई साल अनेक बार आयोजन करवाया। इससे वर्षा स्थिर हो गयी। समृद्धि खूब हो गयी। देश अचूक रीति से पुष्कल पैदाइश का देश बन गया।

4 शोऴऩ् पोऱ्ऱिताऩ्

अदु केट्टु शोऴऩ् पॆरुङ् किळ्ळि कोऴि अहत्तु, 'ऎत तिऱत्तातुम् वरम् तरुम् इवळ् ओरु पत्तिऩिक् कडवुळ् आहुम्' ऎऩ नङ्गैक्कुप् पत्तिऩिक् कोट्टम् शमैत्तु नित्तल् विऴा अणि निहऴ्वित्तोने।

४ शोळ राजा ने आदर किया (पूजा की)

वह सुनकर 'पॆरुम् किळ्ळि' नाम के शोऴऩ् ने यह मानकर कि सभी स्थितियों मे वरदायिनी अवश्य यह पतिव्रता सती देवी ही होगी, सती देवी के लिए सती-मन्दिर बनवाया और दैनिक उत्सव तथा झांकियों-सजावटों की व्यवस्था करायी।

मुदलावदु

पुहारक् काण्डम्

1 मङ्गल वाऴ्त्तुप् पाडल्

1 पोऱ्ऱुवोम्

(छंद—शिन्दियल् वॆण्पाक्कळ्)

तिङ्गळैप् पोऱ्ऱुदुम् ! तिङ्गळैप् पोऱ्ऱुदुम् !
कॊङ्गु अलर्तार्च् चॆन्नि कुळिर्वॆण् कुडै पोन्ऱु इव्
अम्कण् उलहु अळित्तलान्

ञायिऱु पोऱ्ऱुदुम् ! ञायिऱु पोऱ्ऱुदुम् !
काविरि नाडन् तिहिरि पोल् पॊन् कोट्टु
मेरु वलन् तिरिदलान्

मामळै पोऱ्ऱुदुम् ! मामळै पोऱ्ऱुदुम्
नाम नीर् वेलि उलहिऱ्कु अवन् अळि पोल्
मेल् निन्ऱु तान् शुरत्तलान्

पूम् पुहार् पोऱ्ऱुदुम् ! पूम् पुहार् पोऱ्ऱुदुम् !
वीङ्गुनीर् वेलि उलहिऱ्कु अवन् कुलत्तोडु
ओङ्गिप् परन्दॊऴुह लान् 1-12

पहला

पुहार काण्ड

१ (विवाह) मंगलाशासन गान

१ स्तुति करें (महिमा गायें)

चन्द्र की स्तुति करें ! चन्द्र की स्तुति करें। मकरन्द चूनेवाले प्रफुल्ल अगस्त्य फूलों की मालाधारी (शोऴ राजा) के सिर पर के शीतल (कृपा के चिह्न) श्वेत छत्र के समान इस सुन्दर भूलोक पर शीतल प्रकाश फैलाता है— अतः सूर्य की स्तुति करे। सूर्य की स्तुति करे। कावेरी-प्रदेश के राजा के आज्ञाचक्र के समान सुन्दर शृंगों वाले (या स्वर्ण के) मेरु की परिक्रमा कर आता है। अतः (हम स्तुति करें)। महान वर्षा (घटा) की

स्तुति करें; महान वर्षा की स्तुति करें। भयंकर समुद्र जिसकी वाड़ी है, उस भूमि के ऊपर रहकर उस (राजा) की करुणा के समान बरसती है। अतः सुन्दर पुहार नगर की महिमा गायें। पुहार नगर की महिमा गायें। विशाल सागर-वलयित भूमि भर में उस (राजा) के कुल के समान श्रेष्ठ तथा विस्तृत यश के साथ विद्यमान है। १-१२

2 पुहऴ् मन्ननुम् शिऱप्पु

(छंद—कोच्चहक् कलिप्पा)

आङ्गु
पॊदियिल् आयिनुम्, इमयम् आयिनुम्
पदिॲऴु अऱियाप् पऴङ्गुडि कॆऴीइय
पॊदुअऱ शिऱप्पिन् पुहारे आयिनुम्
नडुक्कु इन्ऱि निलैइय ॲन्नवदु अल्लदै
ऒडुक्कम् कूऱार् उयर्न्दोर् उण्मैयिन्
मुडित्त केळ्वि मुऴुदु उणर्न्दोरे
अदनाल्
नागनीऴ् नगरोडु नाग नाडु—अदनोडु
वोगम् नीऴ् पुहऴ् मन्नुम् पुहार् नगर्　　13-22

२ यश-विशिष्टता

हाँ! 'पॊदियिल्' (मलय प्रदेश) हो या हिमालय हो, या 'पुहार' नगर ही जो स्थानांतरण से अनभ्यस्त दीर्घ परंपरा के प्रजाजनो से पूर्ण है— वे देश अजर-अमर है। ऐसा कहना छोड़ उनके ह्रास की संभावना नहीं कहते (मानते) श्रवण-शिक्षा पारंगत विद्वान लोग; क्योंकि उनमें उच्च महान लोग रहते है। इसी कारण 'पुहार्' नगर विशाल नाकलोक तथा नागलोक के समान ही भोग-यश-विशिष्ट है। १३-२२

3 कण्णहि

अदु तन्निल्
मागवान् निहर्वण्कै 'मानायक्कन्' कुलक्कोम्बर्
ईहैवान् कॊडि अन्नाळ्: ईर्आऱ आण्डु अहवैयाळ्;
अवळुम् तान्
पोदिल् आर् तिरुविनाळ् पुहऴुडै वडिवु ॲन्ऱुम्

तीदुइला वडमीन्निन् तिऱम् इवळ् तिऱम् ॲन्ऱुम्
मादरार् तॊळुदु एत्त वयङ्गिय पॆरुङ्गुणत्तुक्
कादलाळ् ! पॆयर्मन्नम् कण्णहि ॲन्बाळ् मन्नो 23-29

३ 'कण्णहि'

उसमें गगन के मेघों के समान उदार-हस्त मानाय्कन् (महानायक) रहा। उसकी कुल-लतिका कन्या स्वर्ण-आकाश की लतिका के समान थी तथा बारह साल की थी। वह ऐसी उत्तम गुणशालिनी थी कि स्त्रियाँ उसकी प्रशंसा यों करती थी, कमलासनस्था लक्ष्मी का प्रकीर्तित रूप इसका-सा है। निष्कलंक उत्तरी नक्षत्र (अरुन्धती) का चारित्य इसका-सा है। वह कण्णहि नाम से विभूषित थी। २३-२९

4 कोवलन्

आङ्गुप्
पॆरुनिलम् मुळुदुआळुम् पॆरुमहन् तलैवैत्त
ऒरुतनिक् कुडिहळोडु उयर्न्दुओङ्गु शॆल्वत्तान्
वरुनिदि पिऱर्क्कु आर्त्तुम् माशात्तुवान् ॲन्बान्
इरुनिदिक् किळवन् महन् ईर्-ॲट्टु आण्डु अहवैयान्;
अवनुम् तान् !
मण्तेय्त्त पुहळिनान्; मदिमुह मडवार्तम्
पण्तेय्त्त मॊळियिनार् आयत्तुप् पाराट्टिक्
कण्डु एत्तुम् शॆव्वेळ् ॲन्ऱु इशैप्पोक्किक् कादलाल्
कॊण्डु एत्तुम् किळमैयान् कोवलन् ॲन्बान् मन्नो 30-39

४ कोवलन्

वहाँ (उस नगर में) विशाल भूमि भर का शासन करनेवाले उत्तम शोळ राजा द्वारा सम्मानित अग्रगण्य प्रजाओं में एक उस गौरव के साथ दिन-ब-दिन वर्धनशील संपत्ति का मालिक था। वह अपनी आय को दूसरों की सहायता में देनेवाला 'माशात्तुवान्' नामक धनवान (व्यापारी) था। उस बड़े धन के अधिपति के (दो के आठ) सोलह साल का एक पुत्र था। उसका नाम कोवलन् था और कई देशों में जाकर व्यापार करने से श्रुतकीर्ति बना था। और चन्द्र-वदना स्त्रियों द्वारा प्रशंसा योग्य बना था जो अपने संगीत को हरानेवाली बोली में अपनी सखियों की टोली में रहकर उसकी महिमा गाती थीं; कहती थी कि यह आँखे भर देखकर खुश होने योग्य गोरे सुब्रह्मण्यदेव है, और जो प्रेम-विभोर थी, ३०-३९

5 तिरुमणम्

अवरै इरुपॆरुङ् गुरवरुम् ऒरु पॆरु नाळाल्
मण अणि काण महिऴ्नॄदनर्; महिऴ्नॄदुऴि
यानै ॲरुत्ततु अणि इळैयार् मेल् इरीइ
मा नहर्क्कु ईन्दार् मणम्
अव्वऴि

मुरशु इयम्बिन मुरुडु अदिर्न्दन, मुरै ॲऴुन्दन पणिलम्; वॆण्कुडै
अरशु ॲऴुन्ददोर् पडि ॲऴुन्दन; अहलुळ् मङ्गल अणि ॲऴुन्दडु
मालैताऴ् शॆन्नि वयिरमणित् तूण् अहत्तु
नील विदानत्तु, नित्तिलप्पूम् पन्दर्क्कीऴ्
वानूऊर् मदियम् शहडु अणैय वानत्तुच्
चालि ऒरु मीन तहैयाळैक् कोवलन्
मामुदु पार्प्पान् मरैवऴि काट्टिडत्
तीवलम् शॆय्वदु काण्बार् कण् नोन्बु ॲन्नै 40-53

५ विवाह

उन दोनो को, उनके पिताओं ने एक शुभ दिन में, सुन्दर रूप से विवाहित देखना चाहा। सन्तोष के साथ उन्होंने आभरणधारिणी अगनाओं को हाथी के कण्ठ पर (की पीठ पर) बिठाकर बड़े नगर के लोगो को उनके द्वारा समाचार दिलवाया। तब ढोल बज उठे। मर्दल थर्रा उठे। शंख बारी-बारी से बजे। श्वेतछत्र, मानों राजा के जुलूस में, चले। नगर के मध्य मंगलमयी सजावट भी चली। मालाओं से सजे शीर्ष वाले हीरे के खम्भो से युक्त मंडप में, नीले वितानो से युक्त सुन्दर मुक्ता के पंडाल मे, आकाशचारी चन्द्र के रोहिणी नक्षत्र के साथ मिलने के दिन, स्वर्ग की अरुन्धती के समान ही शोभायमान योग्य कन्या (कण्णहि) के साथ, श्रेष्ठ, अनुभवी ब्राह्मणों के वेद-शास्त्र-रीति बताते कोवलन् अग्नि की परिक्रमा जो करता था, उसको जो देख पाये, उनकी आँखों की तपस्या ही कैसी! धन्य है? ४०-५३

6 अमळि एऱ्ऱिनर्

विरैयिनर्, मलरिनर् विळङ्गु मेनियर्
उरैयिनर्, पाट्टिनर्, ऒशिन्द नोक्किनर्
शान्दिनर् पुहैयिनर् इडित्त शुण्णत्तर्
एनदुइळ मुलैयिनर् इडित्त शुण्णत्तर्

विळक्कित्तर् कलत्तित्तर् विरिनद पालिहै
मुळैक्कुड निरैयित्तर् मुहिळ्त्त मूरलर्
पोदोडु विरिकून्दर् पौलत्त नरुङ्गोडि अन्नार्
कादलर् पिरियामल् कववुक्कै ञॅहिळामल्
तीदु अरुह' ॲन्न अेत्तिच् चिन्नमलर् कौडु तूवि
अङ्गण् उलहित्त अरुन्ददि अन्नाळै
मङ्गल नल् अमळि एड्रित्तार्—तङ्गिय
इप्पाल् इमयत्तु इरुत्तिय वाळ् वेङ्गै
उप्पालैप् पौर्कोट्टु उळैयदा ॲप्पालुम्
शॅरुमिहु शित्त वेर् चॅम्बियन्न
ऑरुत्तत्ति आळि उरुट्टुवोन् ॲन्नवे 54-68

६ पलंग पर (चढ़ाना) पहुँचा देना

कुछ स्त्रियाँ सुगन्धित द्रव्य लेकर और कुछ फूल लेकर आयी। वे सब कमनीय शरीर वाली थी। वे बोलती हुई या गाती हुई आयी। वे लाज-भरी दृष्टि फेकती थी। कुछ चन्दन लिये थी, कुछ सुगन्धित धूप। वे आकर्षक मालाएँ पहने थी। पीन तथा उन्नत उरोजो वाली उनमें कुछ सुगन्धित द्रव्यों का कूटा चूर्ण ले आयी। कुछ स्त्रियाँ दीप ले आयी। उनमें बरतन, पालिकाओ (अंकुरित बीजों से भरे मंगलसूचक छोटे मृत्पात्रों) के साथ अंकुर के कलश तथा पूर्णकुम्भ ले आनेवाली स्त्रियाँ थी। वे हास्य-वदना फुल्ल-सुमन-शोभित दीर्घ केश वाली अगनाएँ सुन्दर स्वर्णलताओं के समान (लचकती) आयी। (उन्होंने यह आशीर्वचन कहा कि) प्रेमी से कभी न बिछुड़े, जुड़े हुए हाथो का बंधन कभी न खसके। अनिष्ट-मुक्त हो सदा सुखी रहो। यह आशीर्वचन कहते हुए उन्होंने कुछ कण्णहि पर अर्पित किया; और सुन्दर पृथ्वी की अरुन्धती-सी उसको शोभायमान शुभ पलंग पर बिठाया। उन्होंने तब राजा की स्तुति भी इन शब्दों में की—हिमालय के इस तरफ़ अपना बाघ का झण्डा फहराकर स्वर्ण-शिखर हिमालय के उस बाजू मे भी जिसने बाघ का चिह्न अकित किया, उस युद्ध-विक्रम क्रोध-शील वेल-(भाला-) धारी शम्बियन❀ अपना अनुपम चक्र सब ओर चलाता रहे! ५४-६८

❀ शॅम्बियन शोळ राजाओं का एक विशेषण है। कहा जाता है कि वह शिबि से सम्बन्ध रखता है। इधर कुछ विद्वानों से यह भी माना जाता है कि शोळ वंश उत्तर के महाराजा शिबि से सम्बन्ध रखता है; पर यहाँ के शिबि को अलग माननेवाले भी हैं।

2 मतैयरम् पडुतत् कादै

(छंद—निलैमण्डिल आशिरियप्पा)

1 नॆडुनिलै माडत्तु

उरैशाल् शिऱप्पिन्, अरैशुविऴै तिरुविन्
परदर् मलिन्द पयङ्गॆऴु मानहर्-
मुऴङ्गुकडल् ञालम् मुऴुवदुम् वरित्तुम्
वऴङ्गत् तवाअ वळत्ततु आहि;
अरुम्पॊरुळ् तरूउम् विरुन्दिन् तेॲम्
ऑरुङ्गु तॊक्कन्न उडैप्परुम् पण्डम्
कलत्तित्तुम् कालित्तुम् तरुवनर् ईट्टक्
कुलत्तिऱ् कुन्ऱाक् कॊऴुङ्गुडिच् चॆल्वर्
अत्तहु तिरुविन् अरुन्दवम् मुडित्तोर्
उत्तर कुरुविन् ऑप्पत् तोन्ऱिय
कयमलर्क् कण्णियुम् कादर् कॊऴुनन्नुम्
मयन् विदित्तन्न मणिक्काल् अमळिमिशै
नॆडुनिलै माडत्तु, इडैनिलत्तु इरुन्दुऴि 1-13

२ गृह-धर्म-आचरण गाथा

१ कई तल्लों के प्रासाद में

प्रकीर्तित महिमा से तथा राजाओं को भी लालच में डालनेवाली श्री से सम्पन्न समुद्री-व्यापारी-प्रभूत तथा उपलब्धि-प्रचुर था महानगर (पुहार्)। वह इतना समृद्ध था कि गरजते सागर से घिरी सारी पृथ्वी (की जनता) के आने पर भी दान करते वह रिक्त न ही हो सकता था। अपूर्व वस्तुओ के निर्माता अनेक नये-नये देश आकर मानो एकजुट हो गये हों, ऐसा उन देशों के बहुत द्रव्य को लोग पोतो तथा छकडो से लाकर उमे भर देते थे। वहाँ के धनी लोग कुल-धर्माचरण में अचूक थे। ऐसे धनी लोग तप (यानी धन का दान धर्मादि मे उचित उपयोग) करके जिस भोग भूमि को जाते है, उस (छः भोग-भूमियो में एक) उत्तरकुरु के तुल्य (पुहार को) बनाते हुए पैदा हुए थे विशालाक्षी कण्णहि और उसका प्रिय पति कोवलन्। वे दोनो मय-निर्मित-से मणि-चरण पर्यंक पर रहे, जो कई (सप्त-) तल्लों के प्रासाद मे मध्यस्थ खण्ड में था, और वे आनन्दमग्न थे, तब—। १-१३

2 तॆन्र्रल् वन्ददु

कळुनीर् आम्बल् मुळुनॆरिक् कुवळै
अरुम्बुपॊदि अविळ्न्द शुरुम्बुइमिर् तामरै
वयर्र्पू वाशम् अळैइ अयर्र्पू
मेतहु ताळै विरियल् वॆण्तोट्टुक्
कोदै मादवि शण्बगप् पॊदुम्बर्त्
तादु तेर्न्दु उण्डु मादर्वाळ् मुहत्तुप्
पुरिकुळल् अळहत्तुप् पुहल्एक् कर्र्त्
तिरितरु शुरुम्बॊडु शॆव्वि पार्त्तु
मालैत् तामत्तु मणिनिरैत्तु वहुत्त
कोलच् चाळरक् कुरुङ्गण् नुळैन्दु
वण्डॊडु पुक्क मणवायत् तॆन्र्रल्
कण्डु महिळ्वु ऎय्दि कादलिर् चिर्न्दु
विरैमलर् वाळियॊडु वेनिल् वीर्रिरुक्कुम्
निरैनिलै माडत्तु अरमियम् एरि— 14-27

२ दक्षिणी पवन आया

"कळुनीर्" (कमल ?) लाल "आम्बल्" (उत्पल ?) पूर्ण विकसित "कुवळै" कलियों के विकसित हो जाने पर बने भ्रमर-रव-सह कमल आदि जल-पुष्पों का मिश्रित वास सूँघ लेने के बाद, उनसे परे (पास रहे) उत्कृष्ट विकच केतकी के श्वेत दल, चम्पक वन में माला के रूप में खिले माधवी के फूल आदि के पराग का चयन कर आस्वादन करके, उज्ज्वलसुखी स्त्रियों के वटे हुए घुँघराले केश की गन्ध सूँघने को लालायित होकर अलिगग मँड़रा रहे थे। उनके साथ, मौके की ताक में, मणिमालाओं की पंक्तियों से अलंकृत सुन्दर गवाक्षों के छोटे छेदों से घुसकर सुगन्धित दक्षिण-पवन (मलयानिल) आ रहा था। उसको देखकर (कोवलन् दम्पति) खुश हुए और संभोग की बढ़ती इच्छा के कारण खण्ड-युक्त प्रासाद के हर्म्य-तल पर चढ़े, जहाँ सुगन्ध-सुमन-शर के साथ वसन्तराज (कामदेव) विद्यमान था। १४-२७

3 इन्बव् वॆळ्ळम्

शुरुम्बु उणक् किडन्द नरुम्बूच् चेक्कैक्
करुम्बुम् वल्लियुम् पॆरुन्दोळ् ऎळुदि
मुदिर्कडल् ञालम् मुळुवदुम् विळक्कुम्
कदिर् ऒरुङ्गु इरुन्द काट्चि पोल

वण्डुवाय् तिऱप्प नॆडुनिला विरिन्द
वॆण्दोट्टु मल्लिहै विरियल् मालैयॊडु
कऴुनीर्प् पिणैयल् मुऴुनेरि पिऱऴ्त
तारुम् मालैयुम् मयङ्गिक् कैयऱुत्त
तीराक् कादलिऩ् तिरुमुहम् नोक्किक्
कोवलऩ् कूऱुम्ओर् कुऱियाक् कट्टुरै— 28-37

३ प्रमोद-प्रवाह

(चढकर वे) भ्रमर-युक्त पड़े रहे गन्ध-वह पुष्पकलित शय्या पर (बैठे), (कोवलऩ् ने) ईख तथा लता के चित्र (कण्णहि के विशाल स्कन्धों पर) लिखे। और दोनो, पुरातन सागर की घिरी सारी पृथ्वी को उजागर करनेवाले दोनो प्रकाशपुज (सूर्य और चन्द्र) मिले रहे जैसे दिखते थे। तव अलियो के मुख खोल देने मे चाँदनी के समान विकसित श्वेत-दल मल्लिका की मालाएँ (कोवलन की) और (कण्णहि के) कऴुनीर् के फूलों के हार हिले और आपस में गुँथ गये। (संभोग-लीला के अन्त में) दोनों शिथिल और अशक्त बने। तव अदम्य कामराग के साथ (कण्णहि का) श्रीमुख देखकर कोवलन् ने अपूर्व-चिन्तित (प्रशंसा-) वचन कहा। २८-३७

4 उरुवैप् पुहऴ्दल्

कुऴवित् तिङ्गळ् इमैयवर् एत्त
अऴहॊडु मुडित्त अरुमैत्तु आयितुम्
उरिदिऩ् निऩ्ऱॊडु उडऩ्पिऱप्पु उण्मैयिन्
पॆरियोन् तरुह तिरुनुदल् आह ॲऩ
अडैयार् मुनैयहत्तु अमर्मेम् पडुनर्क्कुप्
पडै वळङ्गुवदुओर् पण्बु उण्डु आहलिऩ
उरुविलाळऩ् ऒरु पॆरुङ् गरुप्पुविल्
इरुकरुम् पुरुवम् आह ईक्क
मूवा मरुन्दिऩ् मुऩ्ऩर्त् तोन्ऱलिऩ्
तेवर् कोमान् दॆय्वक् कावल्
पडै वित्तक्कु अळिक्क—अदऩ् इडै नित्तक्किडै ॲऩ
अऱुमुह ऒरुवन् ओर् पॆऱुमुरै इऩ्ऱियुम्
इरुमुरै काणुम् इयल्वित्तिन् अऩ्ऱे
अम् शुडर् नॆडुवेल् ऒन्ऱुम् निऩ्मुहत्तुच्
चॆङ्गडै मऴैक्कण् इरण्डा ईत्तदु 38-52

४ रूप की प्रशंसा करना

(श्री लक्ष्मीदेवी मानकर कोवलन कहता है :) बालचन्द्र, सुरों का स्तुत्य होकर (शिव जी के सिर की) जटा को अलंकृत करनेवाला सौभाग्यवान बना। ठीक! तो भी वह तेरा सहजात था। अतः उस पर तेरा हक मानकर परमेश्वर उसे 'ललाट बनो' कहकर तेरे पास दे दें। शत्रुओं के गुस्साकर चढ़ आने पर युद्ध में लगनेवालों को (सहायतार्थ) अस्त्र-शस्त्र दिलाने की एक प्रथा है। (उसको मानकर) अनंग ने अपने ईख के धनुष को (या काले धनुष को— करुप्पु का अर्थ ईख भी है, काला भी है) तेरी दो काली भौंहें बनने के लिए दे दे। अजर औषध (अमृत) के पहले तू पैदा हुई। अतः देवेन्द्र देव-रक्षक अपने वज्रायुध को तुझे दे दे। उसका मध्य भाग तेरी कमर बन जायगा। अनुपम षण्मुखदेव के पास मुझसे वैर करने का कोई न्याय-क्रम नहीं था। तो भी मुझे टूटा हुआ देखने की इच्छा से न उसने अपनी ज्वलंत लम्बी शक्ति (वेल) को तेरे मुख पर के लाल डोरों वाले सजल (शीतल) नेत्रद्वय के रूप में दे दिया है! ३८-५२

5 शायलुम् कुरलुम्

माइरुम् पीलि मणिनिऱ मञ्ञै निऩ्
शायऱ्कु इडैन्दु तण्कान् अडैयवुम्
अऩ्ऩम् नल्नुदाल्! मॆऩ् नडैक्कु अऴिन्दु
नल्नीर्प् पण्णै नऱि मलर्च् चॆऱियवुम्
अळिय तामे शिऱुपशुङ् किळिये—
कुऴलुम् याऴुम् अमिऴ्दुम् कुऴैत्त निऩ्
मऴलैक् किळविक्कु वरुन्दिऩ् वाडियुम्
मडनडै माडु! निऩ् मलर्क्कैयिऩ् नीङ्गादु
उडऩ् उऱैवु मरीइ ऒरुवा आयिऩ 53–61

५ आभा और आवाज

बड़े-बड़े पंखों वाले नील वर्ण मयूर तेरी छटा से हारकर शीतल अरण्य में चले गये। हे सुललाटिनी! हंस तेरी मृदु चाल के सामने टूटकर सुजलागार के विकसित कमल-वन में जा छिप गये। बेचारे छोटे हरे शुक, वंशी, याऴ् (की ध्वनि) और अमृत की घुली तेरी मधुर दुलयारी बोली सुनकर (लज्जा से) दुखी तो हुए। पर हे मन्थरगामिनी प्रमदे! वे घृणा करके तेरे कमल-हस्त से नहीं हटे और (शायद सीखने की इच्छा से तथा सहवास-सुख के भोग के लिए) साथ रहने की चाह से साथ रह गये। ५३-६१

6 अणियुम् वेण्डुमो

नऱुमलर्क् कोदैनिन्न् नलम्पा राट्टुनर्
मऱुइल् मङ्गल अणिये अन्ऱियुम्
पिऱिदुअणि अणियप् पॆऱ्ऱदै ॲवन् कोल्
पल्इरुङ् कून्दल् चिन्नमलर् अन्ऱियुम्
ॲल्अविऴ् मालैयोडु ॲन् उऱ्ऱतर् कोल् !
नानत्तल् अहिल् नऱुम्पुहै अन्ऱियुम्
मान्मदच् चान्दोडु वन्ददै ॲवन् कोल्
तिरुमुलैत् तडत्तिडैत् तोय्यिल् अन्ऱियुम्
ऑरुकाऴ् मुत्तमोडु उऱ्ऱदै ॲवन्कोल् !
तिङ्गळ् मुत्तु अरुम्बचुम् शिऱुहुइडै वरुन्दवुम्
इङ्गुइवै अणिन्दत्तर्, ॲन् उऱ्ऱतर् कोल् ? 62–72

६ आभूषण की भी आवश्यकता है ?

हे सुगन्धित स्रग्विनी ! तेरा अलंकार करनेवाली तेरी दासियों ने अकलंक मंगल-सूत्र के रहते अन्य आभरण भी पहनाये —यह काहे को ? विविध रूपों में सँवारे तेरे केश पर कियत फूल काफी हैं। तो भी दल-प्रफुल्ल पुष्पों की माला (पहनाने) से (उन्हें क्या मिला ?) उनका क्या रिश्ता है ? सुवासपूर्ण अगरु का धूप देना ठीक है। उसके अलावा केश पर मृग-मद मलना क्यों ? श्रीस्तन पर श्रृंगार-चित्र लिखित है। फिर मोतियों की एक लड़ी पहनाकर उन्होने क्या पाया ? चन्द्र-वदन पर स्वेदकण लाते हुए और क्षीण कटि को दुखाते हुए उन्होने ये पहनाये है; (मगल-सूचक अलंकार सही, पर सौन्दर्यवर्धक साधनो से) क्या प्रयोजन हुआ उन्हे ? ६२-७२

7 पोऱ्ऱि उरैत्तल्

माशु अऱु पॊन्ने ! वलम् पुरि मुत्ते
काशु अऱु विरैये ! करुम्बे तेने !
अरुम्पॆऱल् पावाय् ! आर् उयिर् मरुन्दे !
पॆरुङ्गुडि वाणिहन् पॆरुमड महळे !
मलैयिडैप् पिऱवा मणिये ॲन्गो ?
अलैयिडैप् पिऱवा अमिऴ्दे ॲन्गो ?
याऴिडैप् पिऱवा इशैये ॲन्गो ?
ताऴ्इरुङ् कून्दल तैयाल् निन्नै ! ॲन्ऱु 73–80

७ बड़ाई करना

हे दोष-रहित स्वर्ण ! दक्षिणावर्त शंख से उत्पन्न मोती ! शुद्ध सुगन्धित बीज ! इक्षु ! हे शहद ! दुर्लभ पुत्रिके ! (मेरे) प्यारे प्राणों जो औषध ! उच्च कुल के वणिक् की उत्कृष्ट सुन्दरी पुत्री ! तुझे वह रत्न कहूँ, जो पर्वत-मध्य से न निकला हो ? उर्मि-मध्य अनुत्पन्न अमृत कहूँ ? याळ् से अनुत्पन्न संगीत पुकारूँ ? हे लम्बे घने केश वाली तुझे (क्या कहकर पुकारूँ ?) ऐसा । ७३-८०

8 कूडि वाळ्न्दतर्

उलवाक् कट्टुरै पल पाराट्टित्
तयङ्गुइणर्क् कोदै—तन्नोंडु तरुक्कि
वयङ्गु इणर्त्तारोन्न महिळ्न्दुशॅल् वुळिनाळ्-
वार्ऑलि कूऩ्दलैप् पेर्इयल् किळत्ति
मऱप्पुअरुम् केण्मैयोंडु अऱप्परि शारमुम्
विरुन्दु पुऱन्दरूउम् पॅरुन्दण् वाळ्क्कैयुम्
वेऱुपड् तिरुविन् वीऱु पॅऱक्काण
उरिमैच् चुऱ्ऱमोंडु ऑरुतनि पुणर्क्क
याण्डुशिल कळिन्दन् इऱ्पॅरुङ् किळमैयिन्-
काण्तहु शिऱप्पिन् कण्णहि तन्नक्कु—ॲन् 81-90

८ जुड़ा जीवन बिताया

कोवलन् ने उपर्युक्त प्रकार से अनेक बड़ाई की बातें कहीं, जिनका अन्त नहीं होता था। इस तरह भासमान गुच्छों की माला (-सी कण्णहि) के साथ छवियुक्त पुष्पमालाधारी (कोवलन्) सगर्व तथा सानन्द रहता था। तब एक दिन लम्बे तथा भ्रमर-ध्वनित केश वाली वृद्धा गृहिणी कोवलन् की माता ने, अविस्मृत वात्सल्य से प्रेरित होकर अलग रखकर उन्हें धर्म-चर्चा तथा अतिथि-सत्कार के उत्कृष्ट उपकारमय जीवन में सम्मानित बनते देखना चाहा। अतः परिजनों के साथ उन्हें अलग गृहस्थी बनाकर लगा दी। कुछ साल बीते। दर्शनीय श्रेष्ठता से युक्त कण्णहि के गृहस्थाश्रम चलाने के गौरव के साथ कुछ वर्ष बीते। ८१-९०

(छन्द : वॆण्बा)

तूमप्पणिहळ् ऑन्ऱित् तोय्न्दाल् ॲन् ऑरुवार्
कामर् मनैविॲनक् कैकलन्दु—नामम्

तॊलैयाद इन्नबम् ॲल्लाम् तुन्निनार् मण्मेल्
निलैयामै कण्डवर् पोल् निन्ऱु

वॆण्बा छन्द में

वे दोनों, आवेगयुक्त दो फणी आपस में गुंथे हों, ऐसा परस्पर लिपटे रहे। मन्मथ और उसकी पत्नी रति के समान अपृवक वे ऐसा सारे सुखों में अनंत रूप से मस्त तथा लिप्त रहे, मानो वे इस बात का ध्यान कर रहे हों कि सुख का अन्त नही और जीवन की भूमि पर स्थिरता नहीं।

3 अरङ्गेऱ्ऱु कादै

(छन्द—निलैमण्डिल आशिरियप्पा)

1 मादवि पयिन्ऱाळ्

तॆय्व माल्वरैत् तिरुमुनि अरुळ
ॲय्दिय शाबत्तु इन्दिर शिऱुवत्तॊडु
तलैक्कोल् तानत्तुच् चाबम् नीङ्गिय
मलैप्पु अरुञ्जिऱप्पिन वानवर् मह्ळिर्
शिऱप्पिर् कुन्ऱाच् चॆय्हैयॊडु पॊरुन्दिय
पिऱप्पिर् कुन्ऱाप् पॆरुन्दोळ् मडन्दै
ताबु अविळ् पुरिकुळल् मादवि—तन्नै
आडलुम् पाडलुम् अळहुम् ॲन्ऱु इक्
कूऱिय मून्ऱिन् ऒन्ऱु कुऱै पडामल्
एळ् आण्डु इयऱ्ऱि ओर् ईर्आऱु आण्डिल्
शूळ् कळल् मन्नऱ्कुक् काट्टल् वेण्डि 1-11

३ प्रथम-रंग-प्रवेश गाथा

१ मादवि ने अभ्यास किया

[एक बार देवेन्द्र ने अपनी सभा मे आगत महर्षि अगस्त्य के सम्मानार्थ उर्वशी का नाट्य आयोजित किया। नारद वीणा का सगत दे रहे थे। बीच मे पर्दे के पीछे से इन्द्रकुमार जयन्त ने झाँका और उर्वशी का मन डगमगा गया। फल-स्वरूप नाट्य में खलल पहुँच गई और नारद का वादन भी गलत हो गया। कुपित अगस्त्य ने तीनों को शाप दिया कि भूलोक में जाकर रहो। पछताकर तीनों ने क्षमायाचना की तो महर्षि ने दया दिखाकर शापमोचन का अनुग्रह किया और उसका प्रकार बताया।

शाप के अनुसार उर्वशी मादवि के नाम से भूलोक में नर्त्तकी पैदा हुई। जयन्त वेणुवन मे वेणु बनकर जन्मा। नारद भूलोक में घूमते रहे। यथा-समय उर्वशी और जयन्त का रंगमंच में शाप-मोचन हुआ और नारद व्योमलोक चले गये। रंग "तलैक्कोल् स्थान" कहा जाता है, इसलिए कि जयन्त रूपी वेणुदण्ड सर्वश्रेष्ठ कलावती के रूप में राजमान्यता-प्राप्त नर्त्तकी को दिया जाता है और वह रंगमंच पर पूजित होता है। अब आगे ग्रन्थ का अनुवाद पढ़ें।]

दिव्य महान पर्वत (पॉदियै) के (वासी) महर्षि अगस्त्य के अनुग्रह से शापित इन्द्रकुमार के साथ, "तलैक्कोल्" स्थान (यानी रगमच) पर जो शापमुक्त हुई उस अचल महिमा वाली देवागना (अप्सरा) उर्वशी से कला-कृत्य में मादवि (उर्वशी मादवि के वंश मे आयी) किसी भी विध कम नही थी। वह पीनस्कन्धा नर्त्तकी अपने कुल के गौरव में भी घटी नही थी। पराग-परिमलयुक्त कुटिल कुन्तला मादवि ने अपने को (या उसकी माँ* ने मादवि को) नाच, गान, सौन्दर्य-साधन —इन तीनों में विना किसी त्रुटि के चौदह साल (उन कलाओं में) अभ्यस्त कराया। (पाँचवे साल से मादवि का अभ्यास आरम्भ हुआ।) उसके बारहवे साल की आयु में कटकवलयित चरणों वाले राजा के सम्मुख प्रदर्शित करना चाहा। १-११

2 आडल् आशान्

इरुवहैक् कूत्तिन् इलक्कणम् अऱिन्दु
पलवहैक् कूत्तुम् विलक्किनिड् पुणर्त्तुप्
पदिनोर् आडलुम् पाट्टुम् कॊट्टुम्
विदिमाण् कॊळ्हैयिन् विळङ्ग अऱिन्दु आङ्गु
आडलुम् पाडलुम् पाणियुम् तूक्कुम्
कूडिय नॆऱियिन् कॊळुत्तुम् कालैप्
पिण्डियुम् पिणैयलुम् ऎळिर्कैयुम् तॊळिर्कैयुम्
कॊण्डवहै अऱिन्दु कूत्तु वरुकालै-
कूडै शॆय्दकै वारत्तुक् कळैदलुम्
वारम् जॆय्दकै कूडैयिर् कळैदलुम्
पिण्डि शॆय्दकै आडलिर् कळैदलुम्

* मूल को पढ़ने से यह निश्चित नहीं कर पाते कि माता का जिक्र है कि नहीं है। कोई-कोई टीकाकार यह कहते हैं कि माता "चित्तिरापदि" ने मादवि के नृत्य का राजसभा में प्रदर्शन कराना चाहा।

आडल्	शॆय्दकै	पिण्डियिऱ्	कळैदलुम्	
कुरवैयुम्	वरियुम्	विरवल	शॆलुत्ति	
आडऱ्कु	अमैन्द	आशाऩ्	तऩ्ऩॊडु	12–25

२ नाट्य आचार्य

[मादवि के नाट्य आचार्य की योग्यता का वर्णन है। उसी ने उसके अभ्यास में और प्रकृत नाट्य-प्रदर्शन में सहायता और संगत किया।] वह (अन्तरंग और बहिरंग) दोनो नाट्यों के लक्षण जानता था। वह विविध अनेक नृत्यों को "विलक्कु"* के साथ मिलित कराना, ग्यारह नृत्य, नाच-गान, (पिटनेवाले) वाद्यों का वादन आदि की विधियाँ खूब जानता था। और जब नाच, गान, ताल, तालमध्य उठान आदि के (नर्त्तकी के द्वारा) प्रदर्शन कराने का समय आया तब वह एकहस्त अभिनय, हस्तद्वयाभिनय, सौन्दर्य-प्रदर्शक हस्त-संचालन, कर्मद्योतक हस्तचालन आदि चारों के प्रकार का समुचित प्रयोग कराने की अच्छी हुनर जानता था। और जब कोई खास नृत्य होता तब यह देख लेता कि अन्तरंग नृत्य के अवसर पर मुकुलित और एक हस्त-चालन के समय पर हस्त-द्वय-चालन निवारा जाता, वैसे ही हस्तद्वय-चालन, मुकुलित एक हस्ताभिनय के योग्य समय पर निवारा जाता। उसी प्रकार बहिरग नाच के प्रदर्शन के अवसर पर यह देख लेता कि नाच के समय पर गान तथा अभिनय नही होता और अभिनय के समय (अंग के चालन के समय) नाच (प्रत्यंग सचालन) नहीं होता। इनके अलावा वह संघनाट्य और अकेला नृत्य दोनों में, बिना किसी दोष के शिक्षा देने में दक्ष था। उसके साथ मादवि ने अभ्यास किया और अब वह रंग पर आयी। (ग्यारह नृत्यों का विवरण पीछे छठे अध्याय मे आता है। उधर देख ले)। १२-२५

3 इशैयोऩ्

याऴुम्	कुऴलुम्	शीरुम्	मिडऱुम्
ताऴ्कुरल्	तण्णुमै	आडलॊडु	इवऱ्ऱिऩ्
इशैन्द	पाडल्	इशैयुडऩ्	पडुत्तु
वरिक्कुम्	आडऱ्कुम्	उरिप्पॊरुळ्	इयक्कित्
तेशिहत्	तिरुविऩ्	ओशै	कडैप्पिडित्तु-
तेशिहत्	तिरुविऩ्	ओशै	ऎल्लाम्
आशिऩ्ऱु	उणर्न्द	अऱिवितऩ्	आहिक्
कवियदु	कुऱिप्पुम्	आडल्	तॊहुदियुम्

---

* विलक्कु-विलक्षण तत्त्व १४ हैं, जैसे बीज, प्रसार, संधि, सत्त्व, खंड आदि।

पहुदिप् पाडलुम् कॊळुत्तुम् कालै
वशै अऱु केळ्वि वहुत्तन्न् विरिक्कुम्
अशैया मरबिन् इशैयोन् तात्तुम् 26-36

३ संगीतकार

[मादवि की मण्डली का संगीत का सुयोग्य आचार्य निम्नोक्त प्रकार से दक्ष था।] वह याऴ्, वंशी, ताल, शारीर या मुखवीणा यानी कंठ से गाया जानेवाला गीत और मन्द स्वर वाला मृदंग और नृत्य —इन सभी से पूर्ण रूप से अभिज्ञ था। वह इनसे संबद्ध गीत को उचित राग के साथ मिलाने में दक्ष था। गान और नाच का विषय चयन (रचना) उचित तथा भले प्रकार से कर सकता था। चारों प्रकार के (तमिऴ के स्वाभाविक शब्द, तद्भव शब्द, अन्य देश के शब्द, संस्कृत के) शब्दों की ध्वनि का उसे ज्ञान व ध्यान था। वह शब्द श्री का सारा गौरव खूब जानता था। वह कवि का आशय, नृत्य के प्रकार और तत्-तत् अंग के योग्य गाने का ताल-मेल बहुत ही सुष्ठु प्रकार से कर सकता था। उस काम में उसका श्रवण द्वारा प्राप्त ज्ञान पक्का था। वह आवश्यकतानुसार संकोच या विस्तार कर सकता था और अपनी धारणाओं में अटल रहनेवाला था। (वह संगीतकार भी मादवि की मण्डली में था और अब रंगमंच पर था)। २६-३६

4 नन्नूऱ् पुलवन्

इमिऴ् कडल् वरैप्पिल् तमिऴहम् अऱियत्
तमिऴ् मुऴुदु अऱिन्द तन्मैयन् आहि
वेत्तु इयल् पॊदु इयल् ऎन्ऱु इरु तिऱत्तिन्
नाट्टिय नन्नूल् नन्गु कडैप्पिडित्तु
इशैयोन् वक्किरित्तु इट्टदै उणर्न्दु आङ्गु
अशैया मरबिन् अदुपड वैत्तु
माऱ्ऱोर् शॆय्द वशै मॊऴि अऱिन्दु
नावल्तॊलैवु इल्ला नन्नूऱ् पुलवनुम् 37-44

४ सुकवि पण्डित

[मादवि की मण्डली का कवि सुयोग्य व गण्यमान्य विद्वान कवि था।] वह गरजते सागर से सीमित भूतल (विशेषकर) तमिऴ देश भर में प्रचलित तमिऴ भाषा का सम्पूर्ण ज्ञान रखनेवाला था। राजकीय और सामान्य दोनों विध नाट्यों के शास्त्रविहित सभी नियमों से खूब अभिज्ञ था। संगीतकार ने

जो आलाप किया उसको तुरन्त समझकर उसे अटल परम्परा-प्राप्त प्रकार से निहित कर साहित्य रच सकता था। दूसरों की रचना के दोषपूर्ण शब्दों को समझकर उनसे वचकर उनको भाषा में न आने देते हुए वह रचना कर सकता था। ऐसा विद्वान कवि भी (उस मण्डलि में और रंगमंच पर) था। ३७-४४

5 तण्णुमै मुदल्वऩ्

आडल् पाडल् इशैये तमिऴे
पण्णे पाणि तूक्के मुडमे
देशिकम् अॆऩ्ऱु इवै आशिऩ्ऱु उणर्न्दु
कूडै निलत्तैक् कुऱैवु इऩ्ऱि मिहुत्तु आङ्गु
वार निलत्तै वाङ्गुवु वाङ्गि
वाङ्गिय वारत्तु याऴुम् कुऴलुम्
एङ्गिय मिडऱुम् इशैवऩ् केट्पक्
कूर् उहिर्क् करणम् कुऱ्ऱि अऱिन्दु शेर्त्ति
आक्कलुम् अडक्कलुम् मीत्तिऱम् पडामैच्
चित्तिरक् करणम् शिदैवु इऩ्ऱु शॆलुत्तुम्
अत्तहु तण्णुमै अरुन्दॊऴिल् मुदल्वऩुम् 45–55

५ मृदंग निपुण-शिरोमणि

उसका मृदग (पखावज या कोई चमड़ा-मढ़ा वाद्य)-वादक नाच-गाना, संगीत और भाषा (तमिऴ) राग-रागिनियाँ, ताल, ताल के अंग, दोप, चार प्रकार के शब्द इत्यादि सवका उत्तम, सूक्ष्म तथा निर्दोप ज्ञान रखता था। स्वरों को मिलाते समय गफलत न हो पाये, ऐसी सावधानी रख सकता था। नेपथ्य-गान को सावधानी से श्रवण कर, उसके साथ याऴ, वंशी और शारीर वीणा की ध्वनियो का लय-प्रकार देखकर आवश्यकतानुसार उनका समाँ वँधवाने के लिए अपने तीक्ष्ण नखों वाली उँगलियो को मृदंग पर चला सकता था। वह कहाँ ऊँची ध्वनि हो, कहाँ मंद इस वात के ज्ञान का उपयोग कर चित्रमयी रूप से, विना किसी स्खलन के, मिलाते हुए वजा सकता था। ऐसा मृदंग-वादक भी (उस मंडली में था)। ४५-५५

6 कुऴलोऩ्

शॊल्लिय इयल्विऩ् चित्तिर वञ्जत्तै
पुल्लिय अऱिन्दु पुणर्प्पोऩ् पण्बिऩ्

वर्त्तनै नान्गुम् मयल् अरप्पॆय्दु आङ्गु
एर्रिय कुरल् इळि ऎन्रु इरु नरम्बिन्
ऒप्पक् केट्कुम् उणर्विनन् आहिप्
पण्अमै मुळविन् कण्ऎडि अरिन्दु
तण्णुमै मुदल्वन् तन्नॊडुम् पॊरुन्दि
वण्णप् पट्टडै याळ्मेल् वैत्तु आङ्गु
इशैयोन् पाडिय इशैयिन् इयर्कै
वन्ददु वळर्त्तु वरुवदु ऒर्रि
इन्बुर इयक्कि इशैपड वैत्तु
वार निलत्तैक् केडिन्रु वळर्त्तु आङ्गु
ईर निलत्तिन् ऎळुत्तु ऎळुत्तु आह
वळुविन्रि इशैक्कुम् कुळलोन् तानुम् 56-69

६ वैणविक

[तमिळ् मूल में कुळलोन् शब्द है। उसका अर्थ मुरली बजानेवाला है पर शहनाई अर्थात् यहाँ का 'नागस्वरम्' बजानेवाला भी हो सकता है। कला-प्रक्रिया में दोनों समान लगते है।]

वह वैणविक (वेणुगान-कर्ता) शास्त्रोक्त प्रकार से "चित्र" तथा "वंचना" दोनो तरह की स्वर मिलाने की (मीडा) प्रक्रिया खूब जानता था। वह साहित्य रचयिता (कवि विद्वान) के ही समकक्ष ज्ञान रखता था। आरोहण तथा अवरोहण के चारो 'वर्तना'ओं में कोई भ्रम आने नही देता था। 'कुरल्', (पंचम-स्वर) 'इळि' नामक दोनों तरह के याळ् के तारों के स्वर से मिलाकर अपना वेणुगान कर सकता था। वैसे ही मृदंग-वादन का अर्थ समझकर मृदंग-वादक के साथ लय मिलाते हुए स्वर निकाल सकता था। वसे ही याळ् के वादक के, "इळि" को स्थायी बनाकर स्वरित राग के साथ मिलकर बजा सकता था। उससे निकले संगीत को आगे-पीछे ध्यान करके आवश्यकता के अनुसार विस्तृत या संकुचित कर सकता था। सगीत की मन्द, त्वरित आदि गति का भी विना त्रुटि के ध्यान कर हर एक बोल का प्रगटन कर सकता था। वैसा वेणुवादन निपुण वैणविक भी वहाँ था। ५६-६९

7 याळ्प् पुलमैयोन्

ईर्एळ् तॊडुत्त शॆम्मुरैक् केळ्वियिन्
ओर् एळ् पालै निरुत्तल् वेण्डि

वऩ्मैयिऱ् किडन्द तार वागमुम्
मॆऩ्मैयिऱ् किडन्द कुरलिऩ् वागमुम्
मॆय्क्किळै नरम्बिऱ् कैक्किळै कॊळ्ळक्
कैक्किळै ऒऴिन्द वागमुम् पॊऱ्पुडैत्
तळरात् तारम् विळरिक्कु ईत्तुक्
किळैवऴिप् पट्टऩळ् : आङ्गे किळैयुम्
तऩ्किळै अऴिवुकण्डु अवळ्वयिऱ् चेर
एऩै महळिरुम् किळै वऴिच् चेर
मेलदु उऴैयिळि कीऴदु कैक्किळै
वम्बु अरु मरबिऩ् शॆम्बालै आयदु
इऱुदि आदि आह आङ्गु अवै
पॆऱुमुऱै वन्द पॆऱ्ऱियिऩ् नीङ्गादु
पडुमलै शॆव्वऴि पहर् अरुम्पालै ऎऩक्
कुरल् कुरलाहत् तऱ्किऴमै तिरिन्दपिऩ्
मुऩ्ऩदऩ् वहैय मुऱैमैयिऩ् तिरिन्दु आङ्गु
इळिमुद लाहिय ऐदिऱ्पडु किऴमैयुम्
कोडि विळरि मेऱ्चॆम् पालै ऎऩ
नीडिक् किडन्द केळ्विक् किडक्कैयिऩ्
इणै नरम्बु उडैयऩ अणैवुऱक् कॊण्डु आङ्गु
याऴ् मेऱ् पालै इडमुऱैं मॆलियक्
कुऴऩ्मेऱ् कोडि वलमुऱै वलिय
वलिवुम् मॆलिवुम् समऩुम् ऎल्लाम्
पॊलियक् कोवैत पुलमै योत्तुडऩ् 70–94

७ याऴ् का विद्वान

वहुत ही सही रीति से "निर्मित दो सप्तक स्वरीय तारों वाली याऴ् पर "आयप्पालै" निहित सात रागो ('शॆम्पालै', 'पडुमलैप्पालै', शॆव्वऴिप्पालै', 'अरुम्पालै', 'कोडिप्पालै', 'विळरिप्पालै', 'मेऱ् चम्वालै', को) 'इणै' (वादी) तारों से युक्त करके वजाना चाहकर याऴ् के विद्वान ने इस 'पालै' राग के अन्तिम् (उच्च) स्वर, 'तारम्' की दो श्रुतियों में एक को, और आरम्भिक यानी मन्द स्वर "कुरल्" की चार श्रुतियों में दो को "तारम्" वाले तार पर 'किळै' (संवादी-स्वर) के रूप में स्थापित किया। तव 'तारम्' 'कैक्किळै' वन गया। जो वची थी—('तारम्' की एक और कुरल् की दो श्रुतियाँ)

उन्हें 'विळरि' को दिया तो 'विळरि', 'तुत्तम्' बनी। तब 'इळि' अपनी किळै' (संवादी) का नाश देखकर उससे मिली तो और अन्य तंत्रियाँ भी अपने-अपने 'किळै' वाले तारों से संयुक्त हुईं। और ऊपर उळै से नीचे 'कैक्किळै' तक के स्वर नये प्रकार से जुड़े और "शॅम्पालै" बना जिसका स्थायी स्वर (यानी 'कुरल्') उळै था। अन्त में रही 'कैक्किळै" आदि तंत्रियाँ (स्वर) अपने स्थानों से नहीं हटीं। "कैक्किळै' कुरल् बना तो 'पडुमलैप्पालै' राग उठा। 'तुत्तम्' को कुरल बनाकर स्वरसंयोजन किया तो 'शॅव्वळिप् पालै' राग बना; 'कुरल्' ही 'कुरल्' (स्थायी) रहा तो 'अरुम्पालै' राग उठा। फिर विलोम क्रम से बदलकर 'इळि' आदि से स्वरसंयोजन किया गया— यानी 'तारम्' के कुरल् होने से "कोडिप्पालै'; विळरि के "कुरल्' बनने से 'विळरिप्पालै' और 'इळि' के कुरल् बनने से 'मेऱ्चंम्बालै' के राग स्वरित हुए। 'इणै' (वादी) की तंत्रियों को सही प्रकार से बजाने से, याळ् पर बायीं ओर बजाते जाने से, 'अरुम्पालै' आदि के अवरोहण स्वर निकलते है। पर वंशी में 'कोडिप्पालै' आदि दायी ओर जाकर आरोहण द्वारा पाये जाते है। याळ का विद्वान इस प्रकार रागों को यथोक्त प्रकार से निकाल सकनेवाला था। वह उच्च, मंद व सम आदि का अच्छी प्रकार से योजन कर मनोरम ध्वनि निकालने में दक्ष था। ऐसा याळ् विद्वान उस मण्डली में था। ७०-९४

8 अरुन्दॊळिल् अरङ्गम्

ऑण्णिय नूलोर् इयल्बिनिन् वळादु
मण्णहम् ऑरु वळि वहुत्तनर् कॊण्डु
पुण्णिय नॆडुवरैप् पोहिय नॆडुङ्गळैक्
कण्णिडै ऑरुशाण् वळर्न्ददु कॊण्डु
नूल् नॆऱि मरबिन् अरङ्गम् अळक्कुम्
कोल् अळवु इरुबत्तु नाल्विरल् आह
ऍळु कोल् अहलत्तु ऍण्कोल् नीळत्तु
ऑरुकोल् उयरत्तु उरुप्पिनदु आहि
उत्तरप् पलहैयोडु अरङ्गिन् पलहै
वैत्त इडैनिलम् नाऱ्कोल् आह
एऱ्ऱ वायिल् इरण्डुडन् पॊलियत्
तोऱ्ऱिय अरङ्गिल् तॊळ्दनर् एत्त
पूतरै ऍळुदि मेल्निलै वैत्तुत्
तूण्निळल् पुऱप्पड माण्विळक्कु ऍडुत्तु आङ्गु
ऑरुमुह ऍळिनियुम् पॊरुमुह ऍळिनियुम्

करन्दुवरल् ऒळिनियुम् पुरिन्दुडन् वहुत्तु आङ्गु
ओविय विदानत्तु उरैपॆऱु नित्तिलत्तु
मालैत् तामम् वळैयुडन् नाट्रि
विरुन्दुपडक् किडन्द अरुन्दॊळिल् अरङ्गत्तु 95-113

८ अपूर्व कला-विशिष्ट रंगशाला

गण्य-मान्य शिल्पशास्त्रज्ञ द्वारा निर्दिष्ट निर्माण-क्रम के अनुसार पहले एक ओर रंगशाला के लिए स्थल चुन लिया गया। (वहाँ नाप के लिए जो 'कोल्' यानी मापदंड प्रयोग मे लाया गया उसका विवरण यों है—) किसी पवित्र तथा उन्नत पर्वत पर उगनेवाले लंबे बाँस से, जिसकी गाँठें एक-एक बित्ते की दूरी पर बनी थी, एक खण्ड काट ले आया गया। शास्त्रविधि के अनुसार रंगशाला नापने के लिए चौबीस अंगुष्ट-प्रमाण (लगभग तीस अगुल) का दड काम मे लाया गया। वही 'कोल्' कहा जाता है। रंगस्थल की लम्बाई आठ कोल् की थी और चौड़ाई सात कोल् की बनी। वह एक कोल् ऊँचा या। चारो ओर खम्भे गाड़े गये। उनके ऊपर शहतीर रखे गये। शहतीर पर के तखने और रगपीठ के तख्ते के बीच की ऊँचाई चार कोल की थी। उसके दो द्वार कहुत ही सुन्दर ढग से निर्मित किये गये। उस रंगमंच पर पहले पूजा करने के लिए चारों वर्णो के भूतों के चित्र रखे गये। खम्भे की छाया मंच पर नही पडे। इस भाति, चातुरी से दीपक चारों ओर रखे गये। फिर वहाँ "एकमुखी" यवनिका, "पॊरु मुहम्" (खभों के मध्य की) यवनिका टाँगी गयी। 'करन्दुवरल्" (छिपे रहकर प्रगट होने की) नेपथ्य की यवनिका भी लटकायी गयी। फिर चित्र-सज्जित वितान छाया गया। उसके चारों किनारों से मुक्ताहार, विविध प्रकारों से, लटकाये गये। इस भाँति आँखों को दावत देनेवाली बनी रही वह रगशाला। ९५-११३

9 तलैक्कोल्

पेरुङ्शै मन्नर् पेयर् पुऱत्तु अॆडुत्त
शीरियल् वॆण्कुडैक् काम्बु नन्नि कॊण्डु
कण्णिडै नवमणि ऒळुक्कि मण्णिय
नावल्अम् पॊलमृतहट्टु इडैनिलम् पोक्किक्
कावल् वॆण्कुडै मन्नवन् कोयिल्
इन्दिरन् शिऱुवन् शयन्दन् आह अॆन
वन्दनै शॆय्दु वळिपडु तलैक्कोल्
पुण्णिय नन्नीर् पॊऱ्कुडत्तु एन्दि

मण्णिय पित्तर् माले अणिनृदु
नलन्दरु नाळाल् पॉलम्पूण् ओड
अरशुउवात् तडक्कैयिर् परशितर् कॉण्डु
मुरशु ऑळुन्दु इयम्बप् पल्इयम् आर्प्प
अरशॉडु पट्ट ऐम्पॅरुङ् कुळुवुम्
तेर्वलम् शॅय्दु कविहैक् कॉडुप्प
ऊर्वलम् शॅय्दु पुहुन्दु मुन्न वैत्तु आङ्गु 114-128

९ तलैक्कोल् (शीर्षदण्ड)

["तलैक्कोल्" का अर्थ है शीर्षदण्ड। यह नर्त्तन कला के क्षेत्र मे शीर्ष-स्थान पाने का चिह्न है। यह एक विरुद है। यह जयन्त दण्ड भी कहलाता है। जयन्त का वेणु बनना तो पाठक को मालूम ही है। इस दण्ड को जो नर्तकी अपनी कलाप्रदर्शन की उत्कृष्टता के आधार पर राजा से प्राप्त करती है, वह 'तलैक्कोलि' के रूप में सम्मानित होती है। इस तलैक्कोल् का विवरण दिया जाता है और बताया जाता है कि वह दण्ड अब मादवि की कला के प्रदर्शन के अन्त में उसे दिया गया।]

जब बड़ा नामी राजा लड़ाई में हारकर भाग जाता है, उसका सम्मान का श्वेतछत्र छीन लिया जाता है। उस छत्र का हस्त-दण्ड सुरक्षित रूप से लाया जाता है। उसकी गाँठों पर नवरत्न जड़े जाते हैं। गाँठो के बीच के पर्वो में जाम्बूनद स्वर्ण की चादर चढ़ायी जाती है। लोकपालक श्वेतछत्र राजा के महल में उसकी, इंद्र-पुत्र जयन्त के रूप में पूजा होती है। वह तलैक्कोल् कहा जाता है। ऐसा कोल् महल मे था। स्वर्ण-कलशों में पुण्य तीर्थो से पवित्र जल लाकर उसको अभिषिक्त किया गया। मालाएँ पहनायी गयी। कला-प्रदर्शन का दिन सुदिन था। स्वर्णाभरण व स्वर्णपट्ट से अलंकृत राज-गज की सूँड़ में वह पकड़वाया गया। उस गज के साथ जुलूस निकला। तीन प्रकार के 'मुरशु' (नौबत) बजे। और अन्य अनेक विविध बाजे भी जुलूस मे बजते आये। राजा भी जुलूस में था। उसके साथ पंच महासमिति के सदस्य भी आये। जुलूस रथ-वीथी से आया और रंगशाला पर आकर रुका। हाथी ने "तलैक्कोल्" को नृत्यमंडली के कवि के हाथ में दिया। कवि ने वीथी-भ्रमण करके लाये गये उस दण्ड को लेकर प्रेक्षकों के सामने यथास्थान रखा। ११४-१२८

10 वारप् पाडल्

इयल्बिनिन् वळाअ इरुक्कै मुरैमैयिन्
कुयिलुव माक्कळ् नॅरिप्पड निऱ्प

वलक्काल् मुन्नमिदित्तु एऱ्ऱि अरङ्गत्तु
वलत्तूण् शेर्दल् वऴक्कु ॲन्नप् पोरुन्दि
इन्नेऱ्ऱि वहैयाल् इडत्तूण् शेर्न्द
तोन्नेऱ्ऱि इयऱ्कैत् तोरिय महळिरुम्
नीर्इयल् पोलिय नीर्अल नीङ्ग
वारम् इरण्डुम् वरिशैयिऱ् पाडप्
पाडिय वारत्तु ईऱ्ऱिल् निन्ऱु
इशैक्कुम् कूडिय कुयिलुवक् करुविहळ् ॲल्लाम् 129–138

१० वारम् गीत (प्रार्थना)

अपने-अपने पदों के योग्य रीति से सभी (राजा आदि) दर्शक अपने-अपने स्थान पर बैठे। वादक-गण अपने निर्दिष्ट स्थानों में यथाक्रम खड़े हुए। मादवि दायें पैर को पहले रखकर रंगमंच पर चढ़ी। 'दाहिने खंभे के पास खड़ा होना चाहिए'—इस प्रथा के अनुसार वहाँ जाकर खड़ी रही। उसी परंपरागत क्रम को मानकर बायें खंभे के पास प्राचीन क्रम को जाननेवाली "तोरिय" (पुरानी) नर्तकियाँ जाकर बाये खम्भे के पास खड़ी हो गयीं। फिर सब शुभ हो और अशुभ दूर हो—इस वास्ते उन्होने दोनों (वारम्) प्रार्थना गीतों को गाया। प्रार्थना-गीत के अंत मे सभी वाद्य (एक साथ बज उठे। १२९-१३८

11 इशै मुऴक्कम्

कुऴल्वऴि निन्ऱदु याऴे याऴ्वऴित्
तण्णुमै निन्ऱदु तहवे; तण्णुमैप्
पिन्वऴि निन्ऱदु मुऴवे; मुऴवोडु
कूड निन्ऱु इशैत्तदु आमन्तिरिहै
आमन्तिरिहै योडु अन्दरम् इन्ऱिक्
कोट्टु इरण्डु उडैयदु ओर् मण्डिलम् आहक्
कट्टिय मण्डिलम् पदिनोन्ऱु पोक्कि
वन्द मुऱैयिन् वऴिमुऱै वऴामल्
अन्दरक् कोट्टुडन् अडङ्गिय पिन्नर् 139–147

११ सम्मिलित वादन का घोष

पहले वंशी बजी। उसी के मेल में याऴ् बजी। याऴ् के लय में मृदग बजा। मृदंग के मेल में मुरज ने नाद छिपा। मुरज के साथ मिलकर

"आमंत्रिका" (बायें हाथ से बजाया जानेवाले बाजे) की ध्वनि उठी। उसके साथ विना अंतर के सब वाद्यों से दो तालों के एक मंडल के हिसाब से ग्यारह मंडलों की ध्वनि उठायी गयी। परंपरा-क्रम से कहीं भी हटे विना "अन्दरक्-कोट्टु' (प्रारंभिक सम्मिलित वाद्य-वादन) पूरा हुआ। १३९-१४७

12 तेशिक् कूत्तु

मीत्तिरम् पडामै वक्काणम् वहुत्तुप्
पाऱ्पड निन्ऱ पालैप् पण्मेल्
नान्गिन् ऑरीइय नन्कनम् अरिन्दु
मून्ऱु अळन्दु ऑन्ऱु कॉट्टि अदन्ऐ
ऐदु मण्डिलत्ताऱ् कूडै पोक्कि
वन्द वारम् वळि मयङ्गिय पिन्ऱै 148–153

१२ देशी नृत्य

पश्चात् अनुल्लंघन-रहित आलाप करके, तारों पर स्वरित पाले राग के गीत के अनुसरण में, गीतों के चारों अंगों की प्रकृति के सम्यक् ज्ञान के साथ तीन के माप से एक ताल देकर जो गाया गया, उसके मेल में मादवि ने सुन्दर मंडलों की स्थिति में हाथों को मुकुलित करके, वारम् गीत जितने आये उनका उचित अभिनय दिखाया। १४८-१५३

13 मार्क्कक् कूत्तु

आऱुम् नालुम् अम्मुऱै पोक्किक्
कूऱिय ऐन्दिन् कॉळ्है पोलप्
पिन्नैयुम् अम्मुऱै पेरिय पिन्ऱैप्
पॉन्नियल् पूङ्गॉडि पुरिन्दुडन् वहुत्तॆन
नाट्टिय नन्नूल् नन्गु कडैप्पिडित्तुक्
काट्टिनळ् आदलिन्—कावल् वेन्दन् 154–159

१३ मार्ग नृत्य

फिर मादवि ने छः और चार को भी उसी प्रकार अभिनय करके दिखाया। पहले उक्त क्रम में मार्ग नृत्य भी कर चुकने के बाद स्वर्ण की पुष्पलता आकर नृत्य करती हो ऐसा नाट्यशास्त्र के ग्रंथों में वतायी गयी रीति से मादवि ने नृत्य का प्रदर्शन न किया। तब शासक राजा ने (उसे विरुद तथा अधिकार प्रदान किये)। १५४-१५९

14 उरिमै पॆट्रदाळ्

इलैप्पूङ्गोदै इयल्बिनिन् वऴामैत्
तलैक्कोल् ऍय्दित् तलै अरङ्गु एरि
विदिमुरैक् कॊळ्हैयिन् आयिरत्तु ऍण् कळञ्जु
ऒरु मुरै याहप् पॆट्रनळ् अदुवे 160-163

१४ (सम्मान और) अधिकार पाया

मादवि ने राजा से पत्र-पुष्प माला और नियमों के अनुसार 'तलैक्कोलि' का विरुद पाया। यह प्रथम रंग प्रवेश था। फिर प्रचलित विधि के अनुसार एक-एक हजार आठ कळञ्जु (स्वर्णमुद्राएँ) पाने की अधिकारिणी बन गयी। वही उसका क्रम भी बन गया। १६०-१६३

15 मादवियुम् कोवलनुम्

नूरु पत्तु अडुक्कि ऍट्टुक कडै निऱुत्त
वीऱुडयर् पशुम्पोन् पॆऱुवदु इम् मालै;
मालै वाङ्गुनर् शालुम्नम् कॊडिक्कु ऍन्न
मान् अमर् नोक्कि ओर् कून्ि कैक्कोडुत्तु
नहर नम्बियर् तिरितरु मरुहिल्
पहर्वनर् पोल्वदोर् पान्मैयिन् निऱुत्त
मामलर् नॆडुङ्गण् मादवि मालै
कोवलन् वाङ्गिक् कून्ि तन्नॊडु
मणमनै पुक्कु मादवि तन्नॊडु
अणैवुरु वैहलिन् अयर्नूदनन् मयङ्गि
विडुदल् अऱिया विरुप्पिनन् आयिनन्-
वडुनीङ्गु शिरप्पिन् मनैअहम् मऱन्दु—ऍन्न 164-175

१५ मादवि और कोवलन्

उसी अधिकार का प्रयोग करके मादवि ने मृगनयनी एक कुवरी के हाथ में माला दी और कहा कि 'एक सौ को दस गुणा करके फिर आठ मिलाकर जो फल आता है, उस एक सहस्र आठ बहुमूल्य और खरे स्वर्ण का 'कळञ्जु' (-स्वर्ण मुद्राएँ) इस माला का मोल है। जो खरीदेगा वह हमारी मादवि (के प्रेमी बनने) के योग्य होगा। यह कहकर मादवि ने उस कुवरी को, नगर के तरुणों के आने-जाने के मार्ग में बेचनेवाली बनाकर खड़ा किया। पुष्पायताक्षी मादवि की माला को कोवलन् ने लिया और उस

कुवरी के साथ मादवि के विवाह-भवन में पहुँच गया। उस दिन वह मादवि के बाहुपाश में वहाँ रहा। फिर मोहाभिभूत होकर वहीं अज्ञात-मुक्ति प्रेमी बन रह गया। वह अपने निर्दोष और श्रेष्ठ घर और गृहिणी को भी भूल गया। १६४-१७५

वॆण्बा

ऎण्णुम् ऎऴुत्तुम् इयल्ऐन्दुम् पण्नान्गुम्
पण्निन्ऱ कूत्तुप् पदिन्नोन्ऱुम्— मण्णिन् मेल्
पोक्किनाऴ्, पूमपुहार्प्पोन् तॊडि मादवि तन्
वाक्किनाल् आडुअरङ्गिन् वन्दु

वॆण्बा (छंद)

मादवि ने संख्या, अक्षर, पाँच*, चार राग, और राग समन्वित ग्यारह नृत्य का लोगो के सामने प्रदर्शन किया। जो पूम्पुहार् की स्वर्णाभरण-सुन्दरी है, उसने उस नृत्य का स्वयं गाते हुए नाट्य-रग पर जौहर दिखाया, जो पृथ्वी भर में विख्यात हुआ।

4 अन्दि मालैच् चिऱप्पुच् चॆय् कादै

(छन्द—निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 निलमहळ् पशन्दाळ्

"विरिकदिर् परप्पि उलहम् मुऴुदु आण्ड
ऒरुतनित् तिहिरि उरवोन् काणेन्;
अङ्गण् वानत्तु अणिनिला विरिक्कुम्
तिङ्गळ् अम् शॆल्वन् याण्डु उळन् कोल्?" ऎन्न
तिशैमुहम् पशन्दु शॆम्मलर्क् कण्गळ्
मुऴुनीर् वार मुऴ्मैयुम् पनित्तुत्
तिरैनीर् आडै इरु निल मडन्दै
अरैशु कडुत्तु अलम् वरुम् अल्लट् कालैक् 1–8

* प्रकृत वाणी के पाँच प्रकार।

४ सायं-सन्ध्या-अभिनन्दन गाथा

१ भूदेवी विवर्ण हुई

"विवृत किरणें फैलाते हुए सारे संसार पर (मेरे सारे अंगों पर) शासन करते रहे एक-चक्र (अकेले शासक) वीर (सूर्य) को नहीं देखती। मनोरम विशाल आकाश में सुन्दर कौमुदी वितरित करनेवाला सोम कुमार कहाँ रह गया ?" इस चिंता से, दिशा-मुख के विवर्ण होते, लाल-कमल-आँखों के पूर्ण अश्रुमय बनते तरंग-सागर-वसना गुर्वी उर्वी देवी राजा को खोकर चिंताकुल (तमसाच्छन्न) हुई। १-८

2 मालै वन्दद‌ु

कदिर्च्चॆऴु कुडिहळ् कैतलै वैप्प
अऱैपोहुम् कुडिहळोडु ऒरु तिऱम् पऱ्ऱि
वलम्पडु तानै मन्नर् इल् वऴिप्
पुलम्पड इऱुत्त विरुन्दिन् मन्नरित्
ताऴ्तुणै तुऱन्दोर् तनित्तुयर् ऎय्दक्;
कादलर्प् पुणर्न्दोर् कळिमहिऴ्वु ऎय्दक्
कुऴल् वळर् मुल्लैयिऱ् कोवलर्-त्तम्मोडु
मऴलैत्तुम्बि वाय्वैत्तु ऊद;
अऱुकाल् कुऱुम्बु ऎऱिन्दु अरुम्बु पॊदि वाशम्
शिऱुकाऱ् चॆल्वन् मऱुहिल् तूऱ्ऱ
ऎल्वळै महळिर् मणि विळक्कु ऎडुप्प
मल्लल् मूदूर् मालै वन्दु इऱुत्तॆन 9-20

२ सायंकाल आया

तब उस समृद्ध पुरातन (पूम् पुहार्) नगर में सायंकाल आया। वह कर देने को तैयार, वफादार प्रजाजनों को सिर पर हाथ धरने (रोने) को मजबूर करते हुए, गुप्त द्रोही प्रजाजनों का पक्ष (समर्थन) पाकर उनके बलवती सेना के पति, राजा के अनुपस्थित रहते समय, राज्य को नष्ट करने आये अजनबी (शत्रु) राजा के समान, हृदयस्थित अपने साथी पतियों से बिछुड़े रहनेवालों को अपार दुख और प्रेम में मिले रहनेवालों को आनन्दोल्लास देता हुआ आया। तब (घर लौट रहे) ग्वालों ने "कुऴल्" (वंशी) पर मुख रखकर उससे निकलनेवाला "मुल्लै" राग स्वरित किया, और

मधुर-ध्वनि भ्रमरों ने कुळल् (केश) पर रहे "मुल्लै" फूल पर मुख रखकर अपना गुंजार स्वरित किया। और शरारती षट्पदों को हटाकर विकच कलियो के अंदर के वास को मंद पवन कुमार ने बटोरा और गलियों में वितरित किया। छवि-कंकण-धारिणी स्त्रियों ने मणिदीप जलाये। (मूल में आखिरी पंक्ति में ही 'नगर में सायंकाल आया' आया है।) ९-२०

3 तिङ्गळिन् वरुहै

इळैयर् आयिनुम् पहै अरशु कडियुम्
शॅरुमाण् तॅन्नवर् कुलमुदल् आहलिन्
अन्दि वानत्तु वॅण्पिरै तोन्ड्रिप्
पुन्कण् मालैक् कुरुम्बु ऍड्रिनदु ओट्टिप्
पान्मैयिल् तिरियादु पाल्कदिर् परप्पि
मीन् अरशु आण्ड वॅळ्ळि विळक्कत्तु 21-26

३ चन्द्र का आगमन

बालक होने पर भी, शत्रु-राजाओं के छक्के छुड़ाने में समर्थ, युद्ध में विख्यात दक्षिण के राज-(पांडिय) कुल का आदिपुरुष था (चंद्र); अतः संध्या-गगन में श्वेत बालेंदु के रूप में उसने प्रकट होकर पीड़ादायी संध्या की सारी करतूतों को नष्ट किया और व्यतिक्रम न करके दुग्ध-सम किरणें फैलायीं। फिर वह तारागणों के मध्य राज करते हुए प्रकाश फैलाने लगा। उस रजत-चंद्रिका में—२१-२६

4 मादवियुम् कोवलनुम्

इल्वळर् मुल्लैयॊडु मल्लिहै अविळ्न्द
पल्पून् जेक्कैप् पळ्ळियुट् पॊलिन्दु
शॅन्दुहिर्क् कोवै शॅन्रु एन्दु अल्हुल्
अम् तुहिल् मेहलै अशैन्दन वरुन्द
निलवुप् पयन् कॊळ्ळुम् नॅडुनिला मुट्रत्तुक्
कलवियुम् पुलवियुम् कादलर्क्कु अळित्तु आङ्गु
आर्व नॅञ्जमॊडु कोवलर्क्कु ऍदिरिक्
कोलम् कॊण्ड मादवि अन्ड्रियुम् 27-34

४ मादवि और कोवलन्

घर में पलते 'मुल्लै' तथा मल्लिका-पुष्पों से आकीर्ण व विविध पुष्पों से युक्त शय्या पर कोवलन् और मादवि आसीन रहे। (दोनों संभोग में लगे रहे; अतः) मादवि की अष्टलडी लाल प्रवाल की मेखला ने, उन्नत कटि प्रदेश पर रहे महीन वस्त्र को, हिला-हिलाकर उसे कष्ट दिया। यह चाँदनी का पूरा प्रयोजन पानेवाली खुली कौमुदीसिंचित छत पर हो रहा था। मादवि ने कोवलन को वारी-वारी से रतिदान द्वारा आनंद और मान द्वारा खीज देते हुए उत्कठा के साथ उसको सामने से अंक में लेकर सुख प्राप्त किया। (जब इस क्रिया में श्रृंगार मिट गया तो) उसने नये सिरे से श्रृंगार कर लिया। यही क्रम जारी रहा, मादवि ही नही, ऐसी अन्य स्त्रियाँ भी उस नगर में रही। २७-३४

5 कूडियिरुन्द पिऱ महळिर्

कुडदिशै मरुङ्गिन् वॆळ् अयिर् तनृॊडु
गुणदिशै मरुङ्गिऩ् कार् अहिल् तुऱन्दु
वडमलैप् पिऱन्द वाऩ् केऴ् वट्टत्तुव
तॆन्मलैप् पिऱन्द शन्दऩम् मऱुहव
तामरैक् कॊऴुमुऱि तादुपडु शॆऴुमलर्
कामरु कुवळै कऴुनीर् नामलर्
पैन्दळिर्प् पडलै परुउक्काऴ् आरम्
शुन्दरच् चुण्णत् तुहळॊडु अळैइच्
चिन्दु पुरिन्द शॆऴुम्बून् जेक्कै
मन्द मारुदत्तु मयङ्गिऩर् मलिन्दु आङ्गु
आवियङ् गॊऴुनर् अहलत्तु ऒडुङ्गिक्
काविियम् कण्णार् कळित् तुयिल् ऎय्द 35-46

५ (पति से) मिली रही दूसरी स्त्रियाँ

पश्चिमी दिशा में प्राप्य सफेद खाँड़ के साथ पूर्वी दिशा के काले अगरु का धूप लगाने के वाद; उत्तरी पर्वत के चमकीले पत्थर के चकले पर दक्षिणी पर्वत पर उगा चंदन घिसकर शरीर पर मलकर; कमल की कोंपले, परागयुक्त पुष्ट कमलपुष्प, मनोरम कुवळै, 'कऴुनीर' के वड़े फूल आदि की वनी 'पडलै' (पत्र-पुष्प-मिश्रित माला) धारण कर;

मोटे मोतियों की माला से अलंकृत होकर; सुंदर सुवास चूर्ण के साथ पुष्प जिस पर बिखरे पड़े थे उस शय्या पर मद मारुत के कारण प्रेम-मस्त बनकर, प्राण प्यारे प्रेमियों के विशाल वक्षों में छिपकर उत्पलाक्षी स्त्रियाँ सुख की बेहोशी के साथ सो रही थीं। (स्त्रियाँ धूप का सुख लेकर, चदन का लेपन, माला-धारण आदि करके पुष्पशय्या पर संभोग-शिथिल बनकर पतियों की छाती पर पड़ी सोयी।) ३५-४६

6 कण्णहियिन् निलैमै

अम्शॆन् चीऱडि अणि शिलम्बु ऒऴिय
मॆन् तुहिल् अल्हुल मेहलै नीङ्गक्
कॊङ्गै मुन्ऱिल् कुङ्गुमम् ऎऴुदाळ्
मङ्गल अणियिन् पिऱिदु अणि महिऴाळ्
कॊडुङ्गुऴै तुऱन्दु वडिन्दु वीऴ् कादिनळ्
तिङ्गळ् वाळ्मुहम् शिऱुवियर्बु इरियच्
चॆङ्गयल् नॆडुङ्गण् अञ्जनम् मऱप्पप्
पवळ वाळ्नुदल् तिलहम् इऴप्पत्
तवळ वाळ्नहै कोवलन् इऴप्प
मैइरुङ् कून्दल् नॆय् अणि मऱप्पक्
कैयऱु नॆञ्जत्तुक् कण्णहि अल्ऱियुम् 47-57

६ कण्णहि की स्थिति

(कण्णहि के) छोटे सुंदर लाल चरणों ने नूपुर त्याग दिये। महीन वस्त्र-धारी कटिप्रदेश ने मेखला छोड़ दी। वह स्तन-प्रदेश में कुंकुम नहीं लगाती। मंगलसूत्र को छोड़ अन्य आभरण नही पहनती। टेढ़े कुण्डलों को छोड़ चुकी, अतः कान सुन्दरताहीन बने। चन्द्र-सम द्युतिमय मुख पर स्वेद कण (सभोग-श्रम से उत्पन्न होनेवाले) कभी नही झलके। लाल रंग की तथा "कयल" (मछली)-सी आँखे अंजन भूल गयीं। प्रवाल-सम उज्ज्वल ललाट तिलकहीन रहा। उस धवलोज्ज्वल दाँतों वाली ने कोवलन् को खो दिया। उसके अंजन-रंग घने केश ने घी का मलना भुला दिया। इस रीति से कण्णहि सुधिहीन मन वाली बनी रही। वही नही (अन्य ऐसी वियोगिनी स्त्रियों का हाल सुनिए।) ४७-५७

7 कादलरैप् पिरिन्द मादर्

कादलर्प् पिरिन्द मादर् नोदह
उडुउलैक् कुरुहिन् उयिर्त्तनर् ऒडुङ्गि
वेनिर् पळ्ळि मेवादु कऴिन्दु
कूदिर्प् पळ्ळिक् कुरुङ्गण् अडैत्तु
मलयत्तु आरमुम् मणिमुत्तु आरमुम्
अलर्मुलै आहत्तु अडैयादु वरुन्दव
ताऴिक् कुवळैयोडु तण्शेङ् गळुनीर्
वीळ्पूम्जेक्कै मेवादु कऴियव
तुणै पुणर् अन्नत् तूवियिड् चॆरित्त
इणै अणै मेम्बडत् तिरुन्दुयिल् पॆरा अदु
उडैप्पॆरुङ् कोळुनरोडु ऊडर् कालत्तु
इडैक्कुमिळ् ऎरिन्दु कडैक्कुळै ओट्टिक्
कलङ्गा उळ्ळम् कलङ्गक् कडैशिवन्दु
विलङ्गि निमिर् नॆडुङ्गण् पुलम्बुमुत्तु उरैप्प 58–71

७ प्रेमियों से बिछुड़ी स्त्रियाँ

प्रेमियों से अलग रही स्त्रियाँ वेदनाविद्ध रही। भट्ठी की भाथी के समान गरम निःश्वास छोड़ती थी। दुर्बल होकर उन्होंने ग्रीष्मकालोचित शय्या पर न जाकर उसे छोड़ दिया। शिशिरकालीन शय्या पर रहकर गवाक्षों के छोटे द्वार भी बंद कर लिये। मलय-चंदन व मणि-मोती-हार के फैले स्तनों पर पड़ते ही उन्हें टीस लगी। कलशोत्पन्न 'कुवळै' और शीतल लाल कळुनीर (उत्पल) के फूलों से युक्त सुंदर शय्या की इच्छा छोड़ गयीं। संयुक्त रहे हंसों के गिरे परों से विलसित दो के लिए बनी शय्या पर भी उन्हे नींद नही आती थी। अपने परम प्रिय पतियों से मिले रहते वक्त वे नाक से नाक निकाल कर फेंकती हुई आँखे को कानों तक चलाते (पतियों के) अकंपित मन को भी कँपाती हुई आँखो के कोनों को लाल करती। अब उनकी वे ही आँखे दुखी हो, उनके विलपते, मोती (आँसू) गिराती थी। ५८-७१

8 कामदेवन्निन् आट्चियै

अन्नम् मॆन्नडै—नन्नीर्प् पॊय्है
आम्बल् नाऱुम् तेम्बॊदि नऱुविरै

तामरैच् चॆव्वाय् तण्अऱल् कून्दल्
पाण्वाय वण्डु नोतिऱम् पाडक्
काण्वरु कुवळैक् कण्मलर् विऴिप्पप्
पुळ्वाय् मुरशमॊडु पॊऱिमयिर् वारणत्तु
मुळ्वाय्च् चङ्गम् मुऱैमुऱै आर्प्प
उरवुनीर्प् परप्पिन् ऊर्तुयिल् ऎडुप्पि
इरवु तलैप्पॆयरुम् वैहऱै काऱुम्
अरै इरुळ् यामत्तुम् पहलुम् तुञ्जार्
विरैमलर् वाळियॊडु करुप्पुविल् एन्दि
मकर वॆल्कॊडि मैन्दन् तिरितर
नहरङ्गावल् नत्ति शिऱन्ददु—अॆन्न 72–84

८ कामदेव का ही शासन

शुद्ध-जल-सर में हंस मृदु चाल चलते। उसमें खिले 'आम्बल्' से गंध बिखरती। विकच कमल अरुण अधर थे। शीतल सिकता केश थी। उसको संगीतमुखी भ्रमर प्रातःकाल के जगानेवाले गीत गाकर जगायेंगे। कमनीय 'कुवळै' के पुष्पों के अक्ष खुलेंगे। खग-रव रूपी नगाड़े बज उठेंगे। चित्रमय बिंदियों-सहित पंखों वाले मुर्गों की काँटे-सी (संकीर्ण) चोंचों के शंख अपनी बारी में बज उठेंगे। इस तरह शब्दायमान सागर के समान विशाल पुहार् नगर को नींद से जगाकर रात चली जायगी। उस प्रातःकाल तक अर्ध-तम-प्रहर में भी और दिन में भी न सोकर, सुगंधित सुमन-शर के साथ इक्षु धनुष धारण करते हुए विजयी मकरकेतुमान (मनोज) घूमता रहेगा। (फिर क्या) नगर की रक्षा बहुत खूब हुई, जान लें। ७२-८४

वॆण्बा

कूडिनार् पाल्निऴल् आय् कूडार् पाल् वॆय्यदु आयक्
कावलन्न वॆण्कुडैपोऱ् काट्टिऱ्ऱे—कूडिय
मादविक्कुम् कण्णहिक्कुम् वान्न ऊर् मदि विरिन्दु
पोदविऴ्क्कुम् कङ्गुल् पॊऴुदु

वॆण्बा (छन्द)

साथ रहनेवालों के लिए छाया बनकर और जो नहीं मिले रहते

उनके पक्ष में ताप बनकर रहता है शासक (राजा) का श्वेत छत्र। उसके समान दिखा आकाशचारी चंद्र, किरण फैलाकर कलियो को विकसित कराने की उस रजनी की वेला में, मादवि और कण्णहि को। (चन्द्र रात में मादवि को शीतल सुखदायी तथा कण्णहि को तापक दुखदायी लगा।)

5 इन्दिरविळवु ऊर् ॲडुत्त कादै

1 कदिरवऩ् तोऩ्ऱिनाऩ्

अलैनीर् आडै मलैमुलै आहत्तु
आरप्पेरि याऱ्ऱु मारिक् कून्दल्
कण्णहऩ् परप्पिऩ् मण्णह मडन्दै
पुदैयिरुट् पडाअम् पोह नीक्कि
उदयमाल् वरै उच्चित् तोऩ्ऱि
उलहु विळङ्गु अविर् ऒळि मलर्कदिर् परप्पि 1-6

५ इन्द्रोत्सव-नगर-आयोजन गाथा

१ किरणमाली प्रगट हुआ

तरंग-सागर-वसना, पर्वत-स्तनी, नदी-स्रग्विनी, मेघ-केशिनी, अति गुर्वी पृथ्वी बाला पर पडे रहे घने अंधकार रूपी बड़े आवरण-पट को हटाते हुए उदयाचल के शिखर पर उदित होकर सूर्य ने अपनी लोक-प्रकाशक, विस्तृत और ज्योतिर्मय किरणे फैलायी। १-६

2 मरुवूर्प्पाक्कम्

वेया माडमुम् वियऩ्कल इरुक्कैयुम्
माऩ्कण् कालदर् माळिहै इडङ्गळुम्
कयवाय् मरुङ्गिर् काण्बोर्त् तडुक्कुम्
पयऩ् अऱवु अऱियाक यवऩर् इरुक्कैयुम्
कलऩ्तरु तिरुविऩ् पुलम्पॆयर् माक्कळ्
कलन्दु इरुन्दु उऱैयुम् इलङ्गुनीर् वरैप्पुम्
वण्णमुम् शुण्णमुम् तण्णऱुम् शान्दमुम्

पूवुम् पुहैयुम् मेविय विरैयुम्
पहर्वन्नर् तिरितरु नहर वीदियुम्
पट्टिनुम् मयिरिनुम् परुत्ति नूलिनुम्
कट्टुनुण् विनैक् कारुहर् इरुक्कैयुम्
तूशुम् तुहिरुम् आरमुम् अहिलुम्
माशु अरुमुत्तुम् मणियुम् पोन्नुम्
अरुङ्गल वेरुक्कैयोडु अळन्दु कडै अरिया
वळमृतलै मयङ्गिय नन्नूदलै मरुहुम्
पाल्वहै तेरिन्द पहुदिप् पण्डमोडु
कूलम् कुवित्त कूलवीदियुम्
काळियर् कूवियर् कळ्नोडै आट्टियर्
मीन्विलैप् परदवर् वेळ्उप्पुप् पहरुन्नर्
पाशवर् वाशवर् पल् निण विलैञरोडु
ओशुन्नर् शेरिन्द ऊन्मलि इरुक्कैयुम्
कन्ज कारुम् शम्बु शय्हुन्नरुम्
मरम्कोल् तच्चरुम् करुङ्गक् कोल्लरुम्
कण्णुळ् विनैञरुम् मण्णीट्टु आळरुम्
पोन् शेय् कोल्लरुम् नन्कलम् तरुन्नरुम्
तुन्न कारुम् तोलिन् तुन्नरुम्
किळियिनुम् किडैयिनुम् तोळिल् पलपेरुक्किप्
पळुदु इल् शेय्विनैप् पाल् कोळु माक्कळम्
कुळलिनुम् याळिनुम् कुरल् मुदल् एळुम्
वळु विन्रि इशैत्तु वळित्तिऱम् काट्टुम्
अरुम् पेरल् मरबिन् पेरुम्बाण् इरुक्कैयुम्
शिरुकुरुङ् कैविनैप् पिऱर् विनै याळरोडु
मरुइन्नरि विळङ्गुम् मरुवूर्प् पाक्कमुम् 7-39

२ मरुवूर् पाक्कम्

(मरुवूर् नामक समुद्र के किनारे की बस्ती। मरुवूर् पाक्कम् में निम्नलिखित स्थान आदि थे।) छाजन-हीन हर्म्यतल, आभरणों के भंडार, मृग-नयन-से रंध्रों-सह गवाक्षों वाले प्रासाद आदि के साथ, मुहाने पर यवनों के दृष्टिनिरोधक अक्षय-धन आवास थे। जहाजों द्वारा लाये जाने वाले धन-द्रव्यों के कारण, अपने-अपने देशों से आकर जो परस्पर मिले रहे

उनके समुद्रतटीय वासस्थान थे। वे नगर-वीथियाँ थीं, जहाँ रंग-चोवा, सुगंध चूर्ण, शीतल सुगंधित चंदन, फूल, धूप के द्रव्य, श्रेष्ठ सुगंध-बीज आदि के बेचनेवाले घूमते थे। रेशम, (चूहों के) रोम, रूई आदि के दागों से कसीदा काढनेवाले 'कारुको' के आवास थे। वे बडी वीथियाँ थी, जहाँ रेशम, प्रवाल, चंदन, अगरु, निर्दोष मुक्ता, मणियाँ, स्वर्ण आदि बहुमूल्य संपत्ति-सामानों का अतुल भण्डार था, जिनको मापकर या तोलकर पार पाना असंभव था। धान्य-बाजार थे, जहाँ विविध अनेक सामान और कई प्रकार के धान थे। फिर ऐसे आवास थे, जिनमें पिट्टु (चावल के आटे का बना हुआ खाद्यपदार्थ) बेचनेवाले, पुआ बेचनेवाले, ताड़ी बेचनेवालियाँ मछली बेचनेवाली 'वरदव' धीवर जाति की स्त्रियाँ, सफेद नमक बेचने वालियाँ, तँबोली, पंच-वास-विकेता, विविध-मांस-व्यापारी, तेली आदि रहते थे। और ठठेरे, ताँबे के कारीगर, काठ के कारीगर (बढ़ई), सबल हस्त लुहार, चित्रकार, कुम्हार, स्वर्णकार, वर्तन बनानेवाले, दर्जी, चमार और वस्त्र और काग के विचित्र सामान बनाकर धंधा बढानेवाले आदि त्रुटि-हीन विविध शिल्पियों के रहने के स्थान थे। इनके अलावा, वंशी तथा याळ् (पुरानी तमिळ् प्रदेश की नवीन वीणा से मिलता-जुलता तंत्री-वाद्य) पर सातों स्वरों को निकालकर सगीत सुनानेवाले अमोल परंपराबद्ध गवैयो के वासस्थान थे। इस तरह छोटे-छोटे उद्योगियों के साथ दूसरो की नौकरी करने वाले लोगों के आवासों का निर्दोष नगर-भाग था मरुवूर् पाक्कम। ७-३९

3 पट्टिनप् पाक्कम्

कोवियन्न वीदियुम् कोडित्तेर् वीदियुम्
पीडिहैत् तॆरुवुम् पॆरुङ्गुडि वाणिहर्
माडमरुहुम् मऱैयोर् इरुक्कैयुम्
वोळ्कुडि उळवरोडु विळङ्गिय कोळ्है
आयुळ् वेदरुम् कालक् कणिदरुम्
पाल्वहै तॆरिन्द पन्मुऱै इरुक्कैयुम्
तिरुमणि कुयिऱ्ऱुनर् शिऱन्द कोळ्हैयोडु
अणिवळै पोळुनर् अहन्न पॆरु वीदियुम्
शूदर् मागदर् वेदाळिकरोडु
नाळिहैक् कणक्कर् नलम् पॆरुकण्णुळर्
कावद् कणिहैयर् आडर् कूत्तियर्
पूविलै मडन्दैयर् एवद् चिलदियर्

पयिल् तोॅळिल् कुयिलुवर् पन्नुरुक्क् करुवियर्
नहैवेळम् वरोॅडु वहैतेॅरि इरुक्कैयुम्
कडुम्बरि कडवुनर् कळिऱ्ऱिन् पाहर्
नेॅडुन्देर् ऊरुनर् कडुङ्गण् मऱवर्
इरुन्दु पुरम् शुऱ्ऱिय पेॅरुम्बाय् इरुक्कैयुम्
पीडुकेॅळु शिऱप्पिन् पेॅरियोर् मल्हिय
पाडल् शाल् शिऱप्पिन् पट्टिनप् पाक्कमुम् 40–58

३ पट्टिनप् पाक्कम्

नगर के दूसरे भाग में राजकीय रास्ते थे। पताकासज्जित रथों की वीथियाँ थी। बाजार, उच्च कुल के वणिकों के सौधों की वीथियाँ और ब्राह्मणों के आवासों की पंक्तियाँ थी। सर्वप्रिय कृषक, उच्च-आदर्श वैद्य, ज्योतिषी आदि लोगों के अलग-अलग निवास थे। सुंदर मणि जटित करनेवाले, बारीकी के साथ शंख-कंकण तराशनेवाले आदि की चौड़ी वीथियाँ भी वहीं थी। सूत, मागध, वैतालिक, कालगणक, सुदर वेशधारी दृष्टि-हारी नट, रखैल गणिकाएँ, नर्तकियाँ, पेशेवर रंडियाँ, दासियाँ, अभ्यस्त वादक, विविध बाजों के बजानेवाले और विदूषकों की अलग-अलग ज्ञातव्य वीथियाँ थी। और गढ़ को घेरकर, अश्वचालक, गज-सवार, दीर्घ-रथ-सारथी आदि वीरों के विशाल आवास थे। यह महिमायुक्त, मान्य बड़ों का काव्य-शंसित गौरव से युक्त पट्टिनप् पाक्कम् था। ४०-५८

4 नाळङ्गाडिप्पूद वळिपाडु

इरुपेॅरु वेन्दर् मुत्तैयिडम् पोल
इरुपाऱ् पहुदियिन् इडैनिलम् आहिय
कडैकाल् यात्त मिडैमरच् चोलै
कॉडुप्पोर् ओदैयुम् कॉळ्वोर् ओदैयुम्
नडुक्कु इन्ऱि निलविय नाळ्— अङ्गाडियिल्
चित्तिरैच् चित्तिरैत् तिङ्गळ् शेर्न्देॅन्न
वॆऱ्ऱिवेल् मन्नऱ्कु उऱ्ऱदै ऑॅऴिक्क अन्नत्
तेवर् कोमान् एवलिऱ् पोन्द
कावऱ् पूदत्तुक् कडैकेॅळु पीडिहैप्-
पुळुक्कलुम् नोलैयुम् विळुक्कु उडै मडैयुम्

पूवुम् पुहैयुम् पॊङ्गलुम् शॊरिन्दु
तुणङ्गैयर् कुरवैयर् अणङ्गु ऎऴुन्दु आडिप्
पॆरुनिल मन्नन् इरुनिलम् अडङ्गलुम्
पशियुम् पिणियुम् पहैयुम् नीङ्गि
वशियुम् वळनुम् शुरक्क ऎन वाऴ्त्ति
मादर् कोलत्तु वलवैयिन् उरैक्कुम्
मूदिर् पॆण्डिर् ओदैयिन् पॆयर 59-75

४ दैनिक हाट के भूत की पूजा

दो बडे राजाओं के पडावों के समान रहे (उपर्युक्त) दो नगर-भागों के बीच में यह दैनिक-विक्रय-स्थल रहा। वहाँ, तरु-निकुंज में उपवन के पेड़ों के स्तम्भों पर छाया गया पण्यस्थान था। वहाँ क्रय-विक्रय करनेवालों का अविरल शोर सुनाई देता था। उस दैनिक बाजार में, रक्षक भूत का मदिर और बलिपीठ था। वह भूत इंद्र की आज्ञा से 'विजयी शक्तिधर राजा मुचुकुंद पर आया सकट दूर करने हेतु' भेजा गया था। उस बलिपीठ पर, चैत्र महीना के चैत्र नक्षत्र, पूर्णिमा तिथि में पका अन्न, तिल की बनी मीठी गोलियाँ, मांस-भात, पुष्प, धूप और ताडी (अन्न) आदि की बलि दी गयी। फिर 'तुणङ्गै' और 'कुरवै' के नाच हुए। दैवाविष्ट नाच नाचनेवाली स्त्रियों ने यह मगल-मनौती की कि विशाल अवनि के पति के बड़े देश भर में, सर्वत्र, भूख, रोग और शत्रुता न रहे, वर्षा तथा समृद्धि बढ़े। उनके चले जाने के बाद देवी-वेश में दैवी-शक्ति के आधार पर भविष्यवाणी करनेवाली वृद्धा स्त्रियाँ भी कोलाहल के साथ पूजा करके चली गयी। (मुचुकुंद-संबंधी कथा छठे अध्याय में बतायी जायगी।) ५९-७५

5 वीरर्हळ् पलियिडल्

मरुवूर् मरुङ्गिन् मरङ्गॊळ् वीररुम्
पट्टिन मरुङ्गिन् पडैकॆऴु माक्कळुम्
मुन्दच् चॆन्ऱु मुऴुप् पलि पीडिहै
वॆन्दिऱल् मन्नऱ्कु उऱ्ऱदै ऒऴिक्क ऎनप्
पलिक्कॊडै पुरिन्दोर् वलिक्कु वरम्बु आह ऎनक्
कल्उमिऴ् कवणिनर् कऴिप्पिणि मरैत्तोल्
पल्वेल् परप्पिनर् मॆय् उऱत्तीण्डि
आर्त्तुक् कळम् कॊण्डोर् आर् अमर् अऴुवत्तुप्

चूर्त्तुक् कडैशिवन्द शुडुनोक्कुक् करुन्दलै
वॆड्रि वेन्दन् कॊऱ्ऱम् कॊळ्ह ऎन्न
नड्पलि पीडिहै नलम् कॊळ वैत्तु आङ्गु
उयिर्प् पलि उण्णुम् उरुमुक्कुरल् मुळक्कत्तु
मयिर्क् कण् मुरशॊडु वान् बलि ऊट्टि 76–88

५ वीरों का बलि-समर्पण

मरुवूर् के पार्श्व-प्रदेश-वासी पराक्रमी वीर और पट्टिनम् के पड़ोसी शस्त्रधारी वीर बड़ी बलि-वेदी के पास गये। उन्होने मनौती की कि हमारे विक्रमी राजा के संभाव्य संकट हरो। और इस उद्देश्य से अपने को ही बलि देनेवाले वीर 'वीरता की सीमा' के रूप में माने जायँ। वहाँ ढेलाबाँस चलानेवाले, मास-सहित चमड़े का कवच-धारी वीर और अनेक तरह की साँगों से लैस वीर आये। उन्होने अपने कधे ठोंककर नर्दन किया। वे कठोर समरांगण में नर्दन कर भयंकर युद्ध करके भूमि को अपना कर चुके होते थे। उनकी आँखों के कोने लाल थे। उन्होने अपने सत्रासक नेत्र-सहित काले सिरो को मगलकारिणी बलिवेदी पर काटकर चढ़ाया और मनौती माँगी कि विजयी राजा विजय पावे। तब जीव-बलि-भोक्ता भूत का अशानि-सम नाद उठा। रोम-सहित चमड़ा-मढ़े ढोल बज उठे। इस तरह उन वीरो ने अत्युन्नत बलि चढ़ायी। ७६-८८

6 तिरु मावळवन्निन् वॆड्रि

इरुनिल मरुङ्गिऱ् पॊरुनरैप् पॆऱाअच्
चॆरुवॆङ् गादलिन् तिरुमा वळवन्
वाळुम् कुडैयुम् मयिर्क्कण् मुरशुम्
नाळॊडु पयर्त्तु नण्णार्प् पॆरुह— इम्
मण्णह मरुङ्गिन् अन् वलिकॊळ्ळुतोळ् ऎन्नप्
पुण्णिय तिशैमुहम् पोहिय अन्नाळ्
अशैवु इल् ऊक्कत्तु नशैपिऱक्कु ऒऴियप्
पहैविलक् कियदुरइप् पयङ्गॆळु मलै ऎन्न
इमैयवर् उऱैयुम् शिमैयप् पिडर्त्तलैक्
कॊडुवरि ऒऱ्ऱिक् कॊळ्हैयिन् पॆयर् वोऱ्कु 89–98

६ तिरुमा वळवन् की विजय

अपने दोनों ओर शत्रु के अभाव से (शेर और पांडिय दोनों देश के राजा शोऴन् के अधीन थे) युद्धाकाक्षी शोऴ राजा तिरुमावळवन् ने दिन शोधकर तलवार, छत्र, रोम-सहित नक्कारा आदि को विजययात्रा में भिजवाया। फिर यह कहते हुए कि "शत्रु पायें पृथ्वी पर, ये मेरी सबल भुजाएँ" पुण्य-दिशा (उत्तर) की ओर चला। उसके सामने अकंपित उत्साह को पीछे ढकेलते हुए उस भयंकर हिमाचल ने शत्रु का मिलना दूभर कर दिया। वह देवों के आवास उस हिमवान के शिखर पर क्रूर व्याघ्र का चिह्न चित्रित कर लौट आया। (यह पहले हुई घटना है।) ८९-९८

7 वडपुलत्तार् तन्दवै

मानीर् वेलि वच्चिर नल् नाट्टुक्
कोन्इट्ट कॊडुत्त कॊट्रप् पन्दरुम्
मगदवल् नाट्टु वाळ्वाय् वेन्दन्
पहैपुरत्तुक् कॊडुत्त पट्टि मण्डबमुम्
अवन्दि वेन्दन् उवन्दतन् कॊडुत्त
निवन्दु ओङ्गु मरबिन् तोरण वायिलुम्
पॊन्निनुम् मणियिनुम् पुनैन्दन आयिनुम्
नुण्विनैक् कम्मियर् काणा मरबिन
तुयर्नीङ्गु शिऱप्पिन् अवर् तॊल्लोर् उदविक्कु
मयन्विदित्तुक् कॊडुत्त मरबिन; इवैताम्
ऒरुङ्गुडन् पुणर्त्तु आङ्गु उयर्न्दोर् एत्तुम्
अरुम्पडल् मरबिन् मण्डबम्— अन्ऱियुम् 99-110

७ उत्तर के राजा के दिये

सागर-सीमित श्रेष्ठ वज्र देश (सोन नदी के पास था यह देश) के राजा ने अपना विजय-प्राप्त वितान भेंट मे दिया। (यह न मित्र था न शत्रु)। मगध के अच्छे राज्य के तेज खड्गधर राजा ने हारकर विद्यामंडप भेंट दिया। (यह शत्रु राजा था।) अवन्तीराज ने प्यार के साथ ऊँचा बना तोरणद्वार उपहार में दिया। (यह मित्र-राजा था।) वे सब सोने तथा मणियों के ही निर्मित थे। तो भी उनकी निर्माण-भव्यता अतिकुशल कर्मियों के लिए अदृष्टपूर्व थी। पर-दुख-हारी उन राजाओ के लिए उनकी देवों के प्रति की हुई सहायता के उपलक्ष्य मे मय ने उन्हें रच दिया था।

उनको लाकर तिरु मा वळवन् ने (यह करिकालन् के नाम से विख्यात था। तिरु मा वळवन् का अर्थ महान श्रीसंपन्न होता है)। उचित प्रकार से मिला कर अन्यत्र अलभ्य सौदर्ययुक्त मंडप बना दिया। इस मंडप के अलावा (मंडप थे जहाँ बलि चढ़ायी गयी।) ९९-११०

8 ऐवहै मन्ऱङ्गळिल् अरुम्बलि

वम्ब माक्कळ् तम्पॅयर् पॉऱित्त
कण्णॅळुत्तुप् पडुत्त ऍण्णुप् पल् पॊदिक्
कडैमुह वायिलुम् करुन्दाळ्क् कावलुम्
उडैयोर् कावलुम् ऑरीइय आहिक्
कट्पोर् उळर् ऍनिन् कडुप्पत् तलै एट्ऱिक्
कोट्पिन् अल्लदु कोडुत्तल् ईयादु
उळ्ळुनर्प् पनिक्कुम् वॆळ्ळिडै मन्ऱमुम्
कूनुम् कुऱळुम् ऊमुम् शॅविडुम्
अळुहु मॆय्याळरुम् मुळुहिन्र् आडिप्
पळुदु इल् काट्चि नल् निऱम् पॆऱ्ऱु
वलम् शॅयाक् कळियुम् इलञ्जि मन्ऱमुम्
वञ्जम् उण्डु मयल्पहै उट्ऱोर्
नञ्जम् उण्डु नडुङ्गु तुयर् उट्ऱोर्
अळल्वाय् नाहत्तु आर् ऍयिऱु अळुन्दिन्र्
कळल् कण् कूळि कडुनवैप् पट्टोर्
शुळल वन्दु तॊळुत्तुयर् नीङ्गुम्
निळल् काल् नॆडुङ्गल् निन्ऱ मन्ऱमुम्-
तवम् मऱैन्दु ऑळुहुम् तन्मै इलाळर्
अवम् मऱैन्दु ऑळुहुम् अलवर् पॆण्डिर्
अऱै पोहु अमैच्चर् पिऱर् मनै नयप्पोर्
पॊय्क्करि याळर् पुऱङ्गूऱ्ऱाळर् ऍन्न्
कैक्कोळ् पाशत्तुक् कैप्पडुवोर् ऍनक्
कादम् नान्गुम् कडुङ्गुरल् ऍडुप्पिप्
पूदम् पुडैत्तु उणुम् पूद-शदुक्कमुम्
अरैशु कोल् कोडिनुम् अऱङ्गूऱु अवैयत्तु
उरैनूल कोडि ऑरु तिऱम् पट्रिनुम्

नावीड़ु नविलादु नवैनीर् उहुत्तुप्
पावै निन्ऱु अऴुउम् पावै मऩ्ऱमुम्-
मैय्वहै उणर्न्द विऴुमियोर् एत्तुम्
ऐवहै मऩ्ऱत्तुम् अरुम्बलि उरीइ 111-140

८ पंच विध मंडपों में श्लाघ्य बलि

एक खाली मैदान वाला मंडप था; इस मंडप में देवता की रक्षणशक्ति वर्तमान थी। उस मडप मे अजनवी लोगों के नामाकित सामानो के असख्य बडल पडे थे। उस (मडप) के न प्रधान द्वार-कपाट थे, न पहरेदारो का पहरा। न ही उनके मालिक उनकी स्वयं रक्षा करते थे, तो भी कोई उन्हे चुराता तो बडल को उसके सिर पर दर्द देते हुए लादकर उसको घुमाया जाता। बल्कि उसे नही ले जाने दिया जाता। अत. चुराने को सोचनेवाले का मन दहल जाता। ऐसी शक्ति वाला (वह) एक खाली मैदान वाला मडप (मुहाने के प्रदेश) में था। दूसरा—कुबड़े, ठिगने, मूक वहरे और रोग (कोढ) के कारण गलते शरीर वाले जिसमें स्नान करके अपनी हीनता त्यागकर दर्शनीय शरीर पा लेते और परिक्रमा करके चले जाने, ऐसा एक जलाशय-मडप था। तीसरा—कपट से दिया रसायन खाकर उन्मत्त हुए लोग विष के खिलाये जाने से या खाने से कँपानेवाले दुख से प्रताडित, अग्नि-सम विषधर नाग द्वारा दंशित, वाहर निकली हुई आँखो वाले पिशाच की मार के पात्र वने लोग आदि जिसकी परिक्रमा करके नमन करने पर सकटविमुक्त हो जाते, ऐसा एक प्रभामय लम्वे प्रस्तर वाला प्रस्तरमंडप था। चौथा—तपस्वी वेश में छिपकर पापकर्म करनेवाले वचक, छिपे-छिपे बुरे कर्म में लगी चचल नारियाँ, राजद्रोही, कपटी मत्री, परदारागामी, झूठी गवाही देनेवाले, चुगुलखोर आदि ऐसे लोग मेरे हाथ के पाश के वश हो रहेगे। ऐसा चार कोस तक सुनाई देनेवाले कठोर स्वर मे घोषणा करके मारकर उन्हे खानेवाले भूत का भूतचतुष्क था। फिर राजा के दंड के झुक जाने पर (राजा के नीतिविरुद्ध व्यवहार करने पर) या धर्मसम्मत फैसले सुनानेवाले न्यायालय के शास्त्र की गलत व्याख्या करने से पक्षपात हो जाने पर, जीभ से कुछ न कहकर व्यथा के आँसू वहाते हुए जो रोती थी; उस प्रतिमा का प्रतिमा-मडप पाँचवाँ था। सत्यमय जीवन वाले, रहस्य के ज्ञाता ज्ञानी लोगो द्वारा शसित उन पाँचो मडपों (की वेदियो पर) मे विशिष्ट वलियाँ चढ़ी। १११-१४०

9 मङ्गल नॅडुङ्गॉडि

वच्चिरक् कोट्टत्तु मणम् कॅळु मुरशम्
कच्चै यात्रै पिडर्त्तलै एट्रि
याल्वण् कळिट्रु—अरशु वयङ्गिय कोट्टत्तुक्
काल् कोळ् विळविन् कडैनिलै शाट्रित्
तङ्गिय कॉळ्हैत् तरुनिलैक् कोट्टत्तु
मङ्गल नॅडुङ्गुडि वान् उर ॲडुत्तु 141–146

९ मंगलमय ऊँचा झंडा

(इन्द्रायुध) वज्रकोष्ट (वज्र के मंदिर) में रहे नगाड़े को कच्छ-बद्ध हाथी की गर्दन पर चढ़ाया गया। शुद्ध सफेद रंग के ऐरावत के स्वामी इन्द्र के देवालय में होनेवाले "स्तंभस्थापन" (इन्द्रोत्सव का आरंभ) तथा अन्त के समाचार का ढिंढोरा पीटा गया। और समृद्धि-प्रदायक कल्पतरु वाले इंद्रालय में मंगलसूचक झंडा आकाश में ऊँचा फहराया गया। (उन दिनों देवताओं के वाहन, आयुध आदि के भी कोष्ट थे)। १४१-१४६

10 वीदियिन् पॉलिवु

मरगद मणियॉडु वयिरम् कुयिट्रिप्
पवळम् तिरळ्काल् पैम्पॉन् वेदिहै
नॅडुनिलै माळिहैक् कडैमुहत्तु याङ्गणुम्
किम्पुरि पहुवायक् किळर् मुत्तु ऑळुकुकत्तु
मङ्गलम् पॉट्रित्त महर वाशिहैत्
तोरणम् निलैइय तोम् अरु पशुम्बॉन्
पूरण कुम्बत्तुप् पॉलिन्द पालिहै
पावै विळक्कुप् पशुम् पॉन् पडाहै
तूमयिर्क् कवरि शुन्दरच् चुण्णत्तु
मेविय कॉळ्है वीदियिट् चॅट्रिनुडु आङ्गु 147–156

१० सड़क की शोभा

(जिस सड़क से जुलूस जा रहा था, उस सड़क में) मरकत-हीरा-जटित प्रवाल स्तंभों को स्वर्णतख्तों पर स्थापित कर बने आंगनो वाले कई तल्लों के बने प्रासादों की पंक्तियाँ थी। उनके द्वार पर सर्वत्र 'किपुरी'

(खोंसा जानेवाला आभरण) से सज्जित तथा छटायुक्त मुक्तामालाओं को लटकाते हुए रहे दाँतों वाले मकर के आकार के तोरण थे। खोट से रहित चोखे स्वर्ण के पूर्ण-कुंभ, उज्ज्वल "पालिकाएँ" (मंगल-बीजांकुर के मृण्मय पात्र) प्रतिमा-दीपक चोखे स्वर्ण के झंडे, पवित्र रोमनिर्मित चामर मनोरम चूर्ण आदि जिन सड़कों पर ले जाये जा रहे थे, उन सड़कों पर लोग भी सटे रहकर जा रहे थे। (कौन-कौन गये, आदि का वर्णन आगे आता है।) १४७-१५६

11 इन्दिरन्नै नीराट्टल्

ऐम्पॅरुङ् कुऴुवुम् ऍण् पेर् आयमुम्
अरश कुमररुम् परद कुमररुम्
कवर्परिप् पुरवियर् कळिऱ्ऱिन् तॉहुदियर्
इवर् परित् तेरिन्नर् इयैन्दु ऑरुङ्गु ईण्डि
अरैशु मेम् पडीहय अहनिलै मरुङ्गिल्
'उरै शाल् मन्नन्न कॉऱ्ऱम् कॉळ्ह' ऍन्न
माहरु आलत्तु मन्नुयिर् काक्कुम्
आयिरत्तु ओर् ऍट्टु अरशु तलैक् कॉण्ड
तण्नरुङ् गाविरि तादुमलिप् पॅरुन्दुऱैप्
पुण्णिय नल्नीर् पॉऱ्कुडत्तु एन्दि
मण्णहम् मरुळ वानहम् वियप्प
विण्णवर् तलैवनै विळ्ळुनीर् आट्टिप् **157–168**

११ इन्द्र का श्रीमज्जन

(मंत्रीगण, पुरोहितदल, सेनापतिसमूह, चर और चारण आदि की। पंच-महा-परिषद, (भृत्य, अंगरक्षक, परिवार, द्वारपाल, नगरवासी, अश्व, गज, रथ आदि के सवार वीर, आदि के) अष्टमहामंडल, राजकुमार, वणिक्-कुमार, अलंकृत अश्वारोही, गजारोही, वीरों की मंडलियाँ, तावडतोड़ भागनेवाले अश्व-जुते रथारोही आदि सब मिलकर गये। राजशासन-महिमा-प्रतिबिम्बित उस मध्य भाग में जाकर प्रकीर्तित राजा की विजय-प्राप्ति की कामना में विशाल पृथ्वी के एक हज़ार आठ प्रजापालक राजा अपने सिरों पर शीतल सुगंधित कावेरि नदी के परागपूर्ण बड़े घाट से भरे हुए जल से पूर्ण स्वर्ण-घट ले आये। भूप्रदेश को भ्रमित तथा सुरलोक को विस्मित करते हुए उन्होंने (उस जल से) व्योमवासियों के नायक का श्रीमज्जन करवाया। १५७-१६८

12 वेरु वेरु कडवुळर् तिरुविळा

पिऱवा याक्कैप् पॆरियोन् कोयिलुम्
अऱुमुहच् चॆव्वेळ् अणि तिहळ् कोयिलुम्
वाल् वळै मेनि वालियोन् कोयिलुम्
नील मेनि नॆडियोन् कोयिलुम्
मालै वॆण् कुडै मन्नवन् कोयिलुम्
मामुदु मुदल्वन् वाय्मैयिन् वळाअ
नान्मऱै मरपिन् तीमुऱै ओरु पाल्
नाल् वहैत् तेवरुम् मूवऱु कणङ्गळुम्
पाल् वहै तॆरिन्द पहुदित् तोऱ्ऱत्तु
वेरुवेरु कडवुळर शाऱुशिऱन्दु ओरुपाल् 169–178

१२ अन्य देवताओं के उत्सव

अजन्मा परमेश्वर का मंदिर, गोरे देवता षण्मुख का मंदिर, अति श्वेत शंख-निभ बलराम का मंदिर, श्याम-शरीर त्रिविक्रम विष्णु का मंदिर, माला-छत्रधर इन्द्र का मंदिर, आदि मंदिरों में एक ओर, महान पुरातन देव, ब्रह्मा-कल्पित शास्त्र से विलग न होकर चतुर्वेद-विहित रीति से होमकर्म हुए। चतुर्विध (वसु, आदित्य, रुद्र और मरुद्गणों के) देवता, देव, असुर, मुनि, किन्नर, किंपुरुष, गरुड़, यक्ष, राक्षस, गंधर्व, सिद्ध, चारण, विद्याधर, नाग, भूत, बेताल, तारागण, व्योमवासी, भोगभूमिवासी आदि अठारह गणों के देवता आदि श्रेणी-विभाज्य अलग-अलग देवताओं के उत्सव एक ओर चले। १६९-१७८

13 शॆयल् शिऱन्द इडङ्गळ्

अऱवोर् पळ्ळियुम् अऱन् ओम् पडैयुम्
पुऱनिलैक् कोट्टत्तुप् पुण्णियत् तानमुम्
तिऱवोर् उरैक्कुञ् जॆयल् शिऱन्दु ओरु पाल् 179–181

१३ पुण्य-कर्म-विशिष्ट स्थान

(अर्हत तथा बौद्ध) धर्म के उपदेश-स्थल, धर्मवर्धक धर्मशालाएँ, प्राचीरों के पड़ोस में रहे वैरागियों के आश्रम आदि में समर्थ तत्त्वज्ञ-कथित दान-पुण्यादि कर्म खूब चले। १७९-१८१

14 अडित्तळै नीक्कल्

कॊडित्तेर् वेन्दन्नोडु कूडा मन्नर्
अडित्तळै नीक्क अरुळ् शिऱन्दु ऒरुपाल् 182–183

१४ बेड़ियाँ काटना

एक ओर पताकायुक्त रथ के स्वामी राजा के वैरी (कारावद्ध) राजाओ की बेडियाॅ काटने (उन्हे मुक्त कराने) का अनुग्रह प्रशसनीय रहा। १८२-१८३

15 इशै शिऱन्ददु

कण्णु ळाळर् करुविक् कुयिलुवर्
पण्णियाऴ्प् पुलवर् पाडल् पाणरॊडु
ऎण् अरुञ् जिऱप्पिन् इशै शिऱन्दु ऒरुपाल्
मुऴवुक्कण् तुयिलादु मुडुक्करुम् वीदियुम्
विऴवुक् कळि शिऱन्द वियलुळ् आङ्गण् 184–188

१५ संगीत का विलास

दृष्टिहारी नट, चर्म आदि वाद्यों के वादक, वीणा के विद्वान और मौखिक गान गानेवाले "बाणर्" आदि सगीतकारों का संगीत और एक ओर विलास पा रहा था। मृदग आदि बाजों की "ऑखे" (ध्वनि) वंद नहीं हुई। कोने-कोने में और मार्गों मे उत्सवानद विशेप रूप धारण किये था। उस विशाल नगर की यह स्थिति रही। तब—१८४-१८८

16 मारुदम् तिरित्तरुम् मरुकु

कादल् कॊळुनन्नैप् पिरिन्दु अलर् ऎय्दा
मादर्क् कॊडुङ् गुऴै तन्नॊडु
इल्वळर् मुल्लै मल्लिहै मयिलै
ताऴिक् कुवळै शूऴ् शॆङ् गऴुनीर्
पयिल् पूङ्गोदै पिणैयलिऱ् पॊलिन्दु
कामक् कळि महिऴ्वु ऎय्दिक् कामर्
पूम् पॊदि नऱुविरैप् पॊऴिल् आट्टु अमर्न्दु
नाळ्महिऴ् इरुक्कै नाळ् अङ्गाडियिल्

पूमलि कान्नत्तुप् पुट्टुमणम् पुक्कुप्
पुहैयुम् शान्दुम् पुलराडु शिऱन्दु
नहै आड़ु आयत्तु नन्नमोंऴि तिऴैत्तुक्
कुरल्वाय्प् पाणरोडु नहरप् परत्
तरोडु तिरितरु मरबिन्न कोवलन्न पोल
इळिवाय् वण्डिन्नोडु इन्न इळ वेन्निलोडु
मलय मारुदम् तिरितरु मरुहिल् 189-203

१६ मारुत-संचार-मार्ग

प्रिय पुरुष से अलग होने पर होनेवाले विरह-दुख से रहित रही वक्र-मकर-कुंडलधारिणी मादवि का संग-सुख भोगता; घर में पले "मुल्लै" के फूल, मल्लिका, 'इरु वाट्चि' (सब बेला की विविध जातियों के फूल है) बड़े मृत्पात्र में पले कुवळै; भ्रमरावृत लाल कमल आदि के फूलों की बनी माला में (माला धरकर) शोभा पाता; कामसुरा-पान से खुश रहता; मनोरम गंधमय पुष्पों की वाटिका में केलि चाहकर वहाँ जा रहता; फिर पुष्प-संकुल अह्-विक्रय-स्थल में जाकर पुष्पवन का गन्ध सूँघता, धूप, चंदन आदि का सौरभ भोगता; परिहास-वचन (अश्लील वार्तालाप) कहनेवाली मंडली में रहकर उनके वार्त्तालाप का आनंद उठाता, मौखिक संगीतकार 'बाण' (भाट ?) लोगों (गवैयों) और नगर के लंपटों के साथ जो घूमता था उस कोवलन् के समान मलय मारुत भी (अविकसित माधवी का और अन्य फूलों की गंध सूँघता, रस चूसता, पुष्पवाटिका, अह्-विक्रयस्थल आदि में संचरण करता भ्रमरियो के संग वसंत का आनंद उठाते हुए) मार्ग में संचार कर रहा था। (इसमें कोवलन् मारुत की उपमा है। श्लेष का सहारा लिया गया है।) १८९-२०३

17 आडवर् मयक्कम्

करुमुहिल् शुमन्दु कुऱुमुयल् ओंऴित्तु
आङ्गु इरु करुङ् कयलोडु इडैक् कुमिऴ् ॲऴुदि
अङ्गण् वान्नत्तु अरवुप् पहै अञ्जि
तिङ्गळुम् ईण्डुत् तिरिदलुम् उण्डु
कोंल् नीर्वायत् तिङ्गळ् नीळ् निलत्तु
अमुदिन्न शीर्वायत् तुवलैत् तिरुनीर् मान्दि
मीन्न एऱ्कक् कोंडियोन्न मेय्प्पॆंऱ वळर्त्त

वान्न वल्लि वरुदलुम् उण्डुकॊल्
इरुनिल मन्नर्कुप् पॆरुवळम् काट्टत्
तिरुमहळ् पुहुन्ददु इच् चॆळुम्पदि आम् ऎन्न
ऎरि निऱत्तु इलवमुम् मुल्लैयुम् अन्रियुम्
करु नॆडुङ् कुवळैयुम् कुमिळुम् पूत्तु आङ्गु
उळ्वरिक् कोलत्तु उऱुतुणै तेडि
कळ्ळक् कमलम् तिरितलुम् उण्डु कॊल्
मन्नवन् शॆङ्गोल् मऱुत्तल् अञ्जिप्
पल्लुयिर् परुहुम् पहुवाय्क् कूऱ्ऱम्
आण्मैयिल् तिरिन्दुतन्न अरुन्दॊऴिल् तिरियादु
नाण् उडैक् कोलत्तु नहैमुहम् कोट्टिप्
पण्मॊऴि नरम्बिन्न तिववु याऴ् मिऴऱ्ऱिप्
पॆण्मैयिल् तिरियुम् पॆऱ्ऱियुम् उण्डु ऎन्न 204-223

१७ पुरुषों का भ्रम

(सड़कों पर तरुण रंडियाँ घूम रही हैं। उनको देखकर बाँके युवक चक्कर में पड़ जाते हैं।) काला मेघ ढोता हुआ, छोटे शशक को छोडकर, दो काली कयल् मछलियों और बीच में 'कुमिळ्' पुष्प को अंकित करके, सुंदर विशाल गगन से, राहु के वैर से डर के कारण चंद्र भी इधर आकर चक्कर काटता रहेगा क्या? (क्षीरसागर-) नीर से उठे चंद्र-रूपी बड़ी भूमि में, अमृत की तरल उत्कृष्ट बूँदें पीकर, जो मकरकेतन से, उसके रूप को पाने की इच्छा से पालित रही, वह आकाश-लता (बिजली) भी इधर मे आ गयी क्या? 'विशाल धरती के पति राजा को अपनी सम्पन्नता दरसाने के लिए श्री लक्ष्मीदेवी का प्रविष्ट नगर है यह', ऐसा मानकर, अग्निवर्ण 'इलवम्', 'मुल्लै' और काले आयत 'कुवळै' (उत्पल), 'कुमिळ्' आदि के फूलते समय, कृत्रिम वेश में वंचक कमल भी (लक्ष्मीदेवी की खोज में) इधर आकर घूम रहा है क्या? (क्या यह भी संभव है?) राजा के ऋजु दंड (नीति) का उल्लंघन करने से भय खाकर अनेक प्राणों को पीनेवाला (हंता) विवृत-मुख यम ने अपना पुरुष-रूप बदलकर भी अपना कृत्य नही बदला। लज्जायुक्त वेश तथा हास्य-भरा मुख अपनाकर, संगीतजनक सुबद्ध याऴ् की-सी ध्वनि में बोलते हुए स्त्री-वेश में घूम रहा सा लगता है। क्या यम का इस भाँति घूमना भी संभव है? २०४-२२३

18 मत्तै शेर्न्द आडवर्

उरुविलाळन् ऑरु पॅरुम् शेन्नै
इहल् अमर् आट्टि ऍदिर् निन्रु विलक्कि अवर्
ऍळुदु वरिक् कोलम् मुळुमेयुम् उडोइ
विरुन्दॉडु पुक्क पॅरुन्दोळ् कणवरॉडु
उडन् उरवु मरीइ ऑळुक्कॉडु पुणर्न्द
वडमीन् कर्पिन् मत्तैयुरै महळिर्;
मादर्वाळ् मुहत्तु मणित्तोट्टुक् कुवळैप्
पोदुपुरङ् कॉडुत्तुप् पोहिय शॅङ्गडै
विरुन्दिन् तीर्न्दिलदु आयिन् यावदुम्
मरुन्दुम् तरुम् कॉल् इम् मानिल वरैप्पु? ऍन्नक्
कैयरू नडुङ्गुम् नल्विनै नडुनाळ् 224-234

१८ घर पहुँचे पुरुष

अनंग की एक बड़ी सेना (वारांगनाओं) ने युवकों की आँखों से अपनी आँखें लड़ाई। सामने जाकर रोका। फिर अपने शरीर पर अंकित चित्रों को उनके शरीरों पर छपवा दिया। वे युवक पुरुष, (उपाय सोचकर) मेहमानों को लेकर घर चले। घर में प्रविष्ट उन विशाल भुजाओं वाले पतियों से उनकी पत्नियाँ मिलीं और नियमानुसार संभोग-सुख दिया। वे उत्तर दिशा के नक्षत्र (अरुन्धती) के समान पतिव्रता गृहिणियाँ थीं। तो भी उनकी आँखे लाल ही थी (रूठन नहीं छोड़ा)। (युवकों ने विस्मय किया कि) इस सुंदरी के प्रभावान मुख के, मणि-सम-दलों वाले 'कुवळै' को हरा भगानेवाले नेत्रों के कोनों की लाली, अतिथि को देखकर भी दूर नहीं हुई; तो यह विशाल भूलोक अन्य कोई दवा दे सकेगा क्या?" वे काँपे; उनके हाथ-पैर शिथिल पड़ गये। इस प्रकार उत्सव-दिन चल रहे थे, उनके मध्य में—२२४-२३४

19 करुङ् कण्णुम् शॅङ्कण्णुम्

उळ्ळह नरुन्ताद्रु उऱैप्प मीदु अळिन्दु
कळ् उह नडुङ्गुम् कळुनीर् पोलक्
कण्णहि करुङ्गणुम् मादवि शॅङ्गणुम्
उळ्निरै करन्दु अहत्तु ऑळित्तु नीर् उहुत्तन

ऑॅण्णु मुऱै इडत्तिलुम् वलत्तिनुम् तुडित्तन
विण्णवर् कोमान् विऴवु नाऴ् अहत्तु—ॲन 235-240

१६ काली तथा लाल आँखें

अन्दर पराग ठस भर गये। अतः 'बन्धन के कटने से' मधु बरसाते हुए कॉपनेवाले 'कऴुनीर्' के फूल के समान कण्णहि के काले नेत्रों (दुख से) और मादवि के लाल नेत्रों ने (सुख से) अन्दर के भाव के छलकने से आँसू बहाये। यथाक्रम उनकी बायी तथा दायी आँखे कॉपने लगी। (क्या विडम्बना है। इद्रोत्सव के दिन में ऐसा हुआ। बायी आँखो का कॉपना स्त्रियो के लिए अच्छा नही माना जाता।) २३५-२४०

6 कडल् आडु कादै

(छंद—निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 कामक्कडवुळ् विऴा

वॅळ्ळि माल् वरै वियत्त पॅरुन् जेडिक्
कळ् अविऴ् पूम्पॊऴिल् कामक् कडवुट्कुक्
करुङ्गयल् नॅडुङ्गण् कादलि तन्नॊडु
विरुन्दाट्टु अयरुम् ओर् विञ्जै वीरन 1-4

६ सिंधुस्नान गाथा

१ कामदेव का उत्सव

रजत पर्वत पर स्थित विद्याधर नगरी के मधुस्रावी पुष्प-भरे एक उद्यान में, अपनी काली 'कयल्' (मछली)-सी आँखो वाली पत्नी के साथ एक विद्याधर वीर कामदेव का उत्सव मना रहा था। १-४

2 वीरन कादलिक्कुच् चॊन्नतु

तॆन्न दिशै मरुङ्गिन ओर् शॆऴुम्पदि—तन्निन
इन्दिर विऴवु कॊण्डु ॲडुक्कुम् नाळ् इडु ॲन
कडुविशै अवुणर् कणम् कॊण्डु ईण्डिक्
कॊडुवरि ऊक्कत्तुक् कोनहर् कात्त
तॊडु कऴन मन्नऱ्कुत् तॊलैन्दन्नर् आहि
नॆञ्जु इरुळ् कूर निहऱ्त्तु मेल् विट्ट

वज्जम् पॆयर्त्त मा पॆरुम् पूदम्
तिरुन्दु वेल् अण्णऱ्कुत् तेवर् कोन् एव
इरुन्दु पलि उण्णुम् इडऩुम् काण्गुदुम् !
अमरा पदि कात्तु अमरनिऱ् पॆऱ्ऱ
तमरिल् तन्दु तहैशाल् शिऱप्पिऩ्
पॊय्वहै इन्ऱिप् पूमियिल् पुणर्त्त
ऐवहै मन्ऱत्तु अमैदियुम् काण्गुदुम्
नारदन् वीणै नयम् तॆरि पाडलुम्
तोरिय मडन्दै वारप् पाडलुम्
आयिरम् कण्णोन् शॆवियहम् निऱैय
नाडहम् उरुप्पशि नल्हाळ् आहि
मङ्गलम् इळप्प वीणै, मण्मिशैत्
तङ्गुह इवळ् ॲन्ऱु चाबम् पॆऱ्ऱ
मङ्गै मादवि वळिमुदल् तोन्ऱिय
अङ्गु अरवु अल्हुल् आडलुम् काण्गुदुम्
तुवर् इदळ्च् चॆव्वायत् तुडि इडैयोये
अमरर् तलैवर्त्त वणङ्गुदुम् याम् ॲन्ऱु 5-27

२ वीर का प्रेमिका से कथन

तब वीर ने अपनी प्रेयसी से कहा—"दक्षिण दिशा में स्थित एक श्रीसमृद्ध नगर (पुम् पुहार्) में, आज इन्द्रोत्सव मनाया जा रहा है। (एक समय) अति वेगवान दानवों ने दल बाँधकर (इन्द्रनगर पर) धावा बोल दिया। (तब मुचुकुंद) भयंकर व्याघ्र-सम वीर राजा ने इन्द्र-राजधानी की रक्षा की। वीरपायलधारी राजा से हारकर दानवों ने खीझकर मन को तम से ढँकनेवाले माया-अस्त्र को छोड़ा। उस माया को एक महान भूत ने ध्वस्त कर दिया। देवेन्द्र की आज्ञा से वह भूत सुघड़ साँगधारी (मुचुकुंद) राजा के साथ आकर उस नगर में रह गया। वह जहाँ रहकर वलि भोग रहा है, वह स्थान हम जाकर देखेंगे। अमरावती नगर की रक्षा करके राजा ने देवेंद्र से प्रत्युपकार के रूप में पाँच मंडप पाये। और उन्हें अपने वंशजों को दे गया। वे मण्डप समुचित रीति से, बिना किसी विपर्यय के, भूमि पर स्थापित किये गये। उन पाँचों प्रकारों के मण्डपों को भी हम जाकर देखेंगे। एक समय (इन्द्र-सभा में) नारद की वीणा का सुहावना गीत और अभ्यस्त प्रौढ़ा नर्तकियों का "वारम" गीत सहस्राक्ष इन्द्र के कानों

को भर (आनन्द दे) रहे थे। तव उर्वशी ने नाच अच्छा नहीं किया। (क्योंकि पर्दे के पीछे से नाच देख रहे जयन्त पर उसकी दृष्टि पड़ी और मन चंचल बन गया।) नारद की वीणा ने भी मंगल (स्वर) खो दिया। (तब अगस्त्य द्वारा) 'यह भूमि पर जा रहे।' यह शाप पाकर उर्वशी पृथ्वी पर "मादवि" बनी जनमी। उसके वंश में जन्म लेकर आज सर्प-सम-भग वाली मादवि नाच रही है। उसका नाच भी देखेंगे। हे अरुणाधरा, डमरू सम कटि वाली! आओ, हम जाकर उत्सव-नायक (इन्द्र) की वन्दना करें।" ५-२७

3 पुहार् नोक्कि वरुदल्

शिमैयत्तु इमैयमुम् शॆऴुनीर्क् कङ्गैयुम्
उञ्जै अम् पदियुम् विन्जत्तु अडवियुम्
वेङ्गड मलैयुम् ताङ्गा विळैयुळ्
काविरि नाडुम् काट्टिप् पिन्नर्प्
पूविरि पडैप्पैप् पुहार् मरुङ्गु ऍय्दिच्
चॊल्लिय मुरैमैयिऩ् तॊऴुदनन् काट्टि
मल्लल् मूदूर् महिऴ् विऴाक् काण्बोऩ् **28–34**

३ पुहार की तरफ़ आगमन

सश्रृंग हिमालय, पुष्कल-सलिला गंगा, सुन्दर उञ्जै" (उज्जयिनी) नगर, विध्याटवी, वेंकटगिरि (वाला जी का मंदिर), वहन-दुस्तर उपज देनेवाली "काविरी" नदी का (नदी-सिंचित) प्रदेश आदि को दरसाकर विद्याधर पुष्पोद्यानो से पूर्ण पुहार् नगर के पास पहुँचा। पहले उक्त प्रकार से उसने पुहार् नगर के दृश्य दिखाये और नमस्कार किया। फिर समृद्ध पुरातन पुहार नगर में उत्सव देखने लगा। मादवि के नृत्य देखने गया। २८-३४

4 मादवियिऩ् पदिऩोर् आडल्

मायोऩ् पाणियुम् वरुणप् पूदर्
नाल्वहैप् पाणियुम् नलम् पॆरु कॊऴ्है
वाऩ् ऊर् मदियमुस् पाडिप् पिन्नर्च्-
चीर् इयल् पॊलिय नीर् अल नीङ्गप्-
पारदि आडिय बारदि अरङ्गत्तुत्

तिरिपुरम् ऍरियत् तेवर् वेण्ड
ऍरिमुहप् पेर् अम्बु एवल् केट्प
उमैयवळ् ऑरु तिऱऩ् आह ओङ्गिय
इमैयवऩ् आडिय कॊडु कॊट्टि आडलुम्
तेर्मुऩ् निऩ्ऱ दिशैमुहऩ् काणप्
पारदि आडिय वियऩ् पाण् डरङ्गमुम्
कञ्जऩ् वञ्जम् कडत्तऱ् काह
अञ्जऩ वण्णऩ् आडिय आडलुळ्
अल्लियत् तॊहुदियुम् अवुणऱ् कडन्द
मल्लिऩ् आडलुम्; माक्कडल् नडुवण्
नीर्त्तिरै अरङ्गत्तु निहर्त्तु मुऩ् निऩ्ऱ
शूर्त्तिऱम् कडन्दोऩ् आडिय तुडियुम्
पडैवीऴ्त्तु अवुणर् पैयुळ् ऍय्दक्
कुडै वीऴ्त्तु अवर्मुऩ् आडिय कुडैयुम्
वाणऩ् पेर् ऊर् मऱुहिडै नडन्दु
नीळ् निलम् अळन्दोऩ् आडिय कुडमुम्
आण्मै तिरिन्द पॆण्मैक् कोलत्तुक्
कामऩ् आडिय पेडि आडलुम्:
काय्शिऩ अवुणर् कडुन्दॊऴिल् पॊऱाअळ्
मायवळ् आडिय मरक्काल् आडलुम्;
शॆरुवॆङ् गोलम् अवुणर् नीङ्गत्
तिरुविऩ् शॆय्योळ् आडिऩ पावैयुम्
वयलुळै निऩ्ऱु वडक्कु वायिलुळ्
अयिराणि मडन्दै आडिय कडैयमुम्-
अवरवर् अणियुडऩ् अवरवर् कॊळ्हैयिऩ्
निलैयुम् पडिदमुम् नीङ्गा मरबिऩ्
पदिऩोर् आडलुम् पाट्टिऩ् पहुदियुम्
विदिमाण् कॊळ्हैयिऩ् विळङ्गक् काणाय्
ताऴ् अविऴ् पूम्बॊऴिल् इरुन्दु याऩ् कूऱिय
मादवि मरबिऩ् मादवि इवळ् ऍऩक्
कादलिक्कु उरैत्तुक् कण्डु महिऴ्वु ऍय्दिय
मेदहु शिऱप्पिऩ् विऴैयऩ् अऩऱियुम् 35–71

४ मादवि के ग्यारह नृत्य

(नियमानुसार मादवि ने अपने नृत्यदेव-वन्दना के गीत-नृत्य के साथ प्रारम्भ किया।) विष्णु-स्तुति, चतुर्वर्ण-भूत-स्तुति के चार प्रकार के गीत, लोकमंगलार्थ आकाशचारी चन्द्र की स्तुति के नृत्य-सह गीत गाये। तदनंतर (निम्नोक्त ग्यारह नृत्य दर्शित किये)। गलत नृत्य से बचकर उचित रीति के नृत्य को स्थान देते हुए भारती (भैरवी) के नाट्यस्थल भारतीरंग (श्मशान) में, देवों के त्रिपुर-दहन की प्रार्थना करने पर वड़वाग्नि-शिखा-वाण को चलाने में तत्पर हो, उमा को एक भाग में करते हुए सर्व-देव-नायक, परमेश्वर ने जो नृत्य किया था, वह करताल-सहित "कॉडु कॉट्टि" नाच; (दूसरा—) रथ के सामने स्थित चतुर्मुख को दिखाते हुए भारती का कृत "पाण्डरंगम" का नाच; (तीसरा—) कंस की वंचना को पार पाने के निमित अंजनवर्ण ने जो नृत्य किये उनमें के "अल्लियम् समूह" का नाच, (चौथा—) दानव-घाती 'मल्ल' नाच; (पाँचवाँ—) महासागर-मध्य जल-तरंग-रंग में वैरी के रूप में स्थित "शूरपद्म" का बल तोडनेवाले मुरुगनदेव का "तुडि" नाच; (छठा—) दानवों को हथियारों को नीचे फेंककर दुखी होने को मजबूर करते हुए उनके सामने छाता लेकर "मुरुगन" देव ने जो किया वह "छत्र-नृत्य"; (सातवाँ—) बाणासुर के बड़े नगर के मार्ग में पैदल चलते हुए त्रिविक्रम विष्णु का किया 'कुंभ (कुडम्) नृत्य'; (आठवाँ—) पुरुष-रूप त्यागकर स्त्री-वेश में मन्मथ ने जो किया वह "पेडि" (षंड) नृत्य; (नौवाँ—) संतापक, क्रुद्ध दानवों के क्रूर कृत्यों से बाज आकर मायाविनी दुर्गा ने जो किया वह "काष्ठ चरण" नाच, (दसवाँ—) दानवो को अपने योद्धा-रूपों को त्यागने को विवश करते हुए श्रीदेवी का किया "पावै (प्रतिमा)" नाच; (और ग्यारहवाँ—) बाणासुर के नगर के गढ़ के बाहर खेतों में उत्तर द्वार पर खड़े होकर किया गया इन्द्राणी का "कडैयम" नृत्य, आदि नृत्यों को मादवि ने उन-उन पात्रों के अनुकूल वेश-भूषा धारण कर प्रदर्शित किया। उनके भाव प्रकट कराये। खड़ी या पड़ी, उचित मुद्रा में मादवी के ये ग्यारह नृत्य, योग्य गीत और विधिसम्मत हावभावों के साथ सम्पन्न हुए। विद्याधर ने अपनी स्त्री से कहा—'परागभूयिष्ठ पुष्पोद्यान में रहकर जिसकी मैंने चर्चा की थी, वह मादवि की वंशजा मादवि यही है !' यह कहकर प्रेयसी को मादवि का नृत्य दिखाकर खुश हुआ वह सम्मान्य विद्याधर वीर ! और भी— ३५-७१

5 कोवलन्तुडन्न् कूडिय मादवि

अन्दरत्तु तुळ्ळोर् अऱिया मरबिन्
वन्दु काणुकुरूउम् वात्तवन् विळवुम्

आडलुम् कोलमुम् अणियुम् कडैक्कोळ
ऊडर् कोलमोडु इरुन्दोन् उवप्पप्
पत्तुव तुवरित्तुम् ऐन्दु विरैयित्तुम्
मुप्पत्तु इरुवहै ओमा लिहैयित्तुम्
ऊऱित्त नल्नीर् उरैत्तनॅय् वाशम्
नाऱु इरुङ् कून्दल् नलम् बॆऱ आट्टिप्
पुहैयिन् पुलर्त्तिय पूमॆन् कून्दलै
वहैतॊरुम् मान्मदक् कॊळुञ्जेऱु ऊट्टि
अलत्तहम् ऊट्टिय अमॆशॆञ् जीऱडि
नलत्तहु मॆल्विरल् नल्आणि शॆऱीइप्
परियहम् नूपुरम् पाडहम् शदङ्गै
अरियहम् कालुक्कु अमैवुऱ अणिन्दु
कुऱङ्गु शॆऱितिरळ् कुऱङ्गिनिल् चॆऱित्तु
पिऱङ्गिय मुत्तरै मुप्पत्तु इरुकाळ्
निरम् किळर् पूत्तुहिल् नीर्मैयिन् उडीइक्
कामर् कण्डिहै तन्नॊडु पिन्निय
तूमणित् तोळ्वळै तोळुक्कु आणिन्दु
मत्तह मणियॊडु वयिरम् कट्टिय
चित्तिरच् चूडहम् शॆम्बॊन् कैवळै
परियहम् वाल्वळै पवळप् पल्वळै
अरिमयिर् मुन्कैक्कु अमैवुऱ अणिन्दु
वाळैप् पहुवाय् वण्कुक्कु उऱु मोदिरम्
केळ्किळर् शॆङ्गेळ् किळर्मणि मोदिरम्
वाङ्गुविल् वयिरत्तु मरहदत् ताळ् शॆऱि
कान्दळ् मॆल्विरल् करप्प अणिन्दु
शङ्गिलि नुण्तॊडर् पूण्ञाण् पुनैविनै
अम्कळुत्तु अहवयिन् आरमॊडु अणिन्दु
कयिर्कडै ऒळुहिय कामर् तूमणि
शॆय्त्तहु कोवैयिन् शिऱुपुरम् मऱैत्तु आङ्गु
इन्दिर नीलत्तु इडै इडै तिरण्ड
चन्दिर पाणि तहै पॆऱु कडिप्पु इणै
अङ्गादु अहवयिन् अळहुऱ अणिन्दु

तॆय्व उत्तियॊडु शॆंळुनीर् वलम् पुरि
तॊय्यहम् पुल्लहम् तॊडर्न्द तलैक्कु अणि
मैईर् ओदिक्कु माण्बुउ अणिन्दु
कूडलुम् कडलुम् कोवलऩ्कु अळित्तुप्
पाडु अमै शेक्कैप् पळ्ळिपुळ् इरुन्दोळ् 72–110

५ कोवलन् की संगति में मादवि

(उस उत्सव को) व्योमवासियों ने आकर अज्ञात रूप से देखा। वह इन्द्रोत्सव और उसके अंग-रूप, नृत्य और गीत, वेश और शृंगार सबका अन्त हो गया। कोवलन् रूठी अवस्था में रहा। उसे रिझाने हेतु (मादवि ने अपने को निम्न प्रकार से सजा लिया :) दस कषाय पदार्थों, पांच सुगंध-द्रव्यों और बत्तीस जड़ों के गलकर बने शुद्ध जल से उसने अपने धूम (तैल)-सने, और सुवासपूर्ण घने केश को धुला लिया। फिर धूप लगाकर उसे सुखाया। फिर केश को पांच भागों में विभक्त कर कस्तूरी का घना लेप दिया। फिर अपने छोटे पैरों में अलक्तक लगा लिया। कल्याणकारी कोमल उंगलियों में श्रेष्ठ मुंदरियां पहन लीं। 'परियहम्', 'नूपुरम्', 'पाडहम', 'शदङ्गै' (घुंघरू), 'अरियहम्' आदि को पैरों में फबती रीति से धारण किया। पुष्ट ऊरुओं में "कुरङ्गु" (ऊर्वाभरण) पहने। मोटे मोतियों की बत्तीस लड़ियों की मेखला को खिले रंग वाली महीन साड़ी पर धर ली। आकर्षक कंठी के साथ बद्ध, खरी मणियों के बने बिजावट को पहनकर 'मस्तक मणि' के साथ हीरों से जड़े चित्रमय 'चूडहम्' लाल (सोने) स्वर्णहस्तकंगण, "परियहम्", "वान् वळै" (शंख-चूड़ी) आदि आभरणों को छोटे, कोमल बालों के साथ शोभायमान अपने (पहुँचों) अग्र-हस्तों में पहन लिया। 'वाळै' नामक मत्स्य के खुले मुख की अनुकृति में बनी वक्र मुंदरी, प्रभा-वितरक लाल रंग की माणिक्य मुंदरी और धनुषाकार प्रभा छिटकानेवाले मोतियों-सह बनी मरकत-'ताळ्शॆरि' आदि को उसने 'कान्दळ्' के मृदु फूल के समान कोमल उँगलियों को लगभग दुराते हुए पहन लिया। गले की (सिकड़ी) मोटी, 'शंगिलि', महीन सिकड़ी, कंठी और अन्य सुघड़ आभरणों को सुन्दर गले पर हारों के साथ पहन लिया। सांकरों की संधि से, पीठ पर लटकनेवाली, मनोरम खरी मणियों की सुन्दर लड़ियों से गर्दन को अलंकृत कर छिपाया। इंद्रनील मणियों के साथ बीच-बीच में लगे 'चन्द्रपाणी' हीरों के सुन्दर जोड़े के (कुदबै नामक) कर्णाभरण से कानों को सुन्दर ढंग से अलंकृत कर लिया। 'दॆय्व उत्ति', 'शॆंळुनीर्',

'वलम्पुरि', 'तोय्यहम्', 'पुल्लहम्' आदि एक साथ चलनेवाले शिरोभूषणों से मादवि ने अपने काले लम्बे केश वाले सिर को सजा लिया। इस तरह बन-ठनकर मादवि ने अब मिलन-का सुख, फिर तब झूठा क्रोध दिखाकर विरह्-रंज आदि देते हुए दो के लिए सुविरचित शय्या पर कोवलन के साथ समय बिताया। ७२-११०

6 कडऱ्करैप् पयणम्

उरुकॆळु मून्ऱु उववुत्तलै वन्दॆऩ्ऩप्
पॆरुनीर् पोहुम् इरियल् माक्कळॊडु
मडल् अविळ् कान्ऱल् कडल् विळैयाट्टुक्
काण्डल् विरुप्पॊडु वेण्डिऩळ् आहिप्
पॊय्हैत् तामरैप् पुळ्वाय् पुलम्ब
वैहऱै यामम् वारणम् काट्ट
वॆळ्ळि विळक्कम् नळ्इरुळ् कडियत्
तार्अणि मार्बनॊडु पेर्अणि अणिन्दु
वाऩ वण्कैयऩ् अत्तिरि एऱ
माऩ्अमर् नोक्कियुम् वैयम् एऱिक्
कोडिपल अडुक्किय कॊळुनिदिक् कुप्पै
माडमलि मऱुहिऩ् पीडिहैत् तॆरुविऩ्
मलर्अणि विळक्कत्तु मणिविळक्कु ऎडुत्तु आङ्गु
अलर् कॊडिअऱुहुम् नल्लुम् वीशि
मङ्गलत् ताशियर् तम् कलऩ् ऒलिप्प
इरुपुडै मरुङ्गिऩुम् तिरिवऩर् पॆयरुम्
तिरुमहळ् इरुक्कै शॆव्वऩम् कळिन्दु
महर वारि वळम् तन्दु ओङ्गिय
नगर वीदि नडुवण् पोहिक्
कलम् तरु तिरुविऩ् पुलम् पॆयर् माक्कळ्
वेलैवा लुहत्तु विरितिरैप् परप्पिऩ्
कूल मऱुहिल् कॊडि ऎडुत्तु नविलुम्
मालैच् चेरि मरुङ्गु शॆऩ्ऱु ऎय्दि 111-133

६ सागर-तीर-यात्रा

शत्रु-भयंकर पुरातन पुहार् नगर में पूर्णिमा के दिन को आया देखकर सागर की ओर जानेवाले लोगों के साथ मादवि ने भी दल-खिले (केतकी

आदि के) पुष्पों से पूर्ण वेला-वाटिकाओं में रहकर सागर-लीला में भाग लेना चाहा। कोवलन् ने प्रार्थना की। तब सरोवरों के कमलों पर रहते पक्षीगण बोल रहे थे। उषाकाल का मुर्गा ने (अपनी बाँग मे) संकेत दिया। शुक्र के प्रकाश ने निशातम को दूर कर दिया। कोवलन् ने हार आदि पहन लिये। और मादवि बड़े और उत्तम आभरणों से सज्जित हुई। मेघ-हस्त (दानी) कोवलन् "अत्तिरि" (अश्व या खच्चर) पर सवार हुआ। और मृगनयनी मादवि 'वैयम्' (रथ या गाड़ी) पर चढ बैठी। पहले वे, कोटि पर कोटि मिलाकर प्राप्त मूल्य के ससमृद्ध द्रव्यों के ढेरों के साथ रहे प्रासाद-पूर्ण वणिक्-पथ पार कर गये। फिर बाजार की वीथी को, जहाँ पुष्पालंकृत मणिदीप धरकर विकसित पुष्पो, दूर्वादलो तथा धानों को छितराते हुए दासियाँ उनके आभरणों की खनक के साथ दोनों तरफ़ आती-जाती रही। वहाँ मानो श्रीदेवी वास कर रही थी। उसको भी पार कर मकरालय द्वारा आयी दौलत के कारण उन्नत बने नगर-मुख्य-मार्ग में चले। समुद्री व्यापार में लगे रहने के कारण स्थानांतरित लोगो का जहाँ वास था, उस विस्तृत बालुका-मैदान मे सागर-तीर पर गये। वहाँ पताकाएँ फहरा रही थी, जिनसे विविध सामानों के स्थान पहचाने जाते थे। वह "मालैच्चेरी" भी पार कर वे उसके पास ही रहे स्थान (वेला-वाटिका) में पहुँचे। १११-१३२

7 कडऱ्करैयिल् पऱ्पल विळक्कुहळ्

वण्णमुम् शान्दुम् मलरुम् शुण्णमुम्
पण्णियप् पहुदियुम् पहर्वोर् विळक्कमुम्
शॆय्विनैक् कम्मियर् कैविनै विळक्कमुम्
कालियर् मोदहत्तु ऊऴ्उऱु विळक्कमुम्
कूवियर् कार्अहल् कुडक्काल् विळक्कमुम्
नॊडैनविल् महडूउक् कडैहऴु विळक्कमुम्
इडै इडै मीन्विलै पहर्वोर् विळक्कमुम्
इलङ्गुनीर् वरैप्पिन् कलङ्गरै विळक्कमुम्
विलङ्गुवलैप् परदवर् मीन्तिमिल् विळक्कमुम्
मॊऴिपॆयर् तेअंत्तोर् ऒऴिया विळक्कमुम्
कऴिपेरुम् पण्डङ् गावलर् विळक्कमुम्
ऎण्णु वरम्बु अऱिया इयैनदु ऒरुङ्गु ईण्डि
इडिक्कलप्पु अनन्न ईर्अयिर् मरुङ्गिल्

कडिप्पहै काणुम् काट्चि अदु आहिय
विरैमलर्त् तामरै वीड्गुनीर्प् परप्पिन्
मरुद वेलियिन् माण्बुरत् तोन्रुम्
कैदै वेलि नेय्दल् अम् कानल्
पोय्दल् आयमोडु पूड्गोडि पोरुन्दि 134-151

७ सागर-तीर पर विविध दीप

(सागर-तीर के उस मनोरंजन के स्थान में अनेक दीपक जल रहे थे; वे थे :) रंगचूर्ण, चदन-पुष्प, सुगध-चूर्ण इत्यादि के विक्रय-स्थान में उनके विक्रेताओं के दीप; कार्यकुशल कर्मियो के कर्मस्थल के दीप; 'पिट्टु' (मीठा खाद्य) वणिकों की पक्ति मे रखी दीपिकाएँ; 'कूवियर्' (पुआ के बेचनेवाले) लोगो के काले दिये के दीवट पर रख दीप; ताडी बेचनेवाली स्त्रियों के स्थानों को प्रकाशित करनेवाले दीप; बीच-बीच में मछलियो के दाम बोलनेवालो के दीप; समुद्र मे जानेवाले पोतों को किनारा जतानेवाला दीप, मछलियों को रोककर पकड़नेवाले जालों के साथ "परदवर्" (धीवर लोग) जिनमें बैठे थे, उन मछली-नावो पर जलते दीप; अन्य भाषा-भाषी लोगो के अविरल (रात भर, सूर्योदय तक) जलनेवाले दीप, अत्यधिक परिमाण में एकत्रित भंडारों के भडारघरों के पहरेदारों के दीपक, आदि असख्य दीपो का वहाँ जमघट था ! आटे के चूर्ण के समान बहुत बारीक रेतों से भरे उस स्थान में अगर सफेद लघु सरसों डाले जाते तो वे अलग दिखाई देते। सुगंधयुक्त कमल-भरे जलाशयों से सीमित "मरुदम्" (खेतों का प्रदेश)-सम सुन्दर रहे उस "केतकी" वलयित बेला-वाटिका मे, पुष्पवल्ली (-सी मादवि) सागर-लीला हेतु सखियों के साथ जा पहुँची। १३४-१५१

8 मक्कळिन् कळिप्पु

निरै निरै ॲडुत्त पुरैतीर् काट्चिय
मलैप्पल् तारमुम् कडऱ्पल् तारमुम्
वळम् तलै मयड्गिय तुळड्गु कल इरुक्कै
अरशु इळड् कुमररुम् उरिमैच् चुऱ्रमुम्
बरद कुमररुम् पल्वेरु आयमुम्
आडुकळ महळिरुम् पाडुकळ महळिरुम्
तोडुकोळ् मरुड्गिन् शूळ्तरल् ॲळिनियुम्
विण्पोरु पेरुम्बुहळ्क् करिहाल् वळवन्
तण्पदम् कोळ्ळुम् तलैनाळ् पोल

वेरु वेरु कोलत्तु वेरु वेरु कम्बलै
शारु अयर् कळत्तु वीरु पॅरुत् तोन्ऱिक्
कडऱ्करै मॅलिक्कुम् काविरिप् पेरियाऱ्ऱु
इडम्कॉंड ईण्डिय नाल्वहै वरुणत्तु
अडङ्गाक् कम्बलै उडङ्गु इयैन्दु ऑलिप्प 152–165

८ लोगों का आनन्द

ढेर, ढेर में रखे गये और असुन्दरता-रहित दिखनेवाले पर्वत-प्रदेश से प्राप्त प्रदार्थों और समुद्र द्वारा मिले पदार्थों से मिश्रित रूप से भरे जहाज वहाँ रह हिल रहे थे। (उन पोतों से शोभायमान उस सागर के तीर पर स्थित वाटिका में) राजकुमार लोग और उनकी अधीन नारियाँ, वणिक्कुमार और उनके परिवार (आ रहे)। नृत्य गणिकाएँ, गानेवाली स्त्रियाँ आदि झुंडो में रही। उनके अलग-अलग स्थान थे। उनको घेरे हुए जहाँ-तहाँ (पटघर) डेरे डाले गये थे। कभी व्योम तक फैली कीर्ति वाले "करिकालन्" (शोळ राजा) ने (काविरि में नयी बाढ़ आते समय) नवप्रवाहोत्सव मनाने की प्रथा आरम्भ की थी। उन दिनों के समान आज भी लोग विविध-विविध वेशों में, अलग-अलग कोलाहलमय शोरों के साथ उत्सव के आनन्द में मग्न हो रहे थे। सागर-तीर को ढकेलकर पीछे हटानेवाली बड़ी काविरि नदी के मुहाने को स्थान-शून्य बनाते हुए चारों वर्णों के लोग एकत्रित थे। उन सबके अदम्य उत्साहपूर्ण कोलाहल का शोर एक साथ उठ रहा था। १५२-१६५

9 मादवियुम् कोवलन्नुम्

कडऱ्पुलवु कडन्द मडऱ्पून् दाळैच्
चिरॅशॅय् वेलि अहवयिन् आङ्गुओर्
पुन्नै नीळऱ् पुदुमणऱ् परप्पिल्
ओविय ॲळिन्शिूळ उडन् पोक्कि
विदानित्तुप् पडुत्त वॅण्काल् अमळिमिशै
वरुन्दुवु निन्ऱ वसन्दमालै कैत्
तिरुन्दुकोल् नल्याळ् शॅव्वन्नम् वाङ्गि
कोवलन् तन्नॉडुम् कॉळ्हैयिन् इरुन्दन्नळ्
मामलर् नॆडुङ्गण् मादवि तान् ॲन् 166–174

६ मादवि और कोवलन्

समुद्र से निकल आनेवाली, मांसगंध को दबाती रही केतकी के झाड़ों की घिरी जमीन पर 'पुन्नै' वृक्ष की छाया में, नूतन रेतीले विस्तार में (एक डेरा बनाया गया)। डेरा चारों ओर से चित्रांकित वस्त्र वलयित कर घेरा बनाया गया। ऊपर वितान ताना गया। उसके अन्दर श्वेत-चरण पर्यंक पर मादवि और कोवलन् थे; पास वसन्तमालै (मादवि की सखी-दासी) पैरों के दुखते खड़ी थी। उसके हाथ में सुनिर्मित दाँड़ वाली याऴ् थी। उसके हाथ से मादवि ने उस याऴ् को सावधानी से ग्रहण की। वह कमलायताक्षी मादवि उस डेरे में कोवलन् के साथ भावोल्लासग्रस्त रही। १६६-१७४

वॆण्बा

वेलैमडल् ताऴै उट्पोदिन्द वॆण्तोट्टु
मालैत् तुयिन्ऱ मणिवण्डु—कालैक्
कळिनर्वम् तादुऊदत् तोन्ऱिड्ऱे कामर्
तॆळिनिऱ वॆङ्गदिरोन् तेर्

वॆण्बा (छन्द)

सागर-कूल में केतकी का झाड़ था। उसमे रहे श्वेत दलों के मध्य पिछली शाम को मणिवर्ण भौरा सो गया था। अब सवेरे, मनोरम तथा छने हुए रंग में गरम मोहभंजक किरणमाली का रथ उदित हुआ और वह भौरा जाग उठा और मादक मधु और पराग को (फूंकने) चाटने लगा।

7 कानल् वरि

(छन्द—कोच्चहक् कलि)

1 कट्टुरै

चित्तिरप् पडत्तुळ् पुक्कुच् चॆळुङ्गोट्टिन् मलर् पुनैन्दु
मैत्तडङ्गण् मणमहळिर् कोलम्पोल् वन्नप्पु ऎय्दिप्
पत्तरुम् कोडुम् आणियुम् नरम्बुम् ऎन्ऱु
इवत्तिर्त्तुक् कुऱ्ऱम् नीङ्गिययाऴ् कैयिल् तॊऴुदु वाङ्गिप्
पण्णल्, परिवट्टणै आराय्दल् तैवरल्
कण्णिय शॆलवु विळैयाट्टु कैयूऴ्
नण्णिय कुऱुम् बोक्कु ऎन्ऱु नाट्टिय

ऍण् वहैयाल् इशै ऍऴ़ीइप्
पण् वहैयाल् परिवु तीर्न्दु
मरगद मणित् ताळ्शॆरिन्द मणिक्कान्दळ् मॆल्विरल्हळ्
पयिर्वण्डिऩ् किळैपोलप् पल्नरम्बिऩ् मिशैप्पड़र
वार्त्तल् वडित्तल् उन्दल् उऱ़ऴ़्दल्
शीरुडऩ् उरुट्टल् तॆरुट्टल् अळ्ळल्
एर् उडैप्पट्टडै ऍऩ इशैयोर् वहुत्त
ऍट्टु वहैयिऩ् इशैक्करणत्तुप्
पट्ट वहैतऩ् शॆवियिऩ् ओर्त्तु
"एवलऩ् पिऩ् पाणि यादु" ऍऩ
कोवलऩ् कैयाऴ़् नीट्ट—अवऩुम्
काविरियै नोक्किऩवुम् कडऱ्काऩल् वरिप्पाणियुम्
मादवि तऩ् मऩम् महिऴ़ वाशित्तल् तॊडङ्गुम् मऩ् 1

७ वेलागान

१ प्रसंग-वार्ता

वह याऴ़् (तमिऴ़नाड की पुराने काल की वीणा का नाम) चित्रांकित पटावरण के अन्दर रखी हुई थी। उसका दंड पुष्पों से अर्चित था। कजरारी, आयताक्षी नववधू के समान सौदर्यमयी थी। उसके "पत्तर्" (तूंबी ?) दंड, खूँटी, (उपनाह) तत्री आदि भाग निर्दोष थे। ऐसी याऴ़् को मादवि ने नमस्कार करके हाथ में लिया और "पण्णल्", "परिवट्टणै", "आराय्दल्", "तैवरल्", "कण्णिय शैलवु", "विळैयाट्टु", "कैयूऴ़् कुऱ़म् पोक्कु" (राग-योग्य तत्री समझना, टकृत करना, आज़माना, आरोह-अवरोह कर देखना, तंत्री को सहलाना आदि) इत्यादि आठो निर्दिष्ट प्रक्रियाओं द्वारा राग-प्रस्तार करके आजमाया। राग-साधन में किसी ग़लती के बिना उसकी मरकत-मणि-मुँदिरयों से युक्त "कान्तळ्" पुष्प-समान उँगलियाँ, गुंजार करने-वाले भ्रमरो के समान स्वर निकालते हुए तंत्रियों पर चलने लगी। "वार्त्तल्", "वडित्तल्", "उन्दल्", "उऱ़ऴ़्दल्", "शीर" के साथ "उरुट्टल्", "तॆरुत्तल्", "अळ्ळल्", "एर्उडैप् पट्टडै" इत्यादि ये (कानी उँगली से लेकर अकेली दो मिली हुई उँगलियों से तार खींचकर या बजा करके स्वर निकालने के) संगीताचार्यो द्वारा विहित आठ प्रकार के "संगीतकरण" (स्वर निकालने के उपाय) हैं। मादवि ने इन आठों प्रकारों से संगीत उत्पन्न करके अपने कानों को सुनकर तृप्त करा लिया।

फिर उसने कोवलन् से पूछा—मैं आपकी 'किंकर' हूँ। आपका (इष्ट) गाना कौन सा है? (कहती हुई) उसने कोवलन् के हाथ में (की ओर) याऴ् बढ़ाथी। मादवि को आह्लादित करते हुए कोवलन् ने भी याऴ् को लेकर काविरिविषयक 'सागरोद्यान वरि[1]' का संगीत आरम्भ किया। १

2 काविरियै नोक्किप् पाडियत्र

(मुहम् उडैवरि—आऱ्ऱु वरि)

तिङ्गळ् मालै वॆण्कुडैयात्र
शॆन्नि शॆङ्गोल्—अदु ओच्चिक्
कङ्गै तन्नैप् पुणर्न्दालुम्
पुलवाय् वाऴि कावेरी !
कङ्गै तन्नैप् पुणर्न्दालुम्
पुलवा दॊऴिदल् कयर्कण्णाय् !
मङ्गै मादर् पॆरुङ्गऱ्पु ऎन्ऱु
अऱिन्देन् वाऴि कावेरी ! 2

२ काविरि को लक्ष्य बनाकर गाये गये गीत

(प्रारम्भिक गान—नदी-गान)

चन्द्र-सम मालाधारी श्वेत छत्रपति शोऴ् राजा अपना राजदण्ड बढ़ाकर (पराक्रम दिखाकर, राज्य का विस्तार करके) गंगा से जा मिला। (गंगा-प्रदेश को भी जीतकर अपना बना लिया) तो भी तू घृणा नही करती! जीती रह। काविरि! (बलिहारी है।) गंगा को भी सयुक्त कर लेने पर भी हे मीनाक्षी, तेरा न रूठना प्रेयसी स्त्रियों का महान पातिव्रत्य (के कारण) है—यह मैंने जान लिया। जीती रह काविरि! (बलिहारी है।) २

मन्नुम् मालै वॆण् कुडैयात्
वळैयाच् चॆङ्गोल् अदु ओच्चिक्
कन्नि तन्नैप् पुणर्न्दालुम्
पुलवाय् वाऴि कावेरी !
कन्नि तन्नैप् पुणर्न्दालुम्
पुलवा दॊऴिदल्—कयर् कण्णाय्
मन्नुम् मादर् पॆरुङ्गऱ्पु ऎन्ऱु
अऱिन्देन् वाऴि कावेरी ! 3

१ गाना या गीत।

प्रशंसा-हार-धारी, श्वेत छत्रपति ने अपने ऋजु-राजदण्ड (राज्यक्षेत्र) बढ़ाकर "कुमारी" (दक्षिण भूमि) को अपना वना लिया। तो भी तू नही रूठी। (बलिहारी है) जीती रह काविरि! कन्या (कुमारी) से संगम करने पर भी बिना घृणा किये रहना श्रेष्ठ कुलांगनाओ का महान पातिव्रत्य (के कारण) है। मैने यह जान लिया। जीती रह काविरि! ३

उऴवर् ओदै मदहु ओदै
उडैनीर् ओदै, तण् पदङ्कॊळ्
विऴवर् ओदै शिऱन्दु आऱ्प्प
नडन्दाय् वाऴि कावेरी!
विऴवर् ओदै शिऱन्दु आर्प्प
नडन्द ॲल्लाम् वाय्कावा
मऴवर् ओदै वळवन्—तन्
वळत्ते वाऴि कावेरी! 4

कृषकों के (हल-मंगलगीत के) शोर, मोरी के मुख का (पानी बहने का) नाद, बाँध तोड़कर वहते जल का रव, नव-प्रवाह-उत्सव मनानेवालों का कोलाहल आदि शब्द तेरे दोनों वाजुओ में हो रहे है। तू उनके बीच से मंद गति से चल रही है। जीती रह, काविरि! (दुहाई है)! इस सारे उत्सव-रत लोगो के कोलाहल के वढने तथा तेरे निर्द्वन्द्व चलने का आधार ही गढ़ की रक्षा को अनावश्यक बनाते हुए नारे निकालनेवाले वीरों के स्वामी शोऴन् की ऐश्वर्य-संपन्नता ही है। जीती रह काविरि! ४

3 पुहारैच् चिऱप्पित्तुप् पाडियन

(शार्त्तु वरि—मुहच्चार्त्तु—तोऴि वरैदु कडादल् तुऱै)

करिय मलर् नॆडुङ्गण् कारिहै मुन्
कडल् दॆय्वम् काट्टिक् काट्टि
अरियशूळ् पॊय्त्तार् अऱन् इलर् ॲन्ऱु
एऴैयम् याङ्गु अऱिहोम् ऐय?
विरिकदिर् वॆण्मदियुम् मीन्कणमुम्
आम् ॲन्ऱे विळङ्गुम् वॆळ्ळैप्
पुरि वळैयुम् मुत्तुम् कण्डु—आम्बल्
पॊदि अविऴ्क्कुम् पुहारे ॲम् ऊर्! 5

३ पुहार्-बड़ाई-गान

(मुहच्चार्त्तु गान—सखी के प्रश्न के रूप में)

आयत-नीलोत्पलाक्षी के सामने समुद्र-देवता को दिखा-दिखाकर (बार-बार सौगंद खाकर) नायक ने जो अच्छी-अच्छी प्रतिज्ञाएँ की उन्हे फिर उन्होंने झुठला दिया। जी ! हम बेचारियाँ क्या जाने कि वे अधर्मी निर्दय थे ? विवृत किरणों वाले चन्द्र और तारागण का धोखा देनेवाले झुर्रीदार श्वेत शंख और मोतियों को देखकर जहाँ कुमुदिनी (अह में) खिल जाती है, वही हमारा पुहार् नगर है ! ५

कादलर् आहिक् कळिक् कानल्
कैयुरै कॉण्डु ॲम्पिन्न् वन्दार्
एदिलर् तामाहि याम् इरप्प
निऱ्पदै याङ्गु अऱिहोम्, ऐय ?
मादरार् कण्णुम् मदिनिळल् नीर्
इणै कॉण्डु मलर्न्द नीलप्
पोदुम् अऱियादु—वण्डु ऊशल्
आडुम् पुहारे ॲम् ऊर् ! 6

वे प्रेमी बनकर, सागरोद्यान में, हाथ में उपहार लेकर हमारे पीछे-पीछे आये। (पर अब) अजनबी बनकर, हमारी प्रार्थना सुनते हुए मौन खड़े रहेंगे—यह हमने क्या जाना जी ? यह नगर हमारा पुहार् नगर है, जहाँ भ्रमर थल में स्त्रियों की आँखो में तथा जल मे चन्द्र-बिंब को देखकर खिले कुमुद-पुष्पो मे फर्क न जानकर भटकते हुए उड़ रहे है। ६

मोदुमुदिरैयान्न् मौत्तुण्डु
पोन्दु अशैन्द मुरल्वाय्च् चङ्गम्
मादर् वरिमणल् मेल् वण्डल्
उळ्ढु अळिप्प माळ्हि, ऐय !
कोदै परिन्दु अशैय मॅल् विरलाल्
कॉण्डु ओच्चुम् कुवळै मालैप्
पोदु शिऱङ्गणिप्पप्—पोवार् कण्
पोहाप् पुहारे ॲम् ऊर् ! 7

टकराती लहरों की मार खाकर इधर-उधर होते हुए नाद करनेवाले

शख, लकीर-युक्त बालू पर कन्याओं के घरौदों को मिटा देते। उसे देखकर वे बालाएँ "हाय जी" कहकर, अपनी मालाओ को उतारकर अपनी कोमल उँगलियो से पकडकर फेकती। उन मालाओं के "कुवळै" के फूल मानो ऑखो की कोर से स्त्रियाँ देखती हों, ऐसे पड़े है। आने-जानेवाले इस धोखे में पड़कर गतिरुद्ध हो जाते। यह जहाँ होता है, वही हमारा पुहार् नगर है*। ७

4 पाङ्गन् कूऱुहिन्ऱान्

(मुहम् इल् वरि)

तुऱैमेय् वलम्पुरि तोय्न्दु मणल् उऴुद
तोऱ्ऱम् माय्वान्
पॊऱैमलि पूम्पुन्नैप्पू उदिर्न्दु नुण्तादु
पोर्क्कुम् कान्ल्
निऱैमदि वाऴ् मुहत्तु नेर्कयऱ्
कण् शॆय्द
उऱै मलि उय्या नोय् ऊर् शुणङ्गु
मन् मुलैये तीर्क्कुम् पोलुम् **8**

४ मित्र नायक से कहता है

(संकेत-स्थल पर मिल गया। नायिका के प्रेमाधिक्य को देखता है। आकर नायक से कहता है)

घाट पर वालू के ऊपर हल के समान चलते हुए दक्षिणावर्त शखों द्वारा वनाये गये चिह्नों (कूँडो) को मिटाते हुए पुष्पभारावनत "पुन्नै" तरु के फूल गिरते है और पराग फैल जाते है। ऐसे सागर-कूलोद्यान में पूर्णचंद्र-निभ आननवर्ती "कयल" (मत्स्य)-सी उसकी ऑखो ने जो दवा द्वारा अपरिहार्य रोग दिलाया है, उसका निवारण उसी के फैलते पांडर से शोभित कोमल स्तन ही कर सकेंगे शायद! (ऑखो से बने दाग को मिटानेवाली दवा स्तन ही है।) ८

---

* "शार्त्तु वरि" (समासोक्ति ?) का अर्थ 'संबंधित गान' है। यह गान-काव्य नायक को पुहार् नगर और उसके पति से संबन्धित करके गाया गया है। शार्त्तु के तीन प्रकारो में यह एक "मुहच्चार्त्तु" है। इन तीनों पद्यों का व्यंग्यार्थ है—आपने हमारी सखी नायिका की संगति भोग ली थी। झूठा वादा करके हट गये हैं। नायिका लोकनिंदा से डरती रहती है। आकर विवाह करके उसका दुख व डर दूर करें।

5 अऱियेऩ्

(काऩल्वरि—कळऱ्ऱु अँदिर् मऱ्ऱ्)

निणम्कोंळ् पुलाल् उणङ्गल् निऩ्ऱु पुळ्
ओप्पुदल् तलैक्कोंडु आहक्
कणम्कोंळ् वण्डु आर्त्तु उलाम् कऩ्ऩि
नऱुञाळल् कैयिल् एन्दि
मणम् कमळ् पूङ्गाऩल् मऩ्ऩि
मऱ्ऱु आण्डु ओर्
अणङ्गु उऱैयुम् अऩ्ऩबदु अऱियेऩ्
अऱिवेऩेल् अडैयेऩ् मऩ्ऩो ! 9

५ जानता नहीं था

(उद्यान-गीत—नायक द्वारा अस्वीकार मित्र के कथन का)

सूखने के लिए डाली रही मछलियो से पक्षियो को भगाने (उड़ाने) के मिस सुगंधित "ञाळल्" पुष्प हाथ में लेकर, जिस पर भ्रमर दल बाँधकर मँड़रा रहे है, उस सुगधित उद्यान में एक मोहिनी आकर खड़ी रहेगी—यह मैं जानता नही था। जानता तो वहाँ जाता ही नही। ९

वलैवाऴ्नर् शेरि वलै उणङ्गुम् मुऩ्ऱिल्
मलर् कै एन्दि
विलैमीऩ् उणङ्गल् पोंरुट्टाह
वेण्डु उरुवम् कोंण्डु वेऱु ओर्
कोंलैवेल् नेंडुङ्गण्
कोंडुङ् कूऱ्ऱम् वाऴ्वदु
अलैनीर्त् तण् काऩल् अऱियेऩ्
अऱिवेऩेल् अडैयेऩ् मऩ्ऩो ! 10

(मछली पकडने के) जाल द्वारा जीवनयापन-कारी धीवरों की वस्ती में जिस आँगन में जाल सूखने के लिए डाला गया है, वहाँ विक्री योग्य मछलियाँ भी सूखने के लिए फैलायी पड़ी हैं। उनकी रक्षा में अपना मनचाहा रूप लेकर एक दूसरा, सहारक शक्ति-सम आयत आँखों वाला यम तरंगपूर्ण सागर तटवर्ती उस उद्यान में रह रहा है! यह मै जानता नही था। अगर जानता तो उधर जाता ही नही। १०

6 ऍन्न इदु ?

(निलै वरि)

कयल् ऍऴुदि विल् ऍऴुदिक् कार् ऍऴुदिक् कामन्
शॅयल् ऍऴुदित् तीर्न्द मुहम् तिङ्गळो काणीर् !
तिङ्गळो काणीर्—तिमिल् वाऴ्नर् शीरूर्क्के
अम्कण् एर् वानत्तु अरवु अञ्जि वाऴ्व दुवे ! 11

६ यह क्या है ?

(अकेली आती नायिका को सम्मुख पाकर नायक विस्मय करता है)

(यह मुख क्या चंद्र है ?) उस पर मछलियाँ (आँखें) लिखी गयी है। धनुष (भौ) का चित्र लिखा गया है। मेघ (केश) बनाये गये है। उसके कर्म के रूप मे काम द्वारा त्रास लिखी गयी है। देखो तो सही। क्या वह चंद्र है ? देखो, जो मत्स्य-नौकाओं के सहारे जीवन-यापन-कारियों के ग्राम मे सुदर विशाल आकाश को सर्प (राहु) के डर से छोड़ आकर जी रहा है ? ११

ऍरिवळैहळ् आर्प्प इरुमरुङ्गुम् ओडुम्
करै कॅऴुवेल् कण्णो कडुङ् कूर्ट्रम् काणीर् !
कडुम् कूर्ट्रम् काणीर्—कडल् वाऴ्नर् शीरूर्क्के
मडङ्गॅऴु मॅन्नशायल् महळ् आयदुवे ! 12

तरंग-चालित शंखो के नाद से डरकर जो आँखे इधर-उधर तिरती रहती है, रक्तरजित वेल् (साँग) के समान लाल कोर वाली वे आँखे क्या भयकर यम है, भयकर मृत्यु ? देखो ! जो समुद्रजीवी लोगो के ग्राम में अति सौदर्यवती कोमल शरीर वाली रमणी बन आयी है ? १२

पुलवुमीन् वॅळ् उणङ्गल् पुळ् ओप्पिक् कण्डार्क्कु
अलव नोय् शॅय्युम् अणङ्गु इदुवो : काणीर्
अणङ्गु इदुवो काणीर्—अडुम्बु अमर् तण् कानल्
पिणङ्गु नेर् ऐम्बाल् ओर् पॅण् कॊण्डदुवे ! 13

मांस-गंध से युक्त सफेद मत्स्य-अचारों को चिड़ियो से बचाने के मिस, दर्शको के मन मे (काम-) रोग पैदा करनेवाली मोहिनी है क्या यह ? देखो

क्या यह अप्सरा है जो "अडुम्बु" के फूलों से भरे उपवन में घने पंच-केशयुक्त रमणी का वेश धरके आयी है ? १३

7 इवैताम् इडर् शॅय्बवै

(मुरि वरि)

पॊऴिल् तरु नरुमलरे पुदुमणम् विरि मणले
पऴुदु अरु तिरुमॊऴिये पणै इळ वन मुलैये
मुऴुमदि पुरै मुहमे मुरिपुरु विल् इणैये
अॆऴुदु अरुम् मिन्न इडैये—अॆन्नै इडर् शॅय्दवैये ! 14

७ इन्हीं ने त्रास दिया

(मुरि गान—क्रम-भग्न करके गाया गया गान)

हे मित्र ! उद्यान के गंधवह पुष्प, नई गंध से सुगधित बालू, अमोघ मधुर बोली, पीन, छोटे (उम्र मे) और सुन्दर उरोज, पूर्ण-चन्द्र-निभ आनन, टेढ़ा धनुषद्वय (नेत्र), अचित्रण-योग्य विद्युत्-कटि —इन्ही ने मुझे त्रस्त कर दिया। १४

तिरैविरि तरुतुऱैये तिरुमणल् विरि इडमे
विरै विरि नरुमलरे मिडैतरु पॊऴिल् इडमे
मरुविरि पुरिकुऴले मदिपुरै तिरुमुहमे
इरुकयल् इणै विऴिये—अॆन्नै इडर् शॅय्दवैये 15

तरंग-वितत घाट, सुन्दर बालू का मैदान; गंध फैलानेवाले सुमन; तरु-संकुल उद्यान-स्थल; गधवह लच्छेदार, सँवारा हुआ केश; सुधाकर-सम श्रीमुख ! द्वय-कयल (मत्स्य)-से नेत्र—ये ही है जिन्होने मुझे दर्द दिया है ! १५

वळैवळर् तरु तुऱैये मणम् विरि तरु पॊऴिले
तळै अविऴ् नरुमलरे तनियवळ् तिरि इडमे
मुळैवळर् इळनहैये मुऴुमदि पुरै मुहमे
इळैयवळ् इणै मुलैये—अॆन्नै इडर् शॅय्दवैये ! 16

वह घाट जहाँ शंख पलते है, वह उद्यान जहाँ सुगन्ध फैली है; वे पुष्प जिनके बन्धन कट गये है; वह स्थल जहाँ वह (नायिका) अकेली घूमती

है; वह दंतावली जिस पर अंकुर के समान हँसी छिटकती है; वह चेहरा जो पूर्णचन्द्र के समान है; वे स्तन-युग्म जो उस कमसिन युवती के है—ये ही है जिन्होने मुझे पीड़ित किया ! १६

8 इळवल् कण्डाय्

कडल् पुक्कु उयिर् कॊन्ऱु वाऴ्बवर् निन्न् ऐयर् !
उडल् पुक्कु उयिर् कॊन्ऱु वाऴ्वै मन्न् नीयुम्
मिडल् पुक्कु अडङ्गाद वॆम्मुलैयो बारम्
इडर्पुक्कु इडुहुम् इडै इळवल् कण्डाय् ! 17

८ देखो (सावधान), मत खो दो

(दुवारा संगम करके सहानुभूति और पछतावे के साथ नायक कहता है)

तुम्हारे वडे बंधु समुद्र मे घुसकर (जाकर) जीवहत्या करके जीने वाले है। क्या तुम भी शरीर में घुसकर प्राण हर लोगी ! कसनेवाली अँगिया के अन्दर भी न समानेवाले तुम्हारे स्तन वड़े भारी हैं। दवाव से संकटग्रस्त तुम्हारी कमर कही टूट न जाय ! देख लो, सावधान ! १७

कॊडुङ्गण् वलैयाल् उयिर् कॊळ्वान् नुन्दै !
नॆडुङ्गण् वलैयाल् उयिर्कॊल्वै मन्न् नीयुम्
वडम्कॊळ् मुलैयाल् मऴै मिन्नुप् पोल
नुडङ्गि उहुम्मॆन्न् नुशुप्पु इळवल् कण्डाय् 18

तुम्हारे पिता भयंकर आँखो (छिद्रों) वाले जाल द्वारा जीवहत्या करनेवाले है। क्या तुम भी अपनी आयत आँखे रूपी जाल से प्राण हर लोगी ? मालालकृत स्तनो (के भार) से मेघ-मध्य तडित् के समान लचकनेवाली तुम्हारी कमर टूट जायगी तो ? सावधान, देख लो। १८

ओडुम् तिमिल् कॊण्डु उयिर् कॊल्वर् निन्न् ऐयर् !
कोडुम् पुरुवत्तु उयिर् कॊल्वै मन्न् नीयुम्
पीडुम् पिऱर् ॲव्वम् पाराय् मुलै शुमन्दु
वाडुम् शिऱुमॆन्न् मरुङ्गु इळवल् कण्डाय् ! 19

समुद्र-चारी नावों के सहारे तुम्हारे वड़े भाई जीवहत्या करते है। क्या तुम भी कुटिल भौ द्वारा प्राणो का अन्त कर दोगी ? तुम अपनी वड़ाई और दूसरों के दुख का ध्यान करो ! तुम्हारी क्षीण कोमल कटि स्तनों को ढोते हुए दुख रही है। इसको मत खो दो ! सावधान ! १९

9 ऑव्वाय् इवळै !

पवळ उलक्कै कैयाल् पट्रि
तवळ मुत्तङ् कुरुवाळ् शॅङ्गण्
तवळ मुत्तङ् कुरुवाळ् शॅङ्गण्
कुवळै अल्ल कॊडिय कॊडिय ! 20

९ इसकी समता नहीं कर सकते

(नायक संभोग करके चला जा रहा है ! वह अपने मन को
नायिका का सुखद स्वभाव समझाता है ।)

प्रवाल-मूसल लेकर धवल मोती कूटनेवाली की लाल आँखे, धवल मुक्ता कूटनेवाली की लाल आँखे "कुवळै" के फूल नही है, वे क्रूर है क्रूर ! २०

पुन्नै नीळल् पुलवुत् तिरैवाय्
अन्नम् नडप्प नडप्पाळ् शॅङ्गण्
अन्नम् नडप्प नडप्पाळ् शॅङ्गण्
कॊन्ने वॅय्य ! कूट्रम् कूट्रम् ! 21

"पुन्नै" (तरु)-छाया में मांसगन्धयुक्त तरग-तट पर हसों को चलने को प्रेरित करके चलनेवाली की लाल आँखे, हंसगामिनी की लाल आँखे, विकल्प-रहित क्रूर यम है, यम ! २१

कळ्वाय् नीलम् कैयिन् एन्दिप्
पुळ्वाय् उणङ्गल् कडिवाळ् शॅङ्गण्
पुळ्वाय् उणङ्गल् कडिवाळ् शॅङ्गण्
वॅळ् वेल् अल्ल ! वॅय्य, वॅय्य ! 22

मधुमुखी नीलोत्पल को हाथ में लेती हुई सूखी मछलियों को पक्षियों के मुख से बचाने के लिए उन पक्षियो को उड़ानेवाली की लाल आँखे, उड़ानेवाली की लाल आँखे सफ़ेद (अच्छी) वेल् (साँग) नही है। भयकर है भयंकर ! २२

शेरल् मड अन्नम् ! शेरल् नडै ऑव्वाय्;
शेरल् मड अन्नम् ! शेरल् नडै ऑव्वाय्;
ऊर्तिरै नीर् वेलि उळक्कित् तिरिवाळ् पिन्
शेरल् मड अन्नम्; शेरल् नडै ऑव्वाय् ! 23

उससे मत लगो ! मूर्ख हंस ! मत नियराओ। मत लगो अबोध हंस ! चाल की समता नही कर सकोगे ! रेंगती आनेवाली तरंगों के सागर से वलयित भू-भाग को मथती हुई घूमनेवाली के पीछे मत लगते जाओ हे सीधे हंस ! मत लगो। चाल की समता नही करसकोगे। २३

10 कट्टुरै

आङ्गु कान्नल् वरिप् पाडल् केट्ट
मान् नॅडुङ्गण् मादवियुम्
मन्नुनुम् ओर् कुऱिप्पु उण्ड्
इवन् तन्न् निलै मयङ्गिनान् ॲनक्
कलवियाल् महिऴन्दाऱ् पोल्
पुलवियाल् याऴ् वाङ्गित्
तानुम् ओर् कुऱिप्पिनळ् पोल्
कान्नल् वरिप् पाडल् पाणि
निलत् तॅय्वम् वियप्पु ॲय्द
नीऴ् निलत्तोर् मन्नम् महिऴ्क्
कलत्तॊडु पुणर्न्दु अमैन्द
कण्डत्ताल् पाडत् तॊडङ्गुम् मन्न् 24

१० प्रसंग-वार्ता

तब वेला-वाटिका-गान सुनकर मृग की-सी लंबी आँखों वाली मादवि को लगा कि इस गान के पीछे कोई गुप्त अर्थ है। इसका मन अस्थिर हो गया है। इसलिए उसकी सगति से मानो आनन्द पा रही हो—ऐसा दिखावा करके, पर अन्दर की खीझ के साथ, उसने याऴ् को माँग लिया। खुद भी कुछ गुप्त आशय का संकेत करनेवाले उद्यान-गान का संगीत गाया। गान को सुनकर धरती देवी विस्मित हो जाए, और लम्बी धरती के वासियो का मन हर्षित हो जाय ऐसा, याऴ् के स्वर के साथ स्वर मिलाकर अपने कठ से गाने लगी। २४

11 काविरियै नोक्किप् पाडियन्न

(आऱ्ऱु वरि)

मरुङ्गु वण्डु शिऱन्दु आर्प्प
मणिप्पू आडै अदु पोर्त्तुक्

करुङ्गयल् कण् विळित्तु ऑल्हि
नडन्दाय् वाळि कावेरि !
करुङ्गयल् कण् विळित्तु ऑल्हि
नडन्द ऍल्लाम् निन्न कणवन्न
तिरुन्दु शॅङ्गोल् वळैयामै
अरिन्देन्न वाळि कावेरि 25

११ काविरि को लक्ष्य करके गाये गये गान

(नदी-गीत)

दोनों बाजुओं में भ्रमरो के गुंजार के स्वर निकालते, सुन्दर फूलों का वस्त्र पहने, काली 'कयल' रूपी आँखें खोलकर लचक के साथ तू चली ! काविरि जीती रह ! काली 'कयल'-सी आँखे खोलकर तू जो चली वह सब तेरे पति के राजदण्ड का न झुका रहना (बताता) है। यह मैंने जान लिया। दुहाई है काविरि ! २५

पूवर् शोलै मयिल् आलप्
पुरिन्दु कुयिल्हळ् इशैपाडक्
कामर् मालै अरुहु अशैय
नडन्दाय् ! वाळि कावेरि !
कामर् मालै अरुहु अशैय
नडन्द ऍल्लाम् निन्नकणवन्न
नाम वेलिन्न तिरम् कण्डे
अरिन्देन् वाळि कावेरि 26

पुष्प-पूर्ण उद्यान में मोर नाचते है। अपनी इच्छा से कोकिल गाते हैं। मनोरम (उत्सव-रत लोगों की पहनी हुई) मालाएँ पास में हिलती है। इनके बीच से तू चलती रहती। इसलिए जीती रह ! कावेरि ! मनोरम मालाओं के पास में हिलते तेरा वैसा चलना, तेरे पति के भयंकर 'वेल्' (साँग) की शक्ति देखकर ही होता है—यह मुझे विदित हो गया। जीती रह ! बधाई ! २६

वाळि अवन् तन् वळनाडु
महवाय् वळर्क्कुम् ताय् आहि
ऊळि उय्क्कुम् पेरुदवि

ऑऴ़ियाय् वाऴ़ि कावेरि !
ऊऴ़ि उय्क्कुम् पेरुदवि
ऑऴ़ियादु ऑऴ़ुहल् उयिर् ओम्बुम्
आऴ़ि आळ्वान् पहल् वॅय्योन्
अरुळे वाऴ़ि कावेरि ! 27

दुहाई ! उस (तेरे पति) का दौलतमंद देश संतान बना, तू उसकी पालन करनेवाली माता बनकर युग-युग से उसकी सहायता करने से नही चूकती ! जीती रह कावेरि ! युगो से अचूक रीति से सहायता करते चलने का सारा काम जीवों के रक्षक चक्रवर्ती, तटस्थ (न्यायी शासक) राजा का अनुग्रह है। (दिनकर का अनुग्रह है।) जीती रह, कावेरि ! २७

12 मुत्तु वियावारमो ?

(शार्त्तु वरि—तोऴ़ि कैयुरै मरुत्तल्)

तीङ्गदिर् वाळ् मुहत्ताळ् शॅव्वाय्
मणि मुरुवल् ऑव्वा वेन्नुम्
'वाङ्गुम् नीर्, मुत्तु' ऍन्रु वैहलुम्
माल् महन् पोल् वरुदिर् ऐय !
वीङ्गु ओदम् तन्दु विलङ्गु ऑऴ़िय
वॅण्मुत्तम्, विरै शूऴ़् कानल्
पूङ्गोदै कॉण्डु विलैञर् पोल्
मीळुम् पुहारे, ऍम् ऊर् ! 28

१२ क्या मोती का व्यापार करते हैं ?

(समासोक्ति है—सखी का भेंट लेने से इनकार करना)

उज्ज्वल-शीतल-किरण-चन्द्रानना के अरुणाधरो वाले सुन्दर दाँतों की समता (आपके लाये मोती) नही कर सकते। तो भी आप यह कहते 'कि ले लो मोती' रोज विष्णुपुत्र (मनोभव) के समान आते रहते है। जी, यह शब्दायमान सागर परमोज्ज्वल मोतियों को देकर बदले में वणिकों के समान सुगन्धपूर्ण उद्यानों से (मालाओं या) पुष्पस्तवकों को लेकर लौटना है। वैसा नगर है हमारा पुहार् नगर ! (हमारी नायिका को आपके मोती नही चाहिए। आप झूठे हैं।) २८

13 आम्बल् ऊदुम्

(तोऴि तलैमहऩुक्कु उणर्त्तल्)

मऱैयिऩ्   मणन्दारै   वऩ्   परदर्
पाक्कत्तु   मडवार्   शॅङ्गै
इऱै   वळैहळ्   तूऱ्ऱुवदै   एऴैयम्
ऍङ्ङऩम्   याङ्गु   अऱिहोम् ?   ऐय !
निऱै   मदियुम्   मीऩुम्   ऍऩ   अऩ्ऩम्
नीळ्   पुऩ्ऩै   अरुम्बिप्   पूत्त
पॊऱैमलि   पूङ्गॊम्बु   एऱ,   वण्डु   आम्बल्
ऊदुम्   पुहारे   ऍम्   ऊर् !   29

१३ 'आम्बल्' फूलों को फूँकते हैं

(सखि नायक को समझाती है)

कठोर "बरदर" (सागरतटवासी) लोगों के ग्राम में गुप्त-रूप से संभोग कर आनेवाली युवतियों को, स्वयं उन सुन्दरियों के लाल अग्रहस्तों से खिसककर गिरती चूड़ियाँ निदित कराती (पहचनवा देती) है। हम कैसे अज्ञान में रहेंगे? (हमारे पुहार् नगर में) हंस ऊँचे "पुऩ्ऩै" तरु की पुष्पभाराक्रांत शाखाओं पर चढ़कर रहता है। उस हंस को चन्द्र और उन फूलों को (धोखे से) तारागण समझकर भ्रमर खिले हुए "आम्बल्" फूलों को फूँकते हैं (फूलों से मधुपान करते है), वैसा नगर है हमारा पुहार् नगर। (हम आपका रहस्य जानती है।) २९

14 वण्डल् अऴिन्दाल्

उण्डारै वॆल् नऱा ऊण् ऒऴियाप् पाक्कत्तुळ् उऱै ऒऩ्ऱु इऩ्ऱित्
तण्डानोय् मादर् तलैत् तरुदि ऍऩ्बदु याङ्गु अऱिहोम् ? ऐय !
वण्डल् तिरै अऴिप्पक् कैयाल् मणल् मुहन्दु मदि मेल् नीण्ड
पुण्तोय् वेल् नीर् मल्ह परदर् कडल् तूर्क्कुम् पुहारे ऍम् ऊर्   30

१४ अगर घरौंदे मिट गये तो

(हमारे पुहार् नगर में) पीनेवाले को अपने वश में करनेवाली सुरा का पान नही छिपता (स्वयं प्रकट हो जाता) है। वैसे पुहार् नगर में आकर युवतियों को दवा-हीन रोग दे जायँ और हम नहीं जानें, यह कैसे होगा?

तरंगों के आकर घरौदों को मिटाने पर, अपने (घरौंदों को मिटते देखकर) हाथों से बालू उठाकर फेकते हुए, चन्द्र (-सम आनन) में, व्रण-लगे 'वेल्' (लाल-बनी आँख) से आँसू बहाते हुए कन्याएँ समुद्र को पाटने का प्रयास करती है। वैसा नगर है हमारा पुहार् नगर ! (अवोध है ये बालाएँ !) ३०

15 वण्णम् उणरेन्

(तिणै निलै वरि—पाङ्गि कुऱ्ऱु नयप्पित्तल्)

पुणर् तुणैयोडु आडुम् पॉरि अलवन् नोक्कि
इणर् तदैयुम् पूङ्गात्तल् ऍन्नैयुम् नोक्कि
उणर्वु ऑऴियप्पोन ऑलि तिरै नीर्च् चेर्प्पन्
वणर्शुरि ऐम्बालोय् ! वण्णम् उणरेताल् ! 31

१५ मैं रंग नहीं जानती

(सखि नायिका से नायक की कामना कहती है)

अपनी संगिनी से क्रीडा करनेवाले चितले केकड़े को देखकर (तुरन्त) मुझे पुष्पस्तवक-युक्त उद्यान मे देखकर सुधि खोते हुए चला गया वह शब्दायमान सागर-तट-प्रदेशवासी ! पाँच प्रकार की सँवरी घुंघराली अलकों वाली सखि ! उसका आशय मैं नहीं जानती। (काकूक्ति से इसका आशय है— वह चाहता है कि तुम्हें उससे मिला लूँ।) ३१

16 मऱवेम् नाम्

(कामम् मिक्क कऴिपडर् किळवि)

तम्मुडैय तण्णळियुम् तामुम् तम् मान् तेरुम्
ऍम्मै निनैयादु विट्टारो ? विट्टु अहल्ह
अम्मेन् इणर अडुम्बुहाळ् ! अन्नङ्गाळ् !
नम्मै मऱन्दारै नाम् मऱक्क माट्टेमाल् ! 32

१६ हम नहीं भूलेंगे

(कामवेग-दुख-कथन)

वे अपनी दया को, अपने को और अपने अश्व-जुते रथ को क्या हमें बिना स्मरण किये छोड़ गये ? तो छोड़ जायँ ! हे सुन्दर मृदु स्तवकों में रहने वाले 'अडुम्बु' के फूलो, हस पक्षियो ! हमे भुलानेवालों को हम नही भूलेंगे !

('जुते रथ को' के बाद वह कुछ और कहना चाहती थी पर दुख के कारण गड़बड़ा गयी ! शायद कहना चाहती थी कि उन्हीं के साथ वे गये अब उनको देखने पर भी मेरा स्मरण नहीं आता क्या ?) ३२

पुन्कण् कूर् माले पुलम्बुम् ॲन् कण्णे पोल्
तुन्बम् उळवाय् तुयिलप् पॅरुदियाल्
इन्कळ् वाय् नॅय्दाल् ! नी ॲय्दुम् कनविनुळ्
वन्न कणार् कानल् वरक्कण् डरिदियो 33

दुख बढ़ानेवाली साँझ में रोनेवाली मेरी आँखों के समान तुम दुखी नही होते ! मजे से सो जाते हो। हे मधुर-मधु-मुख "नॅय्दल्" फूलो ! तुम जो स्वप्न देखते हो उसमें उस निर्मम नायक को पुष्पोद्यान में आते देखते भी हो क्या ? ३३

पुळ् इयल् मान् तेर् आळि पोन वळि ॲल्लाम्
तॅळ्ळु नीर् ओदम् ! शिदैत्ताय् मऱ्ऱु ॲन् शॅय्हो ?
तळ्ळु नीर् ओदम् शिदैत्ताय्; मऱ्ऱु ॲम्मोडु ईङ्गु
उळ्ळारोडु उळ्ळाय्, उणराय् मऱ्ऱु ॲन् शॅय्हो ? 34

पक्षी के से स्वभाव (गति) वाले अश्वों से जुते रथ के चक्रों के जाने के मार्ग (के चिह्नों) को, हे स्वच्छ-जल-सागर ! तुमने मिटा दिया ! फिर मैं क्या करूँ ? हे स्वच्छ-जल-सागर ! और तुम उनके साथ (सहायक) हो जो यहाँ (मेरी निंदा करते हुए रहते) हैं ! (तुम मेरी व्यथा) नहीं जानते ! फिर मैं क्या करूँ ? ३४

नेर्न्दानम् कादलर् नेमि नॅडुन् तिण् तेर्
ऊर्न्द वळि शिदैय ऊर्हिन्ऱ ओदमे !
पून्दण् पॉळिले ! पुणर्न्दु आडुम् अन्नमे !
ईर्न्दण् तुऱैये ! इदु तहादु ॲन्नीरे ! 35

जो हमको मिलकर (छोड़) गये, उन प्रेमी के चक्रों-सहित बड़े रथ के जाने के मार्ग को मिटाते हुए फैलनेवाले हे (सागर-) जल ! पुष्प-भरे शीतल उद्यान ! प्रणयलीला-रत हसो ! जल के शीतल घाट ! क्या तुम लोग उनसे नहीं कहोगे कि उनका व्यवहार ठीक नही है ? ३५

नेऱ्ऩ्द नम् कादलर् नेमि नॆडुन्दिण् तेर्
ऊऱ्ऩ्द वऴि शिदैय ऊऱ्ऩ्दाय्; वाऴि कडल् ओदम्
ऊऱ्ऩ्द वऴि शिदैय ऊऱ्ऩ्दाय् मऱ्ऱु ऎम्मोडु
तीर्ऩ्दाय्; पोल् तीर्ऩ्दिलैयाल् वाऴि कडल् ओदम्! 36

हमसे मिलकर जो (छोड़) गये, उनका सचक्र-वृहत् रथ जिस मार्ग से चला उसको मिटाते तुम चले! जीते रहो सागर-जल! गमन-मार्ग को मिटाते चले हे सागर-जल! तुम हमारे साथी नहीं रहे! पर साथी होने का वहाना किया! दुहाई है! जीते रहो हे सागर-जल! ३६

17 तायुम् अऱिन्दाल्

(मयङ्गु तिणै निलै वरि—अलर् अऱिवुऱुत्ति वरैवु कडावल्)

नऩ्ऩ् नित्तिलत्तिऩ्ऩ् पूण् अणिन्दु
नलम्शार् पवळक् कलै उडुत्तुच्
चॆन्नॆल् पऴऩक् कऴऩि तोऱुम्
तिरै उलावु कडऱ् चेर्प्प!
पुऩ्ऩैप् पॊदुम्बर् मगरत् तिण्
कॊडियोऩ् ऎय्द पुदुप् पुण्गळ्
ऎऩ्ऩैक् काणा वहै मऱैत्ताल्
अऩ्ऩै काणिन् : ऎऩ् शॆय्हो? 37

१७ माता भी जान लें तो

(नायिका प्रवाद कहकर देरी का कारण पूछती है)

अच्छी मुक्ताओं का जेवर पहनकर और मंगलमय प्रवाल-रूपी मेखला से सज्जित होकर लाल धान के खेतों में जिसकी तरंगें सैर कर आती हैं, उस सागर के तटीय प्रदेश के हे स्वामी! जव पुन्नै-तरु-पूर्ण उपवन में मकरकेतन के चलाये वाणों के नये व्रण मेरे रूप को ही वदल देंगे और माता उसको जान जायँगी तो मैं क्या करूँगी। ३७

वारित् तरळ नहै शॆय्दु
वण् शॆम् पवळ वाय् मलर्न्दु
शेरिप् परदर् वलै मुत्ऱिल्
करै उलावु कडऱ् चेर्प्प!

मारिप् पीरत्तु अलर् वण्णम्
मडवाळ् कॊळ्ळ कडवुळ् वरैन्दु
आर् इक् कॊडुमै शॆय्दार् ? अॆन्ऱु
अन्नै अऱिपिन् अॆन्न शॆय्हो ? 38

समुद्रोत्पन्न मोतियों में हास दिखाते हुए सुन्दर लाल प्रवाल-रूपी अधर खोलकर वस्ती के "बरदर" लोगों के जाल-बिछे आँगन तक लहरें सैर करती आती हैं। उन लहरों के सागर के तीर के प्रदेश के स्वामी ! वर्षाकाल में फूलनेवाले तुरई का-सा मेरा पीला रंग हो जायगा और मेरी (नायिका की) माता देवता की पूजा करके यह जान पायेगी कि किसने यह निर्दय कार्य किया है तो मैं क्या करूँगी ? ३८

पुलवुऱ्ऱु इरङ्गि अदु नीङ्ग
पॊऴिल् तण्डलैयिन् पुहुन्दु उदिर्न्द
कलवैच् चॆम्मल् मणम् कमऴ
करै उलावु कडऱ् चेर्प्प
पल उऱ्ऱु ऒरु नोय् तुणियाद
पडर्नोय् मडवाळ् तनि उऴप्प
अलवुऱ्ऱु इरङ्गि अऱिया नोय्
अन्नै अऱियिन् अॆन्न शॆय्हो 39

मांस-गंध के भर जाने से लहरें दुखी होकर ("रूठन से खीझकर" अर्थ भी किया जा सकता है), इस (गंध) को दूर करने के हेतु पुष्पोद्यान में घुसकर, वहाँ के गिरे रहे पुराने पुष्पों का मिश्रित सुवास लेते हुए जाती हैं। उन लहरों के सागर तट प्रदेश के स्वामी ! ऐसे बढ़ते रोग से जिसका, कष्ट के विविध रूप होने के कारण और कृशता और रुलाई के न होने के कारण निदान नहीं हो रहा, अबोध मैं अकेली पीड़ित हो रही हूँ। उसको मेरी माता जान लेंगी तो मैं क्या करूँगी ? ३९

18 पिरिन्दवर् नाट्टिलुम् उळदो ?

(पॊऴुदु कण्डु आऱ्ऱाळाहिय तलैमहळ् तोऴिक्कु उरैत्तल्)

इळै इरुळ् परन्ददुवे; अॆल् शॆय्वान् मरैन्दनने
कळैवु अरुम् पुलम्बु नीर् कण् पॊऴीइ उहुत्तनवे

तळै अविर् मलर्क् कुऴलाय् तणन्दार् नाट्टु उळदाम् कॊल्
वळै नॆहिऴ ऎरि शिन्दि वन्द इम् मरुळ् मालै 40

१८ क्या छोड़ गये के देश में भी है ?

(साँझ होने से असहनशील नायिका सखि से कहती है)

संध्या का अन्धकार फैलने लगा है। दिनकर छिप गया। आँखे, अपरिहार्य अकेलेपन के दुख के अश्रुकण गिरा रही है। री विकच-पुष्पालंकृत केशिनी ! हमको त्यागकर चले हुए के देश में भी क्या यह भ्रातिकारी संध्या रहेगी जो हमारे कंकणों को गिराते हुए आग वरसाकर आयी है। ४०

कदिरवन् मऱैन्दनने कार् इरुळ् परन्ददुवे;
ऎदिर् मलर् पुरै उण्कण् ऎव्व नीर् उहुत्तनवे;
पुदुमदि पुरै मुहत्ताय् ! पोनार् नाट्टु उळदाम् कॊल्
मदि उमिऴ्न्दु कदिर् विऴुङ्गि वन्द इम् मरुळ् मालै ? 41

किरणमाली छिप गया है! काला अन्धकार फैला है। नवविकसित पुष्प-सम मेरी आँखें दुख के आँसू गिराती हैं। हे नवचद्र-सम आननवाली ! क्या हमको छोड़ गये नायक के देश में भी यह भ्रात संध्या होगी जो चन्द्र को उगलते हुए और सूर्य को निगलते हुए इधर आयी है !(होगी न !) ४१

पऱवै पाट्टु अडङ्गिननवे पहल् शॆय्वान् मऱैन्दनने;
निऱैनिला नोय्कूर नॆडुङ्गण् नीर् उहुत तननवे;
तुऱु मलर् अविऴ् कुऴलाय् तुऱन्दार् नाट्टु उळदाम् कॊल्
मऱवै आय् ऎन् उयिर् मेल् वन्द इम् मरुळ् मालै ? 42

पक्षियों का कलरव बन्द हो गया। दिनकर अस्त हो गया। रोके नही रुकता, यह रोग बढ़ता जाता है और लंबी आँखे आँसू वहा रही है। विकसित पुष्पलसित घने केशवाली ! हमको जो त्याग गये है, उनके देश में भी क्या यह भ्रामक सन्ध्या है जो सबल रूप से मेरे प्राणो पर चढ़ आयी है ? ४२

19 मऱप्पार् अल्लर्

(शायल् वरि—मॆलिदाहच् चॊल्लि कुऱै नयप्पित्तल्)

कैदै वेलिक् कऴिवाय् वन्दु ऎम्
पॊय्दल् अऴित्तुप् पोनार् ऒरुवर्;

पॅय्दल् अऴित्तुप् पोऩार् अवर् नम्
मैयल् मऩम् विट्टु अहल्वार् अल्लर् 43

१९ भूलनेवाले नहीं

(छाया गीत—नरम रूप से कामना-कथन)

केतकी के झाड़ों की सीमा वाले इस समुद्र-तीर के उद्यान में आकर कोई हमारा खेल मिटाकर चले। खेल मिटाकर (विस्मृत कराकर) जो गये वे हमारे विभ्रात मन से हटनेवाले नही ! (यानी हम उन्हे नही भूल रही हैं)। ४३

काऩल् वेलिक् कऴिवाय् वन्दु
"नी नल्हु" ॲऩ्ऱे निऩ्ऱार् ऑरुवर्
नी नल्हु' ॲऩ्ऱे निऩ्ऱार् अवर् नम्
पॉऩ् नेर् शुणङ्गिऩ् पोवार् अल्लर् 44

उपवनों से घिरे जलाशय के पास आकर कोई यह कहते हुए खड़े रहे कि "कृपा करो !" "तुम कृपा करो" कहते हुए जो खड़े रहे वे हमारी हरिणी की-सी दृष्टि भूल नही पायेंगे। ४४

अऩ्ऩम् तुणैयोडु आडक्कण्डु
नॅऩ्ऩल् नोक्कि निऩ्ऱार् ऑरुवर्
नॅऩ्ऩल् नोक्कि निऩ्ऱार् अवर् नम्
पॉऩ् नेर् शुणङ्गिऩ् पोवार् अल्लर् 45

कलहंस अपने जोडे के साथ खेल रहा था। कल उसको देखते खड़े रहे कोई। कल जो देखते खड़े रहे वे हमारे स्वर्णवर्ण "शुणङ्गु" (पांडर या कृशता) की भॉति हमको नहीं त्याग जाते। ('तेमल्' वह पांडर है जो स्त्रियों के शरीर के कुछ भागों पर सफेद रंग लेकर फैलता है और सुन्दरता का चिह्न समझा जाता है। "शुणङ्गु" "तेमल्" का दूसरा शब्द है जो कृशता भी है। नायिका कहती है, मेरी कृशता दूर नही होती, वैसे ही ये भी छोड़ नहीं जाते।) ४५

20 कुरुहे अडैयल्

(मुहम् इल् वरि—कामम् मिक्क कऴिपडर् किळवि)

अडैयल् कुरुहे ! अडैयल् ॲम् काऩल्
अडैयल् कुरुहे ! अडैयल् ॲम् काऩल्

उडैतिरै नीर्च् चेर्प्पर्कु उरुनोय् उरैयाय्;
अडैयल् कुरुहे अडैयल् अंम् कात्तल् 46

२० हे सारस ! मत आओ

(कामार्त वचन)

मत आओ, सारस ! मत आओ हमारी वेला-वाटिका में ! मत आओ सारस ! मत आओ, हमारी वेला-वाटिका में। टूटती तरंगों वाले सागर (तट) के पति से तुम मेरा दुखड़ा नही कहोगे, इसलिए आओ मत, सारस ! मत आओ मेरे तट पर। ४६

21 मादवि पाडित्ताळ्

(मादवि पण्णुप् पॅयर्त्तुप् पाडत् तॊडङ्गुदल्)

आङ्गत्तम् पाडिय आय् इळै पित्तरुम्
कान्दळ् मॅल्विरल् कैक्किळै शेर्कुरल्
तीन् दॊडैच् चव्वळिप् पालै इशै ऍळीइप्
पाङ्गित्तिल् पाडि ओर् पण्णुप् पॅयर्त्ताळ् 47

२१ मादवि गायी

(मादवि 'राग' बदलकर गाना जारी रखती है)

(कोवलन् की नकल में) इस भाँति जो गाती रही, उस मादवि ने फिर भी अपनी 'कांतळ्' के फूल के समान कोमल उँगलियों से "कैक्किळै" को स्थायी स्वर बनाकर गायी जानेवाली मधुर स्वर की "शॅव्वळिप् पालै" (शोकमय राग) लेकर यथाविधि गाते हुए दूसरा गान आरम्भ किया। ४७

22 मालैये वाळि नी

(मुहम् इलृवरि—वेरु)

नुळैयर् विळरि नॊंडितरुम् तीम् बालै
इळि किळैयिल् कॊळ्ळ इरुत्तायाल् मालै
इळि किळैयिल् कॊळ्ळ इरुत्तायमन् नीयेल्
कॊळै वल्लाय् ! ऍन्न आवि कॊळ् ! वाळि मालै 48

२२ सन्ध्या ! जीती रहो

"नुळैयर्" (सागर-तट-प्रदेशवासी) लोगों का शोकगीत "विळरि" राग में गाया जाता है। जब मैं वह गाने लगती हूँ तब, हे सन्ध्या ! तुम "इळि" की तन्त्री पर लगनेवाली उँगली को (उसकी शत्रु-तंत्री) 'कैक्किलै' पर पड़ने देते हुए आकर ठहर गयी ! (मेरे मन को भ्रांत कर दिया।) 'इळि' को (कैक्-) किळै में मिलने देते हुए आ ठहर गयी न ! अब हे हरणसमर्थ संध्या ! मेरे प्राण (लूट) हर लो ! दुहाई तुम्हारी ! हे सन्ध्या ! ४८

पिरिन्दार् परिन्दु उरैत्त पेर् अरुळिन् नीळल्
इरुन्दु एङ्गि वाळ्वार् उयिर्प् पुरत्ताय् मालै
उयिर्प् पुरत्ताय् नी आहिल् उळ् आट्रा वेन्दन्
अयिर् पुरत्तु वेन्दनोडु एन् आदि मालै ? 49

अलग होते समय उन्होंने प्रेम से आशा के वचन कहे। उन शब्दों की अनुग्रह-छाया में जो रह रही है, उन हमारे प्राणो को घेरकर तुम पास आ गयी हो। हे सन्ध्या ! प्राणों को तुम घेरे हो। क़िले के अन्दर असमर्थ हो छिपे रहनेवाले राजा के गढ़ को प्राचीरों के बाहर से घेरे रहनेवाले राजा से तुम्हारा नाता क्या है ? (उसके समान ही तुम बर्ताव करती हो)। ४९

पैयुळ् नोय् कूरप् पहल् शेय्वान् पोय् वीळ
वैयमो कण् पुदैप्प वन्दाय् मरुळ् मालै
मालै नी आयिन् मणन्दार् अवर् आयिन्
ञालमो नल् हूर्न्ददु; वाळि मालै 50

दुख (दायी)- रोग बढ़ता है। दिनकर डूब गया है। संसार ने (लोगों ने) आँखें (निद्रा में) मूँद ली है। तुम आ गयी हो, भ्रामक संध्या ! अगर सन्ध्या तुम (जैसी) हो, और मुझसे विवाह-बद्ध वे ही (निर्मम त्यागी) हों तो यह संसार ही दरिद्र हो गया समझो ! जीओ तुम ! (अपनी व्ययांधता के कारण नायिका संसार को कंकाल यानी दुखपीड़ित कहती है।) ५०

23 मलरडि वणङ्गुदुम्

(तलैमहन् शिऱप्पुरुत् तान्नाहत् तोळि कूऱियदु)

तीत् तुळैइ वन्द इच्चॅल्लल् मरुळ् मालै
तूक्काडु तुणिन्द इत्तुयर् अॅञ्जु किळवियाल्

पूक्कमऴ् कान̱लिल् पॊय्च्चूऴ् पॊरुक्क ऎन्̱ऱु
माक्कडल् तॆय्वम् ! निन्̱ मलर् अडि वणङ्गुदुम् 51

२३ कमल-चरणों में नमस्कार करते हैं

[वियोग-काल बढते जाने पर नायक आकर संकेतस्थल पर रहता है। तब सखि नायिका का वचन कहती है।] आग बरसाते हुए आयी इस दुखदायिनी भ्रातिकारिणी संध्या को (हमें दुख देगी यह बात जाने बगैर) परखे बिना हमें जो धैर्य-वचन दिये गये उनको और उसी भाँति पुष्प-गंध-पूर्ण उद्यान में कहे गये झूठे वायदो को माफ़ कर दीजिए। हे समुद्र-देव ! हम आपके कमल-चरणो मे पड़ते है। (यह नायिका की सखी द्वारा कही गयी प्रार्थना है। नायिका चाहती है कि असत्य-वचन का दण्ड नायक को न मिले।) ५१

24 कोवलन्̱ पिरिन्दान्̱

(कट्टुरै)

ऎन्̱क् केट्टु
कान̱ल् वरियान्̱ पाडत् तान्̱ ऒन्̱ऱिन्̱ मेल् मन̱म् वैत्तु
मायप्पॊय् पल कूट्टुम् मायत्ताऴ् पाडिन̱ाऴ् ऎन̱
याऴ् इशै मेल् वैत्तुत् तन्̱ ऊऴ् विन̱ै वन्दु उरुत्तदु आहलिन्̱
उलवु उऱ्ऱ तिङ्गळ् मुहत्ताळैक् कववुक्कै ञॆहिऴ्न्दन̱न̱ाय्प्
पॊऴुदु ईङ्गुक् कऴिन्ददु आहलिन्̱ ऎऴुदुम् ऎन्̱ऱु उडन्̱ ऎऴादु
एवलाळर् उडन्̱ शूऴ्तरक् कोवलन्̱— तान्̱ पोन̱ पिन्̱न̱र्त् 52

२४ कोवलन् अलग हो गया

(प्रसंग-वार्ता)

मादवि ने जब ऐसा कहा (गाया), तब वह सुनकर कोवलन् ने सोचा कि मैंने वेला-वाटिका-गीत यों ही गाया। (वह निष्कपट था।) यह किसी दूसरी जगह पर मन लगाकर कपटमिश्रित झूठो का ताँता लगाकर गा रही है। और हाँ याऴ् के गीत का आधार लेकर प्रारब्ध कर्म ने आकर अपना क्रोध (असर) दिखा दिया। अतः उसने पूर्ण-चन्द्र-निभ-आनना को आलिंगन में लिये रहनेवाले अपने हाथ को उससे हटा लिया। "यह कहते हुए कि समय बीत गया, हम उठ चलें", वह उठा, पर मादवि नहीं उठी। कोवलन् अपने सेवको के घेरे आते, चला गया। उसके जाने के पश्चात् (क्या हुआ ?) ५२

25 तऩिये शॅऩ्ऱाळ्

ताङ्गु अविऴ् मलर्च् चोलै ओदै आयत्तु ऑलि अवित्तुक्
कैयऱ्ऱ नॆञ्जिऩळाय् वैयत्तिऩ् उळ् पुक्कुक्
कादलनुडऩ् अऩ्ऱिये मादवि तऩ् मनै पुक्काळ्
आङ्गु मा इरु ञालत्तु अरशु तलै वणक्कुम्
शूऴियाऩैच् चुडर् वाळ् चॆम्बियऩ्
मालै वॆण्कुडै कविप्प
आऴि माल् वरै अहवैया अॆऩवे 53

२५ वह अकेली गयी

पराग जहाँ बिखरे पड़े रहे, उस पुष्पोद्यान में सखियों और परिचारिकाओं के दल का कोलाहल थम गया। चिन्ता से सत्त्वहीन होकर वह गाड़ी के अन्दर जा बैठी। प्रेमी के साथ के विना ही वह (अकेली ही) घर पहुँची। बस; अतिविशाल भूमि के पालकों से नमस्कृत और मुखपट्टालंकृत गजराज के स्वामी (शोऴऩ्) का माला-अलकृत छत्र चक्रवाल गिरि को भी अन्तर्गत करते हुए छाया करे। [राजा की स्तुति के साथ अन्त करना परिपाटी है। इस अध्याय में नदी-गान के अलावा अन्य गान भी है। तो भी वे सब सागर-तट-उद्यान में ही गाये गये है, अतः शीर्षक 'उद्यान-गीत' रखा गया है। इस अध्याय में संगीतमय यानी गेय पद्य और 'इयल्' (गद्यवचन) है।] ५३

8 वेऩिऱ् कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 वन्ददु तॆऩ्ऱल्

नॆडियोऩ् कुऩ्ऱमुम् तॊडियोळ् पौवमुम्
तमिऴ् वरम्बु अऱुत्त तण्पुऩल् नल् नाट्टु
माड मदुरैयुम् पीडु आर् उऱन्दैयुम्
कलिकॆऴु वञ्जियुम् ऑलि पुऩल् पुहारुम्
अरैशु वीऱ्ऱिरुन्द उरैशाल् शिऱप्पिऩ्
मऩ्ऩऩ् मारऩ् महिऴ् तुणै आहिय
इऩ् इळ वेऩिल् वन्ददु इवण् अॆऩ
वळङ्गॊऴु पॊदियिल् मा मुनि पयन्द
इळङ्गाल् तूदऩ् इशैत्तऩऩ् आदलिऩ्
मकर वॆल्कॊडि मैन्दऩ् शेऩै

पुहर् अरु कोलम् कॉळ्ळुम् ॲन्नबडु पोऱ्
कॉडिमिडै शोलैक् कुयिलोन् ॲन्नुम्
पडैयुळ् पडुवोन् पणि मॉऴि कूऱ 1-13

८ वसन्त-गाथा

१ आया दक्षिणी पवन

[''वेन्निल्'' का अर्थ वसन्त भी है और ग्रीष्म भी। वसन्त को ''इळवेन्निल्'' यानी नव ग्रीष्म और ग्रीष्म को ''मुदुवेन्निल्'' यानी वृद्ध ग्रीष्म कहते हैं।]

''लम्बे देवता (विष्णु, त्रिविक्रम) की गिरि (तिरुप्पति यानी बालाजी के मंदिर का स्थान) और कन्याकुमारी का समुद्र दोनों तमिऴ्नाडु की सीमा के रूप में निर्धारित हैं। उस शीतल-जल-सिंचित अच्छे देश के (पांडिय का), प्रासादपूर्ण मदुरै नगर, (शोऴन् का) शान-सहित रहा उऱन्दै नगर, (शेरन् का) कोलाहलपूर्ण ''वञ्जि'' नगर और शोऴन् का सागर तट, पुहार् नगर इत्यादि चारो नगरो पर प्रकीर्तित राजा कामदेव अपना राज चला रहा था। उस कामदेव का प्रिय साथी रहा मधुर वसन्त। वह ''वसन्त काल'' यहाँ आ गया। इस बात को धन-समृद्ध ''पॉदिहै'' पर्वत के महामुनि (अगस्त्य) द्वारा उत्पन्न मंद-मलयपवन रूपी दूत ने आकर बताया। इस पर, मकर-विजय केतन की सेना (स्त्रियों का समूह) त्रुटि-हीन वेश-भूषा धर ले! —मानो यह घोषणा करता हो ऐसा, लता-संकुल निकुंज पर बैठे कोकिल-रूपी काम-सेना के एक छोटे तुरही बजानेवाले सेवक ने वसन्त की आज्ञा को घोषित किया। १-१३

2 निलामुऱ्ऱत्तिल् मादवि

मडल् अविऴ् कानल् कडल्विळै याट्टिनुळ्
कोवलन् ऊडक् कूडादु एहिय
मामलर् नॅडुङ्गण् मादवि विरुम्बि
वान् उऱ निवन्द मेल् निलै मरुङ्गिन्
वेनिऱ् पळ्ळि एऱि माण्-इळै
तॅन् कडल् मुत्तुम् तॅन् मलैच् चन्दुम्
तन् कडन् इऱुक्कुम् तन्नमैय आदलिन्
कॉङ्गै मुन्ऱिल् कुङ्गुम वळाहत्तु
मै अरु शिऱप्पिन् कैयुऱै एन्दि
अदिरा मरबिन् याऴ्कै वाङ्गि
मदुर गीदम् पाडिनळ् मयङ्गि

ऑन्नपान्‌ विरुत्तियुळ् तलैक्कण् विरुत्ति
नन्नपाल् अमैन्द इरुक्कैयळ् आहि 14-26

२ चंद्रिका-स्थल में मादवि

जहाँ फूल दल खोले रहते थे, उस उद्यान से, सागर-लीला के मध्य, कोवलन् क्रोध करके चला गया। मादवि उसके साथ न जाकर अकेले ही अपने घर में जा प्रविष्ट हुई। वहाँ जाकर वह काली व आयत, कमलाक्षी, इच्छा-प्रेरित होकर आकाश-स्पर्शी अपने प्रासाद के हर्म्य (चंद्रिकास्थल या खुली छत) पर जो वसन्तकाल के लिए युक्त स्थान था, चढ़ी। दक्षिणी सागर के मोती और दक्षिणी पर्वत (पॊदियै) का चन्दन दोनों वसन्त ऋतुराज को अर्पित देने योग्य उपहार है। इस विचार से उस अतिश्रेष्ठ आभरण-भूषिता ने अपने कुंकुमचर्चित स्तन-प्रदेश (छाती) में उन दोनों निर्दोष मनोरम वस्तुओं को उपहार के रूप में धर लिया। (माला पहनी और चन्दन मल लिया)। फिर वह नौ वृत्तियों (नव-आसनों, बैठने के ढंगों) में पहली (पद्मासन) वृत्ति लगाकर खूब बैठी। फिर अचल परम्परा वाली 'याळ्' को हाथ में लेकर वह पहले कंठ-गान करने लगी। करते-करते जोश में आकर याळ् पर गाने लग गयी। १४-२६

3 मादवियिन्‌ मयक्कम्

वलक्कैप् पदाहै कोट्टॊडु शेर्त्ति
इडक्कै नाल् विरल् माडहम् तळीइच्
शॆम्बहै आर्प्पे कूडम् अदिर्वे
वॆम्बहै नीक्कुम् विरहुळि अऱिन्दु
पिळैया मरबिन्‌ ईर् एळ् कोवैयै
उळै मुदल् कैक्किळै इरुवाय्क् कट्टि
इणै, किळै, पहै, नट्पु ॲन्ऱु इन्नान्‌गिन्‌
इशै पुणर् कुऱिनिलै ॲय्द नोक्किक्
कुरल्वाय् इळिवाय्क् केट्टनळ्, अन्नऱियुम्
वरन्मुऱै मरुङ्गिन्‌ ऐन्दिनुम्, एळिनुम्
उळै मुदल् आहवुम् उळै ईऱु आहवुम्
कुरल् मुदल् आहवुम् कुरल् ईऱु आहवुम्
अहनिलै मरुदमुम् पुऱनिलै मरुदमुम्
अरुहियल् मरुदमुम् पॆरुहियल् मरुदमुम्

नाल् वहैच् चादियुम् नलम् पॅर् नोक्कि
मूवहै इयक्कमुम् मुऱैयुळिक् कळिप्पित्
तिऱत्तु वळिप्पडूउम् तळ्ळिशैक् करणत्तुप्
पुऱत्तु ऑरु पाणियिल् पूङ्गॉडि मयङ्गि 27-44

३ मादवि की बेसुध हालत

"पताका" (उँगलियो के रखने) की (एक) मुद्रा में दाहिने हाथ को 'याऴ्' के दण्ड के ऊपर रखकर, मादवि ने वायें हाथ की चार उँगलियों से 'माडहम्' को (तंत्री छेड़ने का एक उपकरण : नरवी या जवा ?) पकड़ा। फिर उसने "शॅम्बहै", "आर्प्पु", "कूडम्", "अदिर्वु" (अपस्वर, अतिस्वर-मिश्रित स्वर, गूढ स्वर ?) इत्यादि घोर दोषों को (स्वरसंधान मे) होने से रोकने का उपाय सोच लिया। वह याऴ् अचूक लक्षणयुक्त चौदह तंत्रियो की (शकोट) याऴ् थी। "उऴ" को स्थायी स्वर की तंत्री वनाकर "कैक्किळै" को अन्तिम स्वर बनाया। "इणै", "किळै", "पहै", "नट्पु" (स्वर मिलाने में उपयुक्त तंत्रियों के नाम) इत्यादि संगीत से युक्त होनेवाली तत्रियों की गणना कर ली। पहले "कुरल्" (षड्जम) के स्वर को वाद (उसके पाँचवे स्वर) "इळि" (पचम) स्वर को छेड़कर संगत को परख लिया। फिर यथाक्रम पंचम स्वर से लेकर सातो तंत्रियों का हिसाव करके 'उळै' से आरम्भ होनेवाला "अहिनिलै मरुदम्", "उळै" मे समाप्त होनेवाला "पुऱनिलै मरुदम", "कुरल्" से आरम्भ होनेवाला "अरुहियल् मरुदम्" और "कुरल्" में समाप्त होनेवाला "पॅरुहियल् मरुदम्" इत्यादि चारो की जातियों के रागों को अच्छी रीति से गाकर देखा। फिर मंद्र, मध्यम और तार—इन तीनों गतियों में गा चुकने के वाद "तिऱम्" के मार्ग में आनेवाले विशुद्ध संगीत के राग गाने लगी। तब "पुऱनीर्मै" नाम का एक 'राग' छेडते समय (उसे कोवलन् की याद आ गयी और) वह बेसुध हो गयी। २७-४४

4 तिरुमुहम् अनुप्पुदल्

शण्बहम् मादवि तमालम् करुमुहै
वॅण्पू मल्लिहै वेरॉडु मिडैन्द
अम्शॅङ्गऴुनीर् आय् इदऴ्क् कत्तिहै
ऍदिर् पूऩ् जॅव्वि इडै निलत्तु यात्त
मुदिर् पून् दाळै मुडङ्गल् वॅण् तोट्टु-
विरै मलर् वाळियिन्न वियल् निलम् आण्ड

ऑरु तनिच् चॅङ्गोल् ऑरुमहन् आणैयिन्
ऑरु मुहम् अन्ऱि उलहु तॉळुदु इऱैञ्जुम्
तिरु मुहम् पोक्कुज् जॅव्वियळ् आहि
अलत्तहक् कोळुज् जेरु अळैइ अयलदु
पित्तिहैक् कोळुमुहै आणि कैक्कोण्डु
मन्नुयिर् ऍल्लाम् महिळ् तुणै पुणर्क्कुम्
इन् इळ वेनिल् इळवर शाळन्;
अन्दिप् पोदहत्तु अरुम्बिडर्त् तोन्ऱिय
तिङ्गट् शॅल्वनुम् शॅव्वियन् अल्लन्
पुणर्न्द माक्कळ् पोळुदु इडैप् पडुप्पिनुम्
तणन्द माक्कळ् तम् तुणै मऱप्पिनुम्
नऱुम्पू वालियिन् नल्लुयिर् कोडल्
इऱुम्बूदु अन्ऱु इः्दु अऱिन्दीमिन् ऍन
ऍण्-ऍण् कलैयुम् इशैन्दु उडन् पोहप्;
पण्णुम् तिऱनुम् पुऱङ्गूऱु नाविल्
तळै वाय् अविळ्न्द तनिप् पडु कामत्तु
विळैया मळलैयिन् विरित्तु उरै ऍळुदिप्
पशन्द मेनियळ् पडर् उऱु मालैयिन्
वसन्द मालैयै वरुह ऍनक् कूउय्त्
तू मलर् मालैयिन् तुणि पोरुळ् ऍल्लाम्
कोवलर्क्कु अळित्तुक् कॉणर्ह ईङ्गु ऍन 45-71

४ "श्रीमुख" (पत्र) भेजना

[पत्र स्वस्तिवाचक शब्द या मंगलमय "श्री" से शुरू किया जाता है। अत: पत्र ही श्रीमुख या तिरुमुहम् कहा जाता है। "तिरु" श्री का समानार्थी तमिळ शब्द है। 'मुहम्' मुख का तमिळ् (उच्चारण का) रूप है।]
(स्थल पुष्प) 'शॅण्बहम्' (चंपक ?), माधवी, तमाल, 'करुमुहै', श्वेतदल मल्लिका, (खस की) जडें इत्यादि के साथ सुन्दर लाल 'कळुनीर' (जलपुष्प) के कोमल दलों को गूँथकर बनी उसकी माला में इनकी गंध मिश्रित होकर रहती थी। इस सुन्दर माला के बीच में केतकी का दल मोड़कर रखा गया था। उस दल को लेकर मादवि ने सोचा "गधवह सुमन-शरों के द्वारा विशाल भूमि को वश मे रखनेवाला कामदेव एक-छत्र (एक-दंड) राजा है। उसकी प्रेरणा से, एक स्थान में नही, पर सर्वत्र संसार-वंदित उसका श्रीमुख

(उसके मेरे ऊपर प्रभाव का समाचार) लिख (कोवलन् को) भेजूंगी।" यह संकल्प करके, अलक्तक का गाढ़ा लेप तैयार किया और पास रहे "पित्तिहै" की कली को लेखनी बनाकर निम्न प्रकार लिखा : "अन्यथी जीवों को जोड़ा बनाकर आनन्द देनेवाला मधुर वसन्त राजकुंअर आ गया है। (वह शरारती है!) सध्या-रूपी गजराज की गर्दन पर उदित हो आनेवाला चन्द्रकुमार भी अच्छा (उपकारक) नही है। जो परस्पर मिले ही रहते हैं, उनके वीच में थोड़ा भी अन्तर आ जाय, या वियुक्त दो प्रेमी एक-दूसरे को भूल जायँ, दोनो अवस्थाओ में सुगधित सुमन-शर से (काम) प्राणों पर आ जाता है। (उसका वैसा) प्राण हरना कोई अज्ञात वात (या कुतूहल देनेवाली वात) नही है। आप यह जानकर मुझ पर कृपा करें।" लिखते समय आठ के आठ (चौसठ) कलाओं के लय में राग और रागिनियों से अभ्यस्त अपनी जीभ से उसने हर शब्द का मधुर तुतलाती अस्पष्ट वोली में उच्चारण करते हुए लिखा। तव उसका कामवेग वन्धन-मुक्त स्थिति में था। उसने खोलकर यह वात लिखी और विवर्ण (कृश) वनी उसने "वसन्दमालै" को 'आओ' कहकर पास वुलाया और आज्ञा दी कि जाओ। इस पवित्र पुष्प-हार में पायी जानेवाली पक्की वातो को कोवलन् को समझाओ और उन्हें इधर लिवा लाओ। ४५-७१

5 तिरुमुहम् शेर्क्कप्पडल्

मालै वाङ्गिय वेल् अरि नॆडुङ्गण्
कूल मरुहिन् कोवलर्क्कु अळिप्पत् 72–73

५ 'तिरुमुहम्' का पहुँचाया जाना

'वेल्' से तुल्य और लाल डोरो से शोभित आँखों वाली वसंतमाला ने धान्य-व्यापार-वीथी मे कोवलन् से मिलकर वह माला (और खवर) कोवलन् के पास दी। ७२-७३

6 कोवलन्न् ओलैयै मऱुत्तल्

तिलकमुम् अळहमुम् शिरु करुञ् जिलैयुम्
कुवळैयुम् कुमिळुम् कॊव्वैयुम् कॊण्ड
मादर् वाळ् मुहत्तु मदैइय नोक्क मॊडु
कादलिन्न् तोन्ऱिय कण् कूडु वरियुम्
पुयल् शुमन्दु वरुन्दिप् पॊऴि कदिर् मदियत्तुक्

कयल् उलाय्त् तिरितरुम् कामर् शॆव्वियिऱ्
पाहु पॊदि पवळम् तिऱन्दु निला उदविय
नाहु इळ मुत्तिऩ् नहै नलम् काट्टि
"वरुह ॲऩ वन्दु पोह ॲऩप् पोहिय
करु नॆडुङ्गण्णि काण् वरिक् कोलमुम्;
अन्दि मालै वन्ददऱ्कु इरङ्गिच्
चिन्दै नोय् कूरुम् ॲऩ् शिऱुमै नोक्किक्
किळिपुरै किळवियुम् मडअऩ नडैयुम्
कळिमयल् शायलुम् करन्दऩळ् आहिच्
चॆरुवेल् नॆडुङ्गण् शिलदियर् कोलत्तु
ऒरु तऩि वन्द उळ्वरि आडलुम्;-
शिलम्बु वाय् पुलम्बवुम् मेहलै आर्पपवुम्
कलम् पॆऱा नुशुप्पिऩळ् कादल् नोक्क मॊडु
तिऱत्तु वेऱु आय ॲऩ् शिऱुमै नोक्कियुम्
पुऱत्तु निऩ्ऱु आडिय पुऩ्पुऱ वरियुम्
कोदैयुम् कुऴलुम् तादुशेर् अळहमुम्
ऒरु काऴ् मुत्तमुम् तिरुमुलैत् तडमुम्
मिऩ् इडै वरुत्त नल् नुदल् तोऩ्ऱिच्
चिऱुकुरुन् दॊऴिलियर् मऱुमॊऴि-उय्प्पप्
पुणर्च्चियुट् पॊदिन्द कलाम् तरु किळवियिऩ्
इरुपुर् मॊऴिप् पॊरुळ् केट्टऩळ् आहित्
तळर्न्द शायल् तहै मॆऩ् कून्दल्
किळर्न्दु वेऱु आहिय किळर् वरिक् कोलमुम्;
पिरिन्दु उऱै कालत्तुप् परिन्दऩळ् आहि;
ॲऩ्ऩुऱु किळैहट्कुत् तऩ् उऱु तुयरम्
तेर्न्दु तेर्न्दु उरैत्त तेर्च्चि वरि अऩ्ऱियुम्
वण्डु अलर् कोदै मालैयुळ् मयङ्गिक्
कण्डवर्क्कु उरैत्त काट्चि वरियुम्-
अडुत्तु अडुत्तु अवर् मुऩ् मयङ्गिय मयक्कम्
ॲडुत्तु अवर् तीर्त्त ॲडुत्त ॲडुत्तुक्कोळ् वरियुम्-
आडल् महळे आदलिऩ् आयिळै
पाडु पॆऱ्ऱ अप् पॆऩ् दॊडि तऩक्कु ॲऩ 74–110

६ कोवलन् का पत्र लेने से इनकार करना

[कोवलन् ने तैश में आकर कटु उत्तर दिया। उसने कहा वह 'वरि' (अभिनय के साथ) गाना गानेवाली नृत्यांगना है। उसके सारे व्यवहार ढोंग थे। मै धोखे में रह गया। उसके अभिनय देखो :] तिलक, अलक, छोटे काले कमान, 'कुवळै' (फूल=आँखें), "कुमिऴ्" (फूल=नाक), "कोव्वै" (विंबाधर) इत्यादि से लसित उसका सुन्दर मुख था। अपने उस कमनीय सुन्दर मुख पर मद-भरी दृष्टि लेकर उसने प्रेम प्रकट करनेवाली "कण्कूडु वरि" (दृष्टि-मिलन) का अभिनय (ढोग) रचा। वह "वरि" (अभिनय-युक्त गान), मेघ (केश) ढोने से क्लांत उसके, किरणे (छटा) बरसानेवाले चन्द्र (मुख) में कयल् (मत्स्यतंत्र) संचरणशील थे। उस मोहक झांकी में चाशनी-भरे प्रवाल (-अधर) खोलकर चन्द्रिका की छटा लिये रहे छोटे मोहक मोतियों (दाँतों) की हँसी की मोहिनी डालकर वह काली लंबी आंखो वाली 'आओ' कहने पर आयी, और जाओ कहने पर गयी। उस प्रकार जो उसने अभिनय किया वह "काण्वरि" और; सायंसंध्या के आने पर (लघु-विरह में) मै व्याकुल हुआ। मेरा मन चिता-रोग से ग्रस्त हुआ। मेरा इस तरह घुलना देखकर वह शुक की-सी बोली, सुन्दर हंस की-सी चाल और मत्त मोर की-सी आभा को अपने में छिपाये लेकर अपनी युद्ध-विजयी आँखों वाली आज्ञाकारिणी दासी-सखी के रूप में विलक्षण-रूप से आयी। वह "उळ् वरि आडल्" (छद्मवेश-अभिनय); उसके नूपुरों के मुख खोलकर विलपते, मेखला के निनादित होते, वह आभरण-धारण-अशक्य कटि वाली, प्रेमप्रदर्शक दृष्टि के साथ, स्वस्थ प्रकृति बदलकर (अनमने) रहे मेरा कष्ट देखकर भी चिढ़ाते हुए पीठ-पीछे पास ही खडी रही। तब उसने "पुन्नपुऱ" (अभिनय) दिखाया वह थोडी देर पीछे रहकर चिढ़ाने का वह अभिनय; और मालाएँ, कुंडल, (पुष्प-) परागमडित अलक-भार, एक लड़ी वाला मुक्ताहार श्रीस्तनप्रदेश इत्यादि के विद्युत्-कटि को दुखाते, वह कल्याण-ललाटिनी (मेरे पास न आकर) द्वार पर दर्शन देती रही। छोटी दासियों ने उसको मेरी बदली स्थिति बतायी। तब मैंने "सभोग" को व्यंजित करनेवाले द्वयार्थी शब्द कहे। उसे गलत दूसरे अर्थ में लेकर शिथिल शरीर और सुन्दर मृदुल केश वाली उसने रूठकर बदला हुआ रूप धारण कर लिया। वह 'किळर्वरि' का ढोग, और मेरे छूटकर अलग रहते समय वियोग-दुख-पीड़िता का वेश धारण कर मेरे नातेदारो के साथ उसने अपने दुख की, चुन-चुनकर लिये शब्दों में, शिकायत की। वह "तेर्च्पि वरि"; और भ्रमरो द्वारा खोले गये दलो के फूलों की मालाधारिणी उसने शाम के वक्त सुध खोकर सभी

मिलनेवालों से मेरी शिकायत की। वह "काट्चि वरि"; और वह फिर-फिर उनके सामने बेहोश होकर गिरी। तब उन्होंने उसे उठाकर सांत्वना दी। वह "ऍडुत्तुक्कोळ् वरि" (उठावन-अभिनय) सभी अभिनय थे; वह नृत्यांगना थी; अतः उस हरित ककणधारिणी को भाते थे। (नृत्यागना के स्वाभाविक जीवन से उसका कलाकार का जीवन भी घुला-मिला रहता है। इसलिए कोवलन् को उन प्रेम के सच्चे व्यवहारों को प्रेमाभिनय के आठ प्रकारों के रूप में लेना साध्य हो रहा। उसने पत्र को यह कहकर लौटा दिया)। ७४-११०

7 माऱ्ऱम् केट्टनळ् मादवियुम्

अणित्त तोट्टुत् तिरु मुहत् तायिलै ऍऴुदिय
मणित्तोट्टुत् तिरुमुहम् मऱुत्तदऱ्कु इरङ्गि
वाडिय उळ्ळत्तु वशन्द मालै
तोडलर् कोदैक्कुत् तुन्नैदु शॅन्ऱु उरैप्प 111-114

७ उत्तर सुना मादवि ने

सुन्दर स्वर्ण-कुंडल-मंडित मुखवाली, चुने हुए आभूषण-भूषिता मादवि ने सुन्दर केतकी-दल पर जो पत्र लिखा था, उसके अस्वीकृत होने पर वसन्तमाला खिन्न हुई और विकसित पुष्पमालाधारिणी मादवि के पास दौड़कर आयी। उसने मादवि को घटित समाचार सुनाया। १११-११४

8 मऱन्दनळ् तुयिलुम्

मालै वारार् आयिनुम्, माण् इऴै
कालै काण्गुवम् ऍन्ऱु कैयऱु नॅञ्जमोडु
पूमलर्-अमळि मिशैप् पॊरुन्दादु वदिन्दनळ्
मामलर् नॅडुङ्गण् मादवि तान्—अन्न 115-118

८ निद्रा भी भूल गयी

(यह सुनकर मादवि ने अपने मन को समझाते हुए कहा :) "शाम को नही आयेंगे तो भी (वे कल आयेंगे।) मै कल उनको पा जाऊँगी। सम्मान्य आभरण वाली!" मादवि, निर्जीव बने चित्त के साथ मृदु पुष्पशय्या पर जा लेटी। पर उत्कृष्ट-कमलायताक्षी मादवि को नीद नही आयी। वह वैसे ही पड़ी रही। ११५-११८

वॆण्बा

शॆन्दामरै विरियत्, तेमाङ्गॊऴुन्दु ऒऴुह
मैन्दार् अशोकम् मडल् अविऴ्क्-कॊन्दु आर्
इळवेऩिल् वन्ददाल्; ऎन् आम् कॊल् इन्ऱु
वळवेल्नऱ् कण्णि मऩम् ? 1

वॆण्बा (छन्द)

लाल कमल विकसे, दृष्टि-मधुर आम्रपल्लव फूटे; और उनसे मानों सौन्दर्य वरसता था। सौन्दर्ययुक्त अशोक पुष्पों ने भी पंखुड़ियाँ खोलीं इस भाँति पुष्प-स्तवकों को सृष्ट करती हुई वसन्त ऋतु आ गयी। अब तेज नुकीले "वेल्" की-सी आँखों वाली के मन का क्या होगा ? (वह कैसा-कैसा कष्ट पायेगा ?) १

ऊडिऩीर् ऎल्लाम् उरुविलाऩ्-तऩ् आणै
कूडुमिऩ् ऎन्ऱु कुयिल् शाऱ्ऱ—नीडिय
वेऩिल् पाणिक् कलन्दाळ् मऩ्ऩ्पूऩ् दिरुमुहत्तैक्
काणऱ् पाणिक्कु अलन्दाय् ! काण् 2

"रूठकर अलग हुए प्रेमीजनो ! यह अनंग की आज्ञा है— सब मिल जाओ !" कोयल यही तान सुनाती है। (वह कहती है : हे कोवलन् !) लम्बे अर्से तक वसन्त ऋतुओं में तुमसे जो मिली रही, उसके मृदु पुष्प-सम श्रीमुख (से प्राप्त आनन्द) को कानल्-गान सुनकर छोड़ आये हो ! (यह ठीक नहीं। जाओ उससे मिले रहो और सुख पाओ।) २

9 कनात्तिऱम् उरैत्त कादै

(कलि वॆण् पाट्टु)

1 मालैयै महळिर् वऴिपडल्

अहनहर् ऎल्लाम् अरुम्बु अविऴ् मुल्लै
निहर्मलर् नॆल्लॊडु तूउय्प् पहल् माय्न्द
मालै मणि विळक्कङ् गाट्टि इरविऱ्कु ओर्
कोलङ् गॊडि-इडैयार् ताम् कॊळ्ळ मेलोर् नाळ् 1-4

६ स्वप्न-विषय कथन-गाथा

१ स्त्रियों की संध्या-पूजा

पुहार् नगर की नारियों ने अपने-अपने घरों के स्थलों में खिली 'मुल्लै' की कलियों के खिले उज्ज्वल फूलों को धान के साथ मिलाकर बिखेरा। सूर्यास्त की उस संध्या को मणिदीप जला दिखाये। फिर लता-सी कमरवाली उन रमणियों ने रात के योग्य (ढीला महीन) वस्त्र धारण कर लिया। अब पहले किसी दिन (हुई यह घटना सुनिए)। १-४

2 मालदि मन्नत्तुयर्

मालदि माऱ्ऱाळ् महवुक्कुप् पालळिक्कप्
पाल् विक्किप् पालहन्-तान् शोर मालदियुम्
पार्प्पा नीॅडु मनैयाळ् ऍन् मेऱ् पडादन विट्टु
एऱ्पत्त कूऱार् ऍन्ऱु एङ्गि; महक्कोण्डु
अमरर् तरुक्कोट्टम्, वॅळ्यानैक् कोट्टम्
पुहर् वॅळ्ळै नाहर्तम् कोट्टम् पहल् वायिल्
उच्चिक् किळान् कोट्टम् ऊर्क्कोट्टम् वेऱ् कोट्टम्
वच्चिरक् कोट्टम् पुऱम् बणैयान् वाळ् कोट्टम्
निक्कन्दक् कोट्टम् निलाक् कोट्टम् पुक्कु ऍङ्गुम्
देविर्हाळ्! ऍन् उऱु नोय् तीर्म् ऍन्ऱु मेवियोर् **5–14**

२ मालदि की मनोव्यथा

मालदि ने अपनी सौत के बालक को दूध पिलाया। तब दूध के अटक जाने से हिचकी बँध गयी और बालक मर गया। मादवि को भय हो गया। "विप्र-स्त्री (मेरी सौत) मुझ पर मिथ्यारोपण करने के सिवा कोई मान्य बात नही कहेगी। घबड़ायी हुई वह बालक को लेकर "कल्पतरु-कोष्ट" (मन्दिर), श्वेत गज (ऐरावत) मन्दिर, सुन्दर बलदेव-मन्दिर, पूर्व-दिशा में उदित होनेवाले आकाशचारी सूर्य का मन्दिर, ग्राम देवता का मन्दिर और शक्तिधर (सुब्रह्मण्य) का मन्दिर, वज्र का मन्दिर, शास्ता (ऐयनार) के रहने का मन्दिर, 'निग्रंथ' (अर्हत) मन्दिर, और चंद्र-मन्दिर इत्यादि मन्दिरों में गयी और (प्रार्थना की) कि हे देवताओ! मुझ पर आया संकट दूर करो। कुछ नहीं हुआ। ५-१४

3 इडाहिनिप् पेय् शॅयल्

पाशण्डच् चात्तऱ्कुप् पाडु किडन्दाळुक्कु
एशुम् पडि ओर् इळङ्गॊडि आय्; आशु इलाय्
शॅय्दवम् इल्लोर्क्कुत् तेवर् वरम् कॊडार्
पॊय् उरैये अन्ऱु; पॊरुळ् उरैये; कैयिऱ्
पडुपिणम् ता ऍन्ऱु पऱित्तु अवळ्कैक् कॊण्डु
शुडुहाट्टुक् कोट्टत्तु तूङ्गु इरुळिल् शॅन्ऱु आङ्गु
इडुपिणम् तिन्नुम् इडाहिनिप् पेय् वाङ्गि
मडि अहत्तु इट्टाळ्, महवै—इडियुण्ड 15-22

३ डाकिनी-भूतनी का काम

तो वह "पाषण्ड" शात्तन् के मन्दिर में जाकर धरना देने लगी। तब (अन्य स्त्रियों पर) लांछन लगानेवाली (यानी अति सुन्दर) एक सुन्दर (लता-सी) स्त्री प्रगट होकर (बोली :) हे अनघे! जिन्होंने तपस्या नहीं की है उनकी देवता सहायता नहीं करते। यह कोरी बात नहीं। सार्थक कथन है। वह अपनें हाथ का शव इधर दो। फिर उसने लाश छीन ली। वह उसे अपने हाथ मे लिये, उस घने अन्धकार में श्मशान-कोष्ट में गयी। वहाँ गडे हुए शवो को खानेवाली उस भूतनी-डाकिनी ने उस मरे बालक को लेकर अपने पेट में डाल लिया। वज्राहत-१५-२२

4 शात्तत्तिन् पेररुळ्

मञ्ञै पोल् एङ्गि अऴुदाळुक्कु अच्चात्तन्
'अञ्ञै नी एङ्गि अऴल्' ऍन्ऱु मुन्नै
उयिर्क् कुऴवि काणाय् ऍन्ऱु अक्कुऴवियाय् ओर्
कुयिऱ् पॊदुम्बर् नीऴल् कुरुह; अयिर्प्पु इन्ऱि
मायक् कुऴवि ऍडुत्तु, मडित् तिरैत्तुत्
तायक्कैक् कॊडुत्ताळ्; अत् तैयलाळ्—(तूय) 23-28

४ शात्तन् की बड़ी कृपा

(वज्राहत) मयूर के समान बहुत दुखी होकर वह मालदि रोने लगी। तब उस शात्तन् (शास्ता) ने कृपावचन कहे कि माता! तुम दुखी होकर मत रोओ। आगे बोला कि आगे जाओ। एक जीवित बालक को देखोगी! यह कहकर वह उसी (मरे) बालक के रूप में कोकिल-निवास एक तरुकुंज की

छाया में जा रहा। मालदि ने, बिना किसी संदेह के, उस माया-बालक को गोद में उठा ले जाकर घर में उसकी माता के हाथ में दे दिया। २३-२८

5 तेवन्दियिन् तुयरक्कदै

मऱ्ऱै योन्ऱिपिन् माणि आय् वान् पॊरुळ् केळ्वित्
तुऱै पोय् अवर् मुडिन्द पिन्ऩर् इऱैयोनुम्
तायत् तारोडुम् वळक्कु उरैत्तुत् तन्दैक्कुम्
तायर्क्कुम् वेण्डुम् कडन् कळित्तु मेयनाळ्
तेवन्दि ऍन्बाळ् मनैवि अवळुक्कुप्
पूवन्द उण्कण् पॊरुक्क ऍन्ऱु मेवित्तन्
मूवा इळ नलम् काट्टि ऍम् कोट्टत्तु
नी वा ऍन उरैत्तु नीङ्गुदलुम्—(तू मॊळि) 29-36

५ देवन्दि की दुख-गाथा

पवित्रजन्म वह बालक (शास्ता देव) "ब्रह्मचारी" के आश्रम में प्रविष्ट हुआ। उच्च स्तर के पठन-श्रवण में पारंगत हुआ। उसके माँ-बाप मर गये। उसके पश्चात् उस देव-बालक ने दायादों के साथ दावा तय करके अपने माता-पिता का अपर-कर्म यथाविधि पूरा किया। गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट उसकी देवन्दि पत्नी बनी। गृहस्थी चलती रही। एक दिन उसने अपनी पत्नी का आलिंगन करके कहा! हे देवी! पुष्प-सदृश तुम्हारी कजरारी आँखें (मेरा देव-रूप) सह लें। फिर उसे अपना अजर यौवन का सुन्दर रूप दिखाया। उसे अपने मन्दिर में आने का निमंत्रण देकर वह चला गया। पवित्र भाषिणी–२९-३६

6 तेवन्दियिन् वळिपाडु

आर्त्त कणवन् अहन्ऱनन् पोय् ऍङ्गुम्
तीर्त्तत् तुऱै पडिवेन् ऍन्ऱु अवनैप् पेर्त्तु इङ्ङन्
मीट्टुत् तरुवाय् ऍन ऒन्ऱन् मेल् इट्टुक्
कोट्टम् वळि पाडु कॊण्डिरुप्पाळ्—वाट्टु अरुम् शीर्क् 37-40

६ देवन्दि की देव-पूजा

(पवित्र भाषिणी) देवन्दि ने शात्तन् के मन्दिर में जाकर वर माँगा। मेरे पति तीर्थों में जाकर स्नान कर आने की बात कहकर चले गये है। उनको लौटाकर मेरे पास दे दो। उसी एक विचार के ध्यान में वह मन्दिर

में पूजा करती रही। तब एक दिन उसने अमंद गौरवशालिनी (कण्णहि के बारे में सोचा।) ३७-४०

7 कण्णहियिडम् वरुदल्

कण्णहि नल्लाळुक्कु उऱ्ऱ कुऱ्ऱ उण्डु ऎन्ऱु
अण्णिय नॆञ्जत्तु इऱ्ऱैयळाय् नण्णि
अऱुहु शिऱु पूळै नॆल्लॊडु तू उय्च् चॆन्ऱु
पॆऱुह कणवनॊडु ऎन्ऱाळ्—पॆऱुहेन् 41–44

७ कण्णहि के पास आयी

"(अमंद गौरवशालिनी उत्तमा) कण्णहि पर कुछ बुरा बीता है।" यह बात मन में लेकर सहानुभूति के साथ वह देवन्दि कण्णहि के पास गयी। उसने दूर्वादल, छोटे "पूळै" के फल और धान को बिखेरती जाकर आशीर्वचन कहा कि "पति को पा जाओगी।" (कण्णहि ने उत्तर में कहा कि) नहीं पाऊँगी; नही। ४१-४४

8 कण्णहि कण्ड कनवु

कडुक्कुम् ऎन् नॆञ्जम् कनविनाल् ऎन् कै
पिडित्तनन् पोय् ओर् पॆरुम् पदियुळ् पट्टेम्;
पट्ट पदियिल् पडाददु ओरु वार्त्तै
इट्टनर् ऊरार् इडुतेळ् इट्टु ऎन् तन् मेल्;
कोवलऱ्कु उऱ्ऱदु ओर् तीङ्गु ऎन्ऱु अदुकेट्टुक्
कावलन् मुन्नर् यान् कट्टुरैत्तेन्; कावलनॊडु
ऊर्क्कु उऱ्ऱ तीङ्गुम् ऒन्ऱु उण्डाल्; उरैयाडेन् :
तीक्कुऱ्ऱम् पोलुम् शॆऱिन्दोडीइ! तीक्कुऱ्ऱम्
उऱ्ऱेनॊडु उऱ्ऱ उऱुवनॊडु यान् उऱ्ऱ
नऱ्ऱिऱम् केट्किन् नहै आहुम्—पॊऱ्ऱोडीइ 45–54

८ कण्णहि का दुष्ट स्वप्न

"मेरा मन दर्द करता है। कारण : एक स्वप्न है। स्वप्न में मेरे पाणिग्राही आये। (उनके साथ मैं गयी और) हम एक नगर में गये। प्रविष्ट उस नगर में लोगो ने हमारे ऊपर हमारे लिए अनुपयुक्त (अन्याय-पूर्ण) अपराध क्या लगाया समझो, एक बिच्छू को हमारे ऊपर छोड़ दिया।

उससे कोवलन् पर एक घोर विपत्ति आयी। यह सुनकर मैंने राजा के सामने जाकर न्यायवाद किया। राजा के साथ नगरवासियों पर भी विकट संकट आ पड़ा। वह देखकर मैं अवाक् रह गयी। (अब मैं विवरण नहीं कहूँगी)। घने कंकणधारिणी ! एक बहुत कठोर अपराध हो गया था। अपराधिनी मेरा, अपने पति महाशय के साथ जो हाल हुआ वह सौभाग्य सुनाऊँ तो सुननेवालों को हँसी आ जायेगी। (देवन्दि ने उत्तर में कहा—) स्वर्णकंकणधारिणी ! ४५-५४

9 तेवन्दि तेरुदल् कूरुहिऱाळ्

कॆत्तायुम् अल्लै कणवऱ्कु; ऒरु नोन्बु
पॊय्त्ताय् पळम् पिऱप्पिल्; पोय्क्कडुह; उय्त्तुक्
कडलॊडु काविरि शॆन्ऱु अलैक्कुम् मुन्ऱिल्
मडलविऴ् नॆय्दल् अम्कानल् तडम् उळ
शोम कुण्डम् शूरिय कुण्डम् तुऱै मूऴ्हिक्
कामवेळ् कोट्टम् तॊऴुदार् कणवरॊडु
ताम् इन्बुऱुवर् उलहत्तुत तैयलार्
बोगम् शॆय् बूमियिनुम् पोय्प्पिऱप्पर् : याम् ऒरुनाळ्
आडुदुम् ऎन्ऱ अणि इऴैक्कु—अव् आय् इऴैयाळ् 55-63

९ देवन्दि ढाढस देती है

तुम अपने पति के लिए अप्रिय नही बनी हो। पूर्व-जन्म में तुमसे एक व्रत में भूल-चूक हो गयी। वह अपराध नष्ट हो जाय ! (शुभ हो !) जहाँ काविरि समुद्र से मिलती है और समुद्र-जल को पीछे ढकेलकर हिला देती है उस मुहाने के पास एक दल-विकसे पुष्पों से शोभायमान समुद्र-तटीय उद्यान-स्थल है। उसमें सोमकुंड और सूर्यकुड है। —उनमें स्नान करके जो कामदेव के मन्दिर में पूजा करेंगी वे अपने पतियों के संग सुख भोगेंगी और वे इस मर्त्य-भूमि की स्त्रियाँ भोग-भूमि स्वर्ग में भी जाकर जन्म लेगी। (पतियों के साथ सुख भोगेगी।) हम जाकर एक दिन स्नान करेंगे। इस भाँति कहनेवाली उस सुन्दर-आभरणभूषिता से श्रेष्ठ चुने हुए आभरण-धारिणी कण्णहि ने कहा। ५५-६३

10 कण्णहियिन् पदिल्

पीडु अन्ऱु ऎन इरुन्द पिन्ऩरे—नीडिय 64

१० कण्णहि का उत्तर

"नही, यह गौरवदायक नही होगा।" जब यह कह चुकी थी तब एक लौंडिया ने आकर कहा कि सम्मान्य—६४

11 तिरुम्बि वन्दान् कोवलन्

कावलन् पोलुम् कडैत्तलैयाळ् वन्दु नम्
कोवलन् ! ऍन्ऱाळ् ओर् कुऱ्ऱिळैयाळ्; कोवलनुम्
पाडुअमै शेक्कैयुळ् पुक्कुत तन् पैन्दोडि
वाडिय मेनि वरुत्तम् कण्डु, यावुम्
शलम् पुणर् कॊळ्हैच् चलदियॊडु आडिक्
कुलम् तरु वान्पॊरुळ् कुन्ऱम् तॊलैन्द
इलम् पाडु नाणुत्तरुम् ऍनक्कु ऍन्न 65–71

११ लौट आया कोवलन्

हमारे संरक्षक (राजा) के ही समान, हमारे प्रधान द्वार पर आये हैं हमारे कोवलन्। तब कोवलन् भी आ गया। वह सीधे मनभावन शय्या-गृह में गया। अपनी प्रिया का मुरझाया शरीर और उसका म्लान वदन देखकर बोला कि यह सब, छलने का गुण रखनेवाली ठगनी के साथ भोगक्रीड़ा करने का फल है। परम्परा-प्राप्त कुल की संपत्ति-गिरि को खोने से जो कंकाल स्थिति में पहुँचा हूँ, उससे मैं अधिक लज्जित हूँ। ६५-७१

12 शिलम्बु उळ कॊळ्ळुम्

नलम् केळ् मुरुवल् नहैमुहम् काट्टिच्
चिलम्बु उळ; कॊण्म् ऍनच् चेयिऴै केळ् इच् 72–73

१२ नूपुर हैं, ग्रहण करें

(कण्णहि ने सोचा कि वेचारा मादवि को देने के लिए कुछ नही रह जाने से दुखी है।) अत: वह अपने उज्ज्वल मुख में आश्वासनकारी मदहास लाते हुए बोली कि "मेरे पास अब नूपुर है। ग्रहण कीजिए।" कोवलन् ने कहा कि लालित्य-भरे आभरणों से शोभनेवाली ! सुनो। ७२-७३

13 कोवलनिन् तिट्टम्

चिलम्बु मुदलाहच् चॆन्ऱ फलत्तोडु
उलन्द पॊरुळ् ईट्टुदल् उऱ्ऱेन् मलर्न्द शीर्

माडमदुरै यहत्तुच् चेन्नरु अन्नोडु इङ्गु
एडु अलर् कोदाय् ! अंळुह अन्नरु नीडिय
वित्तै कडैक्कूट्ट वियङ् कौण्डान्—कङ्गुल्
कत्तैशुडर् काल् शीया मुन्न 74-79

१३ कोवलन् की परियोजना

इस नूपुर को पूँजी बनाकर (व्यापार करूँगा और) गँवाये हुए आभरणों को और नष्ट हुए धन को भी कमा लेने को मैंने ठाना है। विस्तृत कीर्ति-युक्त व प्रासादों से पूर्ण मदुरै में जाकर (यह व्यापार करूँगा) आओ, उठो मेरे साथ। बहुत दिनो के कर्म-फल ने आकर उसके संकल्प को जगा दिया। इसलिए उसने, सूर्य के उगकर अपनी तेज किरणों से रात के अन्धकार को दूर करने से पहले ही यात्रा को अपना लिया। ७४-७९

वेंण्बा

कादलि कण्ड कनवु करु नेडुङ्गण्
मादवि तन्न शौल्लै वऱिदाक्क—मुन्दै
वित्तै कडैक्कूट्ट वियम् कौण्डान् कङ्गुल्
कत्तैशुडर् काल् शीया मुन्न

वेंण्बा (छन्द)

पत्नी कण्णहि के देखे स्वप्न ने काली लम्बी आँखों वाली मादवि के कथन को निष्प्रयोजन बना दिया। प्राचीन कर्मफल ने आकर कार्य संयोजित किया। इसलिए कोवलन् ने सूर्य की घनी किरणों के अन्धकार को दूर करने से पहले ही यात्रा को अपना लिया।

10 नाडुकाण् कादै

1 वायिलैक् कडन्दनर्

वान्कण् विळिया वैहरै यामत्तु
मीन् तिहळ् विशुम्बिन् वेंण्मदि नीङ्गक्
कारिरुळ् निन्नर कडैनाळ् कङ्गुल्-
ऊळ्वित्तै कडैइ उळ्ळम् तुरप्प
एळहत् तहरुम् अहिनक् कवरियुम्
तूमयिर् अन्नतमुम तुणै अंनत् तिरियुम्

ताळोंडु कुयिन्ऱ तहैशाल् शिऱप्पिन्
नीळ् नेंडु वायिल् नेंडुङ्गडै कऴिन्दु आङ्गु 1-8

१० देश-दर्शन गाथा

१ द्वार पार किया

भूतल की श्रेष्ठ आँख है सूर्य। वह अभी उदित नहीं हुआ। उस प्रातःकालीन रात के पिछले पहर में आकाश में तारे थे पर चन्द्र अस्त हो गया था। काला अन्धकार अब भी था। उस रात में, प्राचीन कर्म के प्रेरित करने से जाने का संकल्प करके कोवलन् कण्णहि के साथ चलने लगा। (पहले वह विस्तृत ओसारे को पार करने लगा) जिसमें बकरे के पट्ठे, सुरागाय, स्वच्छ बालो (पर) वाले हंस आदि परस्पर मिलकर घूम रहे थे और जो अर्गलायुक्त कपाट के द्वार के अंदर था, उस दालान को पार कर बाहर आया। १-८

2 उलह इडैहऴि नीङ्गित्तर्

अणिकिळर् अरविन्न् अऱितुयिल् अमर्न्द
मणिवण्णन् कोट्टम् वलम् शेयाक् कऴिन्दु
पणै ऐन्दु ऐओङ्गिय पाशिलैप् पोदि
अणि तिहऴ् नीऴल् अऱवोन् तिरुमॊऴि
अन्दर-शारिहळ् अऱैन्दनर् शाऱ्ऱुम्
इन्दिर विहारम् एऴुडन् पोहि
पुलवु ऊण् तुऱन्दु पॊय्या विरदत्तु
अवल नीत्तु अऱिन्दु अडङ्गिय कॊळ्है
मॆय्वहै उणर्न्द विऴुमियोर् कुऴीइय
एवहै निन्ऱ अरुहत् तानत्तुच्
चन्दि ऐन्दुम् तम्मुडन् कूडि
वन्दु तलै मयङ्गिय वान् पेरुमन्ऱत्तुप्
पॊलम्बूम् पिण्डि नलङ्गिळर् कॊऴुनिऴल्
नीर् अणि विऴविनुम् नेंडुन्देर् विऴविनुम्
शारणर् वरुउम् तहुदि उण्डाम् अॆन
उलह नोन्बिहळ् ऒरुङ्गुडन् इट्ट
इलहु ऒळिच् चिलातलम् तॊऴुदु वलम् कॊण्डु
मलै तलैक् कॊण्ड पेर्याऱु पोलुम्
उलह इडैहऴि ऒरुङ्गुडन् नीङ्गिक् 9-27

२ संसार का द्वार-पथ पार किया

उसने पहले चटकीली सर्पशय्या पर योगनिद्रा-रत मणिवर्ण श्री नारायण के मन्दिर की परिक्रमा करके सात इंद्र-विहारों के दर्शन किये, जहाँ रहकर अन्तरचारी चारण लोग, पाँच बड़ी-बड़ी शाखाओं से और हरे पत्तों से शोभित महान बोधिवृक्ष की मनोरम छाया में प्रबुद्ध हुए श्री बुद्धदेव के श्रीवचनों की व्याख्या सुनाते थे। फिर पति-पत्नी मांसभक्षण-त्यागी असत्य-त्याग व्रती के (काम-द्वेषादि) दुर्गुणों से रहित पंचेद्रियनिग्रही, तत्त्वदर्शी पुण्यपुरुष जहाँ मिलते थे उस अर्हत मन्दिर में गये। वहाँ स्वर्णवर्ण पुष्पलसित अशोकतरु की शीतल, घनी छाया में एक मंडप (मैदान था) जहाँ पंच परमेष्टियों के पाँचों मार्ग आपस में आ मिलते थे। उस संधि स्थान में एक शिलातल था, जिसको श्रावकों ने (गृहस्थ जैनियों ने) इस विचार से स्थापित किया था कि अभिषेक के उत्सव-दिन में हो या रथयात्रा का उत्सव हो तब चारण आयेंगे। उस गोल शिलातल की भी प्रदक्षिणा कर वे आगे बढ़े। वे उस नगर-मार्ग में गये जो पर्वत-मस्तका बड़ी नदी समान था (जिसके सिर यानी आरम्भ में पर्वत हो) और गढ़ के द्वार और नगर के बीच पड़ा था। सारे संसार के लोग उसी पर आते-जाते थे। पति-पत्नी भी अन्य मार्गचारियों के साथ मिलकर रास्ता तय कर बाहर आये। (पंच परमेष्टि : अर्ह, सिद्ध, पुरोहित, गुरु और साधू।) ९-२७

3 कवुन्दियडिहळैक् कण्डनर्

कलैयिलाळऩ् कामर् वेऩिलॊडु
मलैय मारुदम् मऩ्ऩवऱ्कु इरुक्कुम्
पऩ्मलर् अडुक्किय नऩ्मरप् पऩ्दर्
इलवन् दिहैयिऩ् ऎयिऱ्पुरम् पोहि
ताळ्पॊळिल् उडुत्त तण्पदप् पॆरुवळिक्
काविरि वायिऱ् कडैमुहम् कळिन्दु
कुडदिशैक् कॊण्डु कॊळुम् पुऩऱ् काविरि
वडपॆरुङ् गोट्टु मलर्प् पॊळिल् नुळैन्दु
कावदम् कडन्दु कवुन्दिप् पळ्ळिप्
पूमरप् पॊदुम्बर्प् पॊरुन्दि आङ्गण्
इरुम् कॊडि नुशुप्पोडु इनैन्दु अडि वरुन्दि
नरुम्पल् कून्दल् कुरुम्बल उयिर्त्तु
मुदिराक् किळवियिऩ् मुळ्ऎयिरु इलङ्ग

मदुरै मूदूर् यादु ॲॆन विन्नव
आरु ऐङ्गादम् नम् अहल् नाट्टु उम्बर्
नारु ऐङ्गूनदल् नणित्तु ॲॆन नक्कुत
तेमॊळि तन्नॊडुम् शिरैयहत्तु इरुन्द
कावुन्दि ऐयैयैक् कण्डु अडितॊळलुम् 28-45

३ कवुन्दि स्वामिनी से भेंट की

रास्ते में एक वापी (सर और बाग) थी जहाँ (मानो) कामदेव शोळ राजा को वसन्त तथा मलय मारुत को कर के रूप में अदा करता था (ऐसा मनोरम था) और विविध पुष्पधारी वृक्षों का छाजन-सा था। उस वापी की प्राचीर को पार कर वे आगे गये। काविरि नदी को, झुके हुए तरुओ की छाया से पूर्ण उपवन दोनो ओर से घेरे हुए थे। उस नदी के मुहाने के घाट तक बड़ा मार्ग जा रहा था। उस मुहाने के द्वार को भी पार किया, फिर पश्चिम दिशा में समृद्ध-सलिला काविरि नदी के बड़े उत्तरी किनारे पर रहे बाग में घुसकर उसके उस पार गये। फिर "कावदम्" (कादम् या कोस ?) दूर चले। वहाँ स्वामिनी कवुन्दि का पुष्पशोभित वृक्षों से भरा सुन्दर आश्रम था। उसके पास ही और एक उद्यान में वे जाकर रहे। तब टूटती-सी लगनेवाली लता के समान कटिवाली मृदुल पैरों के दर्द और बहुत थकावट से शिथिल होकर सुगंधित विविध-केशिनी कण्णहि ने जल्दी-जल्दी साँसे छोड़ती हुई अस्पष्ट तुतलाती बोली में काँटों के समान छोटे दाँतों को प्रगट करते हुए पूछा कि प्राचीन नगर मदुरै कौन सा (कहाँ) है ? (कोवलन् ने सहानुभूति के साथ ही कहा :) हमारे विशाल राज्य से छः पाँच (तीस या छः या पाँच) कोस दूर चलने पर मदुरा पास ही है, हे सुगंधित तथा पाँच प्रकारों से सज्जित केशवाली ! यह कहकर कोवलन् हँसा। फिर मधुर-मधु-भाषिणी उसके साथ उसने पास रही स्वामिनी 'कवुन्दि' के पास जाकर पैर छुए। २८-४५

4 कवुन्दि यडिहळुम् पुरप्पडल्

उरुवुम्, कुलनुम् उयर्पेर् ऑळुक्कमुम्
पॆरुमहन् तिरुमॊळि पिऱळा नोन्बुम्
उडैयोर् ॲॆन्नो उरुह णाळरिन्
कडै हळिनुडु इड्ङतम् करुदिय वारु ? ॲॆन
उरैयाट्टु इल्लै ! उरु तवत्तीर् यान्
मदुरै मूदूर् वरै पॊरुळ् वेट्कैयेन्

पाडहच् चीऱडि परऱ्पहै उळवा
काडु इडैयिट्ट नाडुनीर् कळि दरुकु
अरिदु इवळ् शॆव्वि अऱिहुनर् यारो?
उरियदु अन्ऱु ईङ्गु ऒऴिह अॆन्न ऒऴियीर्
मऱ उरै नीत्त माशऱु केळ्वियर्
अऱवुरै केट्टु आङ्गु अऱिवत्तै एत्तत्
तॆन्तमिऴ् नन्नाट्टुत् तीदु तीर् मदुरैक्कु
ऒन्ऱिय उळ्ळम् उडैयेन् आहलिन्
पोदुवल् यानुम् पोदुमिन् अॆन्ऱ
कावुन्दि यैयैक्कै तॊऴुदु एत्ति
अडिहळ् नीरे अरुळुदिर् आयिन् इत्
तॊडि वळैत् तोळि तुयर् तीर्त्तेन् अॆनक् 46–63

४ कवुन्दि अडिहळ् का भी प्रस्थान

(कवुन्दि अडिहळ् स्वामिनी) ने पूछा कि) तुम रूप, कुल तथा अत्युच्च आचरण, महात्मा (अर्हत) के उपदेशों से न टलने का व्रत इत्यादि में बढ़े हुए दिखते हो। तो भी क्यों, पापियों के समान अपना घरबार छोड़कर इस भाँति आने को सोचा तुमने? ऐसा पूछने पर (कोवलन् ने कहा:) कोई (योग्य) उत्तर नहीं है। हे तपस्विनी! मैं प्राचीन नगर मदुरै में जाकर अर्थ कमाने को उत्सुक हूँ। (तब कवुन्दि अडिहळ् ने कहा:) "पाडहम्" (पैंजनी?) से विभूषित इसके छोटे पैर कंकड़-रूपी विरोधी को जीत नहीं पायेंगे। जंगल को मध्य में लिये रहनेवाले इस प्रदेश का मार्ग तय करने में असमर्थ होगी इसकी कोमलता! पर कौन जाने (भावी को)? और "यह उचित नहीं लगता! जाना छोड़ दो" कहने पर भी माननेवाले नहीं लगते! (इसलिए) दुष्ट वचन त्यागकर जो धार्मिक-उपदेश सुनते रहते हैं उन महात्माओं का धर्मोपदेश सुनकर 'अर्हत' की वन्दना करना चाहूँगी मैं भी। उस वास्ते दक्षिणी तमिऴ् प्रदेश के अन्तर्गत स्थित, निर्दोष मदुरै जाने में मेरा चित्त लगा है। मैं भी जाऊँगी, तुम्हारे साथ! (अडिहळ् द्वारा ऐसा कहने पर) कोवलन् ने ऐसा कहनेवाली कवुन्दि के सामने हाथ जोड़कर संस्तुति की और कहा कि हे अडिहळ्! अगर आप स्वयं यह अनुग्रह करेंगी तो मैं गोल वलयभूषित कंधोंवाली इससे संबंधित चिंता से छूट गया। ४६-६३

5 वऴियिन् इयल्वुहळ्

कोवलन् काणाय्! कॊण्ड इन्नॆऱिक्कु

एदम् तरुवत्त याङ्गुम् पल केण्मो
वेयिल् निऱम् पॊरुअ मॆल्लियल् कॊण्डु
पयिल् पून् दण्डलैप् पडर्हुवम् ऍत्तिते
मण्पह वीऴ्न्द किळड्गु अहल् कुऴियैच्
चण्बहम् निरैत्त तादुशेर् पॊङ्गर्
पॊय्यऱैप् पडुत्तुप् पॊऱ्ऱा माक्कट्कुक्
कैयऱु तुन्बम् काट्टिनुम् काट्टुम्
उदिर्पून् जॆम्मलिन् ऒदुङ्गित्तर् कळिवोर्
मुदिर्तेम् पऴम्पहै मुट्टिनुम् मुट्टुम्
मन्जळम् इन्जियुम् मयङ्गु अरिल् वलयत्तुच्
चॆन्जुळैप् पलवित्त परर्पहै उऱुक्कुम्
कयल् नॆडुङ् गण्णि कादर् केळ्व!
वयल् उळैप् पडर्हुवम् ऍत्तिते आङ्गुप्
पूनाऱु इलन्जिप् पॊरुकयल् ओट्टि
नीर्नाय् कौविय नॆडुमुबुर् वाळै
मलङ्गुमिळिर् शॆऱुवित्त विलङ्गप् पायिन
कलङ्गलुम् उण्डुइक् कारिहै आङ्गण्
करुम्बिल् तॊडुत्त पॆरुन्देन् शिदैनुदु
शुरुम्बु शूऴ् पॊय्हैत् तूनीर् कलक्कुम्
अडङ्गा वेट्कैयिन् अऱिवु अनर् ऍय्दिक्
कुडङ्गैयिन् कॊण्डु कॊळ्ळवुम् कूडुम्
कुऱत्तर् इट्ट कुवळैअम् पोदॊडु
पॊऱिवरि वण्डिनम् पॊरुन्दिय किडक्कै
नॆऱि शॆल् वरुत्तत्तु नीर् अजर् ऍय्दि
अऱियादु अडि आङ्गु इडुदलुम् कूडुम्!
ऍरिनीर् अडैकरै इयक्कन् तन्निर्
पॊऱिमाण् अलवत्तम् ननवुम् पोऱ्ऱादु
ऊऴ् अडि ऒदुक् कत्तु उऱुनोय् काणिन
ताऴ्तरु तुन्बम् ताङ्गवुम् ऒण्णा
वयलुम् शोलैयुम् अल्लदु याङ्गणुम्
अयल्पडक् किडन्द नॆऱि आङ्गु इल्लै;
नॆऱि इरुङ् कुन्जि; नीर्वॆय् योळॊडु
कुऱि अऱिन्दु अवै अवै कुऱहादु ऒम्बु 64-97

५ मार्ग की प्रकृति

(कवुन्दि अडिहळ् कहती है:) हे कोवलन्, देखो! जाने के इस मार्ग में सर्वत्र हानिकारक बाधाएँ अनेक होंगी। सुनो! धूप का रंग (ताप) न सह सकनेवाली इस सुकुमारी को साथ लेकर अतिशय पुष्पपूर्ण शीतल बाग-बगीचों के रास्ते से जायें तो, धरती खोदकर कंद निकालने के लिए बने गड्ढे रहेंगे। पर उन्हें (चंपक ?) 'जण्बह' के तरुओं से गिरे पराग-भरे पुराने फूलों ने पाटकर गड्ढों को ढँक दिया होगा। और असावधान यात्रियों पर लाचार बनानेवाले सकट पड़ जाना संभव है। गिरे हुए फूलों के ढेरों से बचकर जो जायेंगे उनसे पके हुए मधुस्रावी कटहल के फल वैर करने से टकरा सकते हैं। हल्दी और अदरक के मिश्रित बगीचों (या आलवालों) में लाल कोयों से निकले दाने (कटहल के बीज) कंकड़ों के समान शत्रु बनकर चुभें, इसकी संभावना है। हे मीन-सी, तथा लम्बी आँखों वाली के प्रिय भर्ता! खेतों के बीच से जाने लगें तो वहाँ पुष्प-गन्धित तड़ागों में लड़ाकू कयल मत्स्यों को भगाकर "जलकुक्कर" जिन लंबी पीठ वाले "वाळै" मत्स्यों को पकड़ने जाते है वे (वाळै) उन खेतों में लपकेंगे जिनमे 'मलङ्गु' नाम की मछलियाँ इधर-उधर आड़ा-तिरछा झपटती रहेंगी। तो उसे देखकर इस तन्वी का घबड़ा जाना भी संभव है। वहाँ ईखों में रहनेवाले मधु-छत्तों के टूटने से भ्रमरों के घिरे जलाशयों के स्वच्छ जल में मधु गिरकर घुला रहेगा। वहाँ जाकर अदम्य पिपासा से (शिथिल) मन्द पड़े मन की बनकर यह उस जल को अपने अंजलिपुट में लेकर पीने लगे, यह भी संभाव्य ही है। निरानेवाले कृषकों द्वारा मेंड़ों पर फेंके गये "कुवळै" के सुन्दर फूल और चित्ती-धारी-दार भ्रमर दोनों जहाँ मिले रहते है, उन स्थलों पर मार्ग-गमन से उत्पन्न थकावट के मारे शिथिल होकर अनजाने तुम लोगों को डग भरना पड़े, यह भी संभाव्य ही है। उछलते हुए बहनेवाले जल के नाले के किनारे, मार्ग में जाते-जाते, चित्तियोंवाले केकड़ों तथा घोंघों पर ध्यान दिये विना अपने क्रम में पॉव धरकर जाने से उन्हें जो वेदना होगी वह हमारे लिए भी असह्य हो रहेगी। पर इन बागों और खेतों के मार्गो को छोड़ दे तो कहीं कोई और मार्ग ही नहीं है। हे घुँघुराले काले केशवाले! तुम अपनी प्रिया, इसको साथ लेकर उन स्थानों को पहचानकर उन (संकटों) से बचकर चलो। ६४-९७

6 तीङ्गिन्नर् पयणम्

तोम् अरु कडिजैयुम् शुवल्मेल् अरुवैयुम्

कावुन्दि ऐयैकैप् पीलियुङ् गॊण्डु
मॊऴिप् पॊरुळ् तॆय्वम् वऴित् तुणै आह ऎऩ्ऱप्
पऴिप्पु अरुम् शिऱप्पिऩ् वऴिप्पडर् पुरिन्दोर् 98-101

६ शुरु किया यात्रा को

ऐसा कहकर स्वामिनी कवुन्दि ने दोष-रहित भिक्षापात्र, कंधों पर लटकनेवाली झोली और हाथ मे मोर-पंख लेकर शुभ कामना की कि दिव्य मत्र मार्ग का सहायक हो। फिर अनिद्य चाल वाले उन सबों ने यात्रा आरंभ की। ९८-१०१

7 नाट्टिऩ् वळम्

करियवऩ् पुहैयिनुम् पुहैक्कॊडि तोऩ्ऱिनुम्
विरिकदिर् वॆळ्ळि तॆऩ्पुलम् पडरिनुम्
काल्पॊरु निवप्पिऩ् कडुङ्गुरल् एऱ्ऱॊडुम्
शूऩ्मुदिर् कॊण्मूप् पॆयल्वळम् शुरप्पक्
कुडमलैप् पिऱन्द कॊऴुम्बल् तारमॊडु
कडल्वळऩ् ऎदिरक् कयवाय् नॆरिक्कुम्
काविरिप् पुदुनीर् कडुवरल् वाय्त्तलै
ओ इऱन्दु ऒलिक्कुम् ऒलियै अल्लदु
आम्बियुम् किळारुम् वीङ्गिशै एत्तमुम्
ओङ्गु नीर्प्पिळावुम् ऒलित्तल् शॆल्लाक्
कळनिच् चॆन्नॆल् करुम्बुशूळ् मरुङ्गिर्
पळऩत् तामरैप् पैम्बूम् काऩत्तुक्
कम्बुट् कोऴियुम् कनैकुरल् नारैयुम्
शॆगङ्गाल् अऩ्ऩमुम् पैङ्गार् कॊक्कुम्;
काऩक् कोऴियुम् नीर्निऱक् काक्कैयुम्
उळ्ळुम् ऊरलुम् पुळ्ळुम् पुदावुम्
वॆल्पोर् वेन्दर् मुऩैयिडम् पोलप्
पल् वेरु कुळूउक्कुरल् परन्द ओदैयुम् 102-119

७ उस प्रदेश की संपन्नता

चाहे शनि जल उठे (वैरी वने), धूमकेतु प्रगट हो, विवृत किरणों वाला चंद्र चाहे दक्षिण दिशा मे चला जाय, किसी भी हालत में पवनाहत (कुड्हु)

पर्वत-शिखर पर कठोर नादयुक्त अशनि के साथ जल-गर्भित घटा समृद्ध रीति से वर्षा करती थी; इसलिए काविरि कुडगु पर्वत पर उत्पन्न अनेक समृद्ध पदार्थों को वहा लेकर बहती थी और समुद्रजनित मुल्यवान पदार्थों से टक्कर लेकर मुहाने पर के समुद्र को तंग करती थी। तेज धारा की उस काविरि का नया प्रवाह बाँध के कपाट से टकराता था और शोर उठता था। उस बड़े शोर के विना "आम्बि", "किऴार्", अधिक (गाने का) नाद युक्त, 'एर्ऱम्'* और अधिक जल भर लेनेवाला "पिऴा" (बेंडी, ढेकुली, रहँट जैसे सिंचाई के लिए पानी निकालने के यंत्र) इत्यादि का नाद सुनाई नही देता था। (नदी-सिंचित प्रदेश में इनकी आवश्यकता नही है।) वैसे प्रदेश में लाल धान (चावल के), ईख आदि के खेत थे। वहाँ जलाशयो पर हरे-भरे कमलों का वन-सा था। उस (कमल-) वन में "कम्बङ् गोऴि" (जल-मुर्गे ?) मुखर कंठ के सारस, लाल पैरोंवाले हंस, हरे पैरोवाले बगुले, "कान्नाङ्गोऴि" (वन-मुर्गे ?), जल-कौए, "उऴ्ऴान्", "ऊरल्", "पुऴ्", "पुदा" (आदि पक्षी) सब मिलकर ऐसा संयुक्त नाद उठा रहे थे मानो वह स्थान विजयाकांक्षी दो राजाओं के अपने सेना-बल के साथ युद्ध करने का स्थल हो। वह घोर रव सुनते हुए वे गये। १०२-११६

8 उऴवरिन्न उयर्वु

उऴाअ नुण्तोऴि युऴ्पुक्कु अऴुन्दिय
कऴाअ मयिर् याक्कैच् चेङ्गण् कारान्
शोरिपुर्ऱम् उरिञ्जप् पुरिञेहिऴ्बु उर्ऱ
कुमरिक् कूट्टिर् कोऴुम्बल् उणवु
कवरिच् चेन्नेल् काय्त्तलैच् चोरियक्
करुङ्गै विनैञरुम् कऴमरुम् कूडि
ओरुङ्गु निन्नरु आर्क्कुम् ओलिये अन्ररियुम्
कडिमलर् कऴेन्दु मुडिनारु अऴुत्तित्
तोडिवऴैत् तोऴुम् आहमुम् तोय्न्दु
शेरु आडु कोलमोडु वीरुपेर्ऱत् तोन्रिच्
चेङ्गयल् नेडुङ्गण् शिन्नमोऴिक् कडेशियर्

* एर्ऱम् या एत्तम् : ऊँचे पेड़ या खभे पर आड़े एक बल्ला रखा जाता है। बल्ले से एक ओर पानी भरने की टोकरी लटकती रहती है। बल्ले के ऊपर एक [illegible]मी रहता है। वह दोनों ओर आता-जाता रहता है। दूसरा टोकरी को कुएं [illegible]ता है, फिर ऊपर लेकर पानी उलीचता है। ब [illegible] हैं।

वॆड्गळ् तॊलैच्चिय विरुनूदित्र पाणियुम्;
कॊळ्ङ्गॊडि अरुहैयुम् कुवळैयुम् कलन्दु
विळङ्गु कदिर्त्त तॊडुत्त विरियल् शूट्टिप्
पार् उडैप्पत्तर् पोल् पळिच्चित्तर् कै तॊळ
एरॊडु नित्रोर् एर्मङ्गलमुम्
अरिनूदु काल् कुवित्तोर् अरिकडा वुरुत्त
पॆरुनूजयन् नॆल्लिन्न मुहवैप् पाट्टुम्;
तॆण्किणैप् पॊरुनर् शॆरुक्कुडन्न ऒडुत्त
मणकणै मुळविन् महिळ् इशै ओदैयुम् 120–139

८ कृषकों की उन्नत स्थिति

(मिट्टी की उर्वरता के कारण) विना हल चलाये ही बनी (खेत की) नरम दलदल में पैठकर उठी, अनघुले रोमावृत शरीर तथा लाल आँखों वाली भैसे पुआलों के वने अक्षय धान्य-भण्डार से अपने खुजलाते पाश्वों को रगड़तीं। उससे कसनेवाली रस्सी कट जाती और अन्दर से विविध खाद्य-धान्य बड़े परिमाण में धान (चावल) की चामर-सी वालियों पर गिरते है। (वैसे खेतो के स्थानों में) सबल-हस्त मज़दूर और कृषक-मालिक मिलकर एक स्थान पर खड़े होकर बोलते है। वह आवाज (सुनाई देती है) और खेतों से सुगंधित (जल-) पुष्प निराकर फेकने के बाद उस खेत में मुट्ठों को खोलकर छोटे बेढ़ो को (धान के पौधों को) कडैशियर् (खेत में काम करनेवाली मरुदम प्रदेशवासिनियाँ) रोपती हैं। उनके चूड़ियों वाले हाथो, कंधों और देहों पर कीचड़ लगी है। उसी वेश में वे गर्वोन्नत लगती है। वे आयत मीनाक्षी कृषक नारियाँ, जो अल्प (निकृष्ट-) भाषिणियाँ है, मादक ताड़ी पी चुकी होती है और उसके आवेश में अपस्वर में गाती हैं। वह स्वर (सुनाई देता है) और; पुष्ट दूर्वा-लताओं व "कुवळै" फूलों को चटकीली धान की वालियो के साथ गूँथकर बनी मालाओं को हल में डालकर भूमि को चीरते से, प्रशंसकों के नमस्कार करते, हल चलानेवाले "हल-मंगल-गीत" गाते है। वह स्वर; और धान काटकर एक ओर मुट्ठे डाले पड़े है। उस ढेर पर मँड़ाई के लिए पाठों को चलाकर धान निकाला गया है। फिर उस बड़े ढेर के धान को गाते हुए मापते है। वह माप-गीत-स्वर और; भीने शब्द वाली "तडारी" (ढोल) बजानेवाले गर्व के साथ स्याही लगे ढोल को लेकर वजा रहे हैं। वह स्वर —(इन सब आवाजों को सुनते हुए वे चले।) १२०-१३९

9 नडनूदन्नर् ! नडनूदन्नर्

पेर् याऱ्ऱ अडॆकरै नीरिऱ् केट्टु आङ्गु
आर्व नॆञ्जमोडु अवलम् कोळ्ळार्
उळॆप्पुलिक् कॊडित्तेर् उरवोन् कॊऱ्ऱमोडु
मळॆक्करु उयिर्क्कुम् अळल् तिहळ् अट्टिल्
मऱैयोर् आक्किय आवुदि नऱुम्पुहै
इऱैयुयर् माडम् ऍङ्गणुम् पोर्त्तु
मञ्जु शूळ् मलैयिन् माणत् तोन्ऱुम्
मङ्गल मऱैयोर् इरुक्कै अन्ऱियुम्
परप्पुनीर्क् काविरिप् पावैतन् पुदल्वर्
इरप्पोर् शुऱ्ऱमुम् पुरप्पोर् कॊऱ्ऱमुम्
उळविडै विळैप्पोर् पळविऱल् ऊर्हळुम्
पॊङ्गळि आलैप् पुहैयॊडुम् परन्दु
मङ्गुल् वानत्तु मलैयिन् तोन्ऱुम्
ऊर् इडैयिट्ट नाडुडन् कण्डु
कावदम् अल्लदु कडवार् आहिप्
पन्नाळ् तङ्गिच् चॆल्नाळ् ऒरुनाळ् 140–155

९ चले चले, चलते चले

बड़ी नदी के किनारे पर जाते हुए वे क्रम से ध्वनियाँ सुनकर उत्साह पा रहे थे। अतः उन्हें कष्ट महसूस नहीं होता था। व्याघ्र-केतु से युक्त रहते रथ के स्वामी बलवान "शोळन्" की विजय और बादल को अनुप्राणित करनेवाली अग्नि से शोभित यज्ञशालाओं में ब्राह्मण लोग आहुति दे रहे थे। उससे जो धुआँ निकलता था, वह ऊँचे छप्पर वाले मकानो को आवृत करता था। वे मकान मेघाच्छादित पर्वतों के समान दिखते थे। ऐसे शानदार शुभ ब्राह्मणों के आवास, और; विस्तृत जल-तल वाली काविरि के, कृषक लोग संतान थे। वे याचकों के परिवारो और राजा की विजय को अपने कृषक-कर्म द्वारा पालनेवाले होते थे। उनके प्राचीन तथा प्रथित ग्राम; और वे ग्राम जहाँ विना ओसाये पड़े रहे धान के ढेर, इक्षु-यंत्र से निकलनेवाले धुएँ के मध्य मेघाच्छादित पर्वत के समान दिख रहे थे। —इन (दो प्रकारों के) ग्रामों को देखते हुए वे चले। एक दिन में वे एक ही 'कावदम्' (कोस) दूर चल सकते थे। अतः वे अनेक दिन चलते रहे। एक दिन : १४०-१५५

10 तरुम शारणर् तोन्ऱल्

आऱ्ऱु वी अरङ्गत्तु वीऱ्ऱु वीऱ्ऱु आहिक्
कुरङ्गु अमै उडुत्त मरम्पयिल् अडुक्कत्तु
वानवर् उऱैयुम् पूनाऱु ओरु शिऱैप्
पट्टिनप् पाक्कम् विट्टनर् नीङ्गाप्
पॆरुम्पॆयर् ऐयर् ओरुङ्गुडन् इट्ट
इलङ्गु ओळिच् चिलादलम् मेल्इरुन् दरुळिप्
पॆरुमहन् अदिशयम् पिऱळा वाय्मैत्
तरुमम् शाऱ्ऱुम् शारणर् तोन्ऱप् 156–163

१० धर्म-चारण का प्रगट होना

नदी को छिपाये रहे श्रीरंगम क्षेत्र में अन्यत्र अप्राप्य प्रकार का एक बाग़ था जो कुटिल बाँस के काँटेदार वृक्षो के बने बेड़े के अन्दर था; और जिसमे घने रूप से तरु भरे थे। उसमें एक ओर देव-वास योग्य तथा पुष्पकलित भाग था। वहाँ "पट्टिनप् पाक्कम्" (पुहार) में श्रावकों के समूह द्वारा स्थापित उज्ज्वल शिलातल पर रहकर जो अर्हत देव द्वारा प्रशस्त तीन (सहजातिशय, कर्मक्षयातिशय, दैवीकातिशय) अतिशयों से अवियुक्त सत्य-तत्त्व-पूर्ण धर्म की व्याख्या करते थे वे धर्मचारण (आकर प्रगट हुए।) आ पहुँचे। (एक आये या अनेक ? संदिग्ध है। पर उपदेश देनेवाले एक ही रहे।) १५६-१६३

11 विळुमम् कॊळ्ळान्

पण्डैत् तॊल्विनै पाऱुह ऎन्ऱे
कण्डऱि कवुन्दियॊडु कालुऱ वीळ्न्दोर्
वन्द कारणम् वयङ्गिय कॊळ्हैच्
चिन्दै विळक्किन् तॆरित्तोन् आयिनुम्
आर्वमुञ् जॆऱ्ऱमुम् अहल नीक्किय
वीरन् आहलिन् विळुमम् कॊळ्ळान् 164–169

११ दुखी नहीं हुए

(उनको देखकर) "प्राचीन सचित कर्म मिट जायँ !" इस विचार से धर्म-दर्शिनी कवुन्दि और कोवलन् तथा कण्णहि उनके पैरो पडे। वे चारण, चूँकि वे प्रकाशमय ध्येयो के अनुसार आचरण करने से काम-राग-विवर्जित चित्तवाले रहे, अतः इनके आने का कारण जानते थे, तो भी अनावश्यक रूप से दुखी नही हुए। १६४-१६९

12 अरुहदेवन्निन् अरुम् पुहळ्

कळि पॅरुञ् जिरप्पिन् कवुन्दि ! काणाय्
ऑळिहॅन्न ऑळियादु ऊट्टुम् वलविन्नै
इट्ट वित्तिन् ऍदिर्न्दु वन्दु ऍय्दि
ऑट्टुङ् गालै ऑळिक्कवुम् ऑण्णा;
कडुङ्गाल् नॅडुम्वॅळि इडुम्शुडर् ऍन्न
ऑरुङ्गुडन् निल्ला उडम्बिडै उयिर्हळ्
अरिवन् अरवोन् अरिवु वरम्बु इहन्दोन्
शॅरिवन् शिनेन्दिरन् शित्तन् पहवन्
तरुम मुदल्वन् तलैवन् तरुमन्
पॊरुळन् पुनिदन् पुराणन् पुलवन्
शिनवरन् तेवन् शिवकदि नायकन्
परमन् कुणवदन् परत्तिल् ऑळियोन्
तत्तुवन् शादुवन् शारणन् कारणन्
शित्तन् पॅरियवन् शॅम्मल् तिहळ् ऑळि
इरैवन् कुरवन् इयल् गुणन् ऍङ्गोन्
कुरैविल् पुहळोन् कुणप्पॅरुङ् गोमान्
शङ्गरन् ईशन् शुयम्बु शदुमुहन्
अङ्गम् पयन्दोन् अरुहन् अरुणमुनि
पण्णवन् ऍण्गुणन् पात्तिल् पळम् पॊरुळ्
विण्णवन् वेदमुदल्वन् विळङ्गु ऑळि
ओदिय वेदत्तु ऑळि उरिन् अल्लदु
पोदार् पुरविप् पॊदि अरैयोर् ऍन्नच्- 170-191

१२ अर्ह देव की अद्वितीय महिमा

(चारण ने उपदेश किया कि) अतिशय गुणवती क़वुन्दि ! देखो। मिटाना चाहने पर भी यह बलवान् कर्म नही मिटता और फल को भुगताता है। बोये हुए बीज के समान प्रतिक्रिया के रूप में जब वे (फल-सुख-दुख) आकर मिलते है उनको कोई बचा नही सकते ! तब प्रचंड हवा में खुले बड़े मैदान में रखे दीप के समान इन शरीरों में प्राण जुडे नही रहेगे ! हमारे भगवान ज्ञानी है; धर्मिष्ठ, ज्ञान-पारंगत, सर्वभूतहितकारी, जिनेंद्र*, सिद्ध,

* जिनेंद्र—आठ प्रकारों के कर्म-निवारक : ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वन्दनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय सम्बन्धी।

भगवान (त्रिकालज्ञ), धर्ममूल, देवनाथ, धर्मपति, तत्त्वरूपी, सुनीत, पुरातन, विद्वान, क्रोध-विजेता आदिदेव, शिवगतिदाता (मुक्तिदाता), परमपुरुष, गुणवंत, परलोकप्रकाशक, तत्त्ववादी, संयमी, व्योमचारी, आदिकारणभूत, अष्ट-सिद्धि के स्वामी, सर्वोच्च, प्रकाशरूप, सर्वान्तर्यामी, गुरु, स्वयंभूत गुणी, हमारे प्रभु, अक्षययशस्वी, सर्वगुणसंपन्न नाथ, शंकर, ऐश्वर्यवान, स्वयंभू, चतुर्मुख, अगागम-उपदेशक अर्हं (स्तुत्य) दयावान मुनि, सृष्टिकर्ता, अष्टगुणी*, अविभाज्य आदि तत्त्व, स्वर्गवासी, आगमों का आदिनायक, अज्ञाननाशक और ज्ञानदीपक है। उन्होने जो ज्ञान-दीप दिया है, उसके प्रकाश में जो जाते हैं उनको छोड़कर अन्य जन्म-मरण के अँधेरे वन्द कमरे में कैद रहनेवाले बाहर नही आ पायेगे। १७०-१९१

13 कवुन्दियडिहळिन्न उऱ्ऱदि

शारणर् वाय्मॊऴि केट्टुत् तवमुदल्
कावुन्दियुन्दन्न कैतलै मेऱ्कॊण्डु
ऒरु मून्ऱु अवित्तोन्न ओदिय ञानत्
तिरु मॊऴिक्कु अल्लदु ॲन्न शॆवियहम् तिऱवा
कामनै वॆन्ऱोन्न आयिरत्तु ॲट्टु
नामम् अल्लवु नविलादु ॲन्न ना;
ऐवरै वॆन्ऱोन्न अडियिण अल्लवु
कैवरैक् काणिनुम् काणा ॲन्नकण्
अरुळऱम् पूण्डोन्न तिरुमॆय्क्कु अल्लदु ॲन्न
पॊरुळ् इल् याक्कै पूमियिऱ् पॊरुन्दादु
अरुहन्न अऱवन्न अऱिवोऱ्कु अल्लवु ॲन्न
इरुकैयुम् कूडि ऒरुवऴिक् कुविया
मलर्मिशै नडन्दोन्न मलरडि अल्लवु ॲन्न
तलैमिशै उच्चितान् अणिप् पॊऱाअवु
इऱुदियिल् इन्नबत्तु इऱैमॊऴिक्कु अल्लदु
मऱुत्तर ऒदि ॲन्न मनम् पुडै पॆयरादु;
ॲन्ऱवन्न इशैमॊऴि एत्तक् केट्टु अदऱ्कु
ऒन्ऱिय मादवर् उयर् मिशै ओङ्गि

* अर्हंत संप्रदाय में गिने गये आठ गुण : अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख, अनन्त नाम, निष्फलता, निरावुष्यता, सद्भावना।

निवन्दु आङ्गु ऑरु मुळम् नीळ्निलम् नीङ्गिप्
पवन्दरु पाशम् कवुन्दि कॅडुह ऍन्ऱु
अन्दरम् आऱाप् पडर्वोर्त् तॉळुदु
वन्दम् अरुह ऍन्नप् पणिन्दनर् पोन्दु 192–213

१३ कवुन्दि अडिहळ् की प्रतिज्ञा

चारण के मुख से ये वचन सुनकर तपस्वरूपिणी कवुन्दि ने अपने हाथों को सिर पर रखकर प्रतिज्ञा की : (काम-क्रोध-मोह रूपी) इन तीनों के संहारक जिनदेव के द्वारा प्रवर्तित ज्ञान के श्रीवचनों के सिवा और कोई बात सुनने के लिए मेरे कान नही खुलेंगे, कामहंता (अर्हत देव) के एक सहस्र आठ नामों को छोड़कर मेरी जिह्वा और किसी का उच्चारण नही करेगी। पाँचों (इन्द्रियों) के निग्रही के चरणों के सिवा अन्य देवो को चाहे वे मेरे हाथ लगे ही क्यों न हों, मेरी आँखे नही देखेगी। दया-धर्म-व्रती के रूप के सिवा किसी के सामने मेरा यह निरर्थक शरीर भूमि पर नही पड़ेगा (दण्डवत नही करूँगी)। अर्हत-धर्मज्ञ को जो जानते है उनको छोड़कर अन्य किसी के सामने मेरे दोनों हाथ नही जुड़ेंगे। (हृदय-) कमल पर रहनेवाले के कमल-चरणों को छोड़कर मेरा सिर किसी को धारण नही करेगा। अनन्त सुखदायक प्रभु के गुणकथन के सिवा मेरा मन मार्ग बदलकर और किसी नाम का जप नहीं करेगा। कवुन्दि का गाया यह अर्हत देव का गुणगान सुनकर उससे सहमत हुए चारण उठे और उस शिलातल से एक हाथ ऊपर निरालंब स्थित होकर उन्होंने आशीर्वाद दिया कि कवुन्दि का भवपाश कट जाय! फिर वे आकाश-मार्ग से जाने लग गये। कवुन्दि आदि ने 'बन्धन कटे'—कहते हुए उनकी वन्दना की। पश्चात् वे अपने मार्ग में चलने लगे। १९२-२१३

14 वम्बरिन् ती मॉळि

कारणि पूम्बॉळिऱ् काविरिप् पेर्याऱ्ऱु
नीरणि माडत्तु नॅडुन्दुरै पोहि
मादरुम् कणवत्तुम् मातवत्तु आट्टियुम्
तीदुतीर् नियमत् तॅन्करै ऍय्दिप्
पोदुशूळ् किडक्कै ओर् पूम्बॉळिल् इरुन्दुळि
वम्बप् परत्तै वरुमॉळि याळनॉडु
कॉङ्गु अलर् पूम्बॉळिल् कुऱुहिनर् शॅन्ऱोर्
कामनुम् देवियुम् पोलुम् ईङ्गु इवर्
आर् ऍन्ऱु केट्टु ईङ्गु अऱिहुवम् ऍन्ऱे

नोऱ्ऱु उणल् याक्कै नोंशितवत्तीर् उडऩ्
आऱ्ऱु वऴिप् पट्टोर् आर् ॲऩ विऩव—ॲऩ्ऩ
मक्कळ् काणीर् माऩिड याक्कैयर्;
पक्कम् नीङ्गुमिऩ् परिपुलम् विऩर् ॲऩ
उडऩ् वयिऱ् ऱोर्हळ् ऑरुङ्गुडऩ् वाऴ्क्कै
कडवदुम् उण्डो ! कऱ्ऱऱिन्दीर् ! ॲनत् 214-228

१४ लंपट का दुष्ट-वचन

मेघमंडित, पुष्पोद्यानो के वीच से वहनेवाली वड़ी काविरि नदी के वड़े घाट को उन्होंने सलिल-लीला-नौका पर वैठकर पार किया। देवी कण्णहि, उसका पति और महान तपस्विनी तीनो निर्दोष (पवित्र) मन्दिर वाले नदी के दक्षिणी किनारे पर पुष्पों से शोभित एक छवियुक्त उद्यान मे जाकर रहे। तब एक नयी (हाल में रडी वनी) वारागना और एक वकवादी लम्पट सुगधपूर्ण उस उद्यान की तरफ आये। लम्पट ने मन में सोचा (या रंडी से कहा :) काम और काम-वधू के समान दिखनेवाले ये कौन होगे ? पूछकर जान ले। (कवुन्दी देवी से उसने पूछा कि) व्रत के पालन में अनशन करने से कृश बनी देहवाली तपस्विनी ! आपके साथ इस मार्ग में आये ये कौन है ? पूछने पर (कवुन्दि ने कहा :) ये मेरी संताने है। समझ लो ! ये मानव-शरीरी है, देव नही। पास से हट जाओ। वे वहुत थककर म्लान है। तव लंपट ने कहा, (और दोनो हँसे) कि सहोदर लोग दंपति वनकर जीवन विताये —यह ठीक है क्या ? आप तो शास्त्र-ग्रथो की ज्ञानवती है। २१४-२२८

15 शावमुम् शावविडैयुम्

तीमॊऴि केट्टुच् चॆवियहम् पुदैत्तुक्
कादलऩ् मुऩ्ऩर्क् कण्णहि नडुङ्ग
ऎळ्ळुऩर् पोलुम् इवर् ॲऩ् पूङ्गोदैयै;
मुळ्ळुडैक् काट्टिन् मुदुनरि आह ॲऩ्ऩक्
कवुन्दि इट्टदु तवन्दरु शावम्;
कट्टियदु आहलिऩ् पट्टदै अऱियार्;
कुऱु नरि नॆडुङ् कूविळि केट्टु
नऱु मलर्क् कोदैयुम् नम्बियुम् नडुङ्गि
नॆऱियिऩ् नीङ्गियोर् नीर् अल कूऱिनुम्
अऱियामै ॲऩ्ऱु अऱियल् वेण्डुम्;
शॆय्तवत्तीर् नुम् तिरुमुऩ् पिऴैत्तोर्क्कु

उय्दिक् कालम् उरैयी रो अन्न-
अरियामैयिन् इन्नुरु इळिपिऱप्पु उऱ्ऱोर्
उऱैयूर् नोच्चि ओरु पुडै ओदुङ्गिप्
पन्निरु मदियम् पडर्नोय् उळन्द पिन्
मुन्नै उरुवम् पेरुह, ईङ्गु इवर् अन्नच्
चाबविडै शेय्दु तवम् पेरुम् शिऱप्पिन्
कावुन्दि ऐयैयुम् देवियुम् कणवन्नुम्
मुऱञ् जेवि वारणम् मुन्नशमम् मुरुक्किय
पुऱञ् जिऱै वारणम् पुक्कनर् पुरिन्दु अन्न 229-248

१५ शाप और शाप-मोचन (कथन)

यह जलाते-से कुत्सित वचन सुनकर कण्णहि ने अपने दोनों कानों पर हाथ रख लिये। अपने पति के सामने वह घबडाने लगी। तब कवुन्दि ने यह देखकर कि मेरी पुष्प-माला-सी पुत्नी की ये निन्दा करते है, (मौन रूप से) शाप दिया कि कंटकाकीर्ण जंगल में ये बूढ़े सियार बने। यह तपोशक्ति के बल पर दिया गया शाप था। वे इससे बद्ध हो गये और कण्णहि और कोवलन् शाप की बात नहीं जान सके। पर जब सियारों की चीख सुनी तो सुगंधित माला-सी कण्णहि और उसका मान्य पति दोनों घबड़ा उठे। कहा "ये सन्मार्गच्युत है। अनुचित बात करें तो भी अज्ञान समझना चाहिए। हे तपस्विनी! आपके सामने अपराधी बने इन पर दया करें और शाप-मुक्ति की अवधि वताइये! नही बतायेगी क्या? कवुन्दि अडिहळ् ने (दपति की गुणप्रकाशक बातों से तृप्त होकर) कहा: अज्ञान के कारण ये नीच लोग जो आज नीच जन्म पा चुके है उऱैयूर की प्राचीर के पास के रक्षावन में एक ओर बारह मास दुख सहते रहने के बाद अपने पूर्व शरीर को प्राप्त कर लेगे। ऐसा शाप-मुक्ति देकर तप की महिमा से युक्त कवुन्दि अडिहळ् और दंपति कोऴि (मुर्गी) कहलानेवाले उऱैयूर मे संतोष के साथ पहुँचे। उऱैयूर 'कोऴि' इसलिए कहा गया कि वहाँ एक मुर्गे ने शूर्प-कर्ण हाथी को लड़ाई में जीता था। तभी से "पार्श्वपंखी" मुर्गे का नाम पड़ा। २२९-२४८

16 पुहार् मुऱ्ऱुम्

मुडियुडै वेन्दर् मूव रुळ्ळुम्
तोडि विळङ्गु तडक्कैच् चोळर्कुलत्तु उदित्तोर्
अऱ्ऱुम् मऱ्ऱुम् आऱ्ऱलुम् अवर्तम्
पळविऱल् मूदूर्प् पण्बुमेम् पडुदलुम्

विऴवुमलिच् चिऱप्पुम् विण्णवर् वरवुम्
ऒंडिया इन्बत्तु अवर् उऱै नाट्टुक्
कुडियुम् कूऴिन् पॆरुक्कमुम् अवर्तम्
दॆय्वक् काविरित् तीदुशोर् शिऱप्पुम्
पॊय्या वानम् पुदुप्पुनल् पॊऴिदलुम्
अरङ्गुम् आडलुम् तूक्कुम् वरियुम्
परन्दु इशै ऎय्दिय पाऱदि– विरुत्तियुम्
तिणै निलै वरियुम् इणैनिलै वरियुम्
अणैवुऱक् किडन्द याऴिन् तॊहुदियुम्
ईर्एऴ् शकोडमुम् इडैनिलैप् पालैयुम्
तारत्तु आक्कमुम् तान् तॆरि पण्णुम्
ऊर् अहवत्तु एरुम् ऒंऴियिडैप् पाणियुम्
ऎन्ऱु इवै अनैत्तुम् पिऱपॊरुळ् वैप्पोडु
ऒन्ऱित् तोन्ऱुम् तनिक् कोळ् निलैमैयुम्
ऒरु परिशा नोक्किक् किडन्द
पुहार्क् काण्डम् मुऱ्ऱिऱ्ऱु 1–20

१६ पुहार् काण्ड समाप्त होता है

(संक्षेप कथन—निम्नलिखित विषय इस काण्ड में आये हैं :)

किरीटधारी (शोऴ, पांडिय और शेर—इन) तीनों राजाओं में वीरकंकण से भूषित विशाल हाथों के, शोऴ राजा के कुल मे उद्भूत राजाओं का धर्माचरण, वीरता, शक्ति और उनके पुरातन काल से प्रकीर्तित नगर के सांस्कृतिक उत्कर्ष; उत्सवों की वहुलता का गौरव, उनमें व्योमवासियों का आगमन; अटूट सुख के साथ उनके राज्य के वासियों और फसल की समृद्धता, उनकी दिव्य काविरि नदी की पवित्र वड़ाई, अचूक रीति से मेघों का वरसना, रंग-मच, नाच, तूक्कु, वरि (ताल और गान) सर्वत्र यश-प्राप्त भारती वृत्ति (ग्यारह प्रकार के दैवी नृत्य) तिणै निलै वरि (प्रदेश-विशेष से युक्त गीत, इणै निलै वरि (प्रेम-सम्वन्धी गीत) परिरंभ में रही याऴ् के अंशों का समूह-वर्णन, चौदह तंत्रीवाली शकोट याऴ्, शॆम्पालै आदि राग, तंत्रियों का वजाना, मरुदम-राग, देहातो का सौंदर्य, और कृषक-स्त्रियो के मदहोश अवस्था का गीत इत्यादि सभी विषय, और अन्य विषयों के चित्रण के साथ जिसमें अच्छी तथा युक्त रीति से वर्णित है, वह "पुहार्क् काण्डम्" समाप्त हो गया। १-२०

17 वेण्बा

काले अरुमृचि मलरुङ् फदिरवनुम्
माले मवियमुम् पोल् वाळियरो—वेले
अहळाल् अमेनूद अवत्तिफ्कु मालेप्
पुहळाल् अमैनूद पुहार्

१७ वेणवा (छन्द)

सवेरे उदित होकर किरणें फैलाते चलनेवाले सूर्य और शाम को उदित होनेवाले चद्र के समान जिये— समुद्र की ही खाई से रक्षित भूमि की माला के रूप में प्रशंसित पुहार् नगर !



इरण्डावदु

मदुरैक् काण्डम्

11 काडु काण् कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 इळ मरक् कानत्तु इरुक्कै

तिङ्गळ्मून्ऱु अडुक्किय तिरुमुक् कुडैक्कीळ्च्
चॆङ्गदिर् ञायिऱ्ऱु तिहऴोळि शिऱन्दु
कोदैताऴ् पिण्डिक् कॊऴु निऴल् इरुन्द
आदियिल् तोऱ्ऱत्तु अऱिवनै वणङ्गिक्
कन्दन् पळ्ळिक् कडवुळर्क्कु ऎल्लाम्
अन्दिल् अरङ्गत्तु अहन् पॊऴिल् अहवयिन्
शारणर् कूऱिय तहैशाल् नन्मॊऴि
मादवत्तु आट्टियुम् माण्बुऱ मॊऴिन्दु आङ्गु
अन्ऱु अवर् उरैविडत्तु अल्हित्तर् अडङ्गित्
तॆन्तिशै मरुङ्गिऱ् चॆलवु विरुप्पुऱ्ऱु
वैहऱै यामत्तु वारणम् कऴिन्दु
वॆय्यवन् गुणदिशै विळङ्गित् तोन्ऱ
वळनीर्प् पण्णैयुम् वावियुम् पॊलिन्ददोर्
इळमरक् कानत्तु इरुक्कै पुक्कुऴि 1–14

दूसरा भाग

मदुरै काण्ड

११ अरण्यदर्शन-गाथा

१ अभिनव तरुवन में ठहरे

एक साथ तीन चंद्र चुने गये हों वैसे लगनेवाले (चंद्रादित्य, नित्य-विनोद और सकल-पाशन कथित) छत्र-त्रय के नीचे लाल किरणों वाले सूर्य के समान तेजोमय अर्हं को तीनों ने जाकर नमस्कार किया। वे (उऱैयूर के) अर्हंदेव (उनका मन्दिर) पुष्प-स्तबकों से मंडित अशोक तरु की शीतल घनी

छाया में थे। उन अनादिभूत ज्ञानदेव अर्ह को नमस्कार करके महती तपस्विनी ने निकंद आश्रमवासी तपस्वियो को, नदी-मध्य रहे श्रीरंगम क्षेत्र के विशाल उद्यान में रहकर चारण द्वारा उपदिष्ट हितकारी सुभाषितों को प्रभावी रीति से सुनाया। उस दिन वे तीनों उन्ही के आश्रम में रहे। दूसरे दिन वे दक्षिण दिशा में जाने की इच्छा करके प्रातःकालीन (रात के पिछले) पहर में ही उरैयूर को छोड़ चले। जब पूर्व दिशा में गरम किरणमाली, ज्योतिर्मय बनकर उदित हुआ, तब वे सुसिंचित खेतों और सरोवरों के साथ रहे प्रदेश में जाते हुए एक अभिनव-तरु-वन में जाकर ठहरे। (वहाँ पहले ही एक वृद्ध ब्राह्मण आया हुआ था।) १-१४

2 तॆन्नवन् वाऴ्ह !

वाऴ्ह ऍम्को मन्नवर् परुन्दहै
ऊऴितॊऱु ऊऴितॊऱु उलहङ् गाक्क !
अडियिल् तन् अळवु अरशर्क्कु उणर्त्ति
वडिवेल् ऍऱिन्द वान्पहै पॊऱादु
पःऱुळि यारुडन् पन्मलै अडुक्कत्तुक्
कुमरिक् कोडुम् कॊडुङ्गडल् कॊळ्ळ
वडदिशैक् कङ्गैयुम् इमयमुम् कॊण्डु
तॆन्दिशै आण्ड तॆन्नवन् वाऴि
तिङ्गट् चॆल्वन् तिरुक्कुलम् विळङ्गच्
चॆङ्गण् आयिरत्तोन् तिऱल् विळङ्गु आरम्
पॊङ्गॊळि मार्बिल् पूण्डोन् वाऴि !
मुडिवळै उडैत्तोन् मुदल्वन् शॆन्नि ऍन्ऱु
इडियुडैप् पॆरुमऴै ऍय्दादु एहप्
पिऴैया विळैयुळ् पॆरुवळञ् जुरप्प
मऴैपिणित्तु आण्ड मन्नवन् वाऴ्ह ऍन्ऱु
तोदुतीर् शिऱप्पिन् तॆन्ननै वाऴ्त्ति
मामुदु मऱैयोन् वन्दिरुन् दोनै
यादु नुम् ऊर् ? ईङ्गु ऍन् वरवु ? ऍनक्
कोवलन् केट्पक् कुन्ऱाच् चिऱप्पिन्
मामऱै याळन् वरु पॊरुळ् उरैप्पोन् 15-34

१ दक्षिणपति जीता रहे

(उस ब्राह्मण ने मंगलाशासन में कहा :) जयजीव ! हमारे राजा जीते

रहें। राज-श्रेष्ठ युग-युग लोकपरिपालन करते रहें। अपने चरणों (के कड़े के शब्द) द्वारा ही उन्होंने अपनी शक्ति का माप अन्य राजाओं को वतलाया था। उन्होने एक वार समुद्र पर भी अपना भाला फेका था। उससे दर्शित वड़ी शत्रुता को अक्षम्य मानकर "पह्रुळि" नाम की नदी और अनेक श्रेणियों के साथ रहे "कुमरि" पर्वत* को भी समुद्र लील गया। (राज्य का विस्तार कम हो गया) अत: राजा ने उत्तर दिशा में गंगा के तट को और हिमालय प्रदेश को मिला लेकर दक्षिण का राज्य चलाया। वैसे शासक को जयजीव! 'चंद्रदेव' के कुल के अपने श्रीवंश की महिमा वढ़ाते हुए उन्होंने तेजोमय सहस्राक्ष के पराक्रम-प्रकाशक हार को खिलती ज्योति वाले अपने वक्ष में पहन लिया था। वह जीते रहे। (विजली-सहित मेघों ने देखा कि) हमारे राजा (इन्द्र) के शिरोवलय को इसने तोड़ दिया है। अत: क्रुद्ध होकर सविद्युत् मेघ उसके देश से विना वरसे हट गये। तव उन्होंने, अविरल रीति से उत्पादन-समृद्धि देने को मजवूर करते हुए मेघो को कारा में डाल दिया। वैसे हमारे शासक जीते रहें। इस भाँति दोप-रहित कीर्तिमान दक्षिण-पति का यश गाते हुए वहाँ आकर रहनेवाले वृद्ध व्राह्मण को देखकर कोवलन् ने प्रश्न किया कि आपका ग्राम क्या है? यहाँ आगमन क्यों हुआ है? ऐसा कोवलन के पूछने पर क्षयहीन महिमा से युक्त श्री वेदो के ज्ञाता, उस व्राह्मण ने अपने आने का कारण यों वताया। १५-३४

3 मऱ्ऱैयोत्तिऩ् आशै

नील मेहम् नॆडुम् पॊऱ् कुऩ्ऱत्तुप्
पाल् विरित्तु अहलादु पडिऩ्दद्दु पोल
आयिरम् विरित्तु ऎऴु तलै उडै अरुऩ्दिऱल्
पायल् पळ्ळिप् पलर्तॊऴुदु एत्त
विरितिरैक् काविरि वियऩ्पॆरुन् दुरुत्तित्
तिरुवमर् मार्बऩ् किडन्द वण्णमुम्
वीङ्गु नीर् अरुवि वेङ्गडम् ऎऩ्ऩुम्
ओङ्गुयर् मलैयत्तु उच्चि मीमिशै
विरिकदिर् ञायिरुम् तिङ्गळुम् विळङ्गि
इरुमरुङ्गु ओङ्गिय इडैनिलैत् तानत्तु

* कहा जाता है कि जो भाग समुद्र में डूव गये, उसमे प:ऱुळि नामक नदी, कई श्रेणियों का वना कुमरि पर्वत और वड़ा भू-भाग था। अव कुमारी दक्षिणी छोर में रहनेवाले भू-भाग को कहा जाता है। वह कुमरि मुनै (रास कुमारी) है।

मिन्नुक् कोडि युडुत्तु विळङ्गु विऱ्पूण्डु
नन्निऱ मेहम् निन्ऱदु पोलप्
पहैयणङ्गु आऴियुम् पाल्वॆण् शङ्गमुम्
तहैपॆऱु तामरैक् कैयिन् एन्दि
नलङ्गिळर् आरम् मार्बिऱ् पूण्डु
पॊलम्बू आडैयिन् पॊलिन्दु तोन्ऱिय
शॆङ्गण् नॆडियोन् निन्ऱ वण्णमुम्
ऎन्कण् काट्टु ऎन्ऱु ऎन् उळङ्गवऱ्ऱ
वन्देन् कुडमलै माङ्गाट्टु उळ्ळेन्; 35-53

३ ब्राह्मण की इच्छा

नीला मेघ स्वर्णगिरि पर पार्श्वों में फैलकर अविरल रूप से आवृत रहता हो, वैसी विवृत-सहस्र-शीर्ष तथा अमित-विक्रम सर्प-रूपी (आदिशेष की) शय्या पर, अनेकों के स्तुति करते (स्तुति सुनते हुए) फैलती तरंगों की काविरि के विशाल मध्य प्रदेश में (श्री रंगम में) जो श्रीनिवास, श्रीरंगनाथ जी शयन करते है, उनकी शयनश्री को (देखना चाहता हूँ) और "वेगडम' नाम का एक उन्नत पर्वत है जिस पर अनेक सरिताओं में जल बहता रहता है। उसके दोनों ओर विवृत-किरण सूर्य और चंद्र प्रकाश देते रहते है। उस पर्वत के मध्यस्थल में, विद्युत् का सा वस्त्र पहनकर, इंद्र-धनुष-रूपी आभरणभूषित होकर मनोरम (श्याम) वर्ण वाला मेघ मानों खड़ा हो, ऐसा शत्रु-तापक चक्र और दुग्ध-श्वेत शंख को शोभायुक्त अपने हाथों में लिये, चटकीले हार को वक्ष में पहनकर, स्वर्णिम तथा महीन वस्त्रालंकृत अरुणाक्ष त्रिविक्रम (बाला जी) खड़े रहते है। मेरा मन मुझे तकाजा करता रहता है कि जाकर उनके (दोनों झाँकियों के) दर्शन करा दो। इसलिए आया हूँ। मैं पश्चिमी पर्वत-प्रदेश के "माङ्गाडु" (आम्रवन) का वासी हूँ। ३५-५३

4 यादु वऴि मऱैयोने ?

तॆन्नवन् नाट्टुच् चिऱप्पुम् शॆय्हैयुम्
कण्मणि कुळिर्प्पक् कण्डेन्; आदलिन्
वाऴ्त्ति वन्दिरुन्देन्; इदु ऎन् वरवु ऎनत्
तीत्तिऱम् पुरिन्दोन् शॆप्पक् केट्टु—
'मा मऱै मुदल्व ! मदुरैच् चॆन्नॆऱि
कूऱु नी' ऎनक् कोवलऱ्कु उरैक्कुम्; 54-59

४ हे वेदपाठी ब्राह्मण ! रास्ता क्या है ?

(उसने आगे कहा :) दक्षिण प्रदेश के राजा के देश की विशेषता को और उसके शासन की श्रेष्ठता को मैंने अपनी आँखों से दृष्टि को शीतल करते हुए (आनंद के साथ) प्रत्यक्ष देखा। इसलिए यहाँ आकर उनको आशीर्वाद देते हुए विश्राम करता रहा, यही मेरा आना है (आने का कारण है)। इस भाँति अग्निहोत्री का कहा सुनकर कोवलऩ् ने पूछा कि हे महान "वेदमूल" ब्राह्मण ! मदुरै जाने का मार्ग कौन सा है ? वैदिक ने उत्तर में कहा। ५४-५६

5 कोडैयिले वरलामो ?

कोत्तॊऴि लाळरॊडु कॊऱ्ऱवऩ् कोडि
वेत्तियल् इऴन्द वियत्तिलम् पोल
वेऩ्ऩल् अम् किऴवत्तोडु वॆङ्गदिर् वेन्दऩ्
तानलम् तिरुहत् तऩ्मैयिऴ् कुऩ्ऱि
मुल्लैयुम् कुऱिञ्जियुम् मुऱैमैयिऩ् तिरिन्दु
नल्लियल्बु इऴन्दु नडुङ्गु तुयर् उऱुत्तुप्
पालै ऎऩ्बदोर् पडिवम् कॊळ्ळुम्
कालै ऎय्दिऩिर् कारिहै तऩ्ऩुडऩ् 60–67

५ गर्मी में आना ठीक है क्या ?

अपने राजकर्मचारियो से विरुद्धमत होकर जब राजा दुराचार करे तो शासन-सबद्धता दूर हो जाती है (और देश की प्रकृति ही बिगड़ जाती है), वैसे ही (उसी देश के समान) आज भूमि बनी है। ग्रीष्म-रूपी अमात्य से गरम-किरण-माली का अनबन हो गया। इसलिए भूमि के प्राकृतिक प्रदेश अपनी प्रकृति खो गये। मुल्लै (खेतो का प्रदेश), कुऱिञ्जि (पर्वत-प्रदेश) दोनों अपनी प्रकृति में बदल गये। सारे अच्छे गुण खो दिये और पथिकों को कँपानेवाला, कष्ट देनेवाले 'पालै' (मरुभूमि) का रूप धर गये। ऐसे समय में तुम आये हो अपनी कोमल स्त्री के साथ। ६०-६७

6 वेऱुपट्ट मून्ऱु पादैहळ्

अऱैयुम् पॊऱैयुम् आर्इडै मयक्कमुम्
निऱैनीर् वेलियुम् मुऱैपडक् किडन्दविन्
नॆडुम्बेर् अत्तम् नीन्दिच् चॆऩ्ऱु
कॊडुम्बै नॆडुङ्गुळक् कोट्टहम् पुक्काल्

पिऱैमुडिक् कण्णिप् पॆरियोन् एन्दिय
अऱैवायच् चूलत्तु अरुनॆऱि कवर्क्कुम् 68–73

६ अलग-अलग तीन रास्ते

(यह एक मार्ग है :) इसमें क्रमशः चट्टानें, गिरियाँ और मार्ग में जल-भरे झील का किनारा (या भ्रामक मृगजल) पाये जायँगे। यह लम्बा मरुस्थलपथ तय करके "कॊडुम्बाळूर" (ग्राम) और "नॆडुङ्गुळम्" (झील) के मध्यस्थ कूल-मार्ग में पहुँचोगे तो वहाँ चन्द्रशेखर शिवजी के त्रि-(सिरा) शूल के समान बँटकर जानेवाले तीन मार्गों को अलग-अलग जाते हुए पाओगे। ६८-७३

7 वलमाहच् चॆन्ऱाल्

वलम् पडक् किडन्द वऴिनीर् तुणियिन्
अलऱुतलै मरामुम् उलऱुतलै ओमैयुम्
पॊरियरै उऴिञ्जिलुम् पुन्मुऴि मूङ्गिलुम्
वरिमरल् तिरङ्गिय करिपुऱक् किडक्कैयुम्
नीर् नशैइ वेट्कैयिन् मान्ऩिन्ऱु विऴिक्कुम्
कान्ऩमुम् ऎयिन्ऩर् कडमुम् कडन्दाल्
ऐवन्ऩ वॆण्णॆलुम् अऱैक्कण् करुम्बुम्
कॊय्पून् दिन्ऩैयुम् कॊऴुम्बुन्ऩ वरहुम्
कायमुम् मञ्जळुम् आय्कॊडिक् कवलैयुम्
वाऴैयुम् कमुहुम् ताऴ् कुलैत् तॆङ्गुम्
मावुम् पलावुम् शूऴ् अडुत्तु ओङ्गिय
तॆन्ऩवन् शिऱुमलै तिहऴ्न्दु तोन्ऱुम्;
अम्मलै वलम् कॊण्डु अहन्ऩपदिच् चॆल्लुमिन् 74–86

७ दायीं ओर से जाओ तो

दायीं ओर पड़े मार्ग से जाने का निश्चय करो तो "कडम्बु" (नीप ?) के तरु जिनके सिर बिखरे हुए है, "ओमै" जिनके सिर शुष्क है; "वाहै" तरु जिनके मूल फटे है; बाँस जिनके तने सूख गये है; राख-से सूखकर पड़े भूतल जिसमें "थूहर" जाति के कँटीले पौधे सूख गये है (इत्यादि को देखोगे)। फिर वह शुष्क वन मिलेगा, जहाँ मृग खड़े होकर प्यास बुझाने हेतु जल खोजते है। इनको पार कर "ऍयिन्नर्" (मरुवासी, शिकारी, व्याध-जाति के लोग) के वासस्थानों के भी आगे जाओ। तो "ऐवन्नम्" नाम का (चावल का) श्रेष्ठ धान, गाँठों से रहित (पक्के बने) ईख, कटने योग्य

कोदों की फसल, खूब पके "वरहु" (कदन्न), लहसुन, हल्दी, सुन्दर लतावाले "कवलै" के कन्द, केले, क्रमुक, झुके गुच्छेदार नारिकेल, आम्र, कटहल —ये सब पास-पास जिस पर रहते है, वह उन्नत तथा दक्षिणपति के हक में रहता "शिरुमलै" नामक पर्वत विद्यमान दिखाई देगा। उस पर्वत की दायीं ओर से प्रदक्षिणा करके जाओ और उस विशाल नगर में पहुँच जाओ। ७४-८६

8 इडमाहच् चॅन्ऱाल्

अव्वऴिप् पडरीर् आयिऩ्, इडत्तुच्
चॅव्वऴिप् पण्णिऩ् शिऱैवण्डु अरऱ्ऱुम्
तडन्दाऴ् वयलोडु तण्पूङ् गावोडु
कडम्पल किडन्द काडुडऩ् कऴिन्दु
तिरुमाल् कुऩ्ऱत्तुक् चॅल्हुविर् आयिऩ्
पॅरुमाल् कॅडुक्कुम् पिलम् उण्डु आङ्गु
विण्णोर् एत्तुम् वियत्तहु मरबिऩ्
पुण्णिय शरवणम् पवकारणियोडु
इट्टशित्ति ऎऩ्ऱुम् पॅयर् पोहि
विट्टु नीङ्गा विळङ्गिय पॊय्है
मुट्टाच् चिऱप्पिऩ् मूऩ्ऱु उळ; आङ्गु
पुण्णिय शरवणम् पॊरुन्दुविर् आयिऩ्
विण्णवर् कोमाऩ् विऴुनूल ऎय्दुविर्
पवकारणि पडिन्दु आडुविर् आयिऩ्
बवका रणत्तिऩ् पऴम् पिऱप्पु ऎय्दुविर्;
इट्ट शित्ति ऎय्दुविर् आयिऩ्
इट्ट शित्ति ऎय्दुविर् नीरे !
आङ्गुप् पिलम् पुह वेण्डुदिर् आयिऩ्
ओङ्गु उयर् मलैयत्तु उयर्न्दोऩ् तॊऴुदु
शिन्दैयिल् अवऩ् तऩ् शेवडि वैत्तु
वन्दै मुम्मुऱै मलैवलम् शॅय्दाल्
निलम्बह वीऴ्न्द शिलम्बाऱ्ऱु अहऩ्तलैप्
पॊलङ्गॊडि मिऩ्ऩॆऩ पुयल्ऐङ् कून्दल्
कडिमलर् अविऴ्न्द कऩ्ऩिका रत्तुत
तॊडिवळैत् तोळि ऒरुत्ति तोऩ्ऱि,

इम्मैक्कु इन्बमुम् मरुमैक्कु इन्बमुम्
इम्मैयुम् मरुमैयुम् इरण्डुम् इन्रि ओर्
शॅम्मैयिल् निऱ्पदुम् शॅप्पुमिन् नी यीर् ? इव्
वरैत्ताळ् वाळ्वेन् वरोत्तमै ऍन्बेन्
उरैत्तारक्कु उरियेन्; उरैत्तीर् आयित्
तिरुत्तक् कोर्क्कुत् तिरन्देन् कदवु ऍन्नुम्
कदवन् दिरन्दु अवळ् काट्टियनन् ऍरिप्
पुदवम् पल उळ पोहु इडै कळियन्
ऑट्टुप् पुदवम् ऑन्रु उण्डु; अदन् उम्बर्
वट्टिहैप् पूङ्गोडि वन्दु तोन्रि
"इरुदि इल् इन्बम् ऍनक्कु ईङ्गु उरैत्ताल्
पॅरुदिर् पोलुम् नीर् पेणिय पॉरुळ्" ऍन्नुम्
"उरैयीर् आयिन्नुम् उरुकण् शॅय्येन्
नॅडुवळिप् पुऱत्तु नीक्कुवल् नुम्" ऍन्नुम्
उरैत्तार् उळर् अनिन् उरैत्त मून्रिन्
करैप्पडुत्तु आङ्गुक् काट्टिनळ् पॅयरुम्;
अरुमऱै मरुङ्गिन् ऐन्दिन्नुम् ऍट्टिन्नुम्
वरुमुऱै ऍळुत्तिन् मन्दिरम् इरण्डुम्
ऑरु मुऱैयाह उळम् कॉण्डु ओदि
वेण्डियदु ऑन्रिन् विरुम्बिनिर् आडिन्
काण्डह मरबिन् अल्ल मऱ्ऱवै;
मऱ्ऱवै निऱ्यादु मलैमिशै निन्रोन्
पॉऱ्ऱा मरैत्ताळ् उळ्ळम् पॉरुन्दुमिन्
उळ्ळम् पॉरुन्दुविर् आयिन् मऱ्ऱवन्
पुळ्ळणि नीळ् कॉडि पुणर्निलै तोन्रुम्
तोन्रिय पिन् अवन् तुणैमलर्त् ताळिणै
एन्रु तुयर् कॅडुक्कुम् इन्बम् ऍय्दि
माण्बुडै मरबिन् मदुरैक्कु एहुमिन्
काण्तहु पिलत्तिन् काट्चि ईदु— 87-140

८ बायीं ओर से जाओ तो

उस मार्ग से नहीं जाओ तो बायीं ओर से जा सकते हो। वहाँ गहरे जलाशय मिलेंगे, जिनमें अलिकुल "शॅव्वळि" राग में गुंजार करते रहेंगे।

और वैसे ही खेत और शीतल तरुकुंज मिलेंगे। ऐसे "मरुदम्" प्रदेश के भूभागों और उनके वाद कठिन मार्गों के वन को पहुँचोगे। उसे भी पार करके ("तिरुमाल् इरुम् कुऩ्ऱम्") श्रीविष्णु पर्वत पर जाओ, तो वहाँ वड़ा भ्रांति-नाशक विलद्वार या सुरंग मिलेगी। वहाँ देव-वन्द्य, अतिशय रीत के पुण्य शरवणम्, भवकारिणी, इष्ट-सिद्धि नाम के तीन अटूट महिमायुक्त कुण्ड मिलेंगे। पुण्य शरवणम् सर में स्नान करो तो सुरेन्द्र इन्द्र-रचित ऐन्द्र-शास्त्र के ज्ञाता वन जाओगे। 'भवकारिणी' में पैठकर नहाओ तो इस जन्म के कारणभूत पुराने जन्म की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करोगे। 'इष्टसिद्धि' में स्नान करो तो तुम अपने इष्टों को सिद्ध होता पाओगे। वहाँ सुरंग में प्रवेश करना चाहो तो उन्नत पर्वत के सर्वोच्च भगवान को नमस्कार करके, मन में उनके ललित चरणों का ध्यान करो और तीन वार पर्वत की परिक्रमा करो; तो भूमि को चीरते हुए जो 'शिलम्बाऱु' (नूपुरगंगा) गिरती है उस विस्तृत प्रदेश में, विद्युल्लता सी एक कन्या, काले मेघों के समान पाँच प्रकारों में सँवारे केशवाली, सुगन्ध-पुष्प-लसे "कोंगै" तरु के नीचे (या पदक पहने हुए) विजायट से अलंकृत हो दिखायी देगी। (वह कहेगी—) "इह-सुख और पर-सुख और इन दोनों से परे एक उत्कृष्ट दशा (मोक्ष) —इन तीनों में क्या चाहते हो ? मैं इस पर्वततल पर रहनेवाली, वरोत्तमा नाम की देवी हूँ। सही उत्तर जो कहता है मैं उसकी होकर रहूँगी (उसका आशय पूरा करूँगी।) अगर कहोगे तो तुम श्रेष्ठ योग्यता वाले होगे और मैं द्वार खोल दूँगी।" द्वार खोलकर जो वह मार्ग दिखायेगी, उसमें अनेक द्वार मिलेंगे। मध्य में युग्म कपाटवाला एक द्वार रहेगा। उसके ऊपर चित्र-लिखित पुष्पलता सी एक स्त्री आकर प्रकट होगी (और पूछेगी कि) अविराम आनन्द क्या है ? सही उत्तर दोगे तो मनचाही पा जाओगे ! और यह भी कहेगी कि उत्तर नही दोगे तो भी कोई अनिष्ट नही करूँगी। इस लम्बे मार्ग में ले जाकर उधर छोड़ दूँगी। पर सही उत्तर देनेवाले को उक्त तीनों कुण्डो के किनारे दिखाकर लौट आऊँगी। उत्तम वेदों के अनुसार लब्ध पंचाक्षरी तथा अष्टाक्षरी जो मन्त्र है (ॐ नमःशिवाय और ॐ नमो नारायणाय) दोनों का एकाग्रता के साथ जप करके इष्टसिद्धि के कुण्ड मे विश्वास के साथ स्नान करो तो अन्य दोनों अदृश्य हो जायँगे। (दृष्टि से छिप जायँगे)। उन दोनों का विस्मरण करके पर्वत-स्थित (विष्णु) देव के मनोरम कमल-चरणों का मन में ध्यान करो। मन में ध्यान करो तो, उनका ऊँचा गरुड़-केतु जिस पर फहराता है उस स्तम्भ का ऊपरी भाग दिखाई देगा। उसके दर्शन करनें के वाद श्री विष्णु के चरण-कमल-द्वय तुम्हें अपना लेंगे।

और तुम दुखनाशक सुख प्राप्त करोगे। पाकर सम्मानित संस्कृति वाले मदुरै नगर पहुँच जाओ। दर्शनीय सुरंग की महिमा यही है। ८७-१४०

9 नडुवऴियिऱ् चॅन्ऱाल् ?

अन्नॅऱिप् पडरीर् आयिन् इडैयदु
शॅन्नॅऱि आहुम् तेम्पॉऴिल् उडुत्त
ऊर् इडैयिट्ट काडु पल कडन्दाल्
आर् इडै उण्डु ओर् आरञर्त् तॅय्वम्
नडुक्कञ् जाला नयत्तिन् तोन्ऱि
इडुक्कण् शॅय्यादु इयङ्गुनर्त् ताङ्गुम्
मडुत्तु उडन् किडक्कुम् मदुरैप् पॅरुवऴि
नीळ्निलम् कडन्द नॅडुमुडि अण्णल्
ताळ् तॊऴु तहैयेन् पोहुवल् यान् अॅन 141–149

९ मध्य मार्ग से चलो तो

(उपरोक्त) उस मार्ग से नहीं जाना चाहो तो बीच का एक मार्ग है। वह सीधा (अच्छा) मार्ग है। मधु बहानेवाले तरुओं के बागों से आवृत अनेक ग्राम जिस वन के बीच में पाये जायँगे उस वन को अनेक दिन चलकर पार करोगे। पर वहाँ बीच रास्ते में एक अनिष्टकारिणी दुर्देवी भयकंपित न करनेवाले सुन्दर मोहक रूप में प्रकट होगी। वह बिना कुछ कष्ट दिये ही जानेवाले को रोक देगी। उससे बचकर आगे जाओ तो मदुरै का लम्बा मार्ग पड़ा मिलेगा (तुम लोग जाओ।) मै, विशाल लोकों को (तीन डगों में) मापनेवाले दीर्घ-किरीटधारी देवता के चरणों में जुड़े हुए हाथों का बनकर (हाथ जोड़कर नमस्कार) करने जाऊँगा। १४१-१४९

10 कवुन्दियडिहळ् उरैत्तल्

मामऱैयोन् वाय्वऴित् तिऱम् केट्ट
कावुन्दि ऐयै ओर् कट्टुरै शॊल्लुम्;
नलम् पुरि कॊळ्है नान्मऱैयाळ !
पिलम् पुह वेण्डुम् पॅऱ्ऱि ईङ्गु इल्लै
कप्पत्तु इन्दिरन् काट्टिय नूलिन्
मॅय्प्पाट्टु इयऱ्कैयिन् विळङ्गक् काणाय्;
इऱन्द पिऱप्पिन् अॅय्दिय वॅल्लाम्

पिऱन्द पिऱप्पिऱ्का णायो नी ?
वाय्मैयिन् वळाअदु मन्नुयिर् ओम्बुनर्क्कु
यावदुम् उण्डो, ऐयदा अरुम् पौरुळ् ?
कामुरु देय्वम् कण्डडि पणिय
नी पो याङ्गळुम् नीळ् नॅऱिप् पडर्हुदुम्
ॲन्ऱम् मऱैयोर्क्कु इशैमोऴि उणर्त्तिक् 150–162

१० कवुन्दि अड़िहळ् कहती हैं

वृद्ध वैदिक के मुख से मार्ग-सम्वन्धी वातों को सुनकर कवुन्दि स्वामिनी ने एक अर्थगर्भित वार्ता कही। हितकारी❀ आचरण वाले चतुर्वेदी ! सुरंग में घुसने का कोई मतलव नहीं है। अधिक कल्पों में जीवित रहनेवाला (कल्पायु) इन्द्र-रचित (ऐन्द्र) ग्रन्थ की वातों को "परमागम" में (जैन-ग्रन्थ) में स्पष्टीकृत पाओगे। (अतः पुण्य शरवण-स्नान नही चाहिए।) पूर्वजन्म कृत सभी वातों को इस जन्म में प्रतिफलित नही देखते तुम ? (अतः भवकारणि-स्नान आवश्यक नही।) जो सत्य से न हटकर जीव सहायक रहते है उन्हे जो नही मिले क्या ऐसी चीज है ? (अतः इष्टसिद्धि कुण्ड में स्नान भी आवश्यक नही ठहरता !) तुम अपने इष्टदेव के दर्शन करके चरण-वन्दना करने जाओ। हम भी अपना लम्वा मार्ग पकड़ेंगे। ऐसा आडिहळ् उस वैदिक का मन रखते हुए वोली। १५०-१६२

11 पौय्हैक् करैयिल्

कुन्ऱाक् कौळ्हैक् कोवलन् तन्नुडन्
अन्ऱैप् पहल् ओर् अरुम् पदि तङ्गिप्
पिन्ऱैयुम् अव्वऴिप् पॅयर्न्दु शॅल् वऴि नाळ्
करुन्दडङ् गण्णियुम् कवुन्दि यडिहळुम्
वहुन्दुशॅल् वरुत्तत्तु वऴि मरुङ्गु इरुप्प
इडैनॅऱिक् किडन्द इयवुकौळ् मरुङ्गिन्
पुडैनॅऱिप् पोय् ओर् पौय्हैयिर् चॅन्ऱु
नीर् नशै वेट्कैयिन् नॅडुन्दुरै निऱ्पक् 163–170

❀ (कवुन्दि अडिहळ् के इस कथन में व्यंग्य की गन्ध है। जैन लोग वैदिक हिन्दू-धर्म को आदर की दृष्टि से नहीं देखेंगे। यह विश्वास लोगो में पाया जाता था। 'हितकारी' शब्द में और 'कामुरु', अपने इष्ट में व्यंग्य है। हितकारी —तुम्हारे अभिप्राय में पर; हमारे लिए नहीं "कामुरु" —काम आदि दोष रखनेवाले देवता अतः भवपाश वद्ध। यह अर्थ करें तभी व्यंग्य है।)

११ सरोवर के तट पर

पश्चात् अपने सिद्धान्त में अटल कोवलन् के (तथा कण्णहि के भी) साथ उस दिन में एक अविश्राम-योग्य ग्राम में ठहरी। फिर उसी मार्ग में तीनों आगे बढ़ने लगे। तब एक दिन काली, विशाल आँखों वाली कण्णहि और कवुन्दि अडिहळ् दोनों मार्ग में चलने से उत्पन्न कष्ट से रास्ते में एक ओर बैठ गयीं। तब उस मार्ग से बीच से निकलकर पार्श्व में चलनेवाला एक रास्ता दिखा। कोवलन् उस रास्ते में जाकर एक सरोवर के पास पहुँचा। पानी पीने की इच्छा से वह उसके बड़े घाट पर स्थित हुआ। १६३-१७०

12 दॆय्वम् तोन्ऱियदु

कान्उऱै वॆय्वङ् कादलिर् चॆन्ऱु
'नयन्द कादलिन् नल्हुवन् इवन् ऎन
वयन्द मालै वडिविल् तोन्ऱिक्
कॊडि नडुक्कु उऱ्ऱदु पोल आङ्गु—अवन्
अडि मुदल् वीऴ्न्दु आङ्गु अरुङ्गणीर् उहुत्तु
वाश मालैयिन् ऎऴुदिय माऱ्ऱम्
तीदिलेन् पिऴै मॊऴि शॆप्पिनै! आदलिन्
कोवलन् शॆयदान् कॊडुमै ऎन्ऱु ऎन्मुन्
मादवि मयङ्गि वान् तुयर् उऱ्ऱु
मेलोर् आयितुम् नूलोर् आयितुम्
पाल्वहै तॆरिन्द पहुदियोर् आयितुम्
पिणि ऎन्ऱु कॊण्डु पिऱक्किट्टु ऒऴियुम्
कणिहैयर् वाऴ्क्कै कडैये पोन्ऱुम् ऎन्च्
चॆव्वरि ऒऴुहिय शॆऴुङ्गडै मऴैक्कण्
वॆण्मुत्तु उदिर्त्तु वॆण्णिलात् तिहऴुम्
तण्मुत्तु ऒरुकाऴ् तन्कैयाऱ् पऱिन्दु
तुऱ्ऱि उऱ्ऱु ऎन्नैयुम् तुऱन्दनळ्; आदलिन्
मदुरै मूदूर् मानहर्प् पोन्ददु
ऎदिर् वऴिप् पट्टोर् ऎनक्कु आङ्गु उरैप्पच्
चात्तॊडु पोन्दु तऩित्तुयर् उऴन्देन्
पात्तु अरुम् पणव! निन् पणि मॊऴि यादु! ऎन 171-191

१२ देवी प्रकट हुई

(उसको देखकर) उस वन में विचरनेवाली वनदेवी प्रेमाभिभूत हुई।

धनु धारण करके अन्य प्रदेशों में जाते है। उन्हें खूब विजय दिलाकर बदले में उनके द्वारा सानन्द दी जानेवाली "पौरुष-बलि" (अपने सिर काट कर जो देते थे) की प्रतीक्षा करती रही वह देवी। वह भाल-नेत्रा, देवों की देवी थी, अकलंक महिमावती और व्योम-स्वामिनी थी। उस "ऐयै"* (विजयदायिनी कौऱ्ऱवै, दुर्गा का एक रूप) के मन्दिर में वे गये। २०३-२१६

12 वेट्टुव वरि

(कौंच्चहक् कलि)

1 नोय् तणिय इरुन्दन्नर् !

कडुङ्गदिर् तिरुहलिन्न् नडुङ्गजर् अय्दि
आऱ्शेल् वरुत्तत्तुच् चीऱडि शिवप्प
नऱुम्बल् कून्दल् कुऱुम्बल उयिर्त्तु—आङ्गु
ऐयै कोट्टत्तु अय्या ओरु शिऱै
वरुन्दु नोय् तणिय इरुन्दन्नर्; उप्पाल् 1-5

१२ व्याध (नाट्य) गीत

(छंद—कौञ्चहक् कलि—मिश्रित—)

१ विश्रांति पाने के लिए ठहरे†

धूप की किरणें अधिक तेज हुईं। कण्णहि दिल दहलानेवाले कष्ट का अनुभव करने लगी। मार्ग-गमन के श्रम से उसके छोटे चरण लाल हो गये। सुगंधित तथा अनेक (पाँच) प्रकार से अलंकृत केशवाली वह बार-बार जल्दी-जल्दी गरम साँसे लेने लगी। इसका कष्ट देखकर कोवलन्न और कवुन्दि अडिहळ् दोनों इसको लेकर "ऐयै" के मंदिर में गये। तीनों वहाँ ऐसी जगह पर जाकर आराम करने लगे, जहाँ लोग साधारण रूप से आते-जाते नही थे। १-५

* "ऐयै" के कई नाम पाये जाते हैं— काली, महाकाली, भद्रकाली, विभावरी आदि। वह व्याध आदि जन-जाति के लोगों से पूजित देवी थी। बटमारी भी इनका परिस्थितिजनित पेशा थी। वे व्याध मानते थे कि इस देवी के अनुग्रह से ही सफलता मिलती है। अतः वे अ युच्च पौरुषद्योतक सिर-बलि देते थे।

† पहली ७४ पंक्तियाँ "उरैप् पाट्टु मडै" हैं यानी पद्यमय अगेय गद्य हैं। नाट्य या नृत्य के लिए रचित गानों के बीच मे जब उरैप्पाट्टु रखा जाता है तब 'मडै' हुआ कहते हैं। मडै का अर्थ अंतरित करना।

2 शालिनि मुळङ्गियताळ्

वळङ्गुविल् तडक्कै मर्रक् कुडित् तायत्तुप्
पळङ्गडन् उर्र मुळङ्गु वायच् चालिनि
दॆय्वम् उर्रु मॆय्म्मयिर् निरुत्तुक्
कै ॲडुत्तु ओच्चिक् कानवर् वियप्प
इडुमुळ् वेलि ॲयिनर्कूट् टुण्णुम्
नडुऊर् मन्नरत्तु अडि पॆयर्त्तु आडिक्
कल् ॲन् पेर् ऊर्क् कणनिरै शिरन्दन;
वल्विल् ॲयिनर् मन्रु पाळ् पट्टन
मर्रक्कुडित् तायत्तु वळिवळम् शुरवादु
अर्रकुडि पोल् अविन्दु अडङ्गिनर् ॲयिनरुम्
कलैयमर् शॆल्वि कडन् उणिन् अल्लदु
शिलैयमर् वॆन्रि कॊडुप्पोळ् अल्लळ्;
मट्टु उण् वाळ्क्कै वेण्डुदिर् आयिन्
कट्टु उण् माक्कळ् कडन्दरुम् ॲन आङ्गु 6-19

२ शालिनी ने घोषणा की

(देवीग्रस्त महिला को शालिनी कहते हैं)

तब सबल धनुर्हस्त ॲयिनर् (मर्रवर्, व्याध) कुल के वीरों की मनौती की बलि अदा करने का आह्वान करती हुई, उस कुल में जनित शालिनी घोषणा करने लगी। उसमें देवी का आवेश हो गया था। शरीर के रोंगटे खड़े हो गये। उसने अपने हाथ ऊपर बढ़ा लिये। काननवासी चक्रित हो गये। काँटों के बने बेड़ से सुरक्षित ग्राम-मध्य मैदान में, जो ॲयिनर् वीरों के सह-भोज का स्थान था, वह पादसंचालन करती हुई नाचने लगी। उसने घोषित किया— आनंद कोलाहल में बढ़े हुए शत्रुओं के ग्रामों में ढोरों के झुण्ड बढ़ गये। सबल धनुर्धर मर्रवर् वीरों के मण्डप (सभा, मन्दिर, मैदान) खण्डहर बन गये। मर्रवर् के घरों में बटमारी से मिली समृद्धि नहीं (देखी जाती।) धर्मवर्ती लोगों के समान ये मर्रवर् दुर्बल होकर दबे पड़े है। हरिणारूढ़ा देवी की मनौती का ऋण नहीं चुकता करोगे तो वह तुम्हारे बाणों में विजय नहीं बैठायगी। ताड़ी पीकर खुश रहना चाहो, (समृद्ध जीवन चाहो) तो हे राहज़न लोगों ! बलि दे दो। ६-१९

3 कॊऱ्ऱवै कोलम् !

इट्टुव तलै ऍण्णुम् ऍयित्तर् अल्लदु
शुट्टुत् तलैपोहात् तॊल्कुडिक् कुमरियै
चिऱुवॆळ् अरविऩ् कुरुळैनाण् शुऱ्ऱिक्
कुऱुनॆऱिक् कूऩ्दल् नॆडुमुडि कट्टि
इळैशूळ् पडप्पै इऴुक्किय एऩत्तु
वळैवॆण् कोडु पऱित्तु मऱ्ऱदु
मुळैवॆण् तिङ्गळ् ऍऩ्ऩच् चात्ति
मऱम् कॊळ् वयप्पुलि वाय् पिळन्दु पॆऱ्ऱ
मालै वॆण्पल् तालिनिरै पूट्टि
वरियुम् पुळ्ळियुम् मयङ्गु वाऩ् पुऱत्तु
उरिवै मेहलै उडीइप् परिवॊडु
करुविल् वाङ्गिक् कैयहत्तुक् कॊडुत्तुत्
तिरितरु कोट्टुक् कलैमेल् एऱ्ऱिप्
पावैयुम् किळियुम् तूवि अम् शिऱैक्
काऩक् कोऴियुम् नीऩिऱ मञ्ञैयुम्
पन्दुम् कऴङ्गुम् तन्दऩर् परशि
वण्णमुम् शुण्णमुम् तण्णऱुञ् जान्दमुम्
पुऴुक्कलुम् नोलैयुम् विऴुक्कुडै मडैयुम्
पूवुम् पुहैयुम् मेविय विरैयुम्
एवल् ऍयिऱ्ऱियर् एन्दिऩर् पिऩ्वर
आऱॆऱि पऱैयुम् शूऱैच् चिऩ्ऩमुम्
कोडुम् कुऴलुम् पीडुकॆऴु मणियुम्
कणङ्गॊण्डु तुवैप्प अणङ्गुमुऩ् निऱीइ
विलैप्पलि उण्णुम् मलर्प्पलि पीडिहैक्
कलैप्परि ऊर्दियैक् कैदॊऴुदु एत्ति 20–44

३ कॊऱ्ऱवै (विजयदायिनी देवी दुर्गा) की सज्जा

ऍयित्तर् अपने सिरों को वलि मे काट देकर दूसरों से गिनवाते थे। उसको छोड़कर मरणोपरांत सिर जलाकर गिनवानेवाले नहीं थे। (इन दो पंक्तियों के अन्य अर्थ (१) वलि देकर मृतक वीर दफनाये जाते थे। जलाये नहीं जाते थे; (२) अपने शत्रु वीरों के सिरों को काटने में चतुर थे, वे कभी शत्रुओं को अपने सिर काटने नही देते थे; (३) राजा द्वारा इंगित शत्रु-सिरों को

दूसरों द्वारा काटे जाने नही देते थे।) ऐसे पुराने कुल की कन्या उस शालिनी को (कौऱ्ऱवै के रूप में सज्जित किया गया :) लोगों ने उसके केश में छोटे सफ़ेद सर्प (की तरह) बने स्वर्ण-भूषण को लपेटा। उसके छोटे घुंघराले केश की सिर के ऊपर जटा-गाँठ बनायी। बेड़ से रक्षित बाग को नष्ट करनेवाले सुअर को मारकर उसके वक्र तथा सफ़ेद दाँत को छीन लेकर (छिने दाँत को) उस जटा में बालचंद्र के रूप में पहनाया। भयंकर तथा बलवान बाघ का मुख खोलकर छीने गये श्वेत दाँतों को पिरोकर व्याघ्र-दंत-सूत्र (मंगल-सूत्र) के रूप में पहनाया। चित्तियों और लकीरों से युक्त, स्वच्छ बाघम्बर को कटि में मेखला के रूप में बाँधा। प्रेम के साथ (या सश्रम) झुकाकर वज्र-धनुष को उसके हाथ में दिया। उसे हरिण पर चढ़ाया जिसके सींग पेचदार थे। और पुत्तली, शुक, मृदुल परवाला वन-कुक्कुट, नील-वर्ण मयूर, कंदुक "कळङ्गु" (एक बीज) इत्यादि देकर उसकी (देवी ही मानकर) वन्दना की। फिर (कंधों तथा वक्ष-प्रदेश पर चित्र खीचने में प्रयुक्त) वर्ण, चूर्ण, शीतल, सुगंधित चंदन, कदन्न, तिल के गोले, मांस-मिश्रित अन्न, फूल, धूप, श्रेष्ठ गंधद्रव्य इत्यादि को दासियों ने अपने हाथों में ले लिया। पश्चात् बटमारी में प्रयुक्त ढोल, लूटते वक्त बजनेवाले "चिन्नम्" (तुरही), और तूर्य, शानदार घंटा आदि को बजाते हुए बजानेवाले उसके सामने खड़े हुए (या जोर से बजाकर उसमें देवी को आविष्ट कराया)। बाद विजय के रूप में मूल्य देकर (बदले में) बलि लेनेवाली देवी के बलि-पीठ की वन्दना करके सबने हरिणवाहनारूढ़ा देवी की स्तुति की। (देवी=मूर्ति, देवीग्रस्त शालिनी दोनों)। २०-४४

4 शालिनि उरैत्तवै

इणैमलर्च् चीऱडि इऩैनॅदऩळ् वरुन्दिक्
कणवऩॊडु इरुन्द मणमलि कून्दलै
"इवळो कॊङ्गच् चॆल्वि कुडमलै याट्टि
तॆन्ऩ् तमिळ्प् पावै शॆय् तवक् कॊळुन्दु
ऑरु मामणि आय् उलहिऱ्कु ओङ्गिय
तिरुमामणि" ऍऩ्ऩत् तॆय्वम् उऱ्ऱु उरैप्पप् 45–50

४ शालिनी (की वाणी) ने जो कहा

शालिनी ने, जोड़े में रहे कमल-सम (दोनों) चरणों के दर्द से दुखी होकर अपने पति के साथ रही सुगंध-केशिनी कण्णहि को देखकर निम्न प्रकार वाणी कही। यही 'कोंगु' देश की स्वामिनी है। "कुड" (पश्चिमी) पर्वत की

दक्षिणी तमिऴ् श्रीमती; देवी की तपस्या प्राप्त "कोंपल" (कोमल देवी) है। महान मणि बनेगी; सारे संसार के उन्नत शिरोभूषण बनकर रहेगी। यह शालिनी ने देवीग्रस्त स्थिति में कहा— यह दैवी वाणी थी। ४५-५०

5 कण्णहि पुत्तणिरित्ताळ्

'पेदुऱ्यु मोळिन्दताळ् मूदऱिवु आट्टि' ऎन्ऱु
अरुम् पॆऱल् कणवन्न पॆरुम्पुऱत्तु ऒडुङ्गि
विरुन्दिन्न मूरल् अरुम्विनाळ् निऱ्प 51-53

५ कण्णहि ने मंदहास किया

कण्णहि यह समझते हुए अपने अदृष्ट-प्राप्त पति की बड़ी पीठ के पीछे छिपी कि यह ज्ञानवती कन्या ने आवेश के भ्रम में कुछ कहा है। वह एक नये प्रकार का मंदहास करते हुए खड़ी रही। (उसको उस पर विश्वास नही हुआ। इस तरह अकस्मात् प्रशंसित होकर वह लजायी भी)। ५१-५३

6 कोऱ्ऱवै अरुळित्ताळ्

मदियिन्न वॆण्तोडु शूडुन् जॆन्नित्ति
नुदल् किळित्तु विळित्त इमैया नाट्टत्तुप्
पवळ वाय्च्चि; तवळवाळ् नहैच्चि
नञ्जु उण्डु करुत्त कण्डि वॆञ्जित्तत्तु
अरवु नाण् पूट्टि नॆडुमलै वळैत्तोळ्
तुळै अयिऱ्ऱु उरहक् कच्चुडै मुलैच्चि;
वळैयुडैक् कैयिल् शूलम् एन्दि
करियिन्न उरिवै पोर्त्तु अणङ्गु आहिय
अरियिन्न उरिवै मेहलै यार्ट्टि
शिलम्बुम् कळलुम् पुलम्बुम् शीऱडि
वलम्बडु कोऱ्ऱत्तु वाय् वाट् कोऱ्ऱवै;
इरण्डु वेऱु उरुविन्न तिरण्ड तोळ् अवुणन्
तलैमिशै निन्ऱ तैयल् पलर् तोळुम्
अमरि कुमरि कवुरि शमरि
शूलि नीलि माल् अवऱ्कु इळङ्गिळै;
ऐयै शय्यवळ् वॆय्यवाळ् तडक्कैप्
पाय्कलैप् पावै पैन् दॊडिप् पावै
आय् कलैप् पावै; अरुङ्गलप् पावै

तमर् तोऴ् वन्द कुमरिक् कोलत्तु
अमर् इळङ् कुमरियुम् अरुळिनळ्
वरियुरु शय्है वाय्न्ददाल् अन्नवे 54–74

६ विजयदुर्गा ने अनुग्रह किया

(कॉट्रवै देवी का वर्णन सुनिए)

वह सोम-रूपी श्वेतदल को केश में धरती है। भाल को विदीर्ण कर उसकी तीसरी आँख अपलक देखती है। प्रवाल-सम अधरों वाली उसकी हँसी धवलोज्ज्वल मुक्ता-पंक्ति समान है। विषपान से बने—नीलकठ वाली उसने सक्रोध (वासुकी) सर्प की रस्सी डालकर ऊँचे मेरु पर्वत को झुकाया था। नाल से युक्त दाँतों वाले सर्प के आवरणपट से बद्ध स्तनोवाली है। वह शूल-कंकण-हस्ता है। गज-चर्म-वसना और भयंकर बाघ-अम्बर-मेखला है। नूपुर-कंकण-क्वणित-चरणा है। वह सम्मानित विजयशील व तेज़ धारदार खड्ग रखनेवाली कॉट्रवै विजयदुर्गा है। महिष-शरीर तथा नर-सिर असुर महिषासुर मोटी बाँहों वाला था। उसके सिर पर खड़ी है यह। बहुजनवंदित अमरदेवी है। कुमारी, गौरी (गौरांगी); समरसमर्थ देवी; शूली; नीली श्री विष्णु की लघु भगिनी, स्वामिनी वह श्रेष्ठगुणसपन्न है। विशाल हाथ में तलवार रखनेवाली है। छलाँग मारते हिरण पर आरूढ़ रहनेवाली है! चटकीले वलय-धारिणी है। सभी कलाओं की अधिष्टात्री! सर्वाभरणभूषिता! अपने लोगों से वन्दित रहने के लिए प्रकट हुई है। कुमारी (कन्या) के रूप मे दर्शन देनेवाली बाला है। हो! उसने अनुग्रह कर दिया है। अब उसके अनुग्रह से हम गान-नाच का प्रबंध कर सकेंगे। (सब देवी को स्तुति करने के बाद नाचने गाने लगी।) ५४-७४

7 पलि पीडत्तु मुन्नलैयिल्

(मुन्ट्रिच्चिर्प्पु)

नाह नारु नरन्दम् निरन्दन
आवुम् आरमुम् ओङ्गिन; ॲङ्गणुम्;
शेवुम् मावुम् जेंरिन्दन—कण्णुदल्
पाहम् आळुडैयाळ् बलि मुन्नरिले 1

७ बलिपीठ के सामने (बलि वेदी की प्रशंसा)

नाग (पुन्नाग) और सुवासमय 'नरन्दम्' तरु पंक्तियों में खड़े है। सब जगह साल वृक्ष और चंदन तरु ऊँचे उगे है। "शे" तरु और आम्र वृक्ष खूब

भरे है। ये सब शिव के एक अंश की बनी देवी की बलिवेदी के सामने पाये जाते हैं। १

शॆम्बोन्‍ वेङ्गै शॊरिन्दन शेयिदऴ्
कॊम्बर् नल्लिल वङ्गऴ् कुविन्दन;
पॊङ्गर् वण् पॊरि शिन्दिन—पुन्गु इऴम्
तिङ्गऴ् वाऴ् शडैयाऴ् तिरु मुन्‌रिले 2

लाल स्वर्णपुष्प वाले "वेंगै" के तरु फूल बरसाते है। लाल दलों को श्रेष्ठ सेमर तरु गिराकर ढेर लगा रहे हैं। 'पॊङ्गर्' के तरु सफ़ेद लाजे (से फूल) बरसाते है। यह सब चंद्र-शेखरी देवी की बलिवेदी के सामने हो रहे हैं। २

मरवम् पादिरि पुन्नै मणङ्गमऴ्
कुरवम् कोङ्गम् मलर्न्दन कॊम्बर् मेल्
अरव वण्डिनम् आर्त्तु; उडन् याऴ् शॆय्युम्
तिरुव माऱ्कुइऴै याऴ् तिरु मुन्‌रिले 3

नीप, पाटल, "पुन्नै", सुगंध फैलानेवाले "कुरवम्" और कोंगु के तरुओं पर फूल खिले हैं। उन पर गुंजार करनेवाले भ्रमर मँड़राते हैं। याऴ् की-सी ध्वनि करते हुए उल्लसित हैं। श्रीनिवास विष्णु की बहिन की बलिवेदी के सामने यह सब हो रहे हैं। ३

8 शिऱन्द कुलमाहुम्

वळ्ळिक् कूत्तु

कॊऱ्ऱवै कॊण्ड अणि कॊण्डु निन्‌ऱइप्
पॊऱ्ऱॊडि मादर् तवम् अन्नै कॊल्लो?
पॊऱ्ऱॊडि मादर् पिऱन्द कुडिप् पिऱन्द
विऱ्ऱॊऴिल् वेडर् कुलनै कुलनुम् 4

८ उत्कृष्ट कुल है

(वळ्ळि नाच)

कॊऱ्ऱवै (ऐयै=दुर्गा) का जो अलंकार है उस वेश में यह स्वर्णवलय-धारिणी कन्या सजी है। इसकी तपस्या भी कैसी है! यह स्वर्णवलय-

धारिणी जिस कुल में पैदा हुई वह धनुकर्मकुशल वेडर् (व्याध) का कुल ही (उत्कृष्ट) कुल है। ४

ऐयै तिरुविन्न अणि कॊण्डु निन्ड्र इप्
पैयरवु अल्हुल् तवम् ॲन्नै कॊल्लो?
पैयरवु अल्हुल् पिड्नन्द कुडिप् पिड्नन्द
ॲय्विल् ॲयिन्नर् कुलन्नै कुलन्नुम् 5

ऐयै देवी के से आभरणों से भूषित होकर यह जो खड़ी है, इस सर्प-सम भग वाली का तप ही कैसा तप है! सर्प-वरांगी जिस कुल में पैदा हुई है, उसका कुल ॲयिन्नर् का कुल है जो बाण चलानेवाले धनु रखते है। वह ॲयिन्नर् कुल ही उत्कृष्ट कुल है। ५

पाय्कलैप् पावै अणि कॊण्डुनिन्ड्र इव्
आय्तॊडि नल्लाळ् तवमॆन्नै कॊल्लो?
आय् तॊडि नल्लाळ् पिड्नन्द कुडिप् पिड्नन्द
वेय्विल् ॲयिन्नर् कुलने कुलन्नुम् 6

तेज दौड़नेवाले हिरन पर आरूढ़ (दुर्गा) देवी का-सा सज्जा लिए जो खड़ी है उस श्रेष्ठ कंकणधारिणी भाग्यवती का तप ही कैसा तप है? श्रेष्ठ कंकण धारिणी भाग्यवती का कुल ही जो बांस के बने धनु रखनेवाले "ॲयिन्नर्" लोगों का कुल है, (उत्कृष्ट) कुल है। (ये गाने शालिन्नी तथा दुर्गा देवी दोनों पर समान रूप से लागू होते है।) ६

9 मुन्निलैप् परवल्

आनैत्तोल् पोर्त्तुप् पुलियिन्न उरि उडुत्तुक्
कान्नत्तु ॲरुमै करुन्दलै मेल् निन्ड्रायाल्-
वान्नोर् वणङ्ग मऱैमेल् मऱैयाहि
ञान्नक् कॊळुन्दाय् नडुक्कु इन्ड्रियेनिड्पाय् 7

(मध्यम पुरुष में सामने से प्रशंसा—पिछली दो पंक्तियों को पहले लिया जाता है) व्योमवासी तुम्हारी वन्दना करते हैं। तुम वेदों के ऊपर का वेद, ज्ञान का पल्लव बनी अचल रहने वाली हो। (फिर क्या माया है कि) तुम गज- चर्म ओढे बाघंबर पहने वन्य महिष के काले सिर पर खड़ी रहीं। ७

वरिवळैक्कै वाळ् एन्दि मा मयिडर् चॅर्ऱु
करियतिरिकु कोट्टुक् कलैमिशै मेल् निन्ऱायाल्
अरिअरन् पूमेलोन् अहमलर् मेल् मन्नुम्
विरि कदिर् अमूशोदि विळक्कु आहियै निऱ्पाय् 8

हरि हर, तथा कमलासन के हृदय कमल पर रहनेवाला विवृत-किरण ज्योतिर्मय दीप हो रहनेवाली देवी हो। (फिर यह क्या विस्मय है :) तुम अपने मनोरम वलय-भूषित कर में खड्ग लेकर बड़े महिष को मारकर, काले पेचदार सीगोवाले हिरन पर बैठी ? ८

शङ्गमुम् शक्करमुम् तामरैक्कै एन्दिच्
चॅङ्गण् अरिमान् शिन्नविडै मेल् निन्ऱायाल्-
कङ्गै मुडिक्कु अणिन्द कण्णुदलोन् पाहत्तु
मङ्गै उरुवाय् मऱै एत्तवे निऱ्पाय् 9

तुम गंगा को शीर्ष पर धारण करनेवाले भाल-नेत्र शिव के एक भाग में देवी-रूप मे विराजनेवाली हो और वेद तुम्हारा गुण गाते हैं। (फिर यह क्या लीला है कि) तुम अपने कमल-हस्तो में शख और चक्र लेकर लाल आँखोवाले क्रोधशील (पुरुष) सिह पर विराजी ! ९

10 वॅन्ऱिक् कूत्तु आडिनाय्

आङ्गुक् कॉन्ऱैयुम् तुळबमुम् कुऴमत् तॊडुत्त
तुन्ऱु मलर्प् पिणैयल् तोळ्मेल् इट्टु आङ्गु
अशुरर् वाड अमरर्क्कु आडिय
कुमरिक् कोलत्तुक् कूत्तुळ् पडुमे 10

१० तुम ने विजय नृत्य किया

कॉन्ऱै फूलों और तुलसी दलो की प्रचुर माला में गूँथकर बनी माला को गले पर डालकर तुम असुरो को झुलसाते हुए देवो के हित में कन्या के वेश में काष्ठचरण-नृत्य में लगी थी ! (इस नाच की चर्चा अन्यत्र भी, छठे अध्याय, समुद्रस्नान गाथा, में आयी है।) १०

11 कूत्तुळ् पडुदल्

आय्पॊन् अरिच् चिलम्बुम् शूडहमुम्
मेहलैयुम् आर्प्प आर्प्प

मायन् जेयवाळ् अवुणर् वीळ नङ्गै
मरक्काल् मेल् वाळमलै आडुम् पोलुम्
मायनजेय् वाळ् अवुणर् वीळ नङ्गै
मरक्काल् मेल् वाळमलै आडुम् आयिन्
कायामलर् मेति एत्ति वानोर्
कै पेय् मलर् मारि काट्टुम् पोलुम् 11

११ नृत्य में लगीं

उत्कृष्ट स्वर्ण-कणिकाओं से भरे नूपुर, चूड़ामणि और मेखला क्वणित हों; मायावी खड्ग-हस्त असुर मिट जायें— ऐसा देवी लकड़ी के पैरों में खड़ी होकर खड्ग-नृत्य करेगी ! मायावी खड्ग-हस्त असुरों को मारती हुई देवी खड्ग-नृत्य करेगी तो उसकी अतसि-पुष्प-वर्ण देह पर देवी की वन्दना में देव अपने हाथों से फूल गिरायेंगे। वे फूल वारिश का सा रंग दिखायेंगे। ११

12 वॆट्चि

उट्कु उडैच् चीरुर् ऑरु महन् आन्
निरैकॊळ्ळ उऱ्ऱ कालै
वॆट्चि मलर् पुनैय वॆळ्वाळ्
उळत्तियुम् वेण्डुम् पोलुम् ?
वॆट्चि मलर् पुनैय वॆळ्वाळ्
उळत्तियुम् वेण्डिन् वेऱ्ऱूर्क्
कट्चियुट् कारि कडिय
कुरल् इशैत्तुक् काट्टुम् पोलुम् ! 12

१२ वॆट्चि

(यह एक फूल है —शत्रु पर विजय का सूचक है। उसके फूलों की बनी माला विजय-माला के रूप में विजयी द्वारा पहनी जाती है। साहित्य में तत्संबंधी विवरण वॆट्चित् तुरै विजय-प्रकरण कहा जाता है।) शत्रु-भयंकर छोटे ग्राम का वीर गायों के झुंडों को युद्ध का आह्वान करते हुए भगा लाने के प्रयास में जब प्रवृत्त होता है तब "वॆट्चि" पहनने के लिए (विजय पाने के लिए) ज्वलंत खड्ग धारिणी देवी को (अनुग्रह को) भी चाहेगा न ! ज्वलंत खड्ग धारिणी का अनुग्रह 'वॆट्चि' धारण करने हेतु चाहेगा तो शत्रु-ग्राम के जंगल में 'कारि' नामक पक्षी कर्कश क स्वर

बोलेगा न ? (यह अपशकुन है जो इंगित करता है कि शत्रु-ग्राम नष्ट हो जाएगा और दुर्गा का अनुग्रह प्राप्त वीर विजय पाकर विजयमाला पहन लेगा) । १२

13 वॅट्चिप् पुऱनडै

कळ् विलै यात्टि मऱुप्पप्
पॉऱा मऱवन् कैविल् एन्दिप्
पुळ्ळुम् वऴिप्पडरप् पुल्लार्
निरै करुदिप् पोहुम् पोलुम्
पुळ्ळुम् वऴिपडरप् पुल्लार्
निरै करुदिप् पोहुम् कालैक्
कॉळ्ळुम् कॉडि अॅडुत्तुक् कॉऱ्ऱवैयुम्
कॉडु मर मुन्न शॅल्लुम् पोलुम् ! 13

१३ वॅट्चिप् पुऱनडै

(यह भी उसी प्रकरण का है। गो-हरण के पहले की एक बात का विवरण है।) ताड़ी बेचनेवाली जब ताड़ी देने से इनकार करती है तब मऱवन् वह अपमान सह नहीं पाता है। इसलिए वह हाथ में धनु लेकर शत्रु का गो-हरण हेतु जाता है और पक्षी भी शुभशकुन करते हुए बोलते हैं। वह पक्षी के शुभशकुन के साथ ही शत्रु का गो-हरण का रास्ता अपनाता है तब अपने हाथ में पताका लेकर कॉऱ्ऱवै (विजय-दुर्गा) भी उसके धनुष की नोक में विराज-कर जाएगी न ! १३

14 कॉडै

(वेऱु)

इळमा अॅयिऱ्ऱि। इवैकाण् निन् ऐयर्
तलैनाळै वेट्टत्तुत् तन्दनल् आन्निरैहळ्;
कॉल्लन् तुडियन् कॉळै पुणर् शीर् वल्ल
नल्लियाऴ्प पाणर्-तम् मुन्ऱिल् निऱैन्दत ! 14

१४ कॉडै दान प्रकरण

वेऱु का अर्थ है भिन्न

हे कम उमर की छवि मय अयिन-कन्या ! इनको देखो; तुम्हारे पिता के द्वारा प्रथम ही गोहरण-यत्न में लायी गयी गायों के समूहों को ! इनसे

लुहारों, ढोल-वादकों और गीत-ताल-लय सहित याळ् वादक "पाणर्" लोगों के आँगन भर गये है। १४

मुरुन्दु एर् इळनहै काणाय् निन्न् ऐयर्
करन्दै अलऱक् कवर्न्द इन्ननिरैहळ्
कळ्विलै याट्टि नल् वेय्त्तेरि कान्नवन्न्
पुळ् वाय्प्पुच् चोन्न्न कणि मुन्ऱिल् निऱैन्दन्न 15

मयूर-पंख की रीढ़ के समान सुन्दर (दाँतों) मंदहास वाली ! देखो ! तुम्हारे बड़े लोगों द्वारा, गोहरण रोकने आये शत्रुओं को रुलाकर, हर लाये गये गो-समूहों को ! ताड़ी बेचनेवाली, समाचार लाने में समर्थ गुप्तचर और पक्षी-शकुन की ठीक व्याख्या करनेवाला गणक इत्यादि के आँगन गो समूहों से भरे है; देखो। १५

कयमलर् उण्कण्णाय् काणाय् निन्न् ऐयर्
अयल् ऊर् अलऱ ऍऱिन्दनल् आन्न निरैहळ्
नयन्न इल् मोऴियिन्न नरै मुदु ताडि
अयिन्नर् ऍयिऱ्ऱियर् मुन्ऱिल् निऱैन्दन्न ! 16

काजल-लिप्त और जल-पुष्प सम आँखोंवाली ! देखो। तुम्हारे बड़े लोग, शत्रु ग्रामों को रुलाकर जो गो-समूह जीत लाये है उनसे, असंस्कृत अस्पष्ट बोली बोलनेवाले, सफेद वृद्ध दाढी वाले ऍयिन्नर् पुरुष और ऍयिन्नर् स्त्रियों के आँगन भरे है। देखो। १६

15 विऱल् तरु विलै

शुडरोडु तिरितरु मुन्निवरुम् अमररुम्
इडर्कॆड अरुळुम् निन्न् इणै अडि तॊळुदेम्;
अडल् वलि ऍयिन्नर् निन्न् अडितॊडु कडन्निदु,
मिडऱु उहु कुरुदि कॊळ् विऱल् तरु विलैये 17

१५ विजय का मोल

दोनों किरण-स्वामियों, (सूर्य और चन्द्र) मुनिगण तथा देवों का संकट-हारी तुम्हारे चरण द्वय की पूजा करते हैं। अरिन्दम बलवान ऍयिन्नर् लोग आपके चरणों में यह बलि अर्पण करते है। हे माता ! यह बलि गर्दन से

निकलने वाला रक्त है। यह तुम्हारी दी हुई विजय का मूल्य है। अपना लो देवी ! १७

अणिमुडि अमरर्तम् अरशॊडु पणितरु
मणि उरुविनै ! निऩ् मलर् अडि तॊऴुदेम्
कण निरै पॆरुविरल् ऍयिऩ् इडु कडन् इदु;
णिणन् उहु कुरुदि; कॊळ् निहर्अडु विलैये 18

हे नीलमणिवर्ण देवी ! किरीटधारी देव अपने राजा के साथ आपके चरणों में सिर नवाते है। वैसे तुम्हारे चरणों में हम नमते हैं। गो-समूह-हरण करने में दक्ष अति वलवान ऍयिऩर् लोगों से दी जानेवाली यह वलि है। यह मांस से वहनेवाला रुधिर है। तुम्हारे अनुग्रह का मूल्य है जो हम चुकाते है। अपना लो देवी। १८

तुडियॊडु शिऱुपऱै वयिरॊडु तुवै शॆय
वॆडिपड वरुववर् ऍयिऩर्हळ् अरै इरुळ्;
अडुपुलि अऩैयवर्; कुमरि निऩ् अडितॊडु
पडुकडन् इदु उहु बलिमुह मडैये 19

डमरू, छोटे ढोल, और तुरही को जोर से बजाते हुए आनेवाले हैं ये 'ऍयिऩर्'। भरे अन्धकार में जानवरों का संहार करनेवाले वाघ के समान है वे ! हे कुमारी देवी ! आपके चरण में अर्पित हो रही है, यह वलि; यह कटी गर्दन के व्रण-मुख से निकलनेवाला रक्त है। यह बलि देकर वे अपना ऋण अदा कर रहे हैं। कृपा करके अपना लो देवी। १९

16 वलिक्कॊडै

(वेऱु)

वमूवलर् पलूहि वळियुम् वळम् पड
अमूवुडै वलूविल् ऍयिऩ् कडन् उणुगुवाय्-
शङ्करि, अनुतरि, नीलि, शडामुडिच्
चॆङ्गण् अरवु पिऱैयुडन् शेर्त्तुवाय् 20

१६ बलिदान

(पद्य के पीछे की दो पंक्तियों का अर्थ पहले दिया जाता है। यह क्रम २०, २१, २२ तीनों पद्यों के सम्वन्ध में अपनाया गया है।) हे शंकरी !

अंतरी ! नीली ! जटावाले सिर पर लाल आँखवाले सर्प और बाल चन्द्र को धारण करनेवाली। राही लोगों की संख्या बढ़े। बटमारी से मिलनेवाली समृद्धि बढ़े। इस हेतु बाण सहित कठोर धनुष धारण करनेवाले ऍयिन्नर् लोगों का ऋण (दी जानेवाली बलि) अपना लो ! उपभोग करो, देवी। २०

तुण्णॅन्न् तुडियॉडु तुञ्जुऊर् ऍऱिन्दु
कण्णिल् ऍयिन्नर् इडुकडन्न् उण्गुवाय् !
विण्णोर् अमुदु उण्डुम् शाव ऑरुवरुम्
उण्णाद नञ्जु उण्डु इरुन्दु अरुळ् शॅय्हुवाय् ! 21

देव लोगों को अमृत खाने पर भी मरनेवाले बनाते हुए (समुद्र से) विष आया। उसको खाने कोई नही था उसको खाकर, अमर रहकर कृपा करने-वाली हे देवी ! 'टन' शब्द के साथ डमरू बजाते हुए, नीद में मग्न रहनेवाले ग्रामों को लूटनेवाले और दया-दाक्षिण्य से हीन "ऍयिन्नर्", की, ऋण-चुकता की, बलि (अपना लो), देवी ! उपभोग करो। २१

पॉरुळ् कॉण्डु पुण्शॅयिन्न् अल्लदै यार्क्कुम्
अरुळ्इल् ऍयिन्नर् इडुकडन्न् उण्गुवाय्
मरुदिन्न् नडन्दुनिन्न् मामन्नशॅय् वञ्ज
उरुळुम् शहडम् उदैत्तु अरुळ् शॅय्हुवाय् ! 22

अर्जुन वृक्षों के बीच से जाकर (उन पेड़ों को गिराकर), अपने मातुल द्वारा भेजे गये शकट (असुर) को नष्ट करके तुमने अनुग्रह किया। ऍयिन्नर् हैं जो पथचरो की चीजों को छीनकर उन्हें चोट लगाते है। इसके सिवा वे किसी से भी दया करनेवाले नही है। वे जो ऋण चुकाते है, उस बलि को अपनाओ देवी। २२

(दुर्गा कृष्ण की बहन है। इधर कृष्ण के रूप में ही स्तुति हुई है।)

17 वॅट्चि शूडुह

(वेऱु)

मऱैमुदु मुदल्वन्न् पिन्नर् मेय
पॉऱैउयर् पॉदियिऱ् पॉरुप्पन्न् पिऱर्नाट्टुक्
कट्चियुम् करन्दैयुम् पाळ्पड
वॅट्चि शूडुह, विऱल् वॅय्योत्ते 23

राजा "वॅट्ची" पहन ले (विजयी रहे।) पुरातन वेद-गर्भ (ब्रह्मा या शिव) के बाद गण्य-मान्य महात्मा अगस्त्य है। वे गिरियों से युक्त पॉदियै पर्वत के वासी हैं। उस पर्वत प्रदेश का स्वामी पांडिय राजा है। शत्रुओं के युद्ध-स्थल को और अपहृत गायों को लौटाने के लिए शत्रु के किये गये प्रयास ("करन्दै") को नष्ट करते हुए वह परंतप पाडिय राजा 'वट्चि' धारण करे। विजयी रहे। २३

13 पुऱञ्जेरि इरुत्त कादै

(निलैमण्डिल आशिरियप्पा)

1 इरवै अदिर् पार्त्तिरुत्तल्

पॅण्णणि कोलम् पॅयर्न्दपिऩ् पाडु
पुण्णिय मुदल्वि तिरुन्दडि पॉरुन्दिक्
कडुङ्गदिर् वेल्लिलिक् कारिहै पॉऱाअळ्;
पडिन्दिल शीऱडि परल्वॅङ् गाऩत्तुक्
कोळ्वल् उळियमुम् कॉडुम्बुऱु अहळा;
वाळ्वरि वेङ्गैयुम् मान्कणम् मऱला;
अरवुम् शूरुम् इरैतेर् मुदलैयुम्
उरुमुम् शार्न्दवर्क्कु उऱुकण् शॅय्या-
शॅङ्गोल् तॅन्ऩवर् काक्कुम् नाडु" ऎन
ऒङ्गणुम् पोहिय इशैयो पॅरिदे !
पहलॉळि तन्ऩिनुम् पल्लुयिर् ओम्बुम्
निलवॉळि विळक्किन् नीळ्इडै मरुङ्गिन्
इरुविडैक् कळिदऱ्कु एदम् इल् ऎऩक्
कुरवरुम् नेर्न्द कॉळ्हैयिन् अमर्न्दु
कॉडुङ्गोल् वेन्दन् कुडिहळ् पोलप्
पडुङ्गदिर् अमैयम् पार्त्तिरुन् दोर्क्कुप् 1-16

१३ उपनगर-प्रवेश-गाथा

(छन्द—निलै मंडिल आशिरियप् पा)

१ निशा की प्रतीक्षा में रहना

(पूर्व-वर्णित) शालिनी ने अपना वेश उतार दिया। गाना-नाचना भी

बन्द कर दिया ।) उसके बाद पुण्यवती कवुन्दि के पवित्र चरणों में पहुँच कर कोवलन् ने कहा कि तेज धूप की इस गर्मी को यह कोमलांगी सह नहीं सकेगी। इसके छोटे चरण कंकड़ीले जंगल में चलने के अभ्यस्त नहीं। (और भी) सामने आगतों को दबा सकनेवाले रीछ भी भयंकर बाँबी को नहीं खोदते। चटकीले धारीदार व्याघ्र भी हिरन-समूह से वैर नहीं दिखाता। साँप, वनदेवता, आहारान्वेषक घड़ियाल और अशनि पास आये हुओं की भी हानि नहीं करते। ऋजु-राजदण्डपाणि दक्षिण-पतियों से पालित इस देश की स्थिति है यह। इस भाँति सर्वत्र फैली उसकी कीर्ति बहुत बड़ी है। (अतः हम रात में भी जा सकते —यह कहना चाहता है।) दिन की धूप में जाने से सभी जीवों पर दया करनेवाले चन्द्र के प्रकाश में लम्बे मार्ग में रात में जाना अधिक अच्छा है। कोई हानि नहीं। यह सुनकर कवुन्दि अडिहळ् ने भी सहमति प्रगट की। उसी विचार को सबने अपना लिया। फिर वे अत्याचारी राजा की प्रजा (जो दयावान राजा के शासन की प्रतीक्षा करती है) के समान गरम किरणों के लुप्त हो जाने के समय की प्रतीक्षा में रहे। १-१६

(राजा के सुशासन का प्रभाव और कड़ी धूप का प्रभाव एक सा है।)

2 निलवुम् शौरिन्ददु

पन्नमीन् तानैयोडु पाऱ्कदिर् परप्पित्
तॆन्नवन् कुलमुदल् शॆल्वन् तोन्ऱित्
तारहैक् कोवैयुम् शन्दिन् कुळम्बुम्
शीर् इळ वन्नमुलै शेरादु ऑळियवुम्
तादुशेर् कळुनीर्त् तण्पूम् बिणैयल्
पोदुशेर् पूङ्गुळल् पॊरुन्दादु ऑळियवुम्
पैन्दळिर् आरमोडु पल्पूङ् गुरुमुऱि
शॆन्दळिर् मेऩि शेरादु ऑळियवुम्
मलयत्तु ओङ्गि मदुरैयिन् वळर्न्दु
पुलवर् नाविल् पॊरुन्दिय तॆन्ऱलोडु
पाल्निला वॆण्कदिर् पावैमेऱ् चौरिय
'वेनिल् तिङ्गळुम् वेण्डुदि' ऎन्ऱे
पार्महळ् अयाउयिर्त्तु अडङ्गिय पिन्नर् 17-29

२ चाँदनी बरसी

अनेक ताराओं की सेना के साथ दुग्ध-सम किरणें फैलाते हुए दक्षिण पतियों का कुल-मूल सोमकुमार उग आया। (चन्द्र तो उगा पर कण्णहि उसका लाभ उठा नहीं सकी। बहुत दिनों से यानी कोवलऩ् के वियोग के दिन से ही, चाँदनी की प्रेमोत्तेजक शक्ति का कोई असर नहीं रह गया था।) अब भी तारों की बनी-सी एकावली माला और चंदन का लेप मनोरम अभिनव स्तनों पर नहीं पड़े। परागयुक्त "कऴ़ुनीर" की शीतलकारी पुष्पमाला "मुलूलै" फूलों से अलंकृत केश पर नही रही, दूर रह गयी। हरे हार के साथ किसलय माला भी मनोरम किसलयनिभ उसके शरीर पर शोभा नहीं पा रही थी। मलयपर्वत से उठकर, मदुरै में बढ़ती पाकर, कवि-जिह्वा में लगकर (प्रशंसित) बहते आनेवाले दक्षिणी पवन के साथ (कण्णहि के भोग-विलास के साधनों से रहित रहने की अवस्था में) चंद्र दूध के समान चाँदनी को कण्णहि पर छिटकाने के लिए आ गया। पृथ्वी कण्णहि की स्थिति देखकर दुखी होती है। वह पूछती है— हे पुत्तलिका सम कन्ये ! इस वसन्त-चंद्र को भी चाहती हो। गरम साँसे छोड़ने के बाद वह भी थम गयी। (भूमि की भी गरमी दूर हुई।) १७-२९

3 नडन्दऩर् विडिन्ददु

आरिडै उऴ़न्द मादरै नोक्किक्
कॉडुवरि मऱुहुम्; कुडिञै कूप्पिडुम्
इडितरुम् उळियमुम् इत्तैयादु एहु ॲऩत्
तॉडिवळैच् चङ्गै तोळिऱ् काट्टि
मऱवुरै नीत्त माशऱु केऴ़्वि
अऱवुरै केट्टु आङ्गु आर् इडै कळिन्दु
वेऩल् वीऱ्ऱिरुन्द वेय्करि काऩत्तुक्
काऩवारणङ् कदिर् वरवु इयम्ब
वरिनविल् कॉऴ़्है मऱैनूल् वऴ़ुक्कत्तुप्
पुरिनूऩ् मार्बर् उऱैपदिच् चेर्न्दु-
मादवत्तु आट्टियॉडु कादलि तऩ्ऩै ओर
तोदुतीर् शिऱप्पिऩ् शिऱैयहत्तु इरुत्ति 30–41

३ बढ़ते चले; सबेरा हुआ

कठोर पथ में चलने से क्लांत तन्वी कण्णहि को देखकर कोवलऩ् ने कहा : भयंकर धारीदार व्याघ्र गरजेंगे। 'कोट्टाऩ्' (उलूक ?) पक्षी

(अपने कठोर बोल) बोलेंगे; रीछ कड़केंगे ! मत घबड़ाओ। आगे बढ़ती रहो। (तो भी रात का समय था। कण्णहि निद्रा-शिथिल रही।) उसने कंकण धारिणी कण्णहि के लाल हाथ को अपने कंधों पर रखवा लिया, अनर्थक बातों से रहित अकलंक श्रौत ज्ञान रखनेवाली कवुन्दि अडिहळ् धार्मिक बाते कहती गयीं। उनको सुनते हुए कण्णहि रास्ते का कष्ट भूली। वे मार्ग पर जाते रहे। तब धूप के कारण झुलसे हुए रहे बाँसों के वन मे आये। वन कुक्कुटों ने सूर्य के उदित होने का संकेत देते हुए बाँग दी। वे एक बस्ती में गये जो "वरि" गीत गानेवाले, और वैदिक आचरण से डिगे हुए, यज्ञोपवीत धारी लोग रहते थे। वहाँ कोवलन् ने तपस्विनी के साथ अपनी गृहधर्मिणी को (उन ब्राह्मण-गृहों से दूर) एक ओर दोष-हीन और श्रेष्ठ स्थान में पहुँचाया। ३०-४१

4 मादविक् कोडिये !

इडुमुळ् वेलि. नीङ्गि आङ्गु ओर्
नॅडुनॅरि मरुङ्गिन् नीर्तलैप् पडुवोन्-
कादलि तन्नॊडु कानहम् पोन्ददर्कु
ऊदुलैक् कुरुहिन् उयिर्त्तनन् कलङ्गि
उट्पुलम् बुरुदलिन् उरुवम् तिरियक्
कट्पुल मयक्कत्तुक् कौशिकन् तॆरियान्
कोवलन् पिरियक् कॊडुन्दुयर् ऎय्दिय
मामलर् नॆडुङ्गण् मादवि पोन्रु इव्
अरुन्दिरल् वेनिर्कु अलर् कळैन्दु उडन्रे
वरुन्दिनै पोलुम् नी मादवि ऎन्रु ओर्
पाशिलैक् कुरुहिन् पन्दरिर् पॊरुन्दिक्
कोशिह माणि कूरक् केट्टे
यादु नी कूरिय उरै ईदु ईङ्गु ? ऎन्नत् 42-54

४ माधवी लते !

(उनको वहाँ छोड़कर) कोवलन् काँटे का बेड़ पार कर दूर रहे एक जलाशय की ओर नित्य कर्म करने के विचार से आगे बढ़ा। अपनी प्यारी स्त्री को साथ लेकर जंगल में आने की मजबूरी सोचकर वह भाथी की चोंगी के समान गरम साँसे छोड़ने लगा। वह अन्दर ही अन्दर घुलता था अतः उसका हुलिया ही बदल गया था। इसलिए दूर से दृष्टि गोचर होने पर भी कौशिहन् नामक ब्राह्मण जो उधर आया था, इसको पहचान नही

सका। वह माधवी लता को संबोधित कर रहा था। उसने कहा : कोवलन के अलग हो जाने से कठोर दुख में रहती लंबी तथा पुष्प-सी आँखों वाली मादवि के समान, इस अति कठोर धूप में खिलना छोड़कर तुम भी मुरझायीं क्या ? हे माधवी लते। तब वह हरे पत्तों की माधवी लता के कुंज में खड़ा था। विप्र कौशिहऩ् का कहना सुनकर कोवलऩ् ने (उसके पास जाकर) पूछा कि अब यह तुम नें क्या कहा। ४२-५४

5 कोशिहऩ् शॊऩ्ऩवै

तीदु इलऩ् कण्डेऩ्' ऎऩच् चॆऩ्ऱु ऎय्दि-
कोशिह माणि कॊऴ्हैयिऩ् उरॆप्पोऩ्;
इरुनिदिक् किऴवऩुम् पॆरुमऩैक् किऴत्तियुम्
अरुमणि इऴन्द नाहम् पोऩ्ऱदुम्
इऩ् उयिर् इऴन्द याक्कै ऎऩ्ऩत्
तुऩ्ऩिय शुऱ्ऱम् तुयर्क् कडल् वीऴ्न्ददुम्
एवलाळर् याङ्गणुम् शॆऩ्ऱु
'कोवलऩ् तेडिक् कॊणर्ह' ऎऩ्ऱप् पॆयर्न्ददुम्;
पॆरुमहऩ् एवल् अल्लदु याङ्गणुम्
अरशे तञ्जम् ऎऩ्ऱु अरुङ्गाऩ् अडैन्द
अरुन्दिऱल् पिरिन्द अयोत्ति पोलप्
पॆरुम् बॆयर् मूदूर् पॆरुम् बेदु उऱ्ऱदुम्; 55-66

५ कोशिहऩ् का कहा

(कौशिक के ही तमिऴ रूप हैं— कोशिहऩ् या कौसिहऩ्) कोवलऩ् को पास से देखकर उसने उच्च स्वर में कहा कि हाय! मैंने देख लिया। कोवलऩ् निर्विघ्न है। कोवलऩ् के पास आकर विप्र कोशिहऩ् ने अपने आने का कार्य-कारण बताया। (निम्नलिखित बातें बतायीं :) अपार संपत्ति का स्वामी माशात्तुवाऩ्, और उसकी श्रेष्ठ गृहिणी दोनों नष्ट-मणि नाग के समान (दुबले और दुखी) हो गये; (वह बात और) प्यारे प्राणों को खो चुकनेवाले शरीर के समान उनके निकट के रिश्तेदार दुख-सागर में मग्न हुए; वह बात; नौकर "सब ओर जाकर कोवलऩ् को खोज लाओ।" —यह आज्ञा पाकर गये; वह बात और; अमित विक्रम श्रीराम जब यह कहकर जगल चले गये कि उत्तम पिता की आज्ञा ही मान्य है। नही तो राज्य तुच्छ है। तब की उनसे बिछुड़ी अयोध्या नगरी के समान नामी और पुरातन शहर अत्यत व्यथित हुआ। वह बात और; ५५-६६

6 मादवियिन् मनवेदनै !

वसन्त मालै वाय् मादवि केट्टुप्
पशन्द मेनियळ् पडर् नोय् उऱ्ऱु
नॆडुनिलै माडत्तु इडैनिलत्तु आङ्गु ओर
पडै अमै शेक्कैप् पळ्ळियुळ् वीळ्न्दु दडुम्
वीळ् तुयर् उऱ्ऱोळ् विळुमम् केट्टुत्
ताळ् तुयर् ऎय्दित् तान् शॆन्ऱु इरुन्ददुम्;
इरुन्दुयर् उऱ्ऱोळ् 'इणैयडि तॊळुदेन्
वरुन्दुयर् नीक्कु' ऎन मलर्क्कैयिन् ऎळुदि
'कण्मणि अनैयाऱ्कुक् काट्टुह' ऎन्ऱे
मण्उडै मुडङ्गल् मादवि ईत्तदुम्
ईत्त ओलै कॊण्डु इडैनॆऱित् तिरिन्दु
तीत्तिऱम् पुरिन्दोन् शॆन्ऱ तेयमुम्
वळि मरुङ्गु इरुन्दु माशऱ उरैत्तु-आङ्गु
अळिवुडै उळ्ळत्तु आर्अञर् आट्टि
पोदु अविळ् पुरिकुळल् पूङ्गॊडि नङ्गै
मादवि ओलै मलर्क्कैयिन् नीट्ट 67–82

६ 'मादवि' की मनोव्यथा

यह सब वसन्दमालै द्वारा मादवि ने (भी) सुना। वह दुख से त्रिवर्ण शरीर वाली (पीली) बनी। दुख-रोग-ग्रस्त होकर वह अपनी ऊँची अट्टालिका के मध्यखंड में गयी और वहाँ शयन कक्ष में रही शय्या पर गिर गयी। वह बात और: दुखार्णव में गिरी उसकी चिन्ता की बात सुनकर गहरे दुख के साथ कोशिहन् उसके पास जा रहा। अपने जाने की वह बात और; मादवि जो दुखाहत थी उसने कोशिहन् से कहा कि आपके दोनों पैर छूती हूँ; मेरा दुख दूर करने का उपाय करे। फिर उसने अपने पुष्प-सम हाथ से एक पत्र लिखा और उसमें मट्टी की (लांछन) मुहर लगायी। फिर मादवि ने यह कहते हुए उसके पास दिया कि मेरे नेत्र-की पुतली (-सम कोवलन्) को दिखाना। वह बात और उसके पास दत्त वह (ताल) पत्र लेकर मार्ग में घूमते हुए अग्निहोत्री कोशिहन् भटकता रहा। उसका देश-देश में भटकना— ये सारी बातें कोशिहन ने बिना किसी भूल-चूक के बतायीं और उसने लटते हुए अपने मन की गम्भीर व्यथा में डूबी रही, विकच पुष्प लसित घुँघराले बाल वाली पुष्पलता-सी, मादवि के पत्र को कोवलन् की ओर बढ़ाया। ६७-८२

7 ओलै पॆऱ्ऱान् !

उडन् उऱै कालत्तु उरैत्त नय्वाशम्
कुऱुनॆरिक् कून्दल् मण्पॊरि उणरत्तिक्
काट्टियदु; आदलिन् कैविड लीयान्
एट्टु अहम् विरित्तु; आङ्गु अॆय्दियदु उणर्वोन् 83-86

७ पत्र ग्रहण किया

उस मट्टी की मुद्रा से जिस पर मादवि को घुंघराले केश के बाल का लांछन लगा था, तेल की सुगन्ध आ रही थी। कोवलन् के साथ रहते समय वह वही तेल लगाती थी। उस मुद्रा ने उस बात का स्मरण दिलाया। इसलिए वह उसे लेने से इनकार नही कर सका। उसको लेकर पत्र का दल खोला। उससे वहाँ हुई बात जान ली। ८३-८६

8 ओलैयिन् वाशगम्

अडिहळ् मुन्नर् यान् अडि वीऴ्न्देन्;
वडियाक् किळवि मनक् कॊळल् वेण्डुम्;
कुरवर् पणि अन्ऱियुम् कुलप्पिऱप्पु आट्टियोडु
इरविडैक् कऴिदऱ्कु अॆन् पिऴैप्पु अऱियादु
कैयऱु नॆञ्जम् कडियल् वेण्डुम्;
पॊय्तरि काट्चिप् पुरैयोय् पोऱ्ऱि !
अॆन्ऱु अवळ् अॆऴुदिय इशैमॊऴि उणर्न्दु
'तन् तीदु इलळ् अॆनत् तळर्च्चि नीङ्गि
'अॆन् तीदु' अॆन्ऱे अॆय्दियदु उणर्न्दु आङ्गु 87-95

८ पत्र का समाचार

"अडिहळ् (स्वामी ! श्रावक-धर्म-रत भक्त !) आपके सामने पैरों में गिरती हूँ। मेरी असंस्कृत अस्पष्ट भाषा है तो भी कृपा करें। (माता-पिता) गुरुजनो की सेवा छोड़कर कुलीन रमणी पत्नी के साथ रात ही रात में चले जायँ, ऐसा मेरा अपराध क्या था ? मै नही जान पाती ! मेरा मन अशक्त हो रहा है। उस दुख को (आपको आकर) दूर करना चाहिए। असत्य रहित तत्त्वदर्शी महानुभाव ! आपकी दुहाई देती हूँ।" यही पत्र का लेख था। कोवलन् ने विषय की महत्ता जानी। वह निरपराध है। यह सोचकर वह निश्चिंत हुआ। उसने जान लिया कि मेरा ही कुसूर है। उसनें बीती बातों को यथार्थ रीति से समझ लिया। ८७-९५

9 कोशिहन् अनुप्पुदल्

‘अॅऱ्पयन् दोऱ्क्कु इम्मण् उडॅ मुडङ्गल्
पॊऱ्पु उडैत्ताहप् पॊरुळ् उरै पॊरुन्दियदु;
माशुइल् कुरवर् मलर् अडि तॊळुदेन्;
कोशिह माणि ! काट्टु ॲनक् कॊडुत्तु
नडुक्कङ् गळैन्दु अवर् नल्लहम् पॊरुन्दिय
इडुक्कण् कळैदऱ्कु ईण्डु अंनप् पोक्कि 96-101

९ कोशिहन् को वापस भेजना

कोवलन् ने कोशिहन् से कहा कि मेरे जनक-जननी के लिए भी यह मट्टी की मुहर लगा पत्र उपयुक्त ही होगा और वे इससे हाल जान सकेंगे। वे मन में कुछ कलंक नही रखते। उनके कमल-चरणों की वन्दना करता हूँ। इसको, हे विप्र कोशिहन्, उन्हें दिखाइये। यह कहकर उसने उसे उसके पास दिया। कहा —उनका कम्पन (सन्देह से उत्पन्न लोलायमान दशा) दूर होगा और उनका दिल में लगा दुख भी दूर होगा। कोवलन् ने कोशिहन् को वापस भेज दिया। ९६-१०१

10 पाणरोडु आडिय कोवलन्

माशुइल् कऱ्पिन् मनैवियोडु इरुन्द
आशुइल् कॊळ्है अऱविपाल् अणैन्दु आङ्गु
आडु इयल् कॊळ्है अन्दरि कोलम्
पाडुम् पाणरिऱ् पाङ्गुऱच् चेर्न्दु
शॆन्दिऱम् पुरिन्द शॆङ्गोट्टु याऴिल्
तन्दिरि करत्तु तॊडु तिववु उरुत्तु याअत्तु
ऒऱ्ऱु उरुप्पु उडैमैयिन् पऱ्ऱु वऴिच् चेर्त्ति
उळै मुदल् कैक्किळै इरुवाय्क् कट्टि
वरन् मुऱै वन्द मूवहैत् तानत्तु
पाय् कलैप् पावै पाडऱ्पाणि
आशान् तिऱत्तिन् अमैवरक् केट्टुप्
पाडऱ् पाणि अळैइ अवरोडु
कूडऱ् कावदम् कूऱुमिन् नीर् ॲनक् 102-114

१० "पाणरों" से मिलकर कोवलन् ने नृत्य किया

तत्पश्चात् कोवलन् निर्दोष चरित्रवाली अपनी पत्नी कण्णहि के साथ

रही अनिंद्य आचरणवाली धर्मात्मा स्त्री कवुन्दि के पास गया। वहाँ नाचने का पेशा करनेवाले, दुर्गा का चरित्र गाने वाले "पाणर्" (भाट की जैसी एक जाति) आये थे। उनके साथ वह युक्त रीति से मिल गया। उसने सुनिर्मित "शंङ्गोट्टु" याऴ् को लेकर "तंत्रीकर" और "तिववु" (याऴ् के ६ अंगों में दो) दोनों को कसकर बाँधा। याऴ् में "ओऱ्ऱु" नामक अंग था। उसको "पऱ्ऱु" का अनुसुरण करनेवाला बनाया। उऴै (मध्यम स्वर) को स्थायी बनाकर "कैक्किळै" को अन्तिम स्वर बनाने की योजना की (अर्थात "अरुम्वालै" की तान का आयोजन किया)। परम्परा से आने वाले तीनों स्थानों (उदात्त, अनुदात्त, स्वरित) में दौडनेवाले हिरन पर आरूढ़ देवी "कोऱ्ऱवै" (विजय दुर्गा-) के गीत के योग्य राग को गांधार जाति में संयोजित किया। फिर भाटों के गीतो के साथ लय बिठाकर उसने उनके संगत में वादन किया। यह हो चुकने के बाद कोवलन् ने उनसे पूछा कि "कूडल्" नगर की दूरी (रास्ता) बताइये। १०२-११४

11तॆन्ऱल् वन्ददु काणीर्

काऴ् अहिल् शान्दम् कमऴ पूङ् कुङ्गुमम्
नाविक् कुऴम्बु नलम् कोळ् तेय्वै
मान्मदच् चान्दम् मणम् कमऴ् दॆय्वत्
तेमॆन् कॊऴुन्जेऱु आडि; आङ्गुत्
तादुशेर् कऴुनीर् शण्बहक् कोदैयोडु
मादवि मल्लिहै मनैवळर् मुल्लैप्
पोदुविरि तॊडैयल् पू अणै पॊरुन्दि
अट्टिर् पुहैयुम् अहल् अङ्गाडि
मुट्टाक् कूवियर् मोदहप् पुहैयुम्
मैन्दरुम् महळिरुम् माडत्तु अडुत्त
अन्दीम् पुहैयुम् आहुदिप् पुहैयुम्
पल्वेऱु पुम्बुहै अळैइ वॆल्पोर्
विळङ्गु पूण् मार्बिऱ् पाण्डियन् कोयिलिन्
अळन्दु उणर्वु अऱिया आर् उयिर् पिणिक्कुम्
कलवैक् कूट्टम् काण्वरत् तोन्ऱिप्;
पुलवर् शॆन्नाप् पॊरुन्दिय निवप्पिन्
पॊदियिल् तॆन्ऱल् पोलादु ईङ्गु
मदुरैत् तॆन्ऱल् वन्ददु काणीर्
नत्ति शेय्त्तु अन्ऱु अवन् तिरुमलि मूदूर्
तत्तिनीर् कऴियितुम् तहैक्कुनर् इल् अॆन 115–134

११ दाक्षिणी पवन आता है, देखो

(उन्होंने उत्तर दिया) हीर लगा अगरु, चन्दन, सुगन्धित केसर, गन्ध-बिलाव का मद, कल्याणकारी गन्धलेप, मृग-कस्तूरी आदि के सुगन्धमय दिव्य मधुर कोमल मिश्रण में सनकर; पराग मिश्रित "कळुनीर्" "जण्बगम्" (चंपक?) के स्तबक, माधवी, बेला, गृहवर्त्ती "मुल्लै" आदि के विकसित फूलों से भरी पुष्प शय्या से लगकर (उस वास को मल लेकर); (पाकशालाओं से) रसोई (छौंकने, तलने आदि) का वास, विशाल बाजार से अविरल रूप से आनेवाला, पुआ आदि का "मोदक-वास", पुरुष तथा स्त्रियों द्वारा घर की खुली छत पर लगाये गये धूप का वास और आहुति के धुएँ का वास-इत्यादि अनेक गन्धों को बटोरता हुआ और युद्ध-विजयी, आभरण भूषित वक्ष वाले पांडियन् के मंदिर (महल) में, लगा अकूत रीति का तथा प्राणाकर्षक सुवास-मिश्रण प्रगटित करते हुए, मदुरा का मलयपवन आता है जो कवियों की जिह्वा में लगे रहने का शान रखनेवाले "पॉदियै" के दक्षिणी पवन के समान नहीं हैं (यानी यह इन सुवासों से मिश्रित है)। ऐसा मलय पवन आता है, देखो। अतः बहुत दूर नही पांडियन का वह पुरातन नगर। आप अकेले भी जायँ तो बाधा देने वाले कोई नही होंगे। ११५-१३४

12 मुरशुहळ् अदिर्न्दन

मुन्नाळ् मुऱैमैयिन् इरुन्दव मुदल्वियोडु
पिन्नैयुम् अल्लिडैप् पॅयर्न्दनर् पॅयर्न्दु आङ्गु
अरुन् दॅऱल् कडवुळ् अहन् पॅरुङ् गोयिलुम्
पॅरुम् पॅयर् मन्नवन् पेरिशैक् कोयिलुम्
पाल् कॅळु शिऱप्पिन् पल्इयम् शिऱन्द
कालै मुरशक् कनै कुरल् ओदैयुम्;
नान् मऱै अन्दणर् नविन्ऱ ओदैयुम्
मादवर् ओदि मलिन्द ओदैयुम्
मीळा वॅन्ऱि वेन्दन् शिऱप्पोडु
वाळोर् ऍडुत्त नाळ् अणि मुळवमुम्;
पोरिड् कॉण्ड पॊरुकरि मुळक्कमुम्
वारिक् कॉण्ड वयक्करि मुळक्कमुम्
पणै निलैप् पुरवि आलुम् ओदैयुम्;
किणै निलैप् पॊरुनर् वैहऱैप् पाणियुम्;
कार्क् कडल् ऑलियिन् कलिकॅळु कूडल्
आर्प्पु ऑलि ऍदिर् कॊळ आरञर् नीङ्गिक् 135–150

१२ नगाड़े ठनक उठे

पहले के दिनों के अनुकरण में, बड़ी तपस्विनी के साथ कोवलऩ् दम्पति ने (दिन में विश्राम करके) रात में मार्ग तय किया। वहाँ बहुत कठिन संहार का काम करनेवाले शंकरदेव का विशाल मन्दिर और बड़े कीर्तिमान राजा का वहुप्रशंसित मन्दिर (महल) दोनों से अलग-अलग श्रेणी के विविध नादों के जनक सवेरा-नगाडे की उच्च आवाज आ रही थी। चतुर्वेदी ब्राह्मणों के वेदपरायण की ध्वनि, महान व्रतियों के मन्त्रोच्चारण की ध्वनि, जिसके साथ से विजय कभी नही मुड़ी (हटी) थी उस राजा "पांडियऩ्" की प्रशंसा के साथ खड्गधारी वीरो ने जो नगाडे वजाये वह प्रातःकाल के नगाडे की ध्वनि, आदि ध्वनियाँ सुनाई दे रही थी। और युद्ध में हृत युद्ध-हाथियों की चिंघाड़, जंगल से पकड़ लाये गये गजों की चिंघाड़, पंक्तियों में वद्ध रहे अश्वों के हिनहिनाने का नाद आदि सुनाई दे रहे थे। और 'किणै' नामक (मरुदम् प्रदेश का विशिष्ट) ढोल वजाते हुए उनके वादक प्रातःकाल का गीत जो गा रहे थे उस स्वर के साथ नील-सागर के समान गर्जन करने वाले आनन्दरवपूर्ण मदुरै नगर के कोलाहल-नाद मिलकर आ रहे थे। इन सवने आकर मानो उनका (कोवलऩ् आदि का) स्वागत किया। उसको सुनने से उनकी (उमंग के कारण) थकावट भी दूर हुई। १३५-१५०

13 वेयै वऩप्पु

कुरवमुम् वहुळमुम् कोङ्गमुम् वेङ्गैयुम्
मरवमुम् नागमुम् तिलकमुम् मरुदमुम्
शेडलुम् शॆरुन्दियुम् शॆणबग ओङ्गलुम्
पाडलम् तऩ्ऩॊडु पऩ्मलर् विरिन्दु;
कुरुहुम् तळवमुम् कॊळ्ुङ्गॊडि मुशुण्डैयुम्
विरिमलर् अदिरलुम् वॆण्कू दाळमुम्
कुडशमुम् वॆदिरमुम् कॊळ्ुङ्गॊडिप् पहऱैयुम्
पिडवमुम् मयिलैयुम् पिणङ्गु अरिल् मणन्द
कॊडुङ्गरै मेहलैक् कोवै याङ्गणुम्
मिडैन्दु शूळ् पोहिय अहऩ्ऱु एन्दु अल्हुल्
वालुहम् कुवैइय मलर्प्पूऩ् दुरुत्तिप्
पाल् पुडैक् कॊण्डु पऩ्मलर् ओङ्गि
ऎदिर् ऎदिर् विळङ्गिय कदिर् इळ वऩमुलै
करै निऩ्ऱु उदिर्त्त कविर् इदळ्च् चॆव्वाय्
अरुवि मुल्लै अणि नहैयाट्टि

विलङ्गु निमिर्न्दु ऑळुहिय करुङ्गयल् नॅडुङ्गण्
विरैमलर् नीङ्गा अविर् अऱल् कून्दल्
उलहु पुरन्दु ऊट्टुम् उयर् पेर् ऑळुक् कत्तुप्
पुलवर् नाविऱ् पॉरुन्दिय पूङ्गॉडि
वैयै ऍन्ऱ पॉय्याक् कुलक् कॉडि
तैयऱ्कु उऱुवदु तान् अऱिन्दननळ् पोल्
पुण्णिय नऱुमलर् आडै पोर्त्तुक्
कण् निऱै नॅडुनीर् करन्दननळ् अडक्किप् 151–173

१३ "वैगै" नदी का सौन्दर्य

"कुरवम्", वकुल "कोङ्गम्", "वेङ्गै" "मरवम्" "नागम्" (पुन्नाग) 'तिलकम्' अर्जुन, 'शेडल्', "शॅरुन्दि" उच्च "जॅण्बगम्" और पाटल इत्यादि वृक्षों के फूल अधिक परिमाण में खिले थे। "कुरुहु" (माधवी) "दळवम्" (लाल बेला जाति के फूल) पुष्ट लता वाले "मुशुण्डै", बड़े-बड़े दलों वाले "अदिरल्" सफ़ेद "कूदाळम्" "कुडशम्", वदिरम्" मोटी लतावाले "पहन्ऱै" "पिडवम्" "मयिलै" इत्यादि के फूल आपस में घुल मिल कर दिखाई दिये। ये सब (पुष्प-तरु और पुष्प-वल्लियाँ, फूलों के साथ), वैगै (नदी) के ऊँचे किनारे के दोनों ओर मेखला के समान लग रहे थे और किनारे के उस नदी-स्त्री के कटि प्रदेश के समान लग रहे थे जो मेखलावृत्त, विशाल और उन्नत था। बालुका-खचित और पुष्पालंकृत पुलिन प्रदेश जो नीचे (तलहटी में) विशाल और शिरोभाग में संकरे थे, और पुष्ट थे। और उन पर प्रचुर मात्रा में विविध फूल उनको सजाते हुए पड़े थे। अतः वे आमने-सामने रहे प्रकाशमय चित्तहारी, अभिनव और मनोरम स्तन-से लगते थे। (ये ही बालू के टीले वैगै के उरोज थे।) किनारे पर के पेड़ों से गिरे कंटीले पलाश के लाल फूल उसके अधर बने। नदी की धारा के साथ बहते आये "मुल्लै" के फूल सुन्दर दन्तावली बने। आडे, तिरछे, सीधे जो तैरते रहे वे "कयल्" मीन नेत्र बने। सुगन्धित फूलों से सतत युक्त तथा लकीरों के साथ शोभायमान काला बालू केश बना। वह नदी लोक रक्षण तथा भोजन-दान का उन्नत व्रत पालन करनेवाली है। कवियों की जिह्वा में लगी (प्रशंसित) पुष्पलता है। वैगै नाम की उस अजस्र धारावाली नदी-देवी को शायद मालूम था कि उस रमणी कण्णहि का भविष्य में क्या होने वाला है। (वह दुखी हुई)। पुण्यमय सुगन्धित फूलों के फैलाव रूपी ओढनी ओढ़कर उसने अपने, आँखों में लगातार बहनेवाले आँसुओं को छिपा लिया। अपने दुख को थाम लिया। १५१-१७३

14 मरप्पुणै एऱित्तल्

पुनल्याऱु अन्ऱु; इदु पूम् बुनल् याऱु ऍन्ऱ
अन्ननडै मादरुम् ऐयनुम् तॉऴुदु
परिमुह अम्बियुम् करिमुह अम्बियुम्
अरिमुह अम्बियुम् अरुन्दुऱै इयक्कुम्
पॅरुन्दुऱै मरुङ्गिन् पॅयरादु आङ्गण्
मादवत् ताट्टियॉडु मरप्पुणै पोहित्
तेमलर् नऱुम् पॉऴिल् तॅन्ऱ करै ऍय्दि 174–180

१४ डोंगी पर चढे

यह जल-नदी नही है। पर पुष्प-जल-सरिता है। —यह कहकर हंस-गामिनी देवी और उसके पति कोवलन् ने उसका नमस्कार किया! अश्व-मुखी नाव, गज-मुखी नाव, सिंह-मुखी नाव आदि जिस घाट पर चलायी जाती थी उस बड़े घाट पर नही जाकर वे दोनों महान तपस्विनी के साथ डोंगी पर चढ़े। मधु-पूरित सुगन्धित फूलों के वृक्षों से भरे एक बाग में जो दक्षिणी किनारे पर था, जा पहुँचे। १७४-१८०

15 वारादीर् ऍन्ऱ नॅडुङ्गॊडि

वानवर् उऱैयुम् मदुरै वलम् कॉळत्
तान् नति पॅरिदुम् तहवु उडैत्तु ऍन्ऱु आङ्गु
अरुमिळै उडुत्त अहऴि शूऴ् पोहिक्;
करु नॅडुङ् गुवळैयुम् आम्बलुम् कमलमुम्
तैयलुम् कणवनुम् तनित्तु उऱु तुयरम्
ऐयम् इन्ऱि अऱिन्दन पोलप्
पण्णीर् वण्डु परिन्दु इनैन्दु एङ्गिक्
कण्णीर् कॉण्डु काल् उऱ नडुङ्गप्
पोर् उळन्दु ऍडुत्त आर् ऍयिल् नॅडुङ्गॊडि
वारल् ऍन्बन पोल् मऱित्तुक् कै काट्टप् 181–190

१५ 'मत आओ' कहनेवाली ऊँची पताका

उन्होने सोचा कि व्योमवासियों के निवास योग्य मदुरै नगर की परिक्रमा से बड़े सौभाग्य प्राप्त होंगे। अतः दुर्गम रक्षा-वन से रक्षित खाई को घूम कर जाने लगे। तब काले लम्बे "कुवळै" के फूलों और "आम्बल्", कमल आदि

फूलों ने मानो पत्नी-पति के विलक्षण दुख को असंदिग्ध रूप से जान लिया हो— वैसा वे भ्रमर-स्वर द्वारा अपना रोना प्रकट करते हुए, आँखों में जल भरकर पैरों में काँप उठे। और शत्रु पर विजय प्राप्त करके उसकी स्मृति में ऊँचे फहराया गया ऊँचा झण्डा ऐसा फहर रहा था मानो वह कह रहा हो कि यहाँ मत आओ। (आफ़त आ पड़ेगी)। १८१-१९०

16 पुऱञ्जिऱै मूदूर् पुक्कदु

पुळ्ळणि कळत्तियुम् पॊऴिलुम् पॊरुन्दि
वॆळ्ळनीर्प् पण्णैयुम् विरिनीर् एरियुम्
कायक्कुलैत् तॆङ्गुम् वाऴैयुम् कमुहुम्
वेय्त्तिरळ् पन्दरुम् विळङ्गिय इरुक्कै;
अऱम्पुरि मान्दर् अल्लदु चेराप्
पुऱञ्जिऱै मूदूर् पुक्कनर् पुरिन्दु अॆन् 191–196

१६ पुरातन उपनगर पहुँचे

(वे पुरातन उपनगर पहुँचे। वहाँ) पक्षियों से पूर्ण खेत थे। बाग बने थे। पुष्कल परिमाण में जल से पूर्ण तडाग थे। विस्तारपूर्ण झील थी। लटकते फलों के नारिकेल तरुओं केले के और फूग के पेड़ों और मोटे बाँसों के बने मण्डप (पंडाल) पाये जाते थे। वहाँ धर्मचारी लोगों के सिवा अन्य लोग नहीं रहते थे। वैसे उपनगर में वे तृप्ति के साथ जा पहुँचे। १९१-१९६

14 ऊर् काण् कादै

(निलैमण्डिल आशिरियप्पा)

1 तुयिलॆऴुन्द मदुरै

पुऱञ्जिऱैप् पॊऴिलुम् पिऱङ्गु नीर्प् पण्णैयुम्
इऱङ्गुकदिर्क् कळत्तियुम् पुळ्ळॊलुन्दु आर्प्पप्
पुलरि वैहऱैप् पॊय्हैत् तामरै
मलर् पॊदि अविऴ्त्त उलहु तॊऴु मण्डिलम्
वेन्दुतलै पत्तिप्प एन्दुवाळ् शॆऴियन्
ओङ्गुयर् कूडल् ऊर्तुयिल् अॆडुप्प 1–6

१४ नगर-दर्शन गाथा

१ नींद से उठा मदुरै-नगर

उपनगर के उद्यानों, जल-पूर्ण सरोवरों और सिर झुकाये खडे रहे धान के पौधों से भरे खेतों में पक्षी उठकर कलरव करने लगे। बढ़ते दिन के उषा-काल में सरोवरो में कमलों की पखुडियों को खोलने वाला, लोक-वन्दित सूर्य-मंडल, शत्रु राजाओं के सिरो को कंपाते हुए जो 'रौऴ़ियऩ्' (पाण्डिय राजा) तलवार चलाने वाला था उसके मदुरै नगर को नींद से जगाने लगा। १-६

2 कालै मुरशुहळ् मुऴ़ङ्गिऩ

नुदल्विऴ़ि नाट्टत्तु इऱैयोऩ् कोयिलुम्
उवणच्चेवल् उयर्त्तोऩ् नियममुम्
मेऴ़ि वलऩ् उयर्त्त वॆळ्ळै नगरमुम्
कोऴ़िच् चेवऱ् कॊडियोऩ् कोट्टमुम्
अऱत्तुऱै विळङ्गिय अऱवोर् पळ्ळियुम्
मऱत्तुऱै विळङ्गिय मऩ्ऩवऩ् कोयिलुम्
वाल् वॆण् शङ्गॊडु वहैपॆऱ्‌ ऱोङ्गिय
कालै मुरशङ् कऩैकुरल् इयम्बक् 7–14

२ प्रातः कालीन नगाड़े बज उठे

भाल-नेत्र को अपलक दृष्टि वाले परमेश्वर के मंन्दिर में, गरुड़-केतन विष्णु के मंदिर में, हलधर बलराम के मंदिर में, कुक्कुट-पताका-युक्त षण्मुख के मंदिर में, धर्मवादी आचार्यों के धर्म-आश्रमो मे और वीरता के जीवन मे लगे रहे राजा के मंदिर (महल) में पवित्र श्वेत शख और अन्य वाद्यों के साथ समयोचित रीति से बजने वाले उषा-नगाड़े भी नाद कर उठे। ७-१४

3 पादक् काप्पिनळ्

कोवलऩ् शॆऩ्ऱु कॊळ्हैयिऩ् इरुन्द
कावुन्दि ऐयैयैक् कै तॊऴ़ुदु एत्ति
नॆऱियिऩ् नीङ्गियोर् नीर्मैयेऩ् आहि
नऱुमलर् मेऩि नडुङ्गु तुयर् ऎय्द
अऱियात् तेयत्तु आरिडै युऴ़न्दु
शिऱुमै युऱ्ऱेऩ् शॆय् तवत् तीर् याऩ्
तॊऩ्ऩहर् मरुङ्गिऩ् मऩ्ऩर् पिऩ्ऩोर्क्कु

ऍन्त्तिलै उणर्त्ति यान् वरुङ् गारुम्
पादक् काप्पित्तळ् पैन्दौडि आहलिन्
एदम् उण्डो अडिहळ् ! ईङ्गु ? ऍन्ऱलुम् 15-24

३ चरणाश्रिता

तब कोवलन् ध्यान मग्न रही कवुन्दि स्वामिनी के पास गया और हाथ जोड़कर बोला— "गृह धर्म से अलग रहने वाली वेश्या का सहवास करके, फलस्वरूप सुगंधित पुष्प-कोमलांगो को हिलाने वाले दुख के वश में डालते हुए मैंने अज्ञात प्रदेश के कठोर मार्ग में कष्ट उठाया। मैं लप्पु बन गया। हे ! तप-लीन देवी ! मैं इस पुरातन नगर में, क्षत्रिय वर्ग के बाद गणित वैश्यों के पास जा रहा हूँ। उनको अपनी स्थिति बतलाकर जब तक मैं लौट नहीं आऊँ तब तक यह मनोरम कंकण धारिणी आप की चरणाश्रिता रहेगी। इस में आपको कोई कठिनाई होगी क्या ? हे अडिहळ् ! १५-२४

4 वरुन्दादु शॅन्ऱु वरुह

कवुन्दि कूऱुम् कादलि तन्नौडु
तवन्दीर् मरुङ्गिन् तत्तित्तुयर् उळ्न्दोय् !
मऱत्तुऱै नीङ्गुमिन् वल्वित्तै ऊट्टुम् ऍन्ऱु
अऱत्तुऱै माक्कळ् तिऱत्तिन् शाऱ्ऱि
नाक् कडिप्पु आह वाय्प्पऱै अऱैयिनुम्
याप्पऱै माक्कळ् इयल्बिऱ् कौळ्ळार् :
तीवुडै वॅव्वित्तै युरुत्त कालैप्
पेदैमै कन्दाप् पंरुम्वेदु उऱुवर्
ऑय्या वित्तैप्पयन् उण्णुङ् गालैक्
कैयाऱ् कौळ्ळार् कऱ्ऱु अऱि माक्कळ्
पिरिदल् तुन्बमुम् पुणर्दल् तुन्बमुम्
उरु वि लाळन् ऑरुक्कुम् तुन्बमुम्
पुरिकुळन् मादरप् पुणऱन्दोर्क्कु अल्लदु
ऑरु तत्ति वाळ्क्कै उरवोर्क्कु इल्लै
पॅण्डिरुम् उण्डियुम् इन्बम् ऍन्ऱु उलहिन्
कॉण्डोर् उऱुउम् कॉळ्ळात् तुन्बम्
कण्डनर् आहिक् कडवुळर् वरैन्द
कामञ् जार्बाक् कादलिन् उळन्दु आङ्गु

एमन् जारा इडुमबै ऐय्वित्तर्
इन्ऱे अल्लाल् इऱन्दोर् पलराल्
तॉन्ऱु पड वरूउम् तॉन्मैत्तु आदलिन्
तादै एवलिन् मादुडन् पोहिक्
कादलि नीङ्गक् कडुनदुयर् उऴन्दोन्
वेद मुदल्वर् पयन्दोन् ऎन्बदु
नीअऱिन् दिलैयो ? नॆडुमॊऴि अन्ऱो !
वल्लाडु आयत्तु मण् अरशु इऴन्दु
मल्लियल् तन्नुडन् वॆङ्गान् अडैन्दोन्
कादलिऱ् पिरिन्दोन् अल्लन् कादलि
तीदॊडु पडूउम् शिऱु मैयल् अल्लळ्
अडविक् कानत्तु आय्इऴै तन्नै
इडै इरुळ् यामत्तु इट्टु नीक्कियदु
वल्वित्तै यन्ऱो ? मडन्दै तन् पिऴैयॆन्ऱच्
चॊल्ललुम् उण्डेल् शॊल्ला योनी ?
अनैयैयुम् अल्लै; आय् इऴै तन्नॊडु
पिरिया वाऴ्क्कै पॆऱ्ऱनै अन्ऱे
वरुन्दादु एहि मन्नवन् कूडल्
पॊरुन्दुऴि अऱिन्दु पोदु ईङ्गु ऎन्ऱलुम् 25-61

४ निश्चिन्त हो आओ

कवुन्दि देवी बोलीं-प्रिया के साथ क्षीण-पुण्य अवस्था में बहुत ही घोर दुख से पीड़ित हे कोवलन् ! "अधर्म (पाप कर्म) छोड़ दो; कठोर कर्म, फल भुगता कर ही छोड़ेगा" ! यह धर्म-मार्ग-गामी लोग उचित रीति से कहते हुए मानो जिह्वा के चोब की चोट कर मुख रूपी ढोल बजाते हैं। तो भी पुण्य के अविश्वासी लोग अपनी दुष्प्रकृति के कारण उसे अपना आचरण नही बना लेते। जब अहित-कर, कठोर तापक कर्म आकर त्रास देता है तब अज्ञता के कारण बहुत ही खिन्न होते है। अवार्य कर्म-फल को भुगतते समय विद्या संपन्न लोग होश हवास नही खोते ! वियोग का दुख और संयोग का सुख (काम और अर्थ दोनों क्षेत्रों में नहीं मिला सो दुख, मिला भी फिर वियोग हो जाये-वह दुख-दोनों स्थितियों में) अनंग (काम में मन्मथ और अर्थ में अभाव) का दिया जाने वाला त्रासक दुख, यह सब कुटिल केशिनी स्त्रियों का संसर्ग रखने वालों के लिए ही है, अन्य अकेला (ब्रह्मचर्य या संन्यासी का, तपस्वी एकान्तवासी) जीवन बिताने वाले मनस्वियों के लिए नहीं ! नारी और

आहार-दो ही सुख हैं-ऐसा मानकर जो चलते है उनको अपार दुख होता है। इस बात को देख-समझकर भी ईश्वर भक्तों द्वारा वर्जित काम के वश में पड़ने से जो लोग रागमय जीवन में फँस कर असीम दुख पाते हैं ऐसे अनेक आज भी रहते हैं और पहले हो भी चुके हैं। यह बहुत पुराने काल से चली आनेवाली चिरंतन बात है। उसका सबूत देखो: पिता की आज्ञा से, पत्नी के साथ जंगल गये, फिर वहाँ पत्नी के अलग किये जाने पर बहुत दुख में पड़े थे वेदगर्भ (ब्रह्मा) के जनक (विष्णु देव-श्रीराम)। क्या यह बात तुम नहीं जानते ? यह तो पुराण की बात है ? (और एक मानवी उदाहरण देखो) द्यूत भूमि में देश तथा शासन दोनों को खोकर कोमल वधू के साथ घोर जंगल में जाना जिसको पड़ा उस नल ने तो प्रेम के कारण पत्नी को नहीं छोड़ा था। उसकी पत्नी भी पाप कार्य में लगनेवाली नीच स्त्री नहीं थी। घने जंगल में श्रेष्ठ आभरण भूषिता को अंधकार भरी अर्ध रात्रि में छोड़ जाना कठोर पूर्व कर्म का फल ही था न ? इसमें स्त्री का कुछ दोष था क्या ऐसा भी कहा जा. सकता है ? कहो न ! हाँ, तुम उन दोनों के भी समान नहीं हो। (अच्छा है) तुम अपनी पत्नी से अपृथक-जीवन पाये हो ! जाओ। निश्चित हो जाओ। राजधानी कूडल् नगर में जाकर वहाँ निवास का मार्ग जानकर इधर आओ।"२५-६१

5 शुरुङ्गै वीदि कडत्तल्

इळैशूळ् मिळैयोडु वळैवुडन्न् फिडनृद
इलङ्गु नीर्प् परप्पिन्न् वलम् पुणर् अहळियिल्
पॅरुङ्गै यात्तै इत्तनिरै पॅयरुम्
शुरुङ्गै वीदि मरुङ्गिड् पोहिक् 62–65

५ सुरंग-मार्ग में जाना

बेड़ के अंदर रही रक्षणाटवी की सीमा में वह नगर की खाईं थी। उसमें जल परिपूर्ण था। वह नगर की चारों ओर गोल बनकर कड़ी रक्षा करती थी। उसके नीचे एक सुरंग मार्ग बना था जिसमें बड़ी सूँड़ वाले गजों के झुंड आते जाते थे। उस मार्ग से कोवलन्न भी गया। ६२-६५

6 अहनगर् शेर्दल्

कडिमदिल् वायिल् कावलिड् चिड्नृद
अडल्वाळ् यवत्तर्क्कु अयिरावु पुक्कु आङ्गु

आयिरम् कण्णोन् अरुङ्गलच् चॅप्पु
वाय् तिऱन् दन्न मदिलह वरॆप्पिल्- 66–69

६ ठेठ नगर पहुँचना

शत्रु को रोकनेवाला, प्राचीरों का द्वार था। उसमें खड्गधारी यवन लोग पहरा दे रहे थे। उनको संदेह न हो-ऐसी रीति से कोवलन् अंदर प्रवेश कर गया। वहाँ उसने देखा कि नगर सामने ऐसा खुला पड़ा है मानो सहस्राक्ष (इंद्र) का अपूर्व आभरण-मंजूषा खुला पड़ा हो! वह उस प्राचीर वलयित मध्य नगर में पहुँचा। ६६-६९

7 महळिर् पुन्नलाट्टु

कुडकाऱ्ऱु ऍरिन्दु कॊडि नुडङ्गु मरुहिन्
कडैकऴि महळिर् कादल् अम् शॆल्वरॊडु
वरुपुनल् वैयै मरुदोङ्गु मुन्तुऱै
विरिपून् दुरुत्ति वॆण्मणल् अडैकरै
ओङ्गु नीर् माडमॊडु नावाय् इयक्किप्
पूम्बुणै तऴीइप् पुनल् आट्टु अमर्न्दु 70–75

७ स्त्रियों की जल क्रीड़ा

(उपशीर्षक ७ से लेकर १७ तक में दिन का त्रिकाल, तथा वर्ष की षड् ऋतुओं का वर्णन है। तब मदुरै नगर वासी क्या क्या करते थे उसका सरस वर्णन है। यह आवश्यक महाकाव्यांग है) पश्चिमी हवा (जेठ महीने की हवा) जोर से बही और वीथी में झण्डे बल खाते फहराते थे। उस वीथी में द्वार-मर्यादा छोड़ चुकी (शाल भंजिका) स्त्रियाँ अपने धनी प्रेमियों के साथ गयी और अविरल-धारा वैगै के अर्जुन तरु शोभित घाट पर पहुँची। नदी के बीच-बीच में सफेद वालुका कणों के पुलिन पड़े थे। उनकी ओर वे कमरे के साथ सजी सुदर भवन-नौकाओं पर और नावों पर गयी। कुछ डोंगी पकड़कर तैर कर गयी। वे जल क्रीड़ा की इच्छुक थीं। (यह प्रातः कालीन दृश्य-सौदर्य है।) ७०-७५

8 महळिर् पॊऴिलाट्टु

तण्णऱु मुल्लैयुम् ताऴ्नीर्क् कुवळैयुम्
कण्णविऴ् नॆय्दलुम् कदुप्पुऱ अडैच्चि;
वॆण्पू मल्लिहै विरियलॊडु तॊडर्न्द

तण्शॆङ् गळुनीरत् तादुविरि पिणैयल्
कॊऱ्‌कैयम् पॆरुन्दुऱै मुत्तॊडु पूण्डु
तॆक्कण मलैयहच् चॆळुञ्जेऱु आडिप्
पॊऱ्‌कॊडि मूदूरप् पॊळिल् आट्टु अयर्न्दु आङ्गु 76–82

८ नारियों का उपवन विहार

शीतल सुगंधित "मुल्लै" पुष्प, गहरे जल में उत्पन्न "कुवळै," और आँखों के समान प्रफुल्ल "नॆयूदल्" के फूलों को सौदर्य मय रूप से केश में सजाकर, श्वेत 'मल्लिका' के फूलों से युक्त, शीतल लाल "कळ्नीर्" की पराग-बिखेरती माला को कोऱ्‌कै (समुद्र घाट का नगर) के बड़े घाट से प्राप्त मोतियों के साथ पहने हुए, और दक्षिणी मलय पर्वत के चंदन का गाढ़ा लेप मल लेकर स्वर्ण लताएँ-सी अंगनाएँ पुरातन मदुरै के परवर्ती बागों में जाकर मनोरंजन करना चाहती हुई जा रही थीं। ७६-८२

9 महळिर् अन्दिक् कोलम्

ऎऱ्पडु पॊळुदिन् इळनिला मुत्ऱिल्
ताळ् तरु कोलम् तहै पाराट्ट
वीळ्पूञ् जेक्कै मेल् इनिदु इरुन्दु आङ्गु 83–85

९ महिलाओं की सांध्य-सज्जा

सूर्य डूब रहा था। स्त्रियाँ मंद चाँदनी से सिक्त हर्म्य पर गयीं। अपने प्रेमियों की प्रशंसा का पात्र बनती हुई उन्होंने अलंकार कर लिया। फिर वे मनोरम पुष्प शय्या में जाकर बहुत सुख का अनुभव करती रहीं। ८३-८५

10 महळिरिन् कार्‌कालच् चॆव्वि

अरत्तप् पूम्बट्टु अरैमिशै उडीइक्
कुरल् तलैक् कून्दल् कुडशम् पॊरुन्दिच्
चिरुमलैच् चिलम्बिन् शॆङ्गू दाळमॊडु
नरु मलर्क् कुऱिञ्जि नाण्मलर् वेय्न्दु
कुङ्गुम वरुणम् कॊङ्गैयिन् इळैत्तुच्
शॆङ्गॊडु वेरिच् चॆळुम्पूम् बिणैयल्
शिन्दुरच् चुण्णम् शेर्न्द मेनियिल्
अन्दुहिर्क् कोवै अणियॊडु पूण्डु

मलैच् चिऱुहु अरिन्द वच्चिर वेन्दऱ्कुक्
कलि कॊळु कूडल् शॆव्वणि काट्टक्
कार् अरशाळत्र वाडैयोड् वरूउम्
कालम् अन्ऩ्ऱियुम् 86-97

१० नारियों का वर्षा कालीन साज

रक्तिम कोमल कौशेय कटि में धारण करके स्त्रियों ने स्तवक सम सँवारे गये केश पर "कुडशम्" के फूल खोंस लिये। "शिऱुमलै" गिरि पर उत्पन्न "लाल" कूदाळम्," और अति सुगंध —वह 'कुऱिञ्जि' के फूलों को भी खोस लिया। कुंकुम वर्ण को स्तनों पर अर्पित (चित्रों के रूप में) कर लिया। लाल 'कॊडुवेरि' नाम के फूलों की खूब सटाकर गुथी मोटी माला को अपनें सिंदूर-वर्ण चर्चित वक्षा में प्रवाल-मणि-हार के साथ धारण कर लिया। यह पर्वत-पंख-भेदी वज्र-पति को कोलाहल पूर्ण कूडल् नगर की समृद्धि सौंदर्य को दिखाने हेतु मेघ-राज (वर्षा ऋतु पति) के उदीची हवा के साथ आगमन का समय था। (उसके अनुरूप स्त्रियाँ तत्कालीन फूल आदि के साथ अपने को सजा लेती थीं।) और भी ८६-९७

11 कूदिर्क् कालत्तिल्

... ... नूलोर् शिऱप्पित्र
मुहिल् तोय् माडत्तु अहिल् तरु विऱहित्र
मडवरल् महळिर् तडवु नॆरुप्पु अमर्न्दु
नऱुञ्जान्दु अहलत्तु नम्बियर् तम्मॊडु
कुऱुङ्गण् अडैक्कुम् कूदिर्क् कालैयुम् 98-101

११ शरत् काल में

शिल्प-शास्त्रज्ञ के निर्देश में मदुरै के मेघ-चुंबी प्रासाद बने हुए थे। उनमें सौंदर्यवती रमणियाँ अगरु काष्ठ की जलती अग्नि के पास, सुगंधित चंदन-चर्चित विशाल वक्षा वाले अपने प्रेमी नायकों के साथ, खिड़कियों के संकरे छेदों को बंद करके बैठ जाती। यह शरत् काल का ठाठ था। ९८-१०१

12 मुन्पनिक् कालत्तिल्

वळमत्तै महळिरुम् मैन्दरुम् विरुम्बि
इळनिला मुन्ऱिलित्र इळवॆयिल् नुहर
विरि कदिर् मण्डिलम् तॆऱ्कु एऱ्बु वॆणमलै
अरिदिल् तोन्ऱुम् अच्चिरक् कालैयुम् 102-105

१२ हेमंत ऋतु में

समृद्ध घरों की नारियाँ और नर प्रेम के साथ मंद कौमुदी जहाँ पड़ती है (घर के) उस स्थल में जाकर मंद धूप का आनंद उठाते है। (क्योंकि वह ऐसा समय है जब) बिखरती किरणों का सूर्य दक्षिण (मिथुन) पथ में संचार करता है और श्वेत मेघ भी बिरला दिखाई देते है। (यह हेमंत कहाँ ?) १०२-१०५

13 पिन्न् पनिक् कालत्तिल्

आङ्गु अदु अन्नियुम् ओङ्गु इरुम् परप्पिन्
वङ्ग ईट्टत्तुत् तॊण्डियोर् इट्ट
अहिलुम् तुहिलुम् आरमुम् वाशमुम्
तॊहुकरुप् पूरमुम् शुमन्दुडन्न् वन्द
कॊण्डलॊडु पुहुन्दु कोमहन्न् कूडल्
वॆङ्गण् नॆडुवेळ् विल् विळाक् काणुम्
पङ्गुनि मुयक्कत्तुप् पनि अरशु याण्डुळन्न् ? 106–112

१३ शिशिर ऋतु में

(तमिळ् में अपर-हिम-काल कहा जाता है। हेमंत पूर्व-हिम काल कहा जाता है।) इसके अलावा उन्नत (लहरों वाले) विशाल समुद्र से नौकाओं में 'तॊण्डि' के प्रदेश वासी द्वारा पांडिय राजा की भेंट के रूप में अगरु, रेशम, चंदन, गंध-द्रव्य और कर्पूर इत्यादि आते थे। उन नौकाओं और पूरबी हवा के साथ फागुन में, राजधानी में घुसकर शिशिर का राजा गजब ढ़ाता आता और रतिपति के धनु का मुग्धकारी प्रभाव देखता था। (नर नारियों को प्रेम-लीला में जुटा देता था) वह शिशिर का राजा अब रहता कहाँ है ? (इस तरह प्रेमी आपस में प्रश्न कर रहे थे।) १०६-११२

14 इळवेनिर् कालत्तिल्

कोवै मादवि कॊळुङ्गॊडि अंडुप्पक्
कावुम् कानमुम् कडिमलर् एन्दत्
तॆन्नवन्न् पॊदियिल् तॆन्नलॊडु पुहुन्दु
मन्नवन्न् कूडल् महिळ् तुणै तळुउम्
इन्न् इळ वेनिल् याण्डुळन्न् कॊल् ? अॆन्नुरु
उरुवक् कॊडियोर् उडंप्पॆरुङ् कॊळ्ळुनरॊडु
परुवम् अॆण्णुम् पडर्तीर् कालै 113–119

१४ बसन्त काल में

बसंत में हारोपम माधवी अपनी पुष्ट लताओं को बढ़ाती है। बाग और उपवन सुंदर फूल धारण कर लेते है। ऐसे समय में दक्षिण पति की राजधानी (मदुरै) में मलय पवन के साथ प्रवेश करके वसंत राज नर-नारियों को उनकी जोड़ियों के साथ आलिंगन-बद्ध बना देता है। ऐसा वसंत काल का राजा कहाँ रह गया है ?-इस भाँति लता सी तन्वियाँ अपने प्यारे सम्मानित पतियों से पूछती है और (ग्रीष्म काल में) अन्य ऋतुओ की बाते याद करके अपने मन को हलका कर रही है। (इधर दो बातें ध्यान देने योग्य है। छहों ऋतुओं का वर्णन करना था; कर दिया गया। पर वह एक ही समय में करना पड़ गया। अत: लोगों से तत् तत् काल संबंधी विवरण के साथ प्रश्न कराया जाता है कि वह काल-पति कहाँ रह गया ? दूसरी: प्रात: काल के वर्णन में पुर-वामाओं की चर्चा की गई है। बाद के वर्णन में "वारांगना" का शब्द स्पष्ट रूप से नही आया है। अत: सर्वत्र वारांगनाओं की ही चर्चा हुई है-यह मानने की आवश्यकता हम नही समझते। पुस्तक में ही अन्य स्थलों में "स्त्रियाँ" या नारियाँ शब्द और 'उनके पति' शब्द ही आये हैं।) ११३-११६

15 वेत्तिऱ् कडै नाळित्तिल्

कन्ऱु अमर् आयमोडु कळिऱ्ऱित्तम् नडुङ्ग
ॲन्ऱुळ् नित्ऱ कुन्ऱुकॆळु नल्नाट्टुक्
काडुतीप् पिऱप्पक् कत्तै ॲरि पौत्तिक्
कोडैयोडु पुहुन्दु कूडल् आण्ड
वेत्तिल् वेन्दत्त वेऱ्ऱुप् पुलम् पडर
ओशत्तिक् किन्ऱ उरु वॆयिऱ् कडैनाळ् 120–125

१५ गर्मी के अंतिम दिनों में

(तमिळ् शीर्षक का अर्थ होगा: वसंत के अंतिम दिनों में यानी ग्रीष्म में। "ग्रीष्म के आखिरी दिनो में"-यह अर्थ भी माना जा सकता है।) गर्मी में कलभ, हथिनियाँ और इनके साथ हाथियों के झुण्ड काँप उठते है। वैसा धूप पर्वतों से भरे प्रदेश में स्थायी होकर तेज़ पड़ती रहती है। जंगल में मानो आग-सी लग गयी हो वैसी सर्वत्र गजब की गर्मी फैल जाती है। ऐसी भयंकर रीति से पश्चिमी हवा के साथ कूडल् नगर में प्रवेश करके ग्रीष्म-राज शासन कर रहा है। अब वह दूसरे प्रदेश में जाने की बात सोच रहा है।

ऐसे ग्रीष्म के आखिरी दिन हैं। (कोवलन् नगर वासियों को देखता हुआ बढ रहा है। अब रईसों की तथा राज वीथियो में से गुजर रहा है।) १२०-१२५

16 शॅल्वर् अरशर् महिळ्म् वीदि

वैयमुम् शिविहैयुम् मणिक्काल् अमळियुम्
उय्या तत्तिन् उरुतुणै महिळ्चच्चियुम्
शामरैक् कवरियुम् तमनिय अडैप्पैयुम्
कूर्नुनै वाळुम् कोमहन् कॊडुप्पप्
पॆर्र् शॆल्वम् पिऱ्ळा वाळ्क्कैप्
पॊऱ्रीडि मडन्दैयर् पुदुमणम् पुणर्न्दु
शॆम्पॊन् वळ्ळत्तुच् चिलदियर् एन्दिय
अन्दीम् तेऱल् मान्दिनर् मयङ्गिप्
पॊरिवरि वण्डिनम् पुल्लु वळि अन्रियुम्
नरुमलर् मालैयिन् वरिदुइडम् कडिन्दु आङ्गु
इलवु इदळ्च् चॆव्वाय् इळमुत्तु अरुम्बप्
पुलविक् कालत्तुप् पोऱ्ादु उरैत्त
कावियङ् गण्णार् कट्टुरै अॆट्टुक्कुम्
नावॊडु नविला नहैपडु किळवियुम्
अन्जॆङ् गळुनीर् अरुम्बु अविळ्त् तन्न
शॆङ्गयल् नॆडुङ्गण् शॆळुङ् गडैप् पूशलुम्
कॊलै विल् पुरुवत्तुक् कॊळुङ्गडै शुरुळत्
तिलहच् चिरुनुदल् अरुम्बिय वियरुम्
शॆव्वि पार्क्कुम् शॆळुङ्गुडिच् चॆल्वरॊडु
वैयङ् कावलर् महिळ् तरु वीदियुम् 126-145

१६ रईसों और राजाओं की भोग वीथी

(यह वैसी सुंदरी वेश्याओं की वीथी है जहाँ रईसों के कुमार तथा राजकुमार लोग आकर सुंदरी युवतियाँ के साथ मनोरंजन करते हैं।) इन भोग्याओं को राजा से बंद गाड़ियाँ, शिविकाएँ, मणि-चरण-पर्यंक, उद्यान में मन मोहक पुरुषों के साथ सहवास का आनंद, सफेद चामर, स्वर्ण के तांबूल-दान, तेज धार दार खड्ग, इति-आदि उपहार में मिलते थे। उन्हे बराबर यह धन-दौलत मिलती रहती थी। वे ऐसी समृद्धि के जीवन में निरंतर रहती थीं और ये स्वर्ण लता सी स्त्रियाँ नये नये विवाह (संसर्ग) पाकर खुश रहती थीं। (संसर्ग के बाद थकावट दूर करने) लाल स्वर्ण के बने प्यालों में दासियाँ

उमदा तथा मधुर मद्य भर देतीं और ये पीकर मस्त रहतीं। चित्तीदार भ्रमर एक ही जगह पर लगे तो नहीं रहते। वे अपने लिये अयोग्य स्थान में भी जा बैठते। वे इन स्त्रियों की मालाओं पर भी जा बैठते हैं। तब स्त्रियाँ गाली देती हुई उन्हें भगातीं तब उनके सेमर-फूल-से अधरों पर मंद हास फैल जाता। वे मान दिखातीं, मान के समय वे सावधानी खोकर कुछ बातें कह लेती। इन नीलोत्पलाक्षियों के वे शब्द उच्चारण के आठों (मूर्धा, कंठ, गला, दाँत, अधर, जिह्वा, नाक, तालू आदि) स्थानों में लगे विना ही निकलते थे। अतः (अस्पष्ट) वे शब्द हंसी पैदा कर देते थे। पर उनका अर्थ प्रेमी के दिल को चुभने वाला होता था। उनकी सुंदर, खिली लाल कळुनिर् कली के दल के और कयल् मछली के समान लंबी आँखों के अपांग से मान के शर प्रगट हो रहे थे। प्राणांतक धनु सम भौंहे तन जाती। तिलक मंडित छोटा (सुदर) ललाट स्वेद युक्त हो जाता। माननियों के इस सुदर रूप से एक विचित्र उल्लास पाने वाले रईसों और राज-कुल के युवक जहाँ आकर अपना मनोरंजन कर लेते थे उस वीथी से कोवलन् गुजरा। फिर १२६-१४५

17 कलैयोर् वीदि

शुडुमण् एड़ा वडुनीङ्गु शिऱप्पिन्
मुडि अरशु ऑडुङ्गुम् कडिमनै वाऴ्क्कै
वेत्तियल् पॊदुवियल् ॲन्र. विरु तिऱत्तु
मात्तिरं अऱिन्दु मयङ्गा मरबिन्
आडलुम् वरियुम् पाणियुम् तूक्कुम्
कूडिय .कुयिलुवक् करुवियुम् उणर्न्दु
नाल् वहै मरबिन् अविनयक् कळत्तिनुम्
एऴ् वहै निलत्तितुम् ऍय्दिय विरिक्कुम्
मलैप्पु अरुम् शिऱप्पिन् तलैक्कोल् अरिवैयुम्
वारम् पाडुम् तोरिय मडन्दैयुम्
तलैप्पाट्टुक् कूत्तियुम् इडैप्पाट्टुक् कूत्तियुम्
नाल् वेऱु वहैयिन् नयत्तहु मरबिन्
अॅट्टुक् कडै निऱुत्त आयिरत्तु ऍण् कळञ्जु
मुट्टा वैहल् मुऱैमैयिन् वळाअत्
ताक्कु अणङ्गु अनैयार् नोक्कु वलैप् पट्टु आङ्गु
अरुम् पॆरल् अऱिवुम् पॆरुम् पिऱिदु आहत्
तवत्तोर् आयितुम् तहैमलर् वण्डिन्

नहैप्पदम् पार्क्कुम् इळैयोर् आयित्तुम्
काम विरुन्दिन् मडवोर् आयिनुम्
एम वैहल् इन्नुयिल् वदियुम्
पण्णुम् किळैयुम् पळित्त तीन्जोल्
अँण्णॅण् कलैयोर् इरु पॅरु वीदियुम् 146-167

१७ कलावतियों (वेश्याओं) की वीथी

शीर्षस्थ नृत्यांगना उस वीथी में रहती थी। वह ऐसी आचरण वाली कलावती वेश्या थी कि उस पर कभी ईंटें नहीं चढ़ायी गयी थीं। (वेश्या कुल में यह रिवाज था कि अगर कोई अपने आचरण में कुछ अपराध करती पायी जाती तो उसके सिर पर सात ईंटें रखकर उसे नगर भर में घुमा कर जाति निकाला कर दिया जाता था। (इसका यह भी अर्थ किया जा सकता है कि उसके भवन पर खपड़े नहीं थे। पर स्वर्ण चढा था।) वह दाग-हीन जीवन बिताने वाली थी। उसका घर ऐसा था कि राजा लोगों को भी मुग्ध रख सकता था। वह (राजसी, प्रजाजनीय) दोनों तरह के नृत्य के सारे प्रकार जानती थी। अप्रमत्त रीति से नृत्य, गान, ताल, वाद्य-वादन और वाद्यों के नादों के प्रकार खूब जानती थी। चार तरह के (खड़ा होकर, बैठकर, केवल अंग चालन या निस्पंद रहना इत्यादि) अभिनय में और सातों स्वरों के संगीत साधन तथा विस्तार में निपुण थी। संक्षेप में उसकी श्रेष्ठता उत्तम थी और अचल थी। ऐसी शीर्षदण्ड वाली (तीसरे अध्याय में इसका विवरण है) कलावतियाँ और "वारम" गीत गाने वाली "तोरियम्" रमणियाँ (ये पहले नृत्य भी करती थी। अब केवल नाच का संगत करते हुए गाना भर गा लेती थीं)। और नृत्य प्रदर्शन में प्रारंभिक गाना गाने वाली रंडियाँ, और अंतिम गान गाने वाली कलावतियाँ आदि चारों प्रकार की सुंदरियाँ, उस वीथी में रहती थीं। वे एक रात के सहवास के लिए प्रेमी पुरुष से एक हज़ार आठ कळञ्जु (स्वर्ण मुद्राएँ) पाने की हकदारिने थी। उस दैनिक क्रम में कोई कमी या चूक नही होती थी। नागा नहीं पड़ता था। ऐसी, दिल को चोट करने वाली अप्सराओं के समान, सुदरियों के अपांग दृष्टि के जाल में लोग फंस से जाते। उनका परिश्रम से प्राप्त ज्ञान भी गुम हो जाता। चाहे वे तपस्वी हों, या खिले फूल फूल में बैठकर मधु पीने वाले मधुपों के समान सुंदरियों की हंसी देखने को उन्मुख रहने वाले युवा हों या फिर चाहे काम-भोग से अनभ्यस्त अनाड़ी युवक हों— सब दिन भर सदा उनके साथ रहते और मोह में पड़े सोते। उन स्त्रियों की बोली संगीत को और शुक-की बोली को

नीचा दिखाने वाली थी। ऐसी स्त्रियों की दो वीथियाँ थीं। कोवलन् उनसे होकर गुजरा। १४६-१६७

18 अङ्गाडि वीदि

वैयमुम् पाण्डिलुम् मणित् तेर्क् कॊडुञ्जियुम्
मॆय्पुहु कवशमुम् वीऴ्मणित् तोट्टियुम्
अदळ्पुनै अरणमुम् अरिया योगमुम्
वळैतरु कुळियमुम् वाल्वॆण् कवरियुम्
एनप् पडमुम् किडुहिन् पडमुम्
कानप् पडमुम् काऴ् ऊन्रु कडिहैयुम्
शॆम्बिऱ् चॆय्नवुम् कञ्जत् तॊऴिलवुम्
वम्बिन् मुडिनवुम् मालैयिऱ् पुनैनवुम्
वेदिनत् तुप्पवुम् कोडुकडै तॊऴिलवुम्
पुहैयवुम् शान्दवुम् पूविन् पुनैनवुम्
वहै तॆरिवु अऱिया वळन्दलै मयङ्गिय
अरशु विळै तिरुविन् अङ्गाडि वीदियुम् 168-179

१८ मंडियों की सड़क

(मंडियों की वीथियों में क्या क्या मिलते थे? उनका संभार देखिए) वंद गाड़ी, "पाँडिल्" नामक गाड़ी, मणि-रथ का 'कॊडुञ्जि' नामक (हाथ रखने का) भाग, सारे शरीर को समा लेने वाले कवच, चाहनीय मणि-जटित अंकुश (तोट्टी नाम का आयुध), चमड़े के बने हस्तत्राण, कमर पट्टी (प्रभाव पूर्ण दवाएँ ?), वक्र दंड, अतिश्वेत चामर, शूकर-मुखी ढाल, चमड़े के ढाल, कानन-चित्रित ढाल, मोती जटित साँग, ताम्र निर्मित, तथा काँसे की बनी वस्तुएँ, रस्सी की माला रूप धारी चीज़ें, आरे आदि औज़ार, हाथी दाँत को तराश कर बनी वस्तुएँ, गंध धूप देने वाले पदार्थ, लेप की सामग्रियाँ, पुष्पों के बने अलंकार-सामान, इत्यादि कितने थे-यह अनुमान नहीं हो सकता था। और वे सब जगह मिश्रित रूप में मिल सकते थे। दूसरे देश के राजा लोगों को भी मोहनेवाली समृद्धि के साथ मंडियों की वीथियाँ रहती थी। १६८-१७९

19 इरत्तिनक् कडैत्तॆरु

काह पादमुम् कळङ्गमुम् विन्दुवुम्
एहैयुम् नीङ्गि इयल्बिऱ् कुन्रा

नूलवर् नोंडिन्द नुळैनुण् कोडि
नाल्वहै वरुणत्तु नलम् केळ् ऑळियवुम्
एहैयुम् मालैयुम् इरुळोडु तुरन्द
पाशार् मेनिप् पशुङ्गदिर् ऑळियवुम्
पदुममुम् नीलमुम् विन्दमुम् पडिदमुम्
विदिमुरै पिळैया विळङ्गिय शादियुम्
पूश वुरुविर् पोलम् तॆळित्त तन्नैयवुम्
तीदु अरु कदिर् ऑळित् तॆण् मट्टु उरुववुम्
इरुळ्तॆळित् तन्नैयवुम् इरु वेरु उरुववुम्
ऑरुमैत् तोर्रत्तु ऐवेरु वन्नप्पिन्
इलङ्गु कदिर् विडूउम् नलम् कॆळु मणिहळुम्
कार्रिनुम् मण्णिनुम् कल्लिनुम् नीरिनुम्
तोर्रिय कुर्रम् तुहळ् अरत् तुणिन्दवुम्
चन्दिर गुरुवे अङ्गा रकन् ऎन
वन्द नीरमैय वट्टत् तॊहुदियुम्
करुप्पत् तुळैयवुम् कल्लिडै मुडङ्गलुम्
तिरुक्कु नीङ्गिय शॆङ्गॊडि वल्लियुम्
वहैतॆरि माक्कळ् तॊहैपॆर्रु ओङ्गिप्
पहै तॆरल् अरियाप् पयङ्कॆळु वीदियुम् 180–200

१६ रत्नों का बाजार

काकपाद, कालिमा, बिंदु, रेखा इत्यादि दोषों से रहित, स्वभाव में किसी कमी के बिना, पारखियों के शास्त्र सम्मत रीति से बने सूक्ष्म कोणों के साथ रहे चारों वर्णों के तथा मंगलकारी छविमय हीरे; रेखा, हार, और कालिमा इत्यादि दोष रहित, हरे शरीर के साथ हरी किरणे निकालने वाले मरकत रत्न; पद्मराग, नीलमणि, विन्दु स्फटिक कहलाने वाली चारों उप जातियो के और बिलकुल युक्तता सहित रहनेवाले माणिक रत्न; पुष्य नक्षत्र (या मार्जार का अक्ष) का रंग लिये, और चोखे स्वर्ण सम रहे पुखराज रत्न; बिलकुल दोष रहित प्रकाश के साथ शहद की बूंद के समान वैदूर्य रत्न; छने हुए अंधकार के समान नील मणियाँ; पीलापन और ललाई लिये रहे गोमेदक —ये एक ही जाति के पर पाँच अलग अलग छवियो में पाये जाने वाले माणिक, 'पुखराज' वैदूर्य, नील गोमेदक आदि ज्वलंत-किरण-वितरक मंगल कारी रत्न हैं—और हवा, मट्टी पत्थर या जल द्वारा संभावित दोषों को पूणतः दूर करके

जो लाये गये थे वे चंद्र, गुरु और अंगारक समान शोभने वाले सफेद, पीले तथा लाल रंग के गोल गोल और मोटे मोती; मध्य में छेद, पत्थर के बीच में पड़े रहने से हुई वक्रता, और पेच आदि दोषों से रहित प्रवाल वल्लरी—इत्यादि सभी रत्नों के समर्थ पारखी व्यापारियों से पूर्ण रत्नों की वीथियाँ थी। वहाँ शत्रु द्वारा कोई अहित की संभावना नही थी। और वहाँ सब का हित ही होता था। (ऐसी वीथियों से कोवलन् सब को देखते हुए गया।) १८०-२००

20 पॊन्न् कडै वीदि

शाद रुपम् किळिच्चिऱै आडकम्
शाम्बू नदम् ऎन्न ओङ्गिय कॊळ्हैयिन्
पॊलन्दॆरि माक्कळ् कलङ्गञर् ऒळित्तु आङ्गु
इलङ्गु कॊडि ऎडुक्कुम् नलङ्गिळर् वीदियुम् 201–204

२० स्वर्ण विक्रय वीथी

इस वीथी में जात रुप, शुकपक्ष, हाटक, जाम्बूनद इत्यादि प्रथित प्रकारों के स्वर्ण को अच्छी तरह परखने वाले व्यापारियों ने विक्रय स्थल में ढूंढने का कष्ट दूर करते हुए पहचनवाने वाले झंड़े फहराये थे। कोवलन् उस कल्याण कारी वीथी को भी पार कर गया। २०१-२०४

21 अऱुवै वीदि

नूलिनुम् मयिरिनुम् नुऴैनूल् पट्टिनुम्
पावहै तॆरियाप् पलनूऱु अडुक्कत्तु
नऱुमडि शॆऱिन्द अऱुवै वीदियुम् 205–207

२१ वस्त्र वीथियाँ

कपास का सूत, रोम (यह चूहों का रोम कहा गया है।) का बना सूत, बहुत ही महीन रेशम का सूत-इत्यादि के अति महीन किस्म के वस्त्र ऐसे बुने जाते कि ताने बाने को देखकर पहचानना कठिन था। ऐसे वस्त्र के सौ सौ बंडल रखे गये थे और हर गठरी में निश्चित माप के चार चार जिन्स रखे गये थे। (उन्हें 'नऱु मड़ि' कहा जाता है।) उनसे भरा वस्त्र बाजार था २०५-२०७

22 कूलं वीदि

निरैक्कोल् तुलात्तर् पऱैक्कट् परारैयर्
अम्बण अळवैयर् अङ्गणुम् तिरितरक्
कालम् अन्रियुम् करुङ्गऱि मूडैयोडु
कूलम् कुवित्त कूल वीदियुम् 208-211

२२ धान बाजार

(फिर धान-बाजार आता है।) वहाँ हाथ में तुला, मापने का 'पऱै' नाम का (नापने का) माप, और 'अम्बणम्' नाम का माप आदि लेकर धान के दलाल सब जगह घूमते थे। उस बाज़ार में अकाल में भी काली मिर्च मिलती थी। उसके बोरों और धान के बोरों का अधिकता से रहना जहाँ पाया जाता था उस धान-बाज़ार को देखता हुआ कोवलन् गया। २०८-२११

23 मदिऱ् पुऱम् पॆयर्दल्

पाल् वेरु तॆरिन्द नाल्वेरु तॆरुवुम्
अन्दियुम् शदुक्कमुम् आवण वीदियुम्
मन्ऱमुम् कवलैयुम् मऱुहुम् तिरिन्दु
विशुम्बु अहडु तिरुहिय वॆङ्गदिर् नुळैयाप्
पशुङ्गॊडिप् पडाहैप् पन्दर् नीळल्
कावलन् पेरूर् कण्डु महिऴ्वु ऎय्दिक्
कोवलन् पॆयर्न्दनन् कॊडिमदिल् पुऱत्तु ऎन् 212-218

२३ प्राचीरें पार कर जाना

नगर में चारों वर्णों की अलग-अलग ज्ञातव्य चार सड़कें थीं। कोना, चतुष्क, बाज़ार, मण्डप, चौराहे का संधि-स्थल और गलियाँ इत्यादि में कोवलन् घूमता गया। दिन में आकाश मध्य रहकर जब सूर्य तेज किरणें बिखेरता है तब भी उसकी किरणें पताकाओं के बने वितान को भेद कर नीचे नहीं आ सकती थीं। ऐसी छाया में खड़ा होकर कोवलन ने राजा से पालित राजधानी के बड़े नगर को देखा और उसे आनंद हुआ। फिर वह नगर छोड़कर प्राचीरों के बाहर जो रहा उस पुरातन उपनगर में जा पहुँचा। (वहीं कवुन्दि "अडिहळ्" और कणहि को छोड़ आया था) २१२-२१८

15 अडैक्कलक् कादै

1 तीदु तीर् मदुरै

निलन् दरु तिरुविन् निऴल् वाय् नेमि
कडम् पूण्डु उरुट्टुम् कौरियर् पॆरुन् जीर्क्
कोलिन् शॆम्मैयुम् कुडैयिन् तण्मैयुम्
वेलिन् कॊऱ्ऱमुम् विळङ्गिय कॊळ्हैप्
पदि ॲऴु अऱियाप् पण्बु मेम्बट्ट
मदुरै मूदूर् मानहर् कण्डु आङ्गु
अऱम्पुरु नॆञ्जिन् अऱवोर् पल्हिय
पुऱञ्जिऱै मूदूर्प् पॊऴिलिडम् पुहुन्दु
तीदुतीर् मदुरैयुम् तॆन्नवन् कॊऱ्ऱमुम्
मादवत्तु आट्टिक्कु कोवलन् कूऱलित् 1–10

१५ धरोहर गाथा

(छंद—निलै मंडिल आशिरियप्पा)

१ अनिष्ट शून्य मदुरै

भूमि जो श्री समृद्धि दिलाती है उसके साथ, छाया की तरह प्रजाजन पालन करने को अपना कर्तव्य बना लेकर आज्ञाचक्र चलानेवाले है "कौरियर्' (की उपाधि से भूषित "पाँडिय" वंश के). राजा। ("कौरियर्"; कौरव शब्द से आया है और "पांडिय" "पांडु" शब्द से। यह माना जाता है कि "पांडिय" राजा उन्ही के वंश के है, अत: चन्द्रवंशी भी कहलाते हैं।) उनके प्रकीर्तित राजदण्ड का सीधापन, छत्र की शीतलता, 'वेल्' (भाले) की विजयशीलता —ये सब सारे विश्व मे विख्यात बाते है। उनकी राजधानी में रहनेवाले लोगो के मन में यह विचार ही नही उठता था कि हम इस नगर को छोड़ अन्यत्र जायँ (इसकी आवश्यकता ही नही होती थी)। इस भाँति सम्मान्य उस पुरातन महानगर मदुरै को देखकर कोवलन् धर्म-चिन्तकों से पूर्ण उपनगर मे आया। और उसने रोग-भूख आदि अनिष्ट-शून्य मदुरै और दक्षिणपति की विजय श्री की हालत महान तपोवती को बतायी। १-१०

2 माडलन् उरैप्पान्

ताऴ् नीर् वेलित् तलैच्चॆङ् गानत्तु
नान् मऱै मुऱ्ऱिय नलम् पुरि कॊळ्है
मामऱै मुदल्वन् माडलन् ॲन्बोन्

मादव मुनिवन् मलै वलङ् गॊण्डु
कुमरियम् पॆरुन्दुरै कॊळ्हैयिऱ् पडिन्दु
तमर् मुदऱ् पॆयर्वोन् ताळ् पॊऴिल् आङ्गण्
वरुन्दु शॆल् वरुत्तत्तु वान् तुयर् नीङ्गक्
कवुन्दि इडवयिऱ् पुहुन् दोन् तन्नैक्
कोवलन् शॆन्ऱु शेवडि वणङ्ग
नावल् अन्दणन् तान् नविन्ऱु उरैप्पोन् 11–20

२ माडलन् ने कहा

तब वहाँ गम्भीर जल (तडाग, नदी, खेत आदि) की बनी सीमा के अन्दर रहनेवाले "तलैच्चॆंगानम्" नामक नगर से (एक ब्राह्मण आया हुआ था)। वह चारों वेदों का सम्पूर्ण ज्ञाता था, अतः परोपकार का सिद्धान्त रखता था। वह वैदिको का नेता माडलन् नाम का ब्राह्मण था। वह महान तपस्वी अगस्त्य के वासस्थान "पॊदियै" पर्वत गया, वहाँ परिक्रमा, नमस्कार आदि करने के बाद (दक्षिण का कोना) कुमरि घाट पर जाकर नहाया। वह अब अपने जनों के पास जा रहा था। छायादार उस बाग में, अपनी पथयात्रा से उत्पन्न कष्ट के बड़े दु.ख को मिटाने के विचार से आया और 'कवुन्दि' के रहने के स्थान में गया। उसको देखकर कोलवन् ने उसके पास जाकर पैर छुए। तब वाग्विदग्ध ब्राह्मण ने अपना हाल बताकर आगे कहा। ११-२०

3 मणिमेहलैक्कुप् पॆयरिडल्

वेन्दुऱु शिऱप्पिन् विऴुच्चीर् ऎय्दिय
मान्दळिर् मेनि मादवि मडन्दै
पाल् वायक् कुळवि पयन्दनाळ् ऎडुत्तु
वाला मैनाळ् नीङ्गिय पिन्नर्
मामुदु कणिहैयर् "मादवि महट्कु
नाम नल्लुरै नाट्टुदुम्" ऎन्ऱु
ताम् इन्बुऱुउम् तहैमॊऴि केट्टु आङ्गु
इडै इरुळ् यामत्तु ऎऱि तिरैप् पॆरुङ्गडल्
उडै कलप् पट्ट ऎम् कोन् मुन्नाळ्
पुण्णिय दानम् पुरिन्दोन् आहलिन्
नण्णुवऴि इन्ऱि नाळ् शिल नीन्द
"इन्दिरन् एवलिन् ईङ्गु वाऴ्बेन्

वन्देन् अन्जल् मणिमे हलैयान्
उन् पॆरुन् दानत्तु उरुदि ऒऴियादु
तुन्बम् नीङ्गित् तुयर्क्कडल् ऒऴिह" ॲन
विन्जॆयिन् पॆयर्त्तु विऴुमम् तीर्त्त
ॲङ्कुल दॆय्वप् पॆयर् ईङ्गु इडुह ॲन
अणिमे हलैयार् आयिरङ् गणिहैयर्
मणिमे हलै ॲन वाऴ्त्तिय ञान्ऱु
मङ्गल मडन्दै मादवि तन्नॊडु
शॆम् पॊन् मारि शॆङ्गैयिऱ् पॊऴिय 21-41

३ मणिमेहलै का नामकरण

(वह कोवलन् से संबंधित कुछ घटनाओं की याद दिलाता है।) कोवलन् सुनो : "राज-सम्मानित और श्रेष्ठतायुक्त, आम्रपल्लव-सी छटावाली मादवि ने दुधमुँही एक बच्ची जनायी। सूतक के दिनों के बीत जाने के बाद वृद्धा स्त्रियों ने सकल्प किया कि मादवि की पुत्री का नामकरण किया जाय। तुमने मन-मधुर वह सकल्प सुना। तब तुम बोले कि रात के अर्ध याम में घोर रूप से उछलती तरगो से आहत होकर बीच समुद्र में मेरे पूर्वज की नाव टूट गयी। वे दान-पुण्यशील थे। (अतः मरे नही;) कोई उपाय न पाकर कुछ दिन तैरते रहे। तब मणिमेहलै नाम की देवी ने प्रकट होकर कहा— मै इन्द्र की आज्ञा से यहाँ रहती हूँ। (तुमको देखकर) इधर आयी। मत डरो। मैं मणिमेहलै देवी हूँ। तुमने महान दान धर्म जो किया है उसका बल व्यर्थ नही होगा। तुम्हारा कष्ट दूर होगा। तुम शोक-समुद्र छोड़ दो। —कहकर उसने उनको ऊपर आकाश-मार्ग से ले जाकर तीर पर छोड़ा और उनके सकट को दूर किया। उसका दैवी नाम इसको रखा जाय। यह सुनकर मेखला-धारिणी उन नारियों ने "मणिमेहलै" कहकर बच्ची का आशीर्वाद (नामकरण करके) दिया। उस दिन तुमने मादवि के साथ रहकर अपने लाल (श्रेष्ठ) हाथों से चोखे स्वर्ण की वर्षा-सी की। (बहुत दान किया।) २१-४१

4 करुणै मऱव

ञान् नन्ऩॆऱि नल् वरम्बु आयोन्
दानम् कॊळ्ळुम् तहैमैयिन् वरुवोन्
तळर्न्द नडैयिन् तण्डुकाल् ऊन्ऱि
वळैन्द याक्कै मऱैयोन् तन्नैप्

पाहु कऴिन्दु याङ्गणुम् पऱैपड वरूउम्
वेह यानै वॆम्मैयिऱ् कैक्कॊळ्ळ
ऒय् ऎनत् तॊऴित्तु आङ्गु उयर्पिऱप् पाळनैक्
कैयहत्तु ऒऴित्तु अदन् कैयहम् पुक्कुप्
पॊय्पॊरु मुडङ्गुहै वॆण्कोट्टु अडक्कि
मैहरुङ् गुन्ऱिन् विञ्जैयन् एय्प्पप्
पिडर्त्तलै इरुन्दु पॆरुञ्जिनम् पिऱ्ऴाक्
कडक्कळिऱु अडक्किय करुणै मऱव ! 42–53

४ दयावीर

(उस अवसर पर) सुज्ञान-मार्ग-मर्यादा गण्य एक ब्राह्मण दान लेने जो आया, वह शिथिल चालवाला लाठी टेकता आया। झुके शरीर के उस विप्र के पीछे पीलवान की अवज्ञा करके एक वेगवान गज भागता आया और लोगों को सचेत करने के लिए ढोल बजाया जा रहा था। उस गज ने भूसुर को क्रोध के साथ अपनी सूंड की पकड़ में ले लिया। तब तुम 'ऒय्' की आवाज़ करते हुए, उस उच्च जाति वाले (विप्र) को सूंड़ से निकालकर स्वयं सूंड़ के अन्दर पकड़ में गये। उस योद्धा गज की मुड़ी हुई सूंड़ से श्वेत दन्त पर पैर रखकर उस पर चढ़े, और अति काले पर्वत पर विराजमान विद्याधर के समान हो उसकी पीठ पर बैठे। फिर तुमने बड़े क्रोध से शांत जो न हुआ था उस हाथी को वश में कर लिया; हे गज-मद-मर्दनकारी दयावीर ! ४२-५३

5 शॆल्लाच् चॆल्व

पिळ्ळै नहुलम् पॆरुम्पिऱिदु आह
ऎळ्ळिय मनैयोळ् इनैन्दु पिन् शॆल्ल
वडतिशैप् पॆयरुम् मामऱै याळन्
कडवदु अन्ऱुनिन् कैत्तु ऊण् वाळ्क्कै
वडमॊऴि वाशहम् शॆय्द नल्लेडु
कडनऱि मान्दर् कैन्नी कॊडुक्क ऎन्प्
पीडिहैत् तॆरुविर् पॆरुङ्गुडि वाणिहर्
माड मऱुहिन् मनै तॊऱुम् मऱुहिक्
करुमक् कऴि बलम् कॊळ्मि नो ऎन्नुम्
अरु मऱै याट्टियै अणुहक् कूउय्
यादु नी उऱ्ऱ इडर् ईदु ऎन् ? ऎन

मादुताऩ् उऱ्ऱ वाऩ् तुयर् शॆप्पि
"इप्पॊरुळ् ऎऴुदिय इदऴिदु वाङ्गिक्
कॆप् पॊरुळ् तनदु ऎऩ् कडुनदुयर् कळैह" ऎऩ
अऩ्जल् ! उऩ्तऩ् अरुनदुयर् कळैहेऩ् :
नॆऩ्जु उऱु तुयरम् नीङ्गुह ऎऩ्ऱु आङ्गु
ऒत्तुडै अन्दणर् उऱैनूल् किडक्कैयिल्
तीत् तिऱम् पुरिन्दोळ् शॆय्तुयर् नीङ्गत्
ताऩज्जॆय्दु अवळ् तऩ् तुयर् नीक्किक्
काऩम् पोऩ कणवनैक् कूट्टि
ऒल्हाच् चॆल्वत्तु उऱु पॊरुळ् कॊडुत्तु
नल् वऴिप् पडुत्त शॆल्लाच् चॆल्व 54–75

५ हे अक्षय धनी !

(एक ब्राह्मण दम्पति रहते थे। उन्होने वच्चे के अभाव में एक नकुल शावक को पाला। वाद उनके एक वच्चापैदा हो गया। उस वच्चे को पालने मे सुलाकर ब्राह्मणी जल लाने हेतु तडाग की तरफ चली गयी। नकुल शावक बच्चे की रक्षा के लिए पास बैठा था। तव एक साँप पालने की रस्सी से नीचे रेगता आ रहा था। नकुल शावक ने उसको मारकर वच्चे को वचाया! गर्व के साथ वह ब्राह्मणी को खबर देने दौड़ा। ब्राह्मणी ने उसके मुख में रक्त देखा तो समझ लिया कि वच्चे को मारकर आया है। उसने पानी का घड़ा उसके सिर पर पटक देकर उसे मार दिया।)

नकुल शावक मरा। ब्राह्मण पाप से डरकर पत्नी को पापिनी कहकर उसे छोड़ जाने लगा। तव वह ब्राह्मणी भी पछताती हुई उसका अनुगमन करने लगी। वह महान वैदिक उत्तर की यात्रा पर मन लगाकर जाने लगा। जाते वक्त उसने कहा कि सुनो तुम्हारे हाथ का खाना खाकर जीवन विताना उचित नही। एक संस्कृत श्लोक इस ताल-पत्न में लिखा हुआ है। इसको कर्तव्यज्ञान रखनेंवाले किसी के हाथ में दो। वह ब्राह्मणी उसको लेकर पण्यवीथी में घूमी और बड़े धनी कुल के वणिकों को और प्रासादों में रहने वालो को दिखाया, रोते हुए कहा कि मेरे पाप को मिटाकर पुण्यलाभ कीजिए। ऐसी विलपनेवाली वराकी ब्राह्मणी को, हे कोवलन् तुमने पास, बुलाया और पूछा कि तुम पर वीत रहा संकट क्या हैं ? स्त्री ने भी अपना कष्ट सुनाया और कहा— इस ताल पत्न मे कुछ लिखा है। उसको पढ़े और आप खुद धन खर्च कर मेरे पाप के विचार से जनित दुख दूर करे। तुमने कहा कि डरिये मत ! आपके असाध्य दुख को दूर करा दूंगा। मन्न से

चिन्ता हटा दीजिए। फिर तब वेदपाठी ब्राह्मणों से उक्त प्रकार से उस ब्राह्मणी के हत्या-पाप का प्रायश्चित से निवारण कराने के लिए दान-धर्म आदि खूब किया और उसको व्यथा से मुक्ति दिला दी। फिर वन की ओर गये उसके पति को भी ढूँढ़ लाकर उससे मिला दिया। अपने अक्षय धन से उन्हें बड़े परिमाण में धन देकर सन्मार्ग पर चलने में सहायता दी। हे अक्षय धनी !

(वह श्लोक यह था; अपरीक्ष्य न कर्तव्यं कर्तव्यं सुपरीक्षितम् पश्चात् भवति संतापं ब्राह्मणी नकुलं यथा। टीकाकार "कठिन पदार्थ" वाले का बताया हुआ।) ५४-७५

6 इल्लोर् शॅम्मल्

पत्तिनि ऑरुत्ति पडिऱ्ऱुरै अॅय्द
मऱ्ऱवळ् कणवऱ्कु वऱियोन् ऑरुवन्
अऱियाक् करिपोय्त्तु अऱैन्दुणुम् पूदत्तुक्
कऱैकोळ् पाशत्तुक् कैयहप् पडलुम्
पट्टोन् तव्वै पडुतुयर् कण्डु
कट्टिय पाशत्तुक् कडिदु शॅन्ऱु अॅय्दि
अॅन्नुयिर् कॉण्डु ईङ्गु इवन् उयिर् ता अॅन
नन्नॅडम् पूदम् नल्हा दाहि
नरहन् उयिर्क्कु नल्लुयिर् कॉण्डु
परगदि इळक्कुम् पण्बु ईङ्गु इल्लै
ऑऴिह निन् करुत्तु अॅन उयिर् मुन् पुडैप्प
अऴि तरुम् उळ्ळत्तु अवळोडुम् पोन्दु अवन्
शुऱ्ऱत् तोर्क्कुम् तॉडर्बुऱु किळैहट्कुम्
पऱ्ऱिय किळैञरिन् पशिप्पिणि अऱुत्तुप्
पल्लाण्डु पुरन्द इल्लोर् शॅम्मल् ! 76-90

६ अभावग्रस्तों के सहायक महानुभाव

किसी साध्वी पत्नी पर लांछन लगाते हुए उसके पति केपास जाकर एक ज्ञान शून्य (नीच) ने कुछ झूठ-मूठ कह दिया। फलस्वरूप वह झूठी गवाही देनेवाले को (पिशुन को) तमाचा देकर, मारकर खाने वाले एक भूत के हाथ के पाश में फँस गया। वह छटपटाने लगा। उस हस्त-पाश-बद्ध मनुष्य की माता की व्यथा देखकर तुमने तुरन्त खुद पाश के अन्दर जा कर भूत से प्रार्थना की कि मेरे प्राण लो और इसको प्राण-भिक्षा दो। उस

कर्तव्यनिष्ट पुराने भूत ने वह वर नहीं दिया। कहा—यहाँ मुझमें नरक-योग्य पुरुष के प्राणों के बदले सत्पुरुष के प्राण लेकर सद्‌गति त्यागने की चिन्तनधारा नहीं है। तुम अपना विचार त्याग दो। यह कहकर उसने तुम और पिशुन की माता दोनों के सामने ही मारकर पिशुन को खा लिया। तुम अधीर-मना उस माता को लेकर गये और उसके बन्धु-बाँधवों और परिवार वालों को खूब धन देकर उन्हें भूख के पाश से छुड़ा दिया। बराबर उनकी रक्षा करते रहे तुम, हे अभावग्रस्तों के सहायक सज्जन !। ७६-९०

7 उम्मैप्पयऩ् कॉल् ?

इम्मैच् चॅय्दऩ यानऱि नल्विऩै
उम्मैप् पयऩ् कॉल् ऑरु तऩि उऴन्दु इव्
तिरुत्तहु मा मणिक् कॊऴुन् दुडऩ् पोन्दडु
विरुत्त को पाल ! नी ॲऩ विऩवक् 91-94

७ पूर्व-कर्म का फल है क्या ?

तुमने इस जन्म में जो भी किये वे सब मेरे जाने सत्कर्म ही हैं। फिर क्या पूर्व जन्म कर्म का ही यह फल है कि तुमको असाध्य कष्ट भोगकर इस लक्ष्मी सम माणिक्य-लता (कण्णहि) के साथ इस तरह भटकना पड़ा ? हे (ज्ञान-) वृद्ध गोपाल ? माडलऩ् ने ऐसा प्रश्न किया। ९१-९४

8 कऩवु

कोवलऩ् कूरुम् ओर् कुरु महऩ् तऩ्ऩाल्
कावल् वेन्दऩ् . कडिनहर् तऩ्ऩिल्
नाऱु ऐङ् कून्दल् नडुङ्गु तुयर् ॲय्द
कूऱैकोळ् पट्टुक् कोट्टुमा ऊरवुम्
अणित्तहु पुरिकुळल् आय्इळै तऩ्ऩॊडुम्
पिणिप्पु अऱुत् तोर् तम् पॅऱ्ऱि ॲय् दवुम्
मामलर् वाळि वऱुनिलत्तु ॲऱिन्दु
कामक् कडवुळ् कैयऱ्ऱु एङ्ग
अणि तिहऴ् पोदि अऱवोऩ् तऩ्मुऩ्
मणिमे हलैयै मादवि अळिप्पवुम्
नऩवु पोल नळ्ळिरुळ् यामत्तुक्
कऩवु कण्डेऩ् कडि दीङ्गु उऱुम् ॲऩ 95-106

८ स्वप्न

(इसके उत्तर में) कोवलन कहता है कि (मैंने एक स्वप्न देखा) एक नीच आदमी द्वारा प्रजा परिपालक राजा की राजधानी में कुछ ऐसा हो गया कि मेरी, सुगन्धित तथा पाँच प्रकार से अलंकृत केशिनी, कण्णहि दुख से काँप उठी। मेरा पहना हुआ कपड़ा छिन गया। और मैं भैंसे (या सुअर ?) पर सवार हो घूमा। पश्चात् मनोरम कुटिल कुन्तला के साथ मैं बन्धनमुक्त लोगों के प्राप्य स्वर्ग लोक पहुँचा। मादवि ने दिव्य छविमय बुद्ध देव के सामने "मणिमेहलै" को अर्पित कर दिया: (भिक्षुणी बना दिया) जिस देव से मनोभव देव को अपने पुष्पशायक शुष्क भूमि पर फेंककर संज्ञा शून्य रह जाना पड़ा था। यह सब अन्धकार पूर्ण रात के पिछले पहर में मैंने यथार्थवत् सपने में देखा। इधर अनिष्ठ होगा समझकर मैं पुहार् छोड़कर इधर आ गया। (क्योंकि पिछले पहर का देखा स्वप्न सच हो जाता है— इससे लगता है कि यह स्वप्न-भय ही कोवलन् के पुहार छोड़ने का असली कारण था। तब क्या मादवि के प्रति जो क्रोध हुआ वह मिथ्या था ? पर उस छोटे वाक्य के संधि-विग्रह में परिवर्तन लाने से यह अर्थ होगा : अवश्य यहीं स्वप्न सच हो जायगा या कुछ बुराई इधर होगी।) ९५-१०६

9 आऱ्ऱुदल् उरैत्तत्तर्

अऱत्तु उऱै माक्कट्कु अल्लदु इन्दप्
पुऱच्चिऱै इरुक्कै पोरुन् दादु; आहलिन्
अरैशर् पिन्नोर् अहनगर् मरुङ्गिन्न निन्न
उरैयिड् कोळ्वर् इङ्गु ओळिह निन्न इरुप्पु
कादलि तन्नोडु कदिर्शेल् वदन्मुन्न
माड मदुरै मानहर् पुहुह अन्न
माद वत्तु आट्टियुम् मामऱै मुदल्वनुम्
कोवलन्न तन्नक्कुक् कूऱुङ् गाले 107–114

९ सांत्वना दी

(माडलन् और कवुन्दि देवी ने कोवलन्न से कहा :) इस उपनगर का वास मुक्ति मार्गावलंवियों के लिए ही उचित है। अन्य (तुम जैसे गृहस्थ) लोगों के लिए नहीं। अत: राजा (क्षत्रिय) लोगों के अनुवर्ती (वैश्य) लोगों के ठेठ मदुरै नगर में जाओ। वे तुम्हारे अपने परिचय के एक शब्द से तुम्हें

अपना लेंगे। यहाँ का वास छोड़ दो। अपनी प्रिया के साथ किरणमाली के अस्त होने के पूर्व ही प्रासादों से शोभायमान मदुरै के महानगर में चले जाओ। ऐसा महान तपस्विनी तथा महान वैदिक ने जब कोवलन् से कहा तब। १०७-११४

10 मादरि अडि तॉऴल्

अऱम् पुरि नॅञ्जिन् अऱवोर् पल्हिय
पुऱञ्जिऱै मूदूर्प् पूङ्गण् इयक्किक्कुप्
पाल्मडै कॉडुत्तुप् पण्बिन् पॅयर् वोळ्
आयर् मुदुमहळ् मादरि ऍन्बोळ्
कावुन्दि ऐयैयैक् कण्डु अडि तॉऴलुम् 115-119

१० मादरि ने आकर नमस्कार किया

धर्म-मन धर्मवान लोग जहाँ रहते थे उस उपनगर मे शीतल (कृपा) दृष्टि रखनेवाली एक यक्षिणी देवी थी। उसे दुग्धान्न-निवेदन का कार्य करती थी मादरि नाम की ग्वालकुल की एक प्रौढ़ा स्त्री। उस सिलसिले में आयी उसने कवुन्दि अडिहळ् के पास आकर उनके पैर छुए। ११५-११६

11 अडैक्कलम् तन्देन्

आकात्तु ओम्बि आप्पयन् अळिक्कुम्
कोवलर् वाऴ्क्कै ओर् कॉडुम् बाडु इल्लै
तीदिलळ् मुदुमहळ् शॅव्वियळ्; अळियळ्
मादरि तन्नॊडुन् मडन्दैयै इरुत्तु दऱ्कु
एदम् इन्ऱु ऍन ऍण्णिनळाहि
मादरि केळ् इम्मडन्दैतन् कणवन्
तादैयैक् केट्किन् तन्कुल वाणर्
अरुम् पॊरुळ् पॆऱुनरिन् विरुन्दु ऍदिर् कॊण्डु
करुन्दडङ् गण णियॊडु कडिमनैप् पडुत्तुवर्
उडैप् पॆरुञ् जॆल्वर् मनैप्पुहुम् अळवुम्
इडैक्कुल मडन्दैक्कु अडैक्कलम् तन्देन् 120-130

११ आश्रिता बना देती हूँ

"गोसंरक्षण करके गव्य (गो से उत्पन्न) वस्तुएँ बेचकर गुजारा करनेवाले

ग्वालों का जीवन हिंसा से सम्बन्ध नहीं रखता। उस कुल की जाता यह बुरी नहीं है। यह प्रौढ़ा सीधी है। करुणामयी है। इस मादरि की देख देख रेख में इस सुन्दरी कण्णहि को रखने में कोई बुरा नही हो सकता।" यह सोचकर कवुन्दि अडिहळ् ने मादरि से कहा— हे मादरि, सुनो। इस रमणी का पति जाकर अपने पिता का नाम कहेगा तो उसकी जाति के लोग अलभ्य उपलब्धि मानकर इसका स्वागत करेंगे और उसकी श्यामायताक्षी के साथ सुरक्षित सौध में रख लेंगे। बड़े धनी के घर में जाते तक इस स्त्री को, ग्वाल जाति की स्त्रियों के पास सौंपती हूँ। तुम्हारी आश्रिता (थांती) बना देती हूँ। १२०-१३०

12 तायाहित् ताङ्गु

"मङ्गल मडन्दैयै नन्नीर् आट्टिच्
चॆङ्गयल् नॆडुङ्गण् अञ्जनम् तीट्टित्
तेमॆन् कून्दल् शिन्नमलर् पॆय्दु;
तूमडि उडीइत् तॊल्लोर् शिऱप्पिन्
आयमुम् कावलुम् आय्इळै तन्नक्कुत्
तायुम् नीये आहित्ताङ्गु ईङ्गु
अॆन्नॊडु पोन्द इळङ्गॊडि नङ्गैतन्
वण्णच् चीऱडि मण् महळ् अऱिन् दिलळ्
कडुङ् गदिर् वॆम्मैयिन् कादलन् तन्नक्कु
नडुङ्गु तुयर् अॆय्दि नाप्पुलर वाडित्
तन्न तुयर् काणात् तहैशाल् पूङ्गॊडि;
इन्नुणै महळिर्क्कु इन्नुरि यमैयाक्
कऱ्पुक् कडम् पूण्ड इत्तॆय्वम् अल्लदु
पॊऱ्पुडैत् तॆय्वम् याम्कण् डिलमाल्
वान्नम् पॊय्याद वळम् पिळैप्पु अऱियादु
नीळ्निल वेन्दर् कॊऱ्ऱम् शिदैयादु
पत्तिनिप् पॆण्डिर् इरुन्द नाडु अॆन्नुम्
अत्तहु नल्लुरै अऱिया योनी ? 131-148

१२ माता बनकर भरण करो

(उन्होंने आगे कहा :) इस कल्याणी स्त्री को पवित्र जल से नहलाओ। लाल 'कयल्'-सी लम्बी आँखों में काजल लगाओ। सुगंधित कोमल केश में कुछ फूल रखो। नया वस्त्र पहनाओ। अपने पूर्वजों के गौरव की रक्षा

करते हुए इस आभरण भूषिता की सखी, संरक्षिका, और माता सब बनकर उसकी देख-रेख करो। यहाँ मेरे साथ आयी इस बाललता-सी तन्वी के सुन्दर छोटे चरणों को भूदेवी ने इसके पहले स्पर्श नहीं किया है। इसने कड़ी धूप में अपने प्रिय पति को हुए कँपानेवाले दुख को देखकर स्वयं जीभ के सूखते मुरझाने पर भी अपने दुख को भुला दिया है। ऐसी सुयोग्य लता-(सी देवी) है यह। पतिव्रता धर्म में अटल इस देवी के अतिरिक्त महिमा-प्रकाश वाली अन्य देवी को मैंने नही देखा-जाना है। जहाँ पतिव्रता साध्वियाँ रहती हैं उस देश में मेघ धोखा नही देते। समृद्धि चूकना नहीं जानती। विशाल भूप्रदेश के राजा की विजय श्री खण्डित नही होती। यह पतिव्रता नारी के वास के देश की विशेषता है। इस योग्य सूक्ति को तुम नही जानती क्या? (जानती भी होगी न ?) १३१-१४८

13 तवत्तोर् अडैक्कलम्

तवत्तोर् अडैक्कलम् तान्शिऱिदु आयिनुम्
मिहप्पेर् इन्बम् तरुम् अदु केळाय्;
काविरिप् पडैप्पैप् पट्टिनम्-तन्नुळ्
पूविरि पिण्डिप् पोदुनीङ्गु तिरु निऴल्
उलह नोन्बिहळ् ओरुङ्गुडन् इट्ट
इलहु ऑळिच् चिलातलम् मेल् इरुन् दरुळिव्
तरुमम् शाऱ्ऱुम् शारणर् तम्मुन्
तिरुविल् इट्टुव् तिहऴ्तरु मेनियन्;
तारन् मालैयन् दमनियप् पूणिनन्
पारोर् काणाप् पलर् तॊळु पडिमैयन्
करु विरऱ् कुरङ्गिन् कैयोरु पाहत्तुप्
पॆरु विरल् वानवन् वन्दु निन्ऱु रोत्तैच्
चावकर् ऍल्लाम् शारणर्त् तॊऴुदु ईङ्गु
यादिवन् वरवु? ऍन्न इऱैयोन् कूऱुम् 149-162

१३ तपस्वियों की थाती

तपस्वियों की रखी हुई थाती छोटी हो तो भी वह (उसको अपनाकर उसकी रक्षा करने से) बहुत बड़ा सुख देगी। उसका मिसाल सुनो! बागों से पूर्ण 'काविरिप्पट्टिनम्' (पुहार् नगर) में पुष्प-बहुल अशोक की विलक्षण छाया में श्रावकों ने मिलकर जो स्थापित किया था उस देदीप्यमान शिलातल

पर बैठे हुए धर्मोपदेशक चारण उपदेश दे रहे थे। उनके सामने एक व्योम-चारी आया। उसके शरीर से आकाश-धनु (इन्द्र धनुष) के समान प्रभा छूट रही थी। वह हार-मालाधारी स्वर्णभूषण-भूषित था। अलोक-दृष्ट-पूर्व, बहुजन वन्दित दिखे उसका एक हाथ बन्दर का सा था। आकर स्थित उस बलवान .व्योम चारण का सबने नमस्कार किया और कुतूहल प्रकट किया कि इसका इधर आना कैसा ? तब व्योम-देव ने कहा। १४६-१६२

14 कुरङ्गुक् कै वाऩवऩ्

ऍट्टि शायलऩ् इरुन्दोऩ् तऩ्ऩदु
पट्टिऩि नोऩ्बिहळ् पलर् पुहु मनैयिल् ओर्
मादव मुदल्वऩै मऩ्ऩप् पॆरुङ् गिळवऩि
एदम् नीङ्ग ऍदिर् कॊळ् अमयत्तु
ऊर्च्चिरु कुरङ्गु ऒऩ्ऱु उळ्पुक्कुप्
पाऱ्पडु मादवऩ् पादम् पॊरुन्दि
उण्डॊऴि मिच्चिलुम् उहुत्त नीरुम्
तण्डा वेट्कैयिऩ् ताऩ् शिऱिदु अरुन्दि
ऍदिर् मुहम् नोक्किय इऩ्बच् चॆव्वियै
अदिराक् कॊळ्है अऱिवऩुम् नयन्दु निऩ्
मक्कळिऩ् ओम्बु मऩैक् किळत् ती ऍऩ्ऱु
मिक्कोऩ् कूऱिय मॆय्म्मॊऴि ओम्बिक्
कादऱ् कुरङ्गु कडैनाळ् ऍय्दवुम्
दाऩम् शय्वुऴि अदऱ्कु ओरु कूऱु
'तीदु अऱुह' ऍऩ्ऱे शय्दऩळ् आदलिऩ्
मत्तिम नऩ्ऩाट्ट .. ारणम् तऩ्ऩुळ्
उत्तर् कौत अङ्कुर के समा रुमहऩ् आहि;
उरुवित्तुम् तिरु त होते सूर्य की ुणरवित्तुम् तोऩ्ऱिप्
पॆरुविऱल् दाऩ बछड़ों के छ्य शॆय्दु आङ्गु
ऍण्णाल् आ और दूसरे द पिऱ् पाडु;
विण्णोर् व होने और चुस्त आदलिऩ्
पॆऱ्ऱ शॆल्वऩ ०१-२०६ ऩ् ऍल्लाम्
तऱ् कात्तु ओ 16 मदुरैक् कोट्टै व चिऱप्पु ऍऩ्प्
पण्डैप् पि ङ्गुम् वळैहिऩ् शिऱ्कै
कॊण्डु ओरु म् कल्लुहैयिर् पुणर्न्द

शायलन्न् मनैवि दानम् तन्नाल्
आयिनन् इव् वडिवु अरिमिन्नो अन्नच्
चावहर्क्कु अल्लाम् शाङ्रिनन् काट्टव्
तेवकुमरन् तोन्ऱिनन् अन्ऱलुम्
चारणर् कूऱिय तहैशाल् नन् मोळि
आर् अणङ्गु आह अऱम् तलैप् पट्टोर्
अन्ऱु अप् पदियुळ् अरुन्दव माक्कळुम्
तन् तॅरल् वाळ्क्कैच् चावह माक्कळुम्
इट्ट दानत्तु ऍट्टियुम् मनैवियुम्
मुट्टा इन्बत्तु मुडिवुलहु ऍय्दिनर्
केट्टनै यायिन् इत् तोट्टार् कुळलियोडु
नीट्टित् तिरादु नी पोह" अन्ऱु
कवुन्दि कूऱ—(उवन् दनळ् एत्ति) 163–200

१४ वानर-हस्त चारण

'ऍट्टि' शायलन्न् एक वणिक था। उसे राजा द्वारा ऍट्टि (श्रेष्ठी ?) का विरुद प्राप्त हुआ था। वह अपने भवन में अनेक उपवासियों को भोजन देता था। उस भवन में (एक समय) एक महान तपस्वी (अनशन-व्रती) भोजन करने आया। शायलन्न् की पत्नी ने अपने पाप को दूर करने की प्रार्थना करते हुए नमस्कार किया। तब उस नगर का एक छोटा वानर उस घर में घुसकर धर्मपक्षावलम्वी उस महान तपस्वी के पैरों में पड़ा। उसे अदम्य भूख तथा प्यास लगी थी। उस वन्दर ने आतुरता के साथ उस तपस्वी का जूठन खाया और बचा जल पिया। फिर तृप्ति तथा कृतज्ञता से उसके मुख को देखता रहा। उसके मुख का वह भाव देखकर अचल व्रती उस ज्ञानी ने वात्सल्य के साथ घर की स्वामिनी से कहा कि हे गृहस्वामिनी ! इसका अपने
बच्चों के समान पालन करती रहो वन्न् वन्दु गी ने भी उस श्रेष्ठ पुरुष
का कहा माना। वह प्यारा वानर शारणर्त् गया। फिर जब कभी
वह दान करती तब एक अंश उस व अन पर दिया करती। और
प्रार्थना करती कि उसका पाप शान्त फल से वह वानर मध्य-
प्रदेश मे, वाराणसि में 'उत्तर कौ तपस्वियों को ग्य की सन्तान बना। वह
रूप, सम्पत्ति और ज्ञान सबमें ई थाती छोटी हो तं और उसने बहुत बड़े-बड़े
दान भी किये। फिर वह अप वड़ा सुख देगी। आयु में मरण को प्राप्त
हो गया। उसे देव का रूप (पुहार् नगर) में कृतज्ञता के साथ स्मरण
र जो स्थापित कि

किया कि मेरी इस स्थिति से सिद्ध होता है कि धन तथा अन्य फल प्राप्ति अपनी संरक्षिका उस (शायलन की पत्नी। देवी के दान का फल है। इसलिए उस चारण ने पूर्व-जन्म के वानर के छोटे हाथ को एक पक्ष में लेकर कृतज्ञता के धर्म का पालन किया। वही मैं हूँ। दानव्रती शायलन्न की पत्नी के दान कर्म के ही कारण मुझे यह रूप मिला है। यह आप लोग जान लीजिए। देव कुमार ने श्रावको को (गृहस्थ धर्म में रहते हुए मतावलम्बन करनेवाले लौकिक जनों को) उपदेश देते हुए उदाहरण दिखाया। (यह कहानी कहकर कवुन्दि अडिहळ् ने आगे कहा) चारणों के सुष्ठ उपदेशों को देववाक्य मान कर उस नगर के धर्मावबम्बी लोग, तपस्वी लोग, इन्द्रिय निग्रही, श्रावक लोग, दानी शायलन्न और उसकी पत्नी साध्वी, अमर सुख के मुक्ति लोक को प्राप्त हुए। हे मादरि ! मेरी बात सुनोगी तो लंबे केश वाली इस कण्णहि को लेकर विलंब किये बिना अपने घर चली जाओ। मादरि ने भी मुग्ध होकर अडिहळ् की स्तुति की। १६३-२००

15 आयर्हळ् शूळ्न्दन्नर्

वळर् इळ वन्नमुलै वाङ्गु अमैप् पणैत्तोळ्
मुळै इळ वॆण्बल् मुदुक्कुरै नङ्गैयोडु
शॆन्नुरु जायिरुच् चॆल् शुडर् अमयत्तुक्
कन्नुरु तेर् आविन्न कन्नकुरल् इयम्ब
मऱित्तोळ् नवियत्तु उऱिक्का वाळरोडु
शॆऱि वळै आय्च्चियर् शिलर् पुडम् शूळ 201-206

१५ ग्वालों ने घेर लिया

कवुन्दि की स्तुति करके मादरि वर्धनशील, मनोरम, तरुण स्तनों वाली, वक्रवंशी सम कन्धों वाली, अकुर के समान श्वेत दाँतों वाली और बुद्धिमती कण्णहि को साथ लेकर अस्त होते सूर्य की किरणों के लुप्त होते समय अपने घर जाने लगी। तब अपने बछड़ों के ध्यान में रँभाती गायों को चलाते हुए, अपने एक कन्धे पर बकरे को और दूसरे कन्धे पर छीका तथा फावड़े को लेकर ग्वाले आ गये। उन्होने और चुस्त कंकणधारिणी ग्वालिनों ने आकर कण्णहि को घेर लिया। २०१-२०६

16 मदुरैक् कोट्टै वायिल्

सिळैयुम् किडङ्गुम् वळैविऱ् पॊऱियुम्
करुविरल् ऊहमुम् कल्लुमिळ् कवणुम्

परिवुरु वेन्नेयुम् पाहडु कुऴिशियुम्
कायपोत्त उलैयुम् कल्लिडु कूडैयुम्
तूण्डिलुम् तोडक्कुम् आण्डलै अडुप्पुम्
कवैयुम् कऴुवुम् पुदैयुम् पुऴैयुम्
ऐयवित्तु तुलामुम् कंपयर् ऊशियुम्
शेनुरु अरि शिरलुम् पत्तुरियुम् पणैयुम्
ॲऴुवुम् शीप्पुम् मुऴुविरर् कणैयमुम्
कोलुम् कुन्दमुम् वेलुम् पिरवुम्
जायिलुम् शिरन्दु नाट्कोडि तुडङ्गुम् 207–217

१६ मदुरै के दुर्गद्वार पर

मदुरै के दुर्ग में निम्नलिखित सुरक्षा के साधन थे : दुर्ग को घेर कर रक्षण-वन, उसके अन्दर खाई, दुर्ग पर स्वयं झुककर बाण चलानेवाला यन्त्र, धनुष, काली उँगलियों के साथ वानर के रूप में बना काटनेवाला यन्त्र, प्रस्तर फेकनेवाले ढेल-वाँस, जलन देनेवाले खौलते तेल (घी) के भरे पात्र, ताँबा पिघलाने के हँडे, धातु पिघला कर फेकनेवाले यन्त्र के साथ रहती भट्टियाँ, पत्थर-भरे टोकरे, दूर से चुभनेवाले कांटे, गले को घेरकर ऐंठने वाले रस्से, नर-सिर पक्षी के समान बने औजार, द्वि-मुखी शूल, दण्ड, बाण-समूह, गुप्त-कमरे (या सुरंग), सिर को तोड़नेवाले तुला जैसे औज़ार, प्राचीर के ऊपर हाथ रखते समय शत्रु के हाथों में चुभनेवाली बड़ी सूचियाँ, उड़कर शत्रु को चोंच मारनेवाली 'चिरल्' चिड़िया के समान बने हथियार, सुअर के समान बने, पकड़ने वाले कूट यन्त्र, छड़ियाँ, भिंदियाँ, कपाट को गिरने से रोकने वाले साधन, अन्य भारी काष्ठ-साधन, दण्ड, कुन्द, वेल् (साँग) और अन्य चिड़िया का सिर जैसे औज़ार आदि अस्त्र-शस्त्रों के साथ रहे दुर्ग के द्वार पर दिन भर पताकाएँ फहर रही थी। २०७-२१७

17 मादरि मनै शेर्न्दतर्

वायिल् कऴिन्दु तन्मनैपुक् कन्नळाल्
कोवलर् मडन्दै कोळ् हैयित् पुणर्न्दु अत् 218–219

१७ मादरि के घर पहुँचे

उस द्वार को पारकर (उपनगर से प्रधान महानगर में) मादरि नाम की वह गोपस्ती ग्वालिनो की भीड़ को मिला लेकर कण्णहि और कोवलन्न के साथ आश्रित-पालन का संकल्प लिये अपने घर पहुँची। २१८-२१९

कॊलैक् कळक् कादै

1 पुदुमनै शेर्त्ताळ्

अरुम् पॆऱ्ऱ् पावैयै अडैक्कलम् पॆऱ्ऱ्
इरुम् पेर् उवहैयिन् इडैक्कुल मडन्दै
अळैविलै उणाविन् आय्च्चियर् तम्मॊडु
मिळैसूळ् कोवलर् इरुक्कै अन्ऱिप्
पूवल् ऊट्टिय पुनैमाण् पन्दर्क्
कावर् चिऱ्ऱिल् कडिमनैप् पडुत्तुच् 1-6

१६ वध-भूमि-गाथा

१ नये घर में ठहराया

ग्वाल नारी मादरि अलभ्य रमणी को थाती के रूप में पाकर अत्यंत खुश थी। दही आदि बेचकर जीविका चलाने वाली अन्य ग्वालिनों के निर्मित कृत्रिम बेड़ से घिरे रहे वास स्थान मे उसने कण्णहि व कोवलन् को नहीं ठहराया। पर लालमिट्टी से पुते, नव निर्मित छप्पर के साथ रहे एक सुरक्षित छोटे गृह में ठहराया। १-६

2 ऐयै तोऴियाग्नाळ्

शॆऱिवळै आय्च्चियर् शिलरुडन् कूडि
नऱुमलरक् कोदैयै नाळ्नीर् आट्टिक्
कूडल् महळिर् कोलङ् कॊळ्ळुम्
आडहप् पैम्बूण् अरुविलै अऴिप्पच्
चॆय्याक् कोलमॊडु वन्दीर्क्कु ऎन्महळ्
ऐयै काणीर् अडित्तोऴिल् आट्टि
पॊन्निऱ् पॊदिन्देन् पुनैपूङ् गोदै
ऎन्नुडन् नङ्गै ईङ्गु इरुक्क ऎनत् तॊऴुदु
मादवत् तट्टि वऴित्तुयर् नीक्कि
एदम् इल्ला इडन्दलैप् पडुत्तिनाळ् 7-16

२ ऐयै सखी बनी

चुस्त चूड़ियों वाली कुछ ग्वालिनों की सहायता लेकर उसने सुदर पुष्प माला-सी कण्णहि को ताजे जल से नहलाया। तब (कण्णहि के देह-सौंदर्य

से विस्मित होकर) उसने कहा-कूडल् नगर (मदुरै) की स्त्रियाँ जो पहनती हैं उन हाटकों के वने (छविमय) हरे आभरणो का मूल्य (महत्व) मिटाने के लिए क्या तुम भूषणों से अनलंकृत होकर आयी हो ? इस तरह आगत तुम्हारी, मेरी पुत्री देखो, आज्ञा कारिणी दासी रहेगी। तुम्हें, हे पुष्प मालालंकृत (या पुष्प माला-सी) कण्णहि ! स्वर्ण के समान सुरक्षित रखूँगी। हे नायिका ! मेरे साथ इधर रहो !—कहकर उसने विनय दिखायी। इस भाँति तपोभूत श्री संपन्न मादरि ने कण्णहि की पथ-श्रांति दूर की और दोप-हीन स्थल पर उसे विठाया। (ऐयै उसकी दासी-सखी वनी।) ७-१६

3 मामि मुरै कॉण्डाळ्

नोदह वुण्डो नुम्मह ऩार्क्कु इऩिच्
चावह नोऩ्बिऩ् अडिहळ् आदलिऩ्
नात्तूण् नङ्गैयोडु नाळ्वळिप् पडूउम्
अडिशिल् आक्कुदऱ्कु अमैन्दनऩ् कलङ्गळ्
नॅडियादु अळिमिऩ् नीर् ॲऩक् कूऱ 17-21

३ सास का रिश्ता मान लिया

कण्णहि ने मादरि से सास-वहू का रिश्ता वनाकर कहा-अव आपके पुत्र की कोई चिंता भी होगी क्या ? (नहीं)। वे (मेरे पति) श्रावक व्रती हैं। इस अपनी ननद की सहायता लेकर दुपहर का भोजन वनाऊँगी। उसके लिए योग्य अच्छे पात्र, अविलंव दिला दीजिए, आप !१७-२१

4 पॉरुळ् तन्दऩर्

इडैक्कुल मडन्दैयर् इयल्बिऩ् कुऩ्ऱा
मडैक्कलम् तऩ्ऩॊडु माण्वुडै मरबिऩ्
कोळिप् पाहल् कॊळुङ्गऩित् तिरळ्काय्
वाळ्वरिक् कॊडुङ्गाय् मादुळम् पशुङ्गाय्
माविऩ् कऩियॊडु वाळैत् तीङ्गऩि
शालि अरिशि तम्बाऱ् पयनॊडु
कोल् वळै मादे कॊळ्ह ॲऩक् कॊडुप्प 22-28

४ सामग्रियाँ दीं

ग्वाल नारियों ने योग्य, युक्त प्रकार के रसोई के पात्र दिये। साथ-साथ, चूँकि वे अतिथि सत्कार का संस्कार रखने वालियाँ थी, अतः (बरतनों के

अलावा) बिना फूले फलने वाले कटहल के कच्चे फल, श्वेत धारीदार 'कौंडुम् काय्' (ककड़ी के स्वाद की पर छोटी मोटी गोल तरकारी; वह यों ही बिना पकाये खायी जा सकती है—मसाले के साथ या बे मसाला) अनार का कच्चा फल, आम का कच्चा फल, केले के मधुर फल, "शालि" चावल इत्यादि भी लाकर दिया। और अपने पास प्राप्त (दूध, दही, घी आदि) वस्तुएँ भी लाकर दी और कहा-कि मोटी चूड़ियाँ पहनने वाली देवी ! ये लो। २२-२८

5 शोऱाक्किनाळ्

मॅल् विरल् शिवप्पप् पलवेऱु पशुङ्गाय्
कौंडु वाय्क् कुयत्तु विडुवाय् शॅय्यत्
तिरुमुहम् वियर्त्तडु शॅङ्गण् शेन्दत्त
करिपुऱ अट्टिल् कण्डनळ् पॅयर
वै ऑरि मूट्टिय ऐयै तन्नोडु
कैयऱि मडैमैयिऱ् कादलर्क्कु आक्कित् 29-34

५ भात (भोजन) बनाया

(चावल पकाने का पात्र अंगीठी पर चढ़ाकर) वह काटने के औजार से तरकारी काटने लगी। उसकी कोमल उँगलियाँ लाल हो गयीं। (अभ्यास न रहने से ?) सुंदर मुख पर स्वेद कण झलक आये, लाल आँखे और लाल हो गयीं। तब देखा कि बरतन पर कालौच लग गयी है। पुआल से जिसने चूल्हा जलाने में मदद दी उस ऐयै की सहायता लेकर कण्णहि ने अपने पति के लिए अपने हाथ से जो बन सका वह भोजन बना लिया। २९-३४

कुमरि वाऴैयिन्न् कुरुत्तहम् विरित्तु; ईङ्गु
अमुदम् उण्ग अडिहळ् ईङ्गु ॲॅत्त 35–43

६ अडिहळ् "अमृत" भुगतें

ताल वृक्ष के श्वेत पत्तों की, दस्तकारी में कुशल स्त्रियों से कलापूर्ण प्रकार से बुनी हुई चटाई पर नायक बैठ गया। कण्णहि ने पहले सुदर हाथ से मट्टी के बरतन में जल लेकर उसके पैर धुलाये; फिर भू देवी की गरमी का निवारण करती सी उसने भूतल पर (भोजन-स्थल पर) पानी छिड़का और अपनी हथेली से लीपा। फिर कन्या-कदली (फल देने के पहले के केले का पेड़) के नये पत्तल को खोलकर रखा। फिर स्वामी से विनय की कि अडिहळ् ! आकर अमृत का अशन करें। (नोट-अडिहळ् का शाब्दिक अर्थ है पाद या चरण। इधर इसका अर्थ होगा कि हे प्रणम्य-पाद मेरी वन्दना के योग्य पैरों वाले; या भगवत्पाद या ईश्वर भक्त। कोवलन्न् श्रावक धर्म का पालन करने वाला था यानी विना संन्यास लिए ही व्रतों का पालन करने वाला था-गृहस्थ-तपस्वी। 'अमृत' भोजन को अमृत कहने की प्रथा है।) ३५-४३

7 कोवलन्न् उण्डान्न्

अरशर् पिन्न्तोर्क्कु अरुमऱै मरुङ्गिन्न्
उरिय वॆल्लाम् ऒरुमुऱै कऴित्तु आङ्गु
आयर् पाडियिन्न् अशोदैपॆऱ् ऱॆडुत्त
पूवैप् पुदुमलर् वण्णन्न् कॊल्लो
नल्लमुदु उण्णुम् नम्बि ईङ्गुप्
पल्वळैत् तोळियुम् पण्डुनङ् गुलत्तुत्
तौऴुत्तै याऴ्ऱिनुळ् तूमणि वण्णत्तै
विऴुमम् तीर्त्त विळक्कुकू कॊल् ॲॅत्त
ऐयैयुम् तव्वैयुम् विम्मिदम् ॲॅय्दिक
कण्कॊळा नमक्कु इवर् काट्चि ईङ्गु ॲॅत्त 44–53

७ कोवलन् ने भोजन किया

क्षत्रियापर (वैश्य) जाति के लोगों के लिए वेदों में विहित अनुष्ठान सब उसने किया। उसे देखकर ऐयै और उसकी माता आश्चर्य चकित हुई। उद्गार निकाले : क्या गोकुल में यशोदा का जाया नव-अतसी-वर्ण कण्णन्न् (कान्हा) है यह जो (हमारे गोकुल में) यहाँ भोजन कर रहा है ? अनेक कंकणों

से विभूषित कंधों वाली यह बाला भी पहले हमारे कुल में जन्म लेकर जिसने यमुना नदी के तट पर शुद्ध-मणि-वर्ण कान्हा की चिंता दूर की थी वह "नप्पिन्नै" (यहाँ की राधा) है आह ! आ ! ये आँखों में न समाने वाले दृश्य हैं ! ४४-५३

8 कोवलनिन् उळ्ळम्

उण्डु इतिदु इरुन्द उयर्पे राळड्कु
अम्मन्न तिरैयलोडु अडैक्काय् ईत्त
मैईर् ओवियं वरुह अन्नप् पोरुन्दिक्
कल्लदर् अत्तम् कडक्क यावदुम्
वल्लुन कोल्लो मडन्दै मेल् लडि ? अन्न
वेम्मुनै अरुम् जुरम् पोन्ददर्कु इरङ्गि
अम्मुदु कुरवर् अन्नुदर् उत्तर् कोल्
मायम् कोल्लो ? वल्विनै कोल्लो ?
यानुळम् कलङ्गि यावदुम् अरियेन
वरुमोळि याळरोडु वम्बप् परत्तरोडु
कुरु मोळिक् कोट्टि नेडुनहै पुक्कुप्
पोच्चाप् पुण्डु पोरुळ् उरै याळर्
नच्चुक् कोन्ड्रेड्कु नन्नेरि उण्डो ?
इरुमुदु कुरवर् एवलुम् पिळैत्तेन;
शिरुमुदुक् कुरैविक्कुच् चिरुमैयुम् शेय्देन;
वळु अन्नुम् पारेन मानगर् मरूङ्गु ईण्डु
अळुह अन अळुन्दाय् अन् शेय्दनै ? अन 54-70

८ कोवलन का मन

कठोर कर्म फल है ? मेरा चित्त भ्रमित हो गया था। मैं अज्ञानी बना था। बकवादियो और नयी रंडियों के सँग रहकर निंद्य और परिहास्य बन गया। नीच व्यवहारों में लग गया। सार्थक वचन भाषियों के उपदेशों को विष मानकर चला। ऐसे कृतघ्न मेरा भी उद्धार होगा क्या ? दोनों वृद्ध गुरुओं (माता पिता) की आज्ञाओं की भी अवगणना की। कम आयु की पर श्रेष्ठ बुद्धि वाली तुम्हारा भी अपने नीच व्यवहार से अहित ही किया। अनुचितता का विचार किये बगैर मैं ने कहा कि अपने महा नगर से उठकर चलो। तुम भी साथ रवाना हो गयी। यह तुमने क्या ही (उदार, कठिन काम) क्यों कर किया है ? ५४-७०

९ कण्णहि उरैत्तवै

अऱवोर्क्कु अळित्तलुम्, अन्तणर् ओम्बलुम्
तुऱवोर्क्कु ऍदिर्लुम् तॊल्लोर् शिऱप्पिन्
विरुन्देदिर् कोडलुम् इऴन्द ऍन्नै, नुम्
पॅरु महळ् तन्नॊडुम् पॅरुम् बॅयर्त् तलैत्ताळ्
मन्पॅरुञ् जिर्प्पिन् मानिदिक् किऴवन्
मुन्दै निल्ला मुनिवु इहन् दताा
अऱ्पुळम् शिऱन्दाङ्गु अरुण् मॊऴि अळैइ
ऍऱ्पा राट्ट यान्हत्तु ऑळित्त
नोयुम् तुन्बमुम् नॊडिवदु पोलु मॆन्न
वाय्अल् मुऱुवऱ्कु अवर् उळ् अहम् वरुन्दप्
पोऱ्ऱा ऑऴुक्कम् पुरिन्दीर् ! यावदुम्
माऱ्ऱा उळ्ळ वाऴ्क्कैयेन् आदलिन्
एऱ्ऱॆऴुन्दनन् यान् ऍन्ऱवळ् कूऱ 71-83

९ कण्णहि ने उत्तर में कहा

"श्रावकों को भोजन दान, ब्राह्मणों का सत्कार, संन्यासियों का स्वागत इत्यादि आपके कुल के पूर्वजों के आचार हैं। इनसे और अतिथियों को बुलाकर उनका आतिथ्य करने से मैं वंचित रह गयी हूँ। ऐसी रही मुझे देखने, मान्य मेरी सास तथा उनके पति, नामी पुरुष, आपके पिता जो अर्थार्जन में जबरदस्त, बड़े उद्योगशील धनवान है, आये। आपके पिता के मन में अभूत पूर्व क्रोध था। पर उन्होंने उसे छिपा लिया। मन में प्रेम के साथ प्रेम पूर्ण वचन कहकर उन्होंने मेरा गुण गाया। पर मेरे मन में छिपे

रहे रोग और दुख को उधाड़ती सी मेरे अधरों पर कुटिल (झूठी) हंसी उठी। यह देखकर वे इंगितज्ञ बहुत दुखी हुए। यह स्थिति क्यों? आपने गर्ह्य व्यवहार किया तो क्या? मेरा मन आप का प्रेम छोड़ने वाला नहीं। मेरा जीवन आपके जीवन के साथ जुड़ा है। इसलिए आपकी आज्ञा मानकर मै उठ आयी। ७१-८३

10 पोऱ्ऱिनान् पुऱप्पट्टान्

कुडिमुदऱ् चुऱ्ऱमुम् कुऱ्ऱिळै यॊरुम्
अडियोऱ् पाङ्गुम् आयमुम् नीङ्गि
नाणमुम् मडनुम् नल्लोर् एत्तुम्
पेणिय कऱ्पुम् पॆरुन् दुणै याह
ऎन्नॊडु पोन्दु ईङ्गु ऎन् तुयर् कळैन्द
पॊन्ने कॊडिये पुनैपूङ् गोदाय्
नाणिन् पावाय् नीणिल विळक्के!
कऱ्पिन् कॊळुन्दे पॊऱ्पिन् शॆल्वि!
शीऱडिच् चिलम्बिन् ऒन्ऱु कॊण्डु यान् पोय्
माऱि वरुवन् मयङ्गा दॊळिह ऎनक्
करुङ् गयल् नॆडुङ्गण् कादलि तन्नै
ऒरुङ्गुडन् तळीइ उळैयोर् इल्ला
ऒरुतनि कण्डु तन् उळ्ळहम् वॆदुम्बि
वरुपनि करन्द कण्णन् आहिप्
पल्लान् कोवलर् इल्लम् नीङ्गि
वल्ला नडैयिन् मऱुहिऱ् चॆल्वोन् 84-99

१० गुण गाया और आज्ञा ली

अपने निकट के कुल के रिश्तेदारों, छोटे-छोटे काम करनेवाली दासियों, सखियों और अन्य साथिनों से छूट कर, केवल लज्जा, गुणसौदर्य और सज्जन प्रशंसित सुपालित पातिव्रत्य को ही सहायक मानकर मेरे साथ आकर मेरा कष्ट दूर करनेवाली हे स्वर्ण बाला! हे लता! पुष्पालंकृत रमणी! लज्जाशील पुत्तलिका, विशाल धरातल की दीपिका! पातिव्रत्य पल्लव मानिता! श्री सुता अब मैं तुम्हारे छोटे चरणों को अलंकृत करनेवाले दो नूपुरों से एक को ले जाऊँगा। (रुपये में) बदल लाऊँगा, तुम निश्चित रहो! कहकर उसने उस

कयल् के समान तथा लंबी आँख वाली प्यारी को कस कर आलिंगित किया। आज्ञा कारिणी दासियों के अभाव में उसे अकेली रहता देखकर उसका मन तप उठा। उसकी आँखें आँसू से भर आयी। फिर वह अनेक गायों के स्वामी ग्वालों के घरों को पार कर, शिथिलगति में सड़क पर उतर कर चलने लगा। ८४-९९

11 कडैवीदि शेऱ्ऩ्ददाऩ्

इमिलेरु ऍदिरऩ्ददु; इळ्कुकॅऩ्ऩ अऱियाऩ्
तऩ्कुलम् अऱियुम् तहुदि अऩ्ऱु आदलिऩ्
तादॆरु मऩ्ऱम् तात्तुडऩ् कळिऩ्दु
मादर् वीदि मऱुहिडै नडन्दु
पीडिहैत् तॆरुविल् पॅयर्वोऩ्-आङ्गण् 100–104

११ बाज़ार पहुँचा

सामने एक डिल्लेदार वृषभ आया। वह नही जानता था कि यह घोर अपशकुन है! क्योंकि उसकी जाति में यह शकुन देखने की प्रथा नही थी। उस मैदान को पार कर गया जिस पर पराग गिरकर खाद बन रहे थे। फिर देव-दासीस्त्रियों की वीथी से होकर गुजरा। आखिर बड़ी दूकानों वाली (बाज़ार) सड़क से जाने लगा। तब वहाँ— १००-१०४

12 पॊऱ् कॊल्लऩ् ऍदिर्प्पट्टाऩ्

कण्णुळ् विऩैञर् कैविऩै मुऱ्ऱिय
नुण्विऩैक् कॊल्लर् नूऱ्ऱुवर् पिऩ्वर
मॅय्प्पै पुक्कु विलङ्गु नडैच् चॆलविऩ्
कैक्कोऱ् कॊल्लऩैक् कण्डऩ ऩाहित्
तॆऩ्ऩवऩ् पॆयरॊडु शिऱ्प्पुप् पॆऱ्ऱ
पॊऩ् विऩैक् कॊल्लऩ् इवऩॆऩप् पॊरुन्दिक्
कावलऩ् तेविक्कु आवदोर् काऱ्कु अणि
नीविलै यिडुदऱ्कु आदियो ऍऩ 105–112

१२ स्वर्णकार सामने आया

दृष्टिहारी कारीगरी में निपुण, बारीक कलापूर्ण निर्माण में सिद्ध हस्त एक सौ सुनारों के साथ, अंगरखा पहने, छड़ी घुमाते हुए प्रमुख सोनार उन

लोगों से कुछ अलग आ रहा था। उसको देखकर कोवलन ने समझा कि यही शायद "पांडिय" नाम से संबंधित, राजकीय सुनार के रूप में प्रख्यात सुनार है। उसके पास गया और कहा कि मेरे पास राजा की देवी के पहनने योग्य एक चरणाभरण (नूपुर) है और पूछा कि तुम उसका मूल्य आंक (दिला) सकते हो ? १०५-११२

13 कॊल्लऩ् पार्त्ताऩ्

अडियेऩ् अरियेऩ् आयिऩुम् वेऩ्दर्
मुडिमुदऱ् कलऩ्गळ् शमैप्पेऩ् याऩ् ऎऩ्ऱक्
कूऱ्ऱुव तूदऩ् कैतॊऴुदु एत्तप्
पॊऱ्ऱु अरुम् शिलम्बिऩ् पॊदिवाय् अविऴ्त्तऩऩ्
मत्तह मणियोडु वैरम् कट्टिय
पत्तिक् केवणप् पशुम्बॊऩ् कुडैच्चूल्
शित्तिरच् चिलम्बिऩ् शॆय्विऩै ऎल्लाम्
पॊय्त्तॊऴिऱ् कॊल्लऩ् पुरिन्दुडऩ् नोक्किक् 113–120

१३ सुनार ने देखा

उसने उत्तर में कहाः मैं वह काम नहीं जानता। तो भी राजा का किरीट आदि आभरण बना सकता हूँ। यह कहकर उस यमदूत ने कोवलन् को नमस्कार कर उसकी तारीफ़ की। तब कोवलन् ने अवर्णनीय महत्व के नूपुर की पोटली का मुख खोला। (या नूपुर का संधि मुख खोलकर दिखाया)। उस में मस्तक मणि के अलावा पंक्ति में हीरों से जड़ित छोटे गड्ढों की पंक्तियाँ थीं; और शुकपक्ष जाति के स्वर्ण से निर्मित तथा पार्श्व में फूली हुई गोल पायल थी। वह नूपुर बहुत ही कलापूर्ण रीति से चित्रमय बना हुआ था। उस वंचक सुनार ने उसकी श्रेष्ठ कारीगरी को ध्यान से देखा-परखा। (उसने जिसको चुराया था उस नूपुर से मन ही मन में इसकी तुलना की) ११३-१२०

14 कॊल्लऩिऩ् शूऴ्च्चि

कोप्पॆरुन् देविक्कु अल्लदै इच् चिलम्बु
याप्पुऱवु इल्लै ऎऩ्ऩ मुऩ् पोन्दु
विऱ्ऱुमिहु वेन्दऱ्कु विळम्बि याऩ्वर; ऎऩ्ऩ
शिऱुकुडिल् अङ्गण् इरुमिऩ् नीर्! ऎऩ्ऱक्

कोवलऩ् शॆऩ्ऱ्क् कुरुमहऩ् इरुक्कैयोर्
देव कोट्टच् चिऱैयहम् पुक्क पिऩ्
करनुदुयाऩ् कॊण्ड काल् अणि ईङ्गुप्
परनुदु वॆळिप्पडा मुऩ्ऩम् मऩ्ऩऱ्कुप्
पुलम् पॆयर् पुदुवतिऱ् पोक्कुवऩ् याऩ् ऎऩक्
कलङ्गा उळ्ळम् करऩ्दऩऩ् शॆल्वोऩ् 121–130

१४ सुनार की साजिश

उसने कहा : महारानी को छोड़ यह नूपुर अन्य किसी के योग्य (किसी से ग्राह्य) नहीं होगा। और भी कहा कि पहले जाकर प्रतापी राजा को समाचार देकर जब तक नही लौटूँ तब तक मेरी छोटी कुटिया के पास के स्थान में रहें। कोवलन् नूपुर को लेकर उस धूर्त के वासस्थान के पास रहे एक देवकुट के समीप एक घर में जाकर रहा। पश्चात् उस नीच ने सोचा : मैंने जो नूपुर चुरा रखा है वह समाचार प्रगट हो फैल न जाय— इसके पूर्व ही राजा के सामने इस परदेशी अजनवी को अपराधी ठहराकर स्वयं अपराधारोप से बच जाऊँगा। वह पाप से अभीत मनवाला अपना कपट छिपा कर (राजा के पास) गया। १२१-१३०

15 पाण्डियऩैक् कण्डाऩ्

कूडत् महळिर् आडल् तोऱ्ऱमुम्
पाडर् पहुदियुम् पण्णिऩ् पयङ्गळुम्
कावलऩ् उळ्ळम् कवर्न्दऩ ऎऩ्ऱु तऩ्
ऊडल् उळ्ळम् उळ् करनुदु ऎळित्तुत्
तलैनोय् वरुत्तम् तऩ्मेल् इट्टुक्
कुल मुदल् तेवि कूडादु एह
मऩ्ऩवऩ् चुऱ्ऱम् नीङ्गि मऩ्ऩवऩ्
शिनुदरि नॆडुङ्गण् शिलदियर् तम्मॊडु
कोप्पॆरुन् देवि कोयिल् नोक्किक्
काप्पुडै वायिर् कडैकाण् अहवयिऩ्
वीऴ्न्दवऩ्ऩ किडनुदु ताऴ्नुदु पल एत्तिक् 131–141

१५ पांडिय राजा से भेंट की

(उधर दरबार में नाच गान हुआ। पटरानी ने देखा कि) मदुरै की

नर्तकियों के नर्तन का दृश्य, गाने का प्रभाव, रागों का असर आदि ने राजा के मन को हर लिया है। (मेरी ओर वे नहीं देखेंगे।) उसे क्रोध हुआ। पर मान को छिपाकर मानिनी ने सिर दर्द का बहाना किया; फिर महल की पटरानी देवी राजा के साथ मिली नहीं रही; पर चली गयी। राजा घबराकर अपने मंत्री-मंडल से अलग होकर लाल डोरों से युक्त लंबी आँखों वाली छोटी दासियों के साथ महारानी के महल की ओर जा रहा था। सुरक्षित द्वार के पास जब वह आया तब उसको देखते ही यह सुनार आकर पैरों पर गिरा। उठकर राजा की, नमकर खूब स्तुति की। १३१-१४१

16 पळि् कूऱ्रिनान्

कन्नहम् इन्ऱियुम् कवैक्कोल् इन्ऱियुम्
तुन्निय मन्दिरम् तुणैअताक् कोण्डु
वायि लाळरै मयक्कु तुयिल् उरुत्तुक्
कोयिऱ् चिलम्बु कोण्ड कळ्वन्
कल्लेन् पेर् ऊरक् कावलरक् करन्दु अंन्
शिल्लैच् चिऱुकुडिल् अहत्तु इरुन्दोन् अंत 142-147

१६ लांछन लगाया

उसने कहा : खोदने का औजार, मट्टी निकालने का औजार आदि के बिना ही, केवल निद्रा में डालने वाले मोहन-मंत्र की सहायता से, पहरेदारों को मोहनिद्रा में सुलाकर महल के नूपुर को जो चुरा ले गया था वह चोर कोलाहल पूर्ण हमारे नगर के रक्षक वीरों की आँख बचाकर मेरी अल्प कुटिया में छिपा बैठा है! १४२-१४७

17 अरशनिन् आणै

विनैविळै कालम् आदलिन् यावदुम्
शिनै अलर् वेम्बन् तेरान् आहि
ऊर्काप् पाळरैक् कूवि ईङ्गु अंन्
ताळ्पूङ् गोवै तन्काऱ् चिलम्बु
कन्ऱिय कळ्वन् कैयदु आहिन्
कोन्ऱु अच् चिलम्बु कोणर्ह ईङ्गु अंनक् 148-153

१७ राजा की आज्ञा

कर्म-फलागम का काल था। इसलिए नीम के फूलों की माला-धारी

ने कुछ आगा-पीछा नहीं सोचा। उसने नगर रक्षक वीरों को बुलाया और आज्ञा दी कि मेरी प्यारी, पुष्प-लता(-सी रानी) का पादनूपुर उस अभ्यस्त पक्के चोर के हाथ में पाया गया तो उसे मारकर वह नूपुर ले आओ। १४८-१५३

18 कावलरुडऩ् शॆऩ्ऱाऩ्

कावलऩ् एवक् करुनॅदॊऴिऱ् कॊललतुम्
एवल् उळ्ळत्तु ऍण्णियदु मुडित्तु ऍऩत्
तीविऩै मुदिर्वलैच् चॆऩ्ऱुपट् टिरुनव
कोवलऩ् तऩ्ऩैक् कुऱुहिऩऩ् आहि
वलम्पडु ताऩै मऩ्ऩवऩ् एवच्
चिलम्बु काणिय वनॅदोर् इवर् ऍऩच्
चॆय्विऩैच् चिलम्बिऩ् शॆयदि ऍल्लाम्
पॊय्विऩैक् कॊल्लऩ् पुरिन्दुडऩ् काट्ट 154-161

१८ रक्षक वीरों के साथ गया

राजा की प्रेरणा से काली करतूत वाला वह सुनार भी इस बात का संकल्प करके कि मैं स्वमन प्रेरित कर्म अंजाम करके ही छोड़ूंगा कोवलऩ् के पास गया जो बुरे कर्म के बुने कठिन कष्टजाल में फँस रहा था। उससे कहा कि प्रतापी सेना के राजा की आज्ञा से नूपुर देखने आये हैं ये लोग। फिर नूपुर की कारीगरी का वर्णन करते हुए उस असत्यकारी ने उन्हें नूपुर दिखलाया। १५४-१६१

19 कावलरिऩ् ऐयम्

इलक्कण मुऱैमैयिऩ् इरुनॅदोऩ् ईङ्गु इवऩ्
कॊलैप्पडु महऩलऩ् ऍऩ्ऱु कूऱुम्
अरुनॅदिऱल् माक्कळै अहनहैत्तु उरैत्तुक्
करुन् दॊऴिऱ् कॊल्लऩ् काट्टिऩऩ् उरैप्पोऩ् 162-165

१९ रक्षकों का संशय

"सामुद्रिका लक्षणों के अनुसार ऐसे लक्षणों वाला यह वध्य पुरुष नहीं लगता।" ऐसा कहनेवाले वीर लोगों की हंसी उड़ाते हुए उस काली करतूत वाले ने उस कोवलऩ् को उद्देश्य करके निम्न प्रकार व्याख्या की। १६२-१६५

20 कळ्वर् तिऱन्

मन्दिरम् दॆय्वम् मरुन्दे निमित्तम्
तन्दिरम् इडने कालम् करुवि ॲन्ऱु
ॲट्टुडन् अन्ऱे इऴुक्कुडै मरबिन्
कट्टुण् माक्कळ् तुणैअन ताक्किरिवहु;
मरुन्दिऱ् पट्टीर् आयिन् यावरुम्
पॆरुम्बॆयर् मन्नतितिन् पॆरुनवॆप् पट्टीर्;
मन्दिरम् नाविडै वऴुत्तुवर् आयिन्
इन्दिर कुमररिन् याम्काण् गुवमो ?
दॆय्वत् तोऱ्ऱम् तॆळिहुवर् आयिन्
कैयहत्तु उऱुपॊरुळ् काट्टियुम् पॆयर्हुवर्
मरुन्दिन् नङ्गण् मयक्कुवर् आयिन्
इरुन्दोम् पॆयरुम् इडनुमार् उण्डो ?
निमित्तम् वाय्त्तिडिन् अल्लदु यावदुम्
पुहऱ्किलर् अरुम् पॊरुळ् वनदुहैप् पुहुदिनुम्
तन्दिर करणम् ॲण्णुवर् आयिन्
इन्दिरन् मार्बत्तु आरमुम् ॲय्दुवर्;
इव्विडम् इप्पॊरुळ् कोडऱ्कु इडम् ॲन्निन्
अव्विडत्तु अवरै यार्काण् गिऱ्पार्;
कालङ् गरुदि अवर् पॊरुळ् कैयुऱिन्
मेलोर् आयिनुम् विलक्कलुम् उण्डो
करुवि कॊण्डु अवर् अरुम् पॊरुळ् कैयुऱिन्
इरुनिल मरुङ्गिन् यार्काण् गिऱ्पार् ?
इरवे पहले ॲन्ऱु इरण्डु इल्लै
करवु इडम् केट्पिन् ओर् पुहलिडम् इल्लै 166–189

२० चोरों का सामर्थ्य

जादू, दुर्देवता, औषध, निमित्त, तन्त्र, स्थान, काल और साधन —इन आठों को न गर्ह्य व्यापार में लगे चोर सहायक बनाकर फिरते हैं ? अगर इनके औषध में फँस जाओ (और उसे छोड़ दो) तो बड़े नामी राजा के सामने अपराधी बन जाओगे। अगर चोर मन्त्र का जाप अपनी जीभ से करेंगे तो इन्द्रकुमारों (या अन्तर कुमार=देवों) को जैसे हम भी देख

देंगे क्या ? (अदृश्य नहीं हो जायँगे ?) अगर ये अपने इष्ट देवता का साफ़ ध्यान में लायेंगे तो उनके हाथ की वस्तु को आप देखते ही रहिए पर वे उसको लेकर चले जायेंगे ! औषध दिलाकर हमको वेहोश करा देंगे तो हमारे पास अपने स्थान से उठकर जाने का मार्ग (उपाय) भी होगा क्या ? जब तक निमित्त ठीक नहीं आता तब तक हाथ में अलभ्य सामान आकर लग जाय तो भी नहीं लेंगे। (स्तेन शास्त्र में) कथित तत्वों को अपनायेंगे तो वे इन्द्र के गले के हार को भी हर ले आ जायँगे। अगर वे यह निश्चय करें कि अमुक स्थान यह चीज़ लेने के लिए उचित है तो वहाँ उन्हें कौन देख सकेगा ? युक्तकाल की गणना करके वे वस्तु को हथियायँगे तो बड़े-बड़े लोग भी क्यों न हों उन्हें रोक नही सकेंगे। उचित उपकरण को लेकर दुर्लभ चीज़ को वे ले लेंगे तो इस विशाल धरातल पर कौन होगा जो उन्हे देख भी सके ? इनके लिए रात और दिन दो नहीं है; दोनो बराबर हैं। उनकी चोरी का स्थान पूछिए तो हमारे लिए बचने का कोई स्थान रहेगा नहीं। (यानी किसी भी स्थान से वे सफल रूप से चुरा लेंगे।) १६६-१८६

21 पऴैय कळवु

तूदर् कोलत्तु वायिलिऩ् इरुन्तु
मादर् कोलत्तु वल्लिरुळ् पुक्कु
विळक्कु निऴलिल् तुळुक्किलऩ् शेऩ्ऱु आङ्गु
इळङ्गो वेन्दऩ् तुळङ्गोळि आरम्
वैयिलिडु वयिरत्तु मिऩ्ऩिऩ् वाङ्गव्
तुयिल्कण् विऴित्तोऩ् तोळिऱ् काणाऩ्
उडैवाळ् उरुव उऱैक्कै वाङ्गि
ऎऱितोऱुम् शॆऱित्त इयल्बिऱ्कु आऱ्ऱाऩ्
मल्लिऱ् काण मणित्तूण् काट्टिक्
कल्वियिऩ् पॆयर्न्द कळ्वऩ् तऩ्ऩैक्
कण्डोर् उळरॆऩिऱ् काट्टुम् ईङ्गि वरक्कु
उण्डो उलहत्तु ऒप्पोर् ? ऎऩ्ऱु अक्
करुन्दॊऴिऱ् कॊल्लऩ् शॊल्ल, आङ्गु ऒर् 190-202

२१ एक पुरानी चोरी

उसने और एक धोखे की बात का विवरण दिया : दूत के रूप में एक आदमी महल के द्वार पर आया। वह स्त्री का वेश धारण कर घने अंधकार

में अन्दर घुसा। दीप की छाया में बिना हिले आगे बढ़ा। वहाँ उसने युवा राजकुमार के वक्ष के ज्वलंत, धूप सम प्रकाशमय वज्रयुक्त हार को विद्युत के समान छीन लिया। उधर राजकुमार जाग उठा। अपने गले में हार को न देखकर उसने तलवार म्यान से खींच ली। तब चोर ने म्यान को खुद लेकर राजकुमार की वारों से अपने को बचा लिया। राजकुमार ने हार कर मल्लयुद्ध किया। चोर मणिमय खम्भे को सामने करके अपनी विद्या के बल से बच निकला। उस चोर को जिस किसी ने भी देखा हो तो दिखा दो! यहाँ इस धरती में इनसे तुल्य को है भी क्या? —ऐसा उस दुराचारी ने कहा। वहाँ एक। १९०-२०२

22 इळैयोन् कूऱ्ऱु

तिरुन्दुवेल् तडक्कै इळैयोन् कूऱ्ऱुम्
निलत्तहळ् उळियन् नीलत् तानैयन्
कलन् नशै वेट्कैयिन् कडुम्बुलि पोन्ऱु
मारि नडुनाळ् वल्लिरुळ् मयक्कत्तु
ऊर्मडि कङ्गुल् ऑरुवन् तोन्ऱक्,
कैवाळ् उरुव ऎन् कैवाळ् वाङ्ग
ऎव्वाय् मरुङ्गित्तुम् यातवन् कण्डिलेन्
अरिदिवर् शॆय्दि अलैक्कुम् वेन्दनुम्
उरियदु ऑन्ऱु उरैमिन् उऱुपडै यीर् ऎन 203-211

२२ छोटी उम्र का वीर

सुघड़ वेल् (शक्ति) रखनेवाले अल्पायु वीर ने हाँ में हाँ मिला कर कहा भूमि को खोदने की छेनी हाथ में लिए, घने नीले वस्त्र पहने हुए एक चोर आभरण की चोरी की लालसा के साथ कठोर व्याघ्र के समान वर्षाकाल की एक अर्धरात्रि में जब सारा नगर निद्रा में लीन था अन्धकार के बीच मेरे सामने दिखाई दिया। उसने मुझे देखकर अपनी कटार निकाली। मैंने भी अपनी निकाली। पर वह लुप्त! कही भी नही देख पाया। चोरों की बात गजब की है। राजा भी दण्ड देगा। हे शस्त्रधर वीरो! कहो कर्तव्य एक हमारा! उसके ऐसा कहने पर। २०३-२११

23 कोवलन् वीऴ्न्दान्

कल्लाक् कळिमहन् ऑरुवन् कैयिल्
वॆळ्वाळ् विलङ्गुडु अऱुत्तदु;

पुण्णुमिऴ् कुरुदि पॊऴिन्दुडऩ् परप्प
मण्णह मडन्दै वाऩ् तुयर् कूरक्
कावलऩ् शॆङ्गोल् वळैइय वीऴ्न्दतऩ्
कोवलऩ् पण्डै ऊऴ्विऩै उरुत्तु ॲऩ् 212–217

२३ कोवलन (मर) गिर गया !

एक अज्ञ पियक्कड़ वीर ने अपने हाथ से सफेद कटार फेंक दी। वह कोवलन के शरीर को आडे काट गयी। व्रण से निकलता रक्त सब जगह फैलने लगा। भूदेवी अत्यन्त व्याकुल हुई। शासक के राजदण्ड को झुकाते हुए कोवलन गिर गया। पूर्व कर्म उसको फल भुगताने आ गया। २१२-२१७

24 वॆण्पा

नण्णुम् इरुविऩैयुम् नण्णुमिऩ्गळ् नल् अऱमे
कण्णहि तऩ् केळ्वऩ् कारणत्ताल्–मण्णिल्
वळैयाद शॆङ्गोल् वळैन्ददे; पण्डै
विळैवाहि वन्द विऩै 228–231

वॆण्बा

(पुण्य, पाप) दोनों कर्म, फल (सुख या दुख) देकर ही छोड़ेंगे। इसलिए सद्धर्म ही करो। कण्णहि के पति के कारण पृथ्वी पर जो कभी नही झुका था वह सीधा राजदण्ड झुक गया। यह पुराने कर्म के फल बनकर आने से ही हुआ। २२८-२३१

17 आय्च्चियर् कुरवै

(कोच्चहक् कलि)

(उरै विरवि वन्दवु)

1 तयिर् कडैय मुऱ्पट्टतर्

कयल् ॲॆऴुदिय इमय नॆऱ्ऱियिन्
अयल् ॲॆऴुदिय पुलियुम् विल्लुम्
नावलम् तण्पॊऴिल् मन्नर्
एवल् केट्पप् पार् अरशु आण्ड
माले वॆण्कुडैप् पाण्डियन् कोयिलिऱ्
काले मुरशम् कनैकुरल् इयम्बुम् आहलिन्
नॆय्म्मुरै नमक्कु इन्ऱु आम् ॲॆन्ऱु
ऐयै तन्महळैक् कूउयक्
कडैकयिऱुम् मत्तुम् कॊण्डु
इडै मुदुमहळ् वन्दु तोन्ऱुम् मन् 1-10

१७ ग्वालिन-नाट्य (रास)

"कुरवै" रास-नाट्य का नाम है। इसमें अनेक (सात या नौ) स्त्रियाँ मिलकर नाचती है, गाती है। कथा-भाव कृष्ण के चरित्र से संबंधित होता है। परस्पर हाथ पकड़ कर नाचती है।

तमिऴ्नाडु में धरती पाँच प्राकृतिक प्रदेशों में विभक्त थी। पर्वत, वन खेत, समुद्रतट तथा विकृत मरु प्रदेश। हर एक के निवासी पशु पक्षी, पेड़, पौधे, फूल, आदि अलग-अलग थे। साहित्य में इनका विवरण इसी श्रेणी-विभाग के अन्तर्गत आता था। छन्द, नाच, गान राग वाद्य आदि भी अलग-अलग माने जाते है।

इसका छन्द कोच्चहक् कलि है।

इस अध्याय में गेय पद्यों के अलावा व्याख्या-वचन-पद्य भी पाये जाते हैं। उरैप्पाट्टु मडै का वही अर्थ है। पहले आजकल जिसे गद्य कहते हैं वैसा गद्य नही होता था। कविता पद्य, गान पद्य और वचन पद्य —ये ही होते थे।

१ दही मथने को उद्यत हुई

(यह वचन पद्य है) "हिमालय के भाल में पांडियऩ् द्वारा "कयल्" (मत्स्य) खुदवाया गया। उस मत्स्य के पास शोऴऩ् ने व्याघ्र को तथा शेरऩ् ने धनुष को अंकित किया। जम्बूद्वीप के उर्वर देश के सभी राजाओं को आज्ञाकारी मातहत बनाकर जो राज्य करता है उस मालायुक्त श्वेत-छत्र पांडियऩ् के महल की उषा गरज उठती भेरी है। "आज की घृत देने की बारी हमारी है।" यह सोचकर मादरि ने अपनी पुत्री ऐयै को बुलाया। नेती और मथानी को लेकर प्रौढ़ा ग्वालिन मादरि स्वयं आयी। (मऩ्-केवल पूरक स्वर)। १

2 तीय कुऱिप्पुहळ्

(उरैप्पाट्टु मडै)

कुडप्पाल् उऱैया; कुविइमिल् एऱ्ऱिऩ्
मडक्कण् नीर् शोरुम्; वरुवदु ऒऩ्ऱु उण्डु 2
उऱिनऱु वॆण्णॆय् उरुहा; उरुहुम्
मऱितॆऱित्तु आडा वरुवदु ऒऩ्ऱु उण्डु 3
नाऩ्मुलै आयम् नडुङ्गुबु निऩ्ऱिरङ्गुम्
माऩ्मणि वीऴुम्; वरुवदु ऒऩ्ऱु उण्डु 4

२ बुरे शकुन

(अन्तरित वचन पद्य)

मटके का दूध नही जमा (दही नही बना) है। ऊँचे उठे हुए ककुद वाले बैलों के आकर्षक नेत्रों से आँसू बहता है। लगता है कोई हानि आने वाली है। २ छीके में रखा सुबास युक्त मक्खन नही पिघलता है। चलनशील बकरी के बच्चे उछल कूद नही मचाते। अवश्य कुछ बुरा होने वाला है। ३ चार चूचुकों वाली गायों के झुण्ड काँपते हुए रँभाते है। उनके गले के बड़े घण्टे कटकर गिरते हैं। अतः कुछ अवश्य अनिष्ट होगा। ४

3 करुप्पम्

कुडत्तुप्पाल् उऱैयामैयुम्
कुवि इमिल् एऱ्ऱिऩ्
मडक्कण् नीर् शोर्दलुम्

उरियिल् वॆण्णॆय् उरुहामैयुम्
मरि मुडङ्गि आडामैयुम्
मान्मणि निलत्तु अऱ्ऱु वीळ्दलुम्
वरुवदु ओर् तुन्बम् उण्डु ऍन
महळै नोक्कि मनम् मयङ्गादे !
मण्णिन् मादर्क्कु अणि आहिय
कण्णहियुम् तान् काण
आयर् पाडियिल् ऍरु मन्ऱत्तु
मायवनुडन् तम्मुन् आडिय
वाल शरिदै नाडहङ्गळिल्
वेल् नॆडुङ्गण् पिन्नैयोडु आडिय
कुरवै आडुदुम् याम् ऍन्ऱाळ्
कऱवै कन्ऱु तुयर् नीङ्गुह ऍनवे 5

३ संकट का गर्भ

(सूचना)

मटके के दूध का न जमना, ककुद वाले बैलों का नेत्रों से आँसू बहाना, छीके के मक्खन का न पिघलना, बकरी के बच्चों का अचंचल रहना, घण्टो का कटकर भूमि पर गिरना इसकी सूचना है कि कोई संकट आनेवाला है। ऐसा अनुमान करके मादरि ने अपनी पुत्री को देखकर (आश्वस्तवचन) कहा कि चिन्ता-भ्रमित मत हो जाओ। धरती की नारियों की भूषणस्वरूप कण्णहि भी देखें। इस गोकुल के मध्य मैदान में (मूल में तादंकुमन्ऱम्" है जिसका शाब्दिक अर्थ पराग और खाद मैदान; शायद यह इंगित करता है कि उस मैदान में पेड़ अधिक संख्या में खड़े थे और उनके फूलों से बराबर पराग गिरते रहते थे और गायें वहाँ विश्राम करती रहती थीं।) उस दिन मायावी (कृष्णचन्द्र) के साथ उसके अग्रज ने जो बाल चरित खेले थे। उसमें उन्होंने वेल् के समान (दिल में चुभनेवाली) लम्बी आँखोंवाली पिन्नै (यह तमिळ् साहित्य की राधा है।) के साथ कुरवै नाट्य किया था। (कुरवै नाट्य में सात, नौ आदि की संख्या में स्त्रियाँ या पुरुष या दोनों मिलकर गाते नाचते है।) हम यह "कूत्तु" (नाट्य) गायों और बछड़ों के दुख को दूर करने की माँग लेकर करेंगे। ५

4 कॊळु

कारि कदत्त्र् अञ्जात्त्र् पाय्न्दार्कॆ कामुऱुम् इव्
वेरि मलर्क् कोदैयाळ् 6

४ रास की कथावस्तु

(यह नाटक का पुराना रूप है। इस नाट्य नाटक में भूमिकाएँ होती हैं। हर एक कोई न कोई पात्र बन जाता है। हर एक का स्थान निर्धारित किया जाता है। फिर गान नाच, कथन आदि होता है। नाट्य यह उत्पात-सांत्यर्थ देव पूजन ही है।) काले बैल की क्रोधोन्मत्तता से न डरकर जो उस पर झपटा उससे प्रेम करती है मधुपूर्ण फूलों की माला पहननेवाली यह कन्या! (एक ग्वाल-बाला को पिन्नै का पात्र दिया जाता है। ६

5 इवत्तुक्कु इवळ्

(शुद्द)

नॆऱ्ऱिच् चॆहिलै अडर्त्ताऱ्कु उरिय इप्
पॊऱ्ऱॊडि मादराळ् तोळ् 7
मल्लल् मऴविडै ऊर्न्दाऱ्कु उरियळ् इम्
मुल्लैयम् पूङ्गुऴल् तान्न् 8
नुण्पॊऱि वॆळ्ळै अडर्त्ताऱ्के आहुम् इप्
पॆण् कॊडि मादर् तन्न् तोळ् 9
पॊऱ्पॊऱि वॆळ्ळै अडर्त्ताऱ्के आहुम् इन्
नऱ्कॊडि मॆन्नमुलै तान्न् 10
वॆन्ऱि मऴविडै ऊर्न्दाऱ्कु उरियळ् इक्
कॊन्ऱैयम् पूङ्गुऴ लाळ् 11
तूनिऱ वॆळ्ळै अडर्त्ताऱ्कु उरियळ् इप्
पूवैप् पुदु मलराळ् 12

५ यह (कन्या) इसकी

संकेत

माथे पर लाल चिह्न के साथ जो बैल है उसको वश में करनेवाले के हक में ही होंगे इस स्वर्णकंकणधारिणी के कन्धे! ७ उस बलवान तरुण बैल पर जो सवार होगा उसके हक की होगी यह मुल्लै पुष्प शोभित सुकेशिनी। ८

छोटी-छोटी चित्तियों से युक्त श्वेत वृषभ-वशकारी की ही होगी इस लता-सी युवती की बाहुएँ। ९ सुन्दर स्वर्ण-बिंदियों से शोभायमान श्वेतवृषभ-वशकारी के ही भोग्य होंगे इस सुलता के कोमल स्तन। १० इस विजेता, तरुण बैल पर सवार होने वाले के ही वश की होगी कोन्ऱै (अमलतास) के फूल से सज्जित कोमल केशिनी। ११ बिलकुल सफ़ेद रंग के बैल को पछाड़ने वाले के ही वश में होगी यह अभिनव 'पूवै' फूलों से अलंकृत बाला। १२ (सात बैलों की जिक्र कृष्ण चरित्र की याद दिलाती है। सात बैलों को वश में करके 'कन्या शुल्क' अदा कर कृष्ण ने नप्पिन्नै नायकी का हाथ वरण किया। बैल पालकर उसे प्रण का पात्र बनाना इधर पहले चलता था। अब "बैल पकड़ने" का खतरनाक खेल मकर संक्रांति के दूसरे दिन चलता है पर वह केवल खेल है यद्यपि कभी कभी चोटें भी लग जाती है, मृत्यु भी होती है।)

6 पॅयरिट्टताळ्

(ॲडुत्तुक् काट्टु)

आङ्गु
तॊळुविडै एरु कुरित्तु वळर्त्तार्
ॲळुवर् इळङ् गोवैयार्
ॲन्नुरु तन्न महळै नोक्कित्
तॊन्नुरु पडु मुऱैयाल् निरुत्ति
इडै मुदु महळ् इवर्क्कुप्
पडैत्तुक् कोळ् पॅयर् इडुवाळ्
कुडमुदल् इडै मुऱैयाक् कुरल् तुत्तम्
कैक्किळै उळै इळि विळरि तारम् ॲन्न
विरि तरु पूङ्गुळल् वेण्डिय पॅयरे 13

६ नाम करण किया (दृष्टांत)

वहाँ इस भाँति गो शाला में सात विविध बैलों को सात कन्याओं ने विवाह की शर्त (प्रण के रूप में) बनाकर पाला था। यह कहकर मादरि ने अपनी पुत्री के द्वारा उन युवतियों को बुलवाया-प्रौढा उस ग्वाल-नारी ने उन्हें प्राचीन परंपरा के अनुसार अपने अपने स्थान में खड़ा किया। फिर उन्हें निम्न प्रकार के कलिपत, (या सांकेतिक नाम) दिये। पश्चिम दिशा में बायीं ओर क्रम से कन्याओं को "कुरल्" 'तुत्तम्' 'कैक्किळै', "उळै" "इळि" "विळरि" "तारम्" के नाम दिये [ये सातों संगीत-स्वरों के नाम

है। उत्तर भारत में या संकृत-ज्ञान-निहित संगीत शास्त्र में षडजम (स), रिषभ (रि) गांधार (ग), मध्यम (म), पंचम (प), घैवत (द) निषाद (नि) इसी क्रम में पाये जाते हैं। स्वरों के नाम देने की प्रथा थी।] १३

7 वरिशैयाह निन्ऱ्तर्

(पडैत्तुक् कोळ् पॅयर्)

मायवन्ऩ् ऍन्ऩ्ऱाळ् कुरलै विऱल् वॅळ्ळै
आयवन्ऩ् ऍन्ऩ्ऱाळ् इळि तन्ऩै; आय् महळ्
पिन्ऩै याम् ऍन्ऩ्ऱाळ् ओर् तुत्तत्तै; मऱ्ऱैयार्
मुन्ऩैयाम् ऍन्ऩ्ऱाळ् मुऱै 14
मायवन्ऩ् शीर् उळार्, पिञ्ञैयुम् तारमुम्
वाल् वॅळ्ळै शीरार् उळैयुम् विळरियुम्
कॆक्किळै पिञ्ञै इडत्ताळ्; वलत्तुळाळ्
मुत्तैक्कु नल् विळरि ताऩ्
अवरुळ् 15
वण्तुळाय् मालैयै मायवन्ऩ् मेलिट्टुत्
तण्डाक्कुरवै ताऩ् उट्पडुवाळ्—कॊण्ड शीर्
वैयम् अळन्दाऩ् तन्ऩ् मार्बिल् तिरुनोक्कु काप्
पॆय्वळैक् कैयाळ् नम् पिन्ऩै ताऩ् आम् ऍन्ऱे
'ऐ' ऍन्ऩ्ऱाळ् आयर् महळ् 16

७ क्रम से खड़ी हुईं

(नाट्य-माम पात्र)

उसने "कुरल्" को मायवन्ऩ् (कृष्ण) कहा। श्वेतवर्ण बलराम कहा "इळि" को। "तुत्तम्" को ग्वाल कन्या पिन्ऩै बनाया। अन्यों को "प्राचीन काल में उसके साथ रही हमारी जाति की कन्यायें" कहा। १४ "मायवन्ऩ्" ("कुरल" स्वर वाली) के पास पिन्ऩै (तुत्तम्) और "तारम्" वाली खड़ी रही। बलराम ("इळि") वाली लड़की के साथ "उळै" और "विळ्रि" संज्ञित लड़कियाँ खड़ी रहीं। "कैक्किळै" "पिन्ऩै" की बाईं ओर खड़ी रही। "मुत्तै" या मुन्दै" कहलाने वाले "तारम्" के स्थान पर रही अच्छी "विळरि" खड़ी रही। १५ (लड़कियों के खड़े रहने का स्थान स्वरों के नामों से निर्धारित किया गया है।) फिर उनमें से "पिन्ऩै" ने खूब सटा कर गुंथी तुलसी माला को मायवन्ऩ् (कृष्ण वाली) लड़की के गले में डाला और सब

'कुरवै' नृत्य करने लग गयीं। तब ग्वालनारी मादरि ने यह कहकर अपना संतोष प्रगट किया कि बहुत ही श्रीसमृद्ध भूमि को जिन्होंने नाप दिया उन्हें अपने वक्ष में स्थित लक्ष्मी को देखने से रोक दिया हमारे कंकणपूर्ण हाथों वाली पिन्नै ने! (यानी इसके प्रेम में पड़कर कृष्णचंद्र ने अपने वक्ष में विराज रही लक्ष्मी देवी को भुला दिया।) १६

8 आड्वोम् वरुह

(कूत्तुळ् पडुवल्)

अवर् ताम्
शॅन्निलै मण्डिलत्ताऱ् कर्क्कडहक् कैको ओत्तु
अन्निलैये आडऱ्चीर् आय्न्दुळार्—मुन्नैक्
कुरऱ् कॊडि तन्निकिळैये नोक्किप् परप्पु उऱ्ऱ
कॊल्लैप् पुनैत्तुक् कुरुन्दु ऒशित्त तान्न पाड्डुम्
मुल्लैत् तीम्बाणि ऎन्नराळ् 17
अॅना अक्
कुरल् मन्दम् आह इळि समन्न आह
वरन्न मुरैये तुत्तम् वलिया उरत्तिला
मन्दम् विळरि पिडिप्पाळ् अवळ् नट्पिन्न
पिन्नरैयेप् पाट्टॅडुप् पाळ्; 18

८ नाचें आओ

(नाट्य में मग्न हो जाना)

वे सब शुद्ध मंडलाकार में परस्पर उगलियों को "कर्कटक" मुद्रा में पकड़े खड़ी हुई। उसी स्थिति में नाट्य-ताल को निश्चित कर लिया। "मायवन्न" बनी "कुरल्" संज्ञित कन्या ने अपनी संवादि शाखा स्वर वाली पिन्नै को देखकर कहा— विस्तार युक्त पिछवाड़े के बाग में जिसने "कुरुन्दु" तरु को तोड़ा उस पर मुल्लै के मधुर राग में गाते हुए नाचेंगे। १७ गाना शुरु हुआ। "कुरल्" के स्थान में रही का मदस्वर था; 'इळि' के स्थानस्था का सम स्वर था। क्रमिक रीति से जो "तुत्तम्" के स्थान में रही उसका स्वर उच्च था। मंदस्वर को पकड़कर 'विळरि' गाने लगी तो उसके मित्र (अनुवादी ?) स्वर "तुत्तम्" स्वर के स्थान में रही नप्पिन्नै भी उस का अनुगमन करके गाने लगी। १८

9 मायवत्तैप् पाडल्

(पाट्टु)

कन्नृरु कुणिलाक् कत्ति उदिर्त्त मायवन्
इन्नृरु नम् आत्तुळ् वरुमेल् अवन् वायिऱ्
कॊन्नृरैयम् तीङ्गुळल् केळोमो ! तोळी ! 19
पाम्बु कयिराक् कडल् कडैन्द मायवन्
इङ्गु नम् आत्तुव् वरुमेल्, अवन् वायिल्
आम्वलन् दीङ्गुळल् केळोमो तोळी ! 20
कॊल्लैयम् शारल् कुरुन्दोशित्त मायवन्
ऍल्लैनम् आत्तुळ् वरुमेल् अवन् वायिल्
मुल्लैयन् दीङ्गुळल् केळोमो तोळी ! 21
तॊळुत्तैत् तुरैयत्तोडु आडिय पिन्नैत्तै-
अणि निरम् पाडुहेम् याम् ! 22
इरुमॆन् शायल् नुडङ्ग नुडङ्गि
अरुवै ऑळित्तान् वडिवॆन्नगो याम् ?
अरुवै ऑळित्तान् अयर अयरुम्
नरुमॆन् शायल् मुहमॆन्नगो याम् ? 23
वन्जम् शॆय्दान् तॊळुत्तैप् पुत्तलुळ्
नॆन्जम् कवर्न्दाळ् विरैअॆन् गो याम् ?
नॆन्जम् कवर्न्दाळ् निरैयुम् वळैयुम्
वन्जम् शॆय्दान् वडिवु अॆन्नगो याम् ? 24
तैयल् कलैयुम् वळैयुम् इळन्दे
कैयिल् ऑळित्ताळ् मुहम् अॆन् गो याम् ?
कैयिल् ऑळित्ताळ् मुहङ् गण्डु अळुङ्गि
मैयल् उळन्दान् वडिवॆन् गो याम् ? 25

९ मायवन् (माधव या कृष्ण) पर गाना

बछड़े को ही छड़ी बनाकर जिसने फल गिरा दिये वह मायावी आज हमारे गो समूह में आवे तो हम उसके मुख से "कॊन्नृरै" की सुमधुर मुरली (द्वारा निकलते संगीत) को नहीं सुनेगी क्या, हे सखि ! १९ सर्प को नेती बनाकर जिसने समुद्र मंथन किया वह मायावी इधर हमारे गो समूह मध्य आवेगा तो उसके मुख की "आम्बल्" की मधुर मुरली (का नाद) नहीं सुनेंगी क्या, हे सखी ! २० पिछवाड़े के बाग के "कुरून्दम्" तरु का भंजक मायावी आज दिन में हमारे गो-समूह-मध्य आवेगा तो हम उसके मुख की मुल्लै की मुरली (का

नाद) नहीं सुनेंगी क्या हे सखी ! २१ यमुना तीर वासी के साथ रास लीला-मग्न पिन्नै का रूप-लावण्य गायेंगे हम ! २२ टूटती सी कमर को लचकाते चलने वाली सुदरी पिन्नै के वस्त्र को छिपाया जिसने था उसके रूप को क्या कहकर सराहें हम ? उसके वस्त्र छिपाने पर उस चकित बाला के सुवासपूर्ण कोमल मुख-भाव-सौंदर्य को क्या कहकर सराहें हम ! २३ उसने (कृष्ण ने) माया रची (खेल में दिक दिया) यमुना के जल में, उस बाला ने उसका चित्त हर लिया। उसके चित्त के प्रेम का क्या कहें हम ? चित्त हारिणी के मन और चूड़ियों को जिसने कपट से हर लिया उसके रूप का क्या कहें हम ? २४ रमणी ने अपनी कला और कंकण को खोकर अपने मुख को हाथों में छिपा लिया। हाथों में मुख छिपाने वाली के मुख की कैसे सराहना करें हम ? हाथों में मुख छिपाने वाली के (लज्जा भरे) मुख को देखकर मन खोकर वह मोहित हो गया। ऐसे मोहित उसके रूप का क्या कहें हम ? २५

10 ऑन्ऱ्न् पहुदि

कदिर् तिहिरि यान् मरैत्त कडल् वण्णन् इडत्तुळाळ्
मदि पुरैयुम् नरुमेतित् तम् मुत्तोन् वलत्तुळाळ्
पौदियविळ् मलर्क् कून्दल् पिञ्जै शीर् पुरङ्गाप्पार्
मुदुमऱैतेर् नारदनार् मुनन्दुमुरै नरम्बु उळर्वार् 26
मयिल् ॲरुत्तु उऱळमेति मायवन् वलत्तुळाळ्
पयिल् इदळ् मलर् मेनिद तम् मुत्तोन् इडत्तुळाळ्
कयिल् ॲरुत्तम् कोट्टिय नम् पिन्नै शीर् पुरम् काप्पार्
कुयिलुवरुळ् नारद नार् कोळैपुणर् शीर् नरम्बु उळर्वार् 27

१० एक (ताल-) अंग

किरणमाली को चक्र से छिपाने वाला सागर-वर्ण कृष्ण ('कुरल्' के स्थान में खड़ी ग्वाल कन्या) की बायीं तरफ खड़ी रही पिन्नै; चंद्र सम शरीर वाले हलधर ("इळि" के स्थान में खड़ी रही ग्वाल कन्या) के दाये बाजू में है। बंद स्थिति से खुलकर रहे (यानी खिले) पुष्पों से अलंकृत सुकेशिनी उसके ताल की रक्षा प्राचीन वेदों के ज्ञाता नारद जी करते हैं जो तंत्री-नाद-कला मे निपुण और उसके आचार्य है। (यानी वाद्य बजाने वाले नारद के शास्त्र जानने वाले है।) २६ नप्पिन्नै मयूर कंठ वर्ण "मायवन्" के बाये बाजू में और पुष्प-दल-श्वेत उसके ज्येष्ठ भ्राता हलधर के दायें में है। ग्रीवा-हिलाती हुई नाचने वाली उसकी ताल-रक्षा, वादकों में तंत्री-कला निपुण

नारद जी हैं। (यानी नारद के संगीत शास्त्र के अनुसार ताल का मेल या लय देख लेते है।) पहले जब कृष्ण, बलराम और राधा नाचे तब नारद ने ताल का संगत दिया २७

11 आडुनर्प् पुहऴ्दल्

मायवऩ् तम् मुऩ्ऩिनोडुम् वरि वळैक्कैप् पिन्ऩै योडुम्
कोवलर् तम् शिऱुमियर्हळ् कुऴऱ्कोदै पुऱऩ्जोर
आय् वळैच् चीर्क्कु अडि पेयर्त्तिट्टु अशोदैयार्
तॊऴुदु एत्तव
तादॆरु मऩ्ऱ्त्तु आडुम् कुरवैयो तहवु उडैत्ते
ॲल्ला नाम्,
पुळ्ळूर् कडवुळैप् पोऱ्ऱुदुम् पोऱ्ऱुदुम्-
उळ्वरिप् पाणि ओन्ऱु उऱ्ऱु 28

११ नर्त्तकों की प्रशंसा

(कृष्ण) मायवऩ् ने अपने ज्येष्ठ भ्राता और सुदर कंकण भूषिता पिन्ऩै के साथ नृत्य किया तब ग्वाल-कन्याओं ने भी नृत्य किया और उनके कंठ में पडी रही मालाएँ हिलती रही। क्वणनशील कंकण भूषित उनके ताल के लय में कृष्ण ने चरण रखते हुए मध्य मैदान में नृत्य किया। माता यशोदा ने उसकी स्तुति की। वह उसका कुरवै नृत्य बड़ा मनोरम तथा श्रेष्ठ था। हम सब गरुढा-रूढ़ उस ईश्वर की महिमा गायं। बीच में 'उळ्वरि' गा ले। २८

12 उळ्वरि वाऴ्त्तु

(पूर्वं निलै)

कोवा मलै आरम् कोत्त कडल् आरम्
तेवर् कोऩ् पूणारम् तॆऩ्ऩर् कोऩ् मार्बिऩ्वे;
तेवर् कोऩ् पूणारम् पूण्डाऩ् शॆऴुन्दुवरैक्
कोकुलम् मेय्त्तुक् कुरुन्दोशित्ताऩ् ॲऩ्वराल् ! 29
पॊऩ्ऩि मयक् कोट्टुप् पुलि पॊरित्तु मण्णाण्डाऩ्,
मऩ्ऩऩ् वळवऩ् मदिऱ्पुहार् वाऴ्वेन्दऩ्
मऩ्ऩऩ् वळवऩ् मदिऱ् पुहार् वाऴ् वेन्दऩ्

पॊन्नत्तन् दिहिरिप् पॊरुपडैयान् ॲन्बराल् ! 30
मुन्नीरिन्नुळ् पुक्कु मूवाक्कडम्बु ॲऱिन्दान्
मन्नतर् कोच् चेरन् वळवञ्जि वाळ्वेन्दन्:
मन्नतर् कोच् चेरन् वळवञ्जि वाळ्वेन्दन्
कन्नतविल् तोळ् ओच्चिक् कडल् कडैन्दान् ॲन्बराल् ! 31

१२ उळ्वरि द्वारा स्तुति

(पूर्व निलै)

दक्षिणपति पांडियन् के वक्ष पर चंदन से चित्रित हार है जो गुथा नहीं है; गुथा हुआ समुद्री मोती हार है और देवेंद्र द्वारा दिया गया हार है। यह जिसने देव-हार पहना है गोकुल मे मवेशी चराकर जिसने कुरुन्दम तरू को तोड़ दिया था वही कण्णन् है, कहते है। (राजाओं को देवता मानने की प्रथा हमेशा से है। पहले पांडियन् की प्रशंसा गायी गयी है; शायद इळंगो अडिहळ् ने सोचा कि निष्पक्ष रहना चाहिए। अत: शेरन की प्रशसा पहले नही गायी। २९ वळवन् (शोळ्न्) राजा ने स्वर्ण-पर्वत (हिमालय पर) व्याघ्र अंकित किया। वह वरिष्ठ भूशासक था। वह प्राचीर वलयित पुहार का राजा है। वळवन् राजा, पुहार वासी राजा स्वर्ण-चक्रास्त्र-धर कृष्ण ही है— कहते हैं। ३० त्रि-सलिल समुद्र मे घुस कर महाराज शेरन् समृद्ध वजि वासी ने अजर "कडम्बु" (नीप) तरु को गिराया। उस महाराज शेरन् को, समृद्ध वंजि के वासी को, पर्वतोपम भुजाओं को हिलाकर जिसने समुद्र का मंथन किया वह (विष्णु देव) बताते है। (कडम्बु का इधर लाक्षणिक अर्थ है। 'कडम्बर्' एक जाति के लोग है। शायद उनके राज्य (झडे, हार) आदि का चिह्न वह तरु था। शेरन् वे उन्हे हरा दिया। यह भी कहा जाता है कि शत्रु मायावी असुर तरु का माया तरु रूप लेकर समुद्र में रहा। राजा ने उसको समुद्र में जाकर तोड़ डाला; वध किया। ३१

13 मुन्नलिलैप् परवल्

वडवरैयै मत्ताक्कि वासुहियै नाणाक्किक्
कडल् वण्णन् पण्डॊरु नाळ् कडल् वयिरु कलक्किन्नैये;
कलक्किय कै अशोदैयार् कडैकयिऱ्ऱाल् कट्टुण् कै !
मलर्क्कमल उन्दियाय् ! मायमो मरुट्कैत्ते 32
अरु पॊरुळिवन् ॲन्रे अमरर् कणम् तॊळुदेत्त
उरुपशि ऑन्ऱिन्नुरिये उलहु अडैय उण्डन्नैये !

उण्डवाय् कळविन्नाल् उऱिवॆण्णॆय् उण्डवाय् !
वण्तुळाय् मालैयाय् मायमो ? मरुट्कैत्ते ! 33
तिरण्डमरर् तॊऴुदेत्तुम् तिरुमाल् ! निन्न् शॆङ्गमल
इरण्डडियाल् मूवुलहुम् इरुळ् तीर नडन्द् दन्नैये
नडन्द वडि पन्जवर्क्कुत् तूदाह नडन्द वडि !
मडङ्गलाय् ! माऱ्ट्टाय् ! मायमो ? मरुट्कैत्ते ! 34

१३ सामने से स्तुति (मध्यम पुरुष में)

उत्तर-गिरि को मथानी बनाकर वासुकी को रस्सी बनाकर, हे सागर वर्ण ! तुमने एक दिन समुद्र के पेट का मंथन किया न ! समुद्र-मंथक हाथ वे ही हाथ है जिनको यशोदा ने अपनी नेती से बांध दिया था ! यह कैसी माया है ? हमें भ्रम में डालने वाली ! ३२ हे पद्मनाभ ! परम वस्तु कहकर सुरगण तुम्हारी वन्दना करते रहे। तब विना भूख के ही तुमने सारे लोक को निगल लिया। भू-भोक्ता वही मुख चोरी से छीके का मक्खन खानेवाला मुख बना। हे मोटी तुलसी-माला धारी ! यह क्या माया है— हमें भ्रम में डालने वाली ? ३३ सुर-समूह-वद्य ! (श्री मायावी) तिरुमाल ! तुमने अपने लाल कमल चरण द्वय से तीनो लोकों का अंधकार दूर करते हुए डग भरे। भूमि नापने वाले चरण ही पांडवों के दूत बनकर चले चरण हैं। हे शत्रु हंता नरसिंह ! यह क्या माया है, हमको चकित करनेवाली ! ३४

14 पडर्क्कैप् परवल्

मूवुलहुम् ईरडियान् मुऱ्रैनिरमूवा वहैमुडियत्
ताबियशे वडिशेप्पत् तम्बियॊडुम् कान् पोन्दु
शोअरणुम् पोर्मडियत् तॊल्लिलङ्गै कट्टऴित्त
शेवहन् शीर् केळाद शॆवि ऎन्न शॆवियेे ?
तिरुमाल् शीर् केळाद शॆवि ऎन्न शॆवियेे ? 35
पॆरियवनै माय वन्नैप् पेर् उलहम् ऎल्लाम्
विरि कमल उन्दियुडै विण्णवनैक् कण्णुम्
तिरुवडियुम् कैयुम् तिरुवायुम् शॆय्य
करिय वन्नैक् काणाद कण्णॆन्न कण्णे
कण्णि मैत्तुप् काण्वार् तम् कण्णॆन्न कण्णे ? 36
मडन् दाळुम् नॆन्जत्तुक् कन्जन्नार् वन्जम्
कडन् दानै नूऱ्ऱुवर् पाल् नाऱ्ऱिशैयुम् पोऱ्ऱप्

पडर्न्दा रणम् मुळङ्गप् पञ्जवर्क्कुत् तूदु
नडन् दानै एत्ताद नावेन्न नावे ?
'नारायणा' अॅन्ना नावेन्न नावे ? 37

१४ अन्य पुरुष में प्रशंसा

तीनों लोकों को नापा तो भी भूमि पर्याप्त नहीं थी। इस तरह नापने वाले चरणों को लाल बनाते हुए श्री राम भाई के साथ जंगल गये। और राक्षसों के नगर श्री लंका को उसके वासियों के साथ मिटाया। उस वीर की प्रशंसा जिन कानों ने नही सुनी वे कैसे कान है ? तिरुमाल् (श्री मायावी) की प्रशंसा के श्रवण से वंचित कान कैसे कान है ? ३५ सर्वोत्तम पुरुषोत्तम श्री मायावी को, सारे लोकों को अपनी विस्तृत कमल नाभि में धारण करनेवाले देव को; और जिनके चरण और हाथ और श्री मुख लाल हैं पर वर्ण श्याम है उन श्यामल देव को जिन आँखों ने नही देखा वे आँखे भी कैसी हैं ? पलक मारकर देखने वालों की आँखें भी कैसी आँखे है। ३६ अज्ञानता मग्न चित्त वाले कंस के कपट व्यवहार को जिन्होंने पार किया उनको, सौ कौरवों के पास पंचों (पांडवों) का दूत बनकर, चारों दिशाओं (के लोगों के) द्वारा स्तुत्य होकर और वेदों के घोष के आगे आगे जो पैदल चले उनकी स्तुति जिस जिह्वा ने नही की वह जिह्वा भी कैसी जिह्वा है ? "नारायण !" कहकर पुकारने से वंचित जीभ भी कैसी जीभ हैं ? ३७

वाऴ्त्तु

अॅन्रु याम्
कोवत कुरवैयुळ् एत्तिय दॅय्वम् नम्
आत्तलैप् पट्ट तुयर् तीर्क्क ! वेन्दर्
मरुळ वैहल् वैहल् माऱट्टु
वॅऱ्ऱि विळैप्पदु मन्नो कॊऱ्ऱत्तु
इडिप्पडै वानवन् मुडित्तलै उडैत्त
तॊडित् तोळ् तॆन्नवन् कडिप्पिहु मुरशे ! 38

१५ मंगलाशासन

इस भाँति हमने अपने कृत "कुरवै" नाट्य में जिन देव की स्तुति की वह गायों (मवेशी) पर आते कष्ट दूर करें। शत्रु राजाओं को भयभीत करते हुए, दिन-ब-दिन विजय बजाए यह-वज्रायुधहस्त सुरेंद्र का सिर (गर्व) तोड़ने वाले बाहुवलयधारी दक्षिणपति पांडियन्न का, नर्दन करनेवाला नगाड़ा ! ३८

18 तुऩ्ब मालै

(मयङ्गिशैक् कोच्चहक् कलिप्पा)

1 विरैवोडु वन्दाळ्

आङ्गु
आयर् मुदुमहळ्; आडिय शायलाळ्
पूवुम् पुहैयुम् पुऩैशान्दुम् कण्णियुम्
नीडुनीर् वैयै नॆडुमाल् अडि एत्तत्
तूवित् तुऱैपडियप् पोयिऩाळ्; मेविक्
कुरवै मुडिवि लोर् ऊर् अरवङ् गेट्टु
विरैवोडु वन्दाळ् उळळ् 1-7

१८ शोक हार (या शोक संध्या)

छंदः— संगीत मय कोच्चहक् कलिप्पा

१ तेजी से आयी

उधर, प्रौढा ग्वालिन मादरि, शिथिल दशा में पूर्ण सलिला "वैगे" के तट पर स्थित देव देव 'तिरुमाल्' (श्री विष्णु) की पाद वन्दना हेतु फूल, धूप (की सामग्री) चंदन लेप और पुष्प हार लिये घाट पर स्नान करने गयी। तब 'कुरवै' के अत में, पुर में जो प्रवाद उठा था उसको सुनकर कोई ग्वालिन आयी। १-७

2 कण्णहियिऩ् तुडि तुडिप्पु

अवळ् ताऩ्
शॊल्लाडाळ्, शॊल्लाडा निऩ्ऱाळ् अऩ्नङ्गैक्कुच्
चॊल्लाडुम् शॊल्लाडुऩ् दाऩ्;
ऎल्ला ओ !
कादलऱ् काण्गिलेऩ्; कलङ्गि नोय् कैम् मिहुम्
ऊदुलै तोऱ्क उयिर्क्कु मॆऩ् नॆञ्जत्तऱे
ऊदुलै तोऱ्क उयिर्क्कु मॆऩ् नॆञ् जायिऩ्
एदिलार् शॊऩ्ऩतदु ऎवऩ् ? वाऴियो तोऴी !
नऩ्पहऱ् पोदे नडुक्कु नोय् कैम्मिहुम्
अऩ्बनैक् काणादु अलवु मॆऩ् नॆञ्जत्तऱे
अऩ्बनैक् काणादु अलवु मॆऩ् नॆञ्जायिऩ्

मन्नवदै शीन्नतदु अँवन् वाळियो तोळी !
तन्जमो तोळी ! तलैवन्न वरक् काणेन्न;
वन्जमो उण्डु; मयङ्गु मेंन्न नेंन्जन्नरे
वन्जमो उण्डु मयङ्गुमेंन्न नेंन्जायिन्न
अंन्जलार् शीन्नतदु अंवन्न ? वाळियो तोळी 8-23

२ कण्णहि की छटपटाहट

आयी वह कण्णहि से कुछ नहीं कह सकी। कुछ बात नहीं की। अन्यों से कहा पर उसके बोल खण्डित थे। (कणणहि को कुछ भान हो गया) उसने घबड़ाकर पूछा : हे सखि ! अपने प्रिय पति को नही देखती। मन व्याकुल है; व्यथा अधिक हो रही है। धौकनी को मात देते हुए मेरा मन उच्छवास छोड़ता है। धौकनी को हराते हुए मेरा चित्त साँसें छोड़ता है तो (मालूम स्पष्ट होना चाहिए कि) पड़ोसियो ने कहा क्या है ? दुहाई ! कहो सखि ! दुपहर से ही कंपाने वाली पीडा अधिक होती रहती है ! प्यारे को देखे बिना मेरा चित्त घबड़ाता है ! प्यारे को बिना देखे, मन घबड़ाता है तो (कुछ अवश्य हो गया है !) लोगों का कहा क्या है हे सखि ! जियो सखि ! कहो हे सखि ! अब क्या सहारा है ? नायक को आता नही देखती। कुछ कपट हो गया है ! मेरा मन तो बेसुध हो रहा है। कपट है; मेरा मन बेसुध हो रहा है (तो अवश्य कुछ हो गया है।) अतः कहो पुर वासियों का कहना क्या है। जियो सखि ! हे सखि ! (बोलो)। ८-२३

3 अवळ् शीन्नतदु.

शीन्नतदु:—
अरैशुरै कोयिल् अणियार् जॅहिळम्
करैयामल् वाङ्गिय कळ्वन्नाम् अंन्नरे
करैयामल् वाङ्गिय कळ्वन्नाम् अंन्नरे
कुरैकळल् माक्कळ् कॉलैकुरित्त तन्नरे ! 24-28

३ उसका कहा

उसने कहा—" राज महल की रानी के कला पूर्ण नूपुर को चुपचाप हर ले जाने वाला कहकर क्वणित पायल धारी वीरो ने वध ठान लिया (उसको मार दिया। २४-२८

4 एङ्गि मयङ्गित्ताळ्

अँत्तक् केट्टुप्
पोंङ्गि अँऴुन्दाळ् विऴुन्दाळ् पोंऴिकदिर्त्
तिङ्गळ् मुहिलोंडुम् जेणिलग् कोंण्डेनच्
चेंङ्गण् शिवप्प अऴुदाळ्; तन्न केळ्वन्नै
अँङ्गणाअ अँन्नत्ता इन्नैनदु एङ्गि माऴ्हुवाळ् ! 29–33

४ तरसकर मूर्छित हुई

उसका यह कहना सुनकर कण्णहि बिफर उठी। शीतल किरण बिखेरने वाला चाँद मेघ के साथ विशाल धरती पर गिरा-जैसे वह भूमि पर गिरी। लाल आँखों को और लाल करते हुए वह रोई। अपने प्यारे को, हे मेरे नाथ ! कहकर संबोधित किया ! दुखी होकर, तड़प तड़पकर विलापा। बेसुध हुई। २९-३३

5 एङ्गि अऴुवलो ?

इन्नबुरु तङ्गणवर् इडर् अँरि अहम् मूऴ्हव
तुन्नबुरु वन्न नोर्ऱुत् तुयरुरु महळिरैप् पोल्
मन्नपदै अलर् तूर्ऱ मन्नत्तवन्न तवऱिऴैप्प
अन्नवत्तै इळन्देन्न यान्न अवलम् कोंण् डऴिवलो ?
नऱैमलि वियन्न मार्बिन्न नण्वनै इळन् देङ्गित्
तुऱैपल तिर्म् मूऴ्हित् तुयर्उरु महळिरैप् पोल्
मऱत्तोंडु तिरियुम् कोल् मन्नवन्न तवऱिऴैप्प
अऱन्न अंतुम् मडवोय् यान्न अवलङ् गोंण् डऴिवलो ?
तम्मुरु पेरुङ्गणवन्न तळल् अँरि अहम् मूऴ्हक्
कैम्मैकूर् तुऱैमूऴ्हुम् कवलैय महळि रैप् पोल्
शेम्मैयिन्न इहन्द कोल् तेंन्नवन्न तवऱिऴैप्प
इम्मैयुम् इशै ओरीइ इन्नैनदु एङ्गि अऴिवलो ? 34–45

५ तरसती हुई रोती रहूँगी क्या ?

प्रजाजनों की निंदा का पात्र बनकर राजा अन्याय करे और मैं, अपने प्यारे पति को दुख दायी आग में मग्न होने देकर, दुख पूर्ण वैधव्य-व्रत पालती हुई वेदना विद्ध रहती स्त्रियों के समान दया का पात्र बनकर घुलती रोती रहूँगी क्या ? हे धर्म देवता कहलाने वाले मूर्ख ! अधर्म का साथ देकर

राजा अपराध करे और मैं सुवासमय छाती वाले अपने प्रिय को खोकर तरस खाती हुई, तीर्थ स्नान-रत दुखी (विधवा) स्त्रियों के समान दया का पात्र रहकर घुलती मरूँगी क्या ? न्याय से हटकर दंडधर राजा अपराध करे और मैं अपने श्रेष्ठ पति को जलती आग में मग्न होने देकर, वैधव्य व्रत में तीर्थाटन करती हुई चिंता ग्रस्त स्त्रियों की भाँति इह का गौरव खोकर रो-रोकर मरूँगी क्या ? ३४-४५

6 कदिरवऩ् शॊऩ्ऩदु

काणिहा !
वाय्वदिऩ् वन्द कुरवैयिऩ् वन्दीण्डुम्
आय मड महळिर् ॲल्लीरुङ् केट्टीमिऩ्
आय मडमहळिर् ॲल्लीरुङ् केट्टैकुक;
पाय्तिरै वेलिप् पडुपॊरुळ् नी अऱिदि;
काय् कदिर्च् चॆल्वऩे ! कळ्वऩो ॲऩ् कणवऩ् ?
कळ्वऩो अल्लऩ्, करुङ् गयऱ्कण् मादराय् !
ऑळ्ळॆरि उण्णुम् इव्वूर् ॲऩ्ऱदु ऒरु कुरल् 46-53

६ सूर्य ने कहा

कण्णहि ने ललकारा: देखो तुम सब ! बुरे शकुनों के होने पर कुरवै नृत्य में आ मिली ग्वालिनो ! सब सुनो ! ग्वालिनी स्त्रियों ! सब सुन लो। हे सूर्य— उछलकर आती तरंगों के सागर से वलयित भूमि पर की सब बातें तुम जानते हो। गरम किरण माली देव ! चोर है क्या मेरा पति ? तब एक (अशरीरी) शब्द सुनाई दिया : चोर तो वह नहीं। हे कजरारी कयल्-सी आँखों वाली ! जलती आग खायेगी इस पुर को। ४६-५३

19 ऊर् शूऴ्वरि

(अयऩ् मयङ्गिशैक् कॊच्चहक् कलिप्पा)

1 ईदॊऩ्ऱु केट्पीर् !

ॲऩ्ऱऩऩ् वॆय्योऩ् इलङ्गीर् वळैत्तोळि
निऩ्ऱिलळ् निऩ्ऱ शिलम्बॊऩ्ऱु कैयेन्दि
मुऱैयिल् अरशऩ् तऩ् ऊरिरुन्दु वाऴ्म्
निऱैयुडैप् पत्तिऩिप् पॆण्डिर्हाळ् ! ईदॊऩ्ऱु

पट्टेन् पडाद तुयरम् पडुकालै
उऱ्ऱेन् उऱादहु उरुवत्ते ? ईदोन्ऱु;
कळ्वत्तो अल्लन् कणवन्; अॆन् काऱ् चिलम्बु
कॊळ्ळुम् विलैप्पॊरुट्टाऱ् कॊन्ऱारे ईदोन्ऱु
मादर्त् तहैय मडवार् कण् मुन्नरे
कादऱ् कणवत्तैक काण्वत्ते ! ईदोन्ऱु
कादऱ् कणवनैक् कण्डाल् अवन् वायिल्
तीदरु नल् उरै केट्पत्ते ! ईदोन्ऱु
तीदरु नल् उरै केळा दॊऴि वेन्नेल्
नोदक्क शॆय्दाळ् ॲन्ऱु ॲळ्ळल् ! ईदु ऑन्ऱु ॲन्ऱु 1–14

१९ नगर-घूर्णन-गान

१ यह एक सुन लो

(पिछले अध्याय के अंत में उक्त प्रकार से) गरम किरणमाली ने कहा। सुनने के बाद तराश कर उज्जवल बनाये गये वलयों की धारिणी कण्णहि (एक क्षण भी) खडी नही रही। बचा जो रहा उस एक नूपुर को हाथ में लेकर वह निंदा सूचक शब्दो मे कहने लगी-अतिक्रमी राजा के नगर में वास करने वाली चरित्रवती गृहिणियो (व्यंग है क्यों कि पहले कहा गया है शासक न्यायी रहा तो पतिव्रता स्त्रियाँ वेधड़क अपना व्रत पाल सकती है। अव उन्हे भी डरना पड़ेगा) यह एक बात सुन लो। असह्य कष्ट में पड़ गयी हूँ। अव तक पहले मुझे कभी जैसा दुख नही हुआ था वैसा दुख हो गया। अव यह भी एक सुन लो। मेरा पति चोर है ही नही। मेरे पैर के नूपुर का क्रय करने के मिस उनको मार दिया गया। यह भी एक (अन्याय) सुन लो। पतिप्राणा स्त्रियो की आँखो के सामने ही मै अपने प्रेमी पति को देख लूगी। यह भी एक (सकल्प मेरा) सुन लो। प्रेमी पति को देखूंगी और उन के मुख से निरपराध होने का वचन सुनूंगी-यह एक (विश्वास मेरा) सुन लो। निरपराध होने का अच्छा वचन बिना सुने रह जाऊँगी तो यह कहकर मेरी निंदा करे कि इसने ही कुछ दुखाने वाला काम किया है। यह एक भी वचन सुनो। १-१४

2 ऊरवर् मयङ्गिन्नर्

अल्ललुऱ्ऱु आऱ्ऱादु अऴुवाळैक् कण्डु एङ्गि
मल्लल् मदुरैयार् ॲल्लारुन् दाम् मयङ्गिक्

कळैयाद तुन्बम् इक् कारि हैक्कुक् काट्टि
वळैयाद शङ्गोल् वळैन्ददु इदुवेन्न कोल् ?
मन्नवर् मन्नवन् मदिक्कुडै वाळ्वेन्दन्
तेन्नवन् कोऱ्ऱम् शिदैन्ददु इदुवेन्न कोल् ?
मण्कुळिरच् चेय्युम् मऱवेल् नेडुन्दहै
तण्कुडै वेम्मै विळैत्तदु इदुवेन् कोल् ?
शेम् बोऱ् चिलम्बु ओन्ऱु क्कै एन्दि नम् पोरुट्टाल्
वम्बप् पेरुन् देय्वम् वन्ददु इदुवेन्न कोल् ?
ऐअरि उण्कण् अऴुदु एङ्गि अरऱ्ऱुवाळ्
देय्वम् उऱ्ऱाळ् पोलुम् तहैयळ् इदुवेन् कोल् ? 15–26

२ पुर वासी सन्न हुए

व्यथा में पड़कर सँभल न पाकर जो रोती रही उसको देखकर तरस खाकर जनसमृद्ध प्राचीन मदुरै नगर के सभी वासी खुद सन्न हुए। इस सुन्दरी को अवार्य दुख देते हुए राज दण्ड अब झुक गया जो पहले कभी नही हुआ था। यह क्या (अनर्थ) है ? राजाधिराज, चद्र-सम छत्न और तलवार के स्वामी, दक्षिण पति का विजय-गौरव भी इस तरह भग्न हो गया यह क्या ही बात हो गयी ? लाल (चोखे) स्वर्ण का बना एक नूपुर हाथ में उठाये एक नयी महा देवी हमारे सामने आ गयी है। यह क्या अनर्थकारी विस्मय है ? मनोरम लाल डोरो से युक्त और कजरारे नेत्रों वाली रोती तड़पती विलपती है। देव्याविष्ट सी ही लगती है। यह क्या हो रहाहै। १५-२६

3 कण्डाळ् कणवतै

अन्नवर्क् शोल्लि इनैन्दु एङ्गि आऱ्ऱवुम्
मन्नपळि तूऱ्ऱुम् कुडियदे मामदुरैक्
कम्बले माक्कळ् कणवन्नैत् ताङ्गाट्टच्
चेम् बोऱ् कोडि अनैयाळ् कण्डाळैत् तान्न काणान्
मल्लन् मानालम् इरुळूट्टि मा मलैमेल्
शेव्वेन्न कदिर् शुरुङ्गिच् चेङ्गदिरोन् शेन्रोळिप्पप्
पुल्लेन्न मरुळ् मालैप् पूङ्गोडियाळ् पूशलिड
ओल्लेन्न ओलि पडैत्तदु ऊर्
वण्डार् इरुङ्कुञ्जि मालै तन्न वार् कुळल्मेर्
कोण्डाळ् तळीइक् कोळुनन्पार् काले वाय्प्

पुणताळ् कुरुदि पुऱम् शोर माले वायक्
कण्डाळ् अवऩ् तऩ्ऩैक् काणाक् कडुनदुयरम् 27–38

३ पति का साक्षात्कार किया

ऐसा (उपरोक्त प्रकार से) कहते हुए पुरवासी तरसते हुए विलापे; राजा पर दोषरोपण करने वाली प्रजा का नगर वन गया मदुरै। जोर से वोलते आने वाले कुछ लोगों ने कण्णहि को उसके पति को दिखाया। लाल स्वर्ण लता-सी कण्णहि ने उसको देखा पर देखनेवाली उस को वह मरा पडा रहा देखता नहीं था। सब समृद्धियों से भरी पृथ्वी को अंधकार में डालते हुए अपनी लाल किरणों को समेट लेकर किरणमाली वड़े (अस्त) अचल पर जा छिपा। तव झुटपुटे में संध्या फ़क पड़ी। और पुर में 'ऑल्' कोलाहल वढ़ गया। भ्रमर जिस पर मंडरा रहे उस काले केश से लेकर कोवलन ने पुष्पहार दिया और उस ने उसे अपनी लंवी चोटी में सजा लिया; यह सवेरे ही हुआ था। अव उसी शाम को वह देखती है व्रण से निकलते खून के सव ओर जमा रहते उस कोवलऩ् को। अव तक अभूतपूर्व दुख से भी साक्षात् करती है। २७-३८

4 उरैयीरो! उरैयीरो!

ऍऩ्ऩुऱु तुयर् कण्डुम्; इडरुऱुम् इवळ् ऍऩ्ऩीर्
पॊऩ्ऩुऱु नऱुमेऩि पॊडियाडिक् किडप्पदो ?
मऩ्ऩुऱु तुयर् शॆय्द मऱविऩै अऱियादेऱ्कु
ऍऩ्ऩुऱु विऩै काण्, आ इदु ऍऩ उरैयारो
यारुमिल् मरुव् माले इऱुरुऱ्तमियेऩ् मुऩ्
तार्मलि मणिमार्बम् तरै मूळ्हिक् किडप्पदो
पार्मिहु पऴितूऱ् ऱुऱ्पपाण्डियऩ् तवऱिऴैप्प
ईर्वदु ओर् विऩैकाण् आ इदुऍऩ उरैयीरो ?
कण्पॊळि पुत्तल् शोरुम् कडुविऩै उऴैयेऩ्मुऩ्
पुण्पॊळि कुरुदियिरायप् पॊडियाडिक् किडप्पदो ?
मऩ्पदै पऴि तूऱ्ऱ मऩ्ऩवऩ् तवऱु इऴैप्प
"उण्बदोर् विऩैकाण् आ! इदु" ऍऩ उरैयारो ? 39–50

४ नहीं बोलोगे ? नहीं बोलोगे ?

कण्णहि ने प्रश्न किया: "मेरा गंभीर दुख देखकर भी यह नहीं कहते कि वेचारी इसे अपार व्यथा हो रही है। स्वर्ण सम सुवासित शरीर भी इस तरह धुल-धूसरित पडा रहे ? राजा द्वारा यह कठोर अनिष्ट क्यों हुआ इस

के कारण से अज्ञात मुझसे क्या नहीं बतलाओगे कि यही मेरा किया गया अपराध कार्य है ? बिना किसी और के अकेली, इस झुटपुटे में दुख पीड़ित रहती मेरे ही सामने यह आप की हारशोभित मणिमय छाती मट्टी में मग्न रहेगी क्या ? सारी धरती के सामने अपराधी बनकर पाण्डियन् ने अन्याय किया। क्या आप कम से कम यह भी नहीं कहेंगे कि यह हमारा बुरा कर्मफल है ? देख लो ! मेरी आँखें आँसू की बारिश कर रही हैं। अश्रुवर्षा गिर रही है। ऐसी दुर्भाग्यवती हूँ मैं। मेरे ही सामने व्रण से बहते रक्त से रंजित शरीरी बनकर इस तरह धूलमंडित पड़े रहेंगे ? प्रजाजन राजा का कसूर मानते है। राजा ने अपराध किया है। आप यह कम से कम यही कहिए कि यह सब कर्म के फल देने आने की वजह से हुई है। क्या आप यह भी नही कहेंगे ? ३९-५०

5 उण्डु कोल् ! उण्डु कोल्

पॆण्डिरुम् उण्डुकोल् ! पॆण्डिरुम् उण्डुकोल् ?
कॊण्ड कॊळुनर् उरुकुरै ताङ्गुरूउम्
पॆण्डिरुम् उण्डुकोल् पॆण्डिरुम् उण्डुकोल् ?
शान्ऱोरुम् उण्डुकोल् ? शान्ऱोरुम् उण्डु कोल् ?
ईन्ऱ कुळवि ऎडुत्तु वळर्क्कुरूउम्
शान्ऱोरुम् उण्डु कोल् ? शान्ऱोरुम् उण्डु कोल् ?
दॆय्वमुम् उण्डुकोल ? दॆय्वमुम् उण्डु कोल् ?
वैवाळिन् तप्पिय मन्नवन् कूडलिल्
दॆय्वमुम् उण्डुकोल् ? दॆय्वमुम् उण्डु कोल् ? 51-59

५ हैं क्या ? हैं क्या ?

स्त्रियाँ भी है ? क्या स्त्रियाँ हैं ? अपने ब्याहे पति की इतनी बड़ी हानि सहने वाली स्त्रियाँ भी रहेंगी क्या ? गुरुजन भी है ? गुरुजन भी है ? अपने जनाये बच्चे को लेकर पालने वाले गुरुजन भी है ? दैव भी हैं ? दैव भी हैं ? तेज तलवार द्वारा जिसने अन्याय किया है उस अधर्मी राजा के कूडल् नगर में दैव भी हैं ? दैव भी है ? ५१-५९

6 नी इरुप्पायाह

ऎन्ऱिवै शॊल्लि अळुवाळ् कणवन्तन्
पॊन्तुन्जु मार्बम् पॊरुन्दत् तळीइक् कॊळ्ळ
निन्ऱान् ऎळुन्दु निरैमदि वाळ्मुहम्

कन्ऱियदु अॆन्ऱवळ् कण्णीर् कैयाल् माऱ्ऱ
अऴुदेङ्गि निलत्तिन् वीऴ्न्दु आयिऴैयाळ्तन् कणवन्
तॊऴुदहैय तिरुन्दडियैत् तुणै वळैक्कैयाऱ् पऱ्ऱप्
पऴुदु ऒऴिन्दु ऎऴुन्दिरुन्दान् पल्लमरर् कुऴात्तुळान्
ऎऴुदॆऴिल् मलर्उण्कण् इरुन्दैक्क। ऎनप् पोनान् 60–67

६ तुम रहो

ऐसा कहती हुई रोती रही उसने अपने पति के सुन्दर वक्ष को अपने गले से लगा लिया। वह उठ खडा हुआ। और पूर्णचंद्रोज्वल मुख तुम्हारा मुरझा, गया-कहकर उसने अपने हाथ से उस (कण्णहि) के आंसू पोंछे। श्रेष्ठ आभरणालंकृता वह रोती हुई भूमि पर गिरी और वंदनीय पति के सुन्दर चरणो को चूड़ियों से अलंकृत दोनों हाथो से पकड़ने लगी। तब कोवलन् ने, जो अपने पापों का आगर मर्त्य शरीर को छोड़ देव शरीर में देवों के मध्य दिखाई दिया कण्णहि से कहा कि हे चित्रसी-लिखित, सुन्दर पुष्पसम तथा कजरारी आँखों वाली ! तुम यहाँ रहो। फिर वह अदृश्य हो गया। ६०-६७

7 कण्णहियिन् अवलम्

मायङ्गॊल् ? मऱ्ऱॆन् कॊल् ? मरुट्टियदोर् दॆय्वम् कॊल् ?
पोयॆङ्गु नाडुहेन् ? पॊरुळ् उरैयो इदुवन्ऱु;
काय्शिनम् तणिन्दन्ऱिक् कणवनैक् कै कूडेन्
तीवेन्दन् तन्नैक् कण्डु इत्तिऱम् केट्पल् यान् ऎन्ऱाळ् 68–71

७ कण्णहि की दयनीय स्थिति

कण्णहि ने विस्मय तथा क्रोध के साथ कहाः क्या यह माया है, फिर क्या है ? मुझे चकमा दिया है किसी देव ने ? कहाँ जाकर ढूंढूंगी उन्हें ? यह तो अर्थभरा शब्द नही लगता ? खैर। यह क्रोध जब तक शांत नही हो तब तक अपने पति को नही मिलूंगी। बुरे राजा से भेंट कर के इसका कारण पूछूंगी। ६८-७१

8 अरशनैक् काण्वेन्

ऎन्ऱाळ् ऎऴुन्दाळ्; इडरुऱ्ऱ तीक्कना
निन्ऱाळ् निनैन्दाळ्; नॆडुङ्णयऱ्कण् नीर् शोर

निन्नराळ् नित्तेन्नदाळ् नेंडुङ्गयऱ् कण् नीर तुडैयाच्
चेन्नराळ्, अरशन्न शेंळुङ्गोयिल् वायिल् मुन्न 72–75

८ राजा से भेंट करूँगी

ऐसा कहकर वह उठी। अपने पहले देखे बुरे स्वप्न को याद किया। कमल-सी आँखो से आँसू बहने लगे। कुछ रुकी फिर कुछ निश्चय किया। अपनी लंबी आँखों के आँसू पोंछ कर वह गयी राजा के श्रीसमृद्ध महल के द्वार पर। ७२-७५

20 वळ्क्कुरै कादै

1 अरशियिन्न तीक् कनवु

आङ्गुक्
कुडैयोडु कोल्वीळ निन्रु नडुङ्गुम्
कडैमणि यिन्नकुरल् काण्बेन्न काण् ऍल्ला !
तिशैयिरु नान्नगुम् अदिर्न्दिडुम्; अन्नरिक्
कदिरै इरुळ्विळुङ्गक् काण्बेन्न काण् ऍल्ला !
विडुङ्गोंडि विल्लिर वॆम्बहल् वीळुम्
कडुङ्गदिर् मीन्न; इवै काण्बेन्न काण् ऍल्ला 1–7

२० न्यायवाद गाथा

१ रानी का बुरा स्वप्न

उधर महल में (रानी कहती है:) हे सखि; वहाँ स्वप्न में छत्र और दंड दोनों गिरे। लगातार हिलते रहे द्वार-घंटे का स्वर मैं ने सुना री! आठों दिशायें थर्रा उठी। और में ने देखा कि सूर्य को अंधेरा निगल रहा है! सुनो री! रात में इन्द्रधनुष दिखाई दिया, और दिन में तारे गिरे, यह सब मैंने देखे। देखो री सखी! १-७

2 करुप्पम्

करुप्पम
शेंङ्गोलुम् वॆण्कुडैयुम् शॆंऱ्रिनिलत्तु मऱिन्दु वीळ्तरुम्
नङ्गोन् तन्न कोंऱ्ऱवायिल् मणिनडुङ्ग नडुङ्गुम् उळ्ळम्
इरवु विल्लिडुम्; पहल् मीन्न विळुम् इरुनान्नगु दिशैयुम्
अदिर्न्दिडुम्
वरुवदोर् तुन्नवम् उण्डु मन्नवर्कु याम् उरैत्तुम् अन्न 8–12

२ (गर्भ) संधि

"यह कुछ सूचित करता है"—रानी ने कहा; "न्यायी राजदंड और छत्र गहन भूमि पर गिरे, हमारे राजा के विजय द्वार पर का घंटा थर्राता है, मेरा मन कांपता है ! रात में इन्द्र धनुष प्रगट होता है और दिन में तारे गिरते हैं। दो के चार (आठों) दिशायें दलकती है। आनेवाला है कोई कष्ट जरूर। हम जाकर कहे राजा से ! यह कहकर। ८-१२

3 अरशियिन् वरुहै

आडि एन्दित्तर् कलन् एन्दित्तर् अविर्न्दु विळ्ङ्गुम्
अणि इळैयित्तर्
कोडि एन्दित्तर् पट्टु एन्दित्तर् कॊळुन्दिरैयलिन्
शॆप्पु एन्दित्तर्
वण्णम् एन्दित्तर् शुण्णम् एन्दित्तर् मान्मदत्तिन्
शान्दु एन्दित्तर्
कण्णि एन्दित्तर् पिणैयल् एन्दित्तर् कवरि एन्दित्तर्
तूवम् एन्दित्तर्
कूनुम् कुऱ्ळुम् ऊमुम् कूडिय कुरुन्दॊळिल् इळैयर्
शॆऱिन्दु शूळ्तर
नरै विरैइय नऱुङ् कून्दलर् उरै विरैइय पलर् वाळ्त्तिड
"ईण्डु नीर् वैयम् काक्कुम् पाण्डियन् पॆरुन्देवि
वाळ्ह" ॲन
आयमुम् कावलुम् शॆन्ऱु अडियीडु परशि एत्तक्
कोप्पॆरुन् देविशॆन्ऱु तन् तीक् कनात् तिऱम् उरैप्प
अरिमान् एन्दिय अमळिमिशै इरुन्दनन्
तिरुवीळ् मार्विन् तॆन्नवर् कोवे; इप्पाल् 13-23

३ रानी का आगमन

जब रानी चलने लगी तब साथ आयी : आइने उठाने वाली; आभरण लाने वाली और खुद उज्ज्वल आभरण भूषिता दासियाँ। और भी, नये सूती वस्त्र लेने वाली, रेशमी वस्त्र लेने वाली, चिकने पान के साथ पानदान, वर्ण-चूर्ण, मृग कस्तूरी, मालायें, गजरे, चामर और धूप इत्यादि अलग अलग लेकर

आने वाली दासियाँ भी साथ रहीं। इनके अलावा कुबड़े, बौने, गूँगे ये जो छोटी-छोटी आज्ञाएँ अंजाम करने वाले थे। पके तथा सुगंधमय बालों की अनेक वृद्धा नारियों ने मंगल कामना की कि यहाँ सजल भूमि के शासक पांडियन की महारानी जीती रहें। दुहाई उनकी! और सखियों और रक्षिकाओं के स्तुति करते आते, महारानी गयी। और वह राजा से जाकर अपने बुरे स्वप्न का हाल बताने लगी। श्रीवांछित वक्ष वाला, दक्षिण पति सिंहासन पर आसीन होकर उसे सुन रहा था। तब इधर १३-२३

4 कणवनै इहळ्न्दाळ् कडैयहत्ताळ्!

"वायिलोये! वायिलोये
अऱिवु अऱै पोहिय पॊऱियऱु नॆञ्जत्तु
इऱैमुऱै पिऴैत्तोन् वायि लोये!
'इणै अरिच् चिलम्बॊन्ऱु एन्दिय कैयळ्
कणवनै इळन्दाळ् कडैयहत्ताळ्' ऎन्ऱु
अऱिविप्पाये अऱिविप्पाये" ऎन्न
वायिलोन् वाऴि ऎम् कॊऱ्कै वेन्दे वाऴि!
तॆन्नम् पॊरुप्पिन् तलैव वाऴि।
पऴियॊडु पडराप् पञ्जव वाऴि
शॆऴिय वाऴि तॆन्नव वाऴि!
अडर्त्तॆऴु कुरुदि अडङ्गाप् पशुन्दुणिप्
पिडर्त्तलैप् पीडम् एऱिय मडक्कॊडि
वॆऱ्ऱिवेल् तडक्कैक् कॊऱ्ऱवै अल्लळ्;
अऱुवर्क्कु इळैय नङ्गै इऱैवनै
आडल् कण्डरुळिय अणङ्गु, शूर् उडैक्
कानहम् उहन्द काळि दारुहन्
पेरुरम् किऴित्त पॆण्णुम् अल्लळ्
शॆऱ्ऱनळ् पोलुम् शॆयिर्त्तनळ् पोलुम्
पॊऱ्ऱॊऴिर् चिलम्बु ऒन्ऱु एन्दिय कैयळ्
कणवनै इळन्दाळ् कडै अहत् ताळे
कणवनै इळन्दाळ् कडै अहत् ताळे ऎन्न 24-44

४ पति वंचिता द्वारस्था।

(कण्णहि ने गोद्वार पर आकर दहाडा:) हे द्वारपाल! हे द्वारपाल!

बुद्धि हीन एक-ठीक, राज धर्म से डिगने वाले राजा के द्वारपाल ! जोड़ी में एक नूपुर हाथ में रखने वाली एक पति-वंचिता द्वारस्था है ! ऐसा जाकर इत्तला दो ! इत्तला दो ! द्वारपाल गया। जय जीव ! किया। फिर राजा से निवेदन किया— (पुरानी राजधानी) कॉऱ्कै के राजा ! जय हो आप की ! दक्षिण के पॉदियै पर्वत के स्वामी जीते रहें ! अनिद्य आचरण के पंच ! (पांडिय वंशी !) जीते रहे, शॅऴ़िय, दुहाई आपकी ! दक्षिणपति ! जय आपकी ! (द्वार पर कोई आयी है) बहु गहन रूप से उछलते बहते रक्त का निशान जिस से हट नही गया हो उस ताजे कटे हुए (महिषासुर के) कंधे सहित सिर के पीठ पर स्थित लता सी सुदर देवी, विजय दायी वेल् रखने वाली, दुर्गा तो नही; छः कन्याओं की छोटी बहन (सप्त माताओं में सब से छोटी) 'पिडारी' भी नहीं। ईश्वर को जिसने नृत्य करने को मजबूर किया वह देवी 'भद्रकाली' भी नही। भयंकर मरु वन में संतोष के साथ रहने वाली काली देवी नहीं; दारुक के वक्ष को जिसने चीरा था वह देवी भी नही ! मन में वैर रखती लगती है यह, क्रुद्ध दिखायी देती है ! अपने हाथ में सोने का एक नूपुर रखती है, पति वंचिता वह द्वारस्था है ! पति-वचिता वह द्वारस्था ही है ! द्वारपाल के यह निवेदन करने पर। २४-४४

5 यारैयो नी ?

'वरुह मऱ्ऱु अवळ् तरुह ईङ्गु ऍन्न
वायिल् वन्दु कोयिल् काट्टक्
कोयिल् मन्नऩैक् कुऱुहिऩळ् शॅन्ऱुऴि
'नीर् वार् कण्णै ऍम्मुऩ् वन्दोय्।
यारैयो नी मडक्कॉडियोय् ? ऍन्न
'तेरा मन्ना ! शॅप्पुवदु उडैयेऩ्
ऍळ्ळऱु शिऱप्पिऩ् इमैयवर् वियप्पप्
पुळ्ळुऱु पुऩ्कण् तीर्त्तोऩ्; अऩ्ऱियुम्
वायिऱ् कडैमणि नडुना नडुङ्ग
आविऩ् कडैमणि उहुनीर् नॅञ्जु शुडत्ताऩ् तऩ्
अरुम् पॅऱ्ऱ् पुदल्वऩै आऴियिऩ् मडित्तोऩ्
पॅरुम् पॅयर्प् पुहार् ऍऩ् पदियें; अव्वूर्
एशाच् चिऱप्पिऩ् इशै विळङ्गु पॅरुङ्गुडि
माशात्तु वाणिहऩ् महऩै आहि

वाळ्दल् वेण्डि ऊळ्विनै तुरप्पच्
शूळ् कळल् मन्ना ! निन्नहर्प् पुहुन्दु ईङ्गु
अन्न् कार् चिलम्बु पहर्दल् वेण्डि निन्पार्
कॊलैक् कळप्पट्ट कोवलन् मनैवि !
कण्णहि अन्बदु अन् पॆयरे अन्नप् पॆण्णणङ्गे 45-63

५ कौन हो तुम ?

(राजा ने आज्ञा सुनाई:) वह इधर आये; और उसे इधर पहुँचा दो। द्वारपाल लौट आया और कण्गहि को महल के अन्दर ले जाकर उसने राजा का स्थान दिखाया। कण्णहि महल के स्वामी के पास जा रही। तब राजा ने पूछा कि हे अश्रु बरसाती आँखों वाली ! मेरे सामने आयी हुई हो ! कौन हो तुम सुंदर लता सी रमणी ? कण्णहि ने निधडक कहा—हे अविवेकी राजा ! मेरी एक फ़र्याद है ! एक अकलंक-यश राजा ने सुरों को चकित करते हुए एक खग का कष्ट निवारा वे; और एक ने द्वार के घंटे के कंपित लंगर का नाद सुनकर गाय के अपांग से गिरते आँसू के चित्त को जलाने से, अपने अलभ्य पुत्र को रथ-चक्र मध्य वध करवाया इन शोळन् राजाओं की राजधानी 'पुहार' मेरा वासस्थान है। उस नगर में अलांछित महिमा वाले यशस्वी बड़े कुल के पति वणिक माशात्तुवान् के पुत्र कोवलन् मेरे पति, जीविका चाहकर पूर्व कर्म की प्रेरणा से, हे कटक वलयित चरण वाले राजा ! तुम्हारी राजधानी में आये। यहाँ मेरे एक नूपुर को बेचने के सिलसिले में तुम्हारे अधिकार से वधस्थल पहुँचाये गये। उन कोवलन् की धर्म पत्नी हूँ मैं। कण्णहि मेरा नाम है। ऐसा कहने पर राजा ने कहा—हे देवी स्त्री ! ४५-६३

6 कार्चिलम्बु उडैत्ताळ्

'कळ्वनैक् कोऱल् कडुङ्गोल् अन्ऱु
वॆळ्वेल् कॊऱ्ऱम् काण्'' अन्न ऒळ्ळिळै
'नऱ्ऱिऱम् पडराक् कॊऱ्कै वेन्दे !
अन्काऱ् पॊऱ्चिलम्बु मणियुडै अरिये अन्नत्
'तेमॊळि ! उरैत्तत्तु शॆव्वै नन्मॊळि;
याम् उडैच् चिलम्बु मुत्तु उडै अरिये
'तरुह' अन्नत् तन्दु तान्मुन् वैप्पक्
कण्णहि अणि मणिक् कार्चिलम्बु उडैप्प
मन्नवन् वाय्मुदल् तॆऱित्तदु मणिये मणि कण्डु 64-72

६ पादनूपुर तोड़ा।

चोर का वध करना अत्याचारी दंड (शासन) नही कहा जाता। पर वह पवित्र दण्ड का आवश्यक विजय सूचक काम ही है— जान लो। तव ज्वलंत भूषण वाली कण्णहि तड़क कर बोली;

हे सन्मार्गच्युत राजा! मेरे पैर के नूपुर के अन्दर माणिक-माणियाँ ही कंकड़ों के स्थान पर भरी है। सुनकर राजा ने उत्तर दिया। हे मधु मधुर भाषिणी! तुमने जो कहे वे कथन ठीक हैं और अच्छे हैं। हमारा नूपुर मोतियों के कंकड़ों का है। राजा ने सेवकों से कहा—इधर दो अपना! सेवकों ने पहले लाया गया नूपुर उसके सामने रखा, कण्णहि के स्वरणों को शोभित करते रहे उस मनोरम नूपुर को तोड़ने पर माणिक छितर पड़े और एक मणि राजा के मुख के पास उछलकर नीचे गिरा। मणि को देखकर। ६४-७२

7 वीऴ्न्द मऩ्ऩऩुम् मऩ्ऩियुम्

ताऴ्न्द कुडैयऩ् तळर्न्द शॆङ्गोलऩ्
पॊऩ्ऩ्शॆय् कॊल्लऩ् तऩ् शॊऱ् केट्ट
याऩो अरशऩ्? याने कळ्वऩ्!
मऩ्पदै काक्कुम् तॆऩ्पुलम् कावल्
ॲऩ्मुदऱ् पिऴैत्तदु; कॆडुह ॲऩ् आयुळ् ॲऩ
मऩ्ऩवऩ् मयङ्गि वीऴ्न्दऩऩे; तॆऩ्ऩवऩ्
कोप्पॆरुन्देवि कुलैन्दऩळ् नडुङ्गिक्
'कणवऩै इऴन्दोर्क्कुक् काट्टुवदु इल् ॲऩ्ऱु
इणैयडि तॊऴुदु वीऴ्न् दऩळे मडमॊऴि 73-81

७ गिरा राजा और गिरी राज्ञी।

अवनत-छत्राधिप, नमित राजदंडधर हो राजा ने उद्गार निकाला: स्वर्ण-कार का कथन सुनने वाला मैं क्या राजा हूँ? मै ही चोर हूँ। प्रजा पालन का, दक्षिणी देश का आधिपत्य मेरे द्वारा पहले पहल दूषित बन गया है! मेरी आयु खतम हो! कहकर राजा मूर्छित होकर गिरा; मर ही गया। दक्षिणपति की पटरानी भी कंपित हो उठी। भ्रांतचित्त हुई। "पति हीना विधवा को दिखाई देने वाला आश्रय कोई नही होता!" यह कहते हुए राजा के चरणद्वय का नमस्कार करके वह प्यारी बोली वाली राज्ञी भी गिर गयी। ७३-८१

४ वॆण्बाक्कळ्

अल्लवै शॆय्दार्क्कु अऱङ् कूऱ्ऱम् आम् ॲन्नुम्
पल्लवैयोर् शॊल्लुम् पळुदन्ऱे-पॊल्ला
वडु वित्तैये शॆय्द वयवेन्दन तेवि !
कडुवित्तैयेन्न शॆय्वदूउम् काण् ! 1
कावि उहुनीरुम् कैयिल् नत्तिच् चिलम्बुम्
आवि कुडिपोन्न अव्वडिवुम्-पावियेन्न
काडॆल्लाम् शूळ्न्द करुङ् गुळलुम् कण्डञ्जिक्
कूडलान्न कूडा यित्तान्न । 2
मॆय्यिऱ् पॊडियुम् विरित्त करुङ्गुळलुम्
कैयिल तत्तिच् चिलम्बुम् कण्णीरुम्-वैयैक्कोन्न
कण्डळवे तोऱ्ऱान्न अक्कारिहै तन्न शॊऱ्चॆवियिल्
उण्डळवे तोऱ्ऱान्न उयिर् । 3

८ वॆण्बा

"अधर्म कर्मी का धर्म ही मृत्यु हो जायगा"—यह अनेक सभासदस्यों का कथन व्यर्थ नहीं जाता। बुरा कलंक चिह्नित काम के कर्ता विजयी राजा की पत्नी ! कठोर कर्म दशा में जो करूँगी वह भी देख लो। १

कमल सम आँखों से बहता आँसू, हाथ में अकेला नूपुर, चैतन्य हीन मेरा शरीर, पापिनी मेरे शरीर को जंगल के समान आच्छादित रहता मेरा केश इत्यादि को देखकर कूडल् पति (अस्थि-) पंजर बन गया। २

(ये दोनो कण्णहि के कथन हैं)

शरीर पर जमी धूल, बिखरा काला केश और अश्रु हाथ में अकेला नूपुर इनको देखते ही वैगैपति (पांडियन्न राजा) अपना बल खो गया। उस देवी के वचन कानों से सुनते ही अपने प्राण खो गया। ३

(यह रचनाकार का कथन है।)

ज़िन्न मालै

1 विळैवु

कोवेन्दन्न याट्टियेन्न
यावुन्न दे आयिन्नुम्

मुऱ्पहल् शॆयदान् पिऱन् केडु तन्केडु
पिऱ्पहल् काण्गुरूउम् पॆऱ्ऱिय काण् ! नऱ्पहले 1-4

२१ प्रतिशोध-वचन-माला

१ अपकार का स्वाभाविक परिणाम

[साधारणत: मूल ग्रंथ के गाथा भागों में पंक्तियाँ वरावर चलती हैं। उस सिलसिले में पंक्ति के साथ वाक्य भी पूरा हो यह वात संभव नहीं है। वैसे ही जब शीर्षक दिया जाता है उस शीर्षक का विषय आखिरी पंक्ति में पूरा हो यह भी नही हो पाता। अत: पिछले शीर्षक की आखिरी पंक्ति के एक या दो आखिरी शब्दो का अर्थ आगे के शीर्षक के शब्दों के साथ लगा रहता है। उदा० पहले शीर्षक को ले। "अपकार का स्वाभाविक परिणाम" चौथी पंक्ति के "काण् (देखो)" शब्द के साथ पूरा होता है। "मध्याह्न में" जो उस पंक्ति के आखिर में है उसे अगले शीर्षक के नीचे लेकर अर्थ करना पड़ा है। पाठक इस असुविधा को माफ़ करें और पढ़ते समय इस वात का ध्यान रखें। कोष्टक के अंदर वे शब्द पहले दिये गये हैं। आगे के शीर्षक में आरंभ उन्ही शब्दों के साथ किया गया है।] (कण्णहि का प्रतिशोध वचन :) हे राजाधिराज की महिषी! अवश्य मैं क्रूर कर्म की मारी हूँ। अज्ञ स्वभाव की हूँ। तो भी दिन के पूर्व पहर में जो अपकार करता है वह उसका प्रतिकार (उसी दिन) पिछले पहर में देख (पा) लेता है। तुमने यह देखा। यह अपकार की प्रकृति है। (मध्याह्न में) १-४

2 कऱ्पु महळिर्हळ्

वन्नि मरमुम् मडॆप्पळियुज् जान्ऱाह
मुन्निऱुत्तिक् काट्टिय मॊय्कु ऴलाळ्, पॊन्निक् 5-6

२ सात सती स्त्रियाँ : पहली

मध्याह्न के समय में एक सती ने "वन्नि" वृक्ष और पाकशाला को साक्षी के रूप में मँगा कर प्रस्तुत किया। वह घनिष्ठ केशिनी (पहला उदाहरण है। कावेरी के)

[स्वजनों की मंजूरी न मिलने के कारण एक युवा तथा उसकी प्रेमिका युवती ने दूसरी जगह जाकर वन्नि वृक्ष और पाकशाला को साक्षी बनाकर विवाह कर लिया। बाद अपने यहाँ आकर अपने लोगों के सामने उनको मँगाकर अपने विवाह की सत्यता साबित की। यह कहानी कई प्रकारों से

कही जाती है। साक्षी में कूप और शिवलिंग को बुलाने की बात भी कही जाती है। मदुरै के श्री मीनाक्षी मंदिर में कूप, शिवलिंग, तरु, तीनों के चिह्न पाये जाते हैं।] ५-६

(2)

करैयिल् "मणऱ्पावै निन् कणवन् आम् ऍन्ऱु
उरैशॅय्द मादरॊडुम् पोहाळ् तिरै वन्दु
अळियादु शूऴ्पोह आङ्गु उन्दि निन्ऱ
वरि आर् अहलल्हुल् मादर्; उरै शान्ऱ 7-10

दूसरी

पौन्नि (काविरि) नदी के तट पर एक कन्या से, "यह रेत का पुतला तुम्हारा पति है—" ऐसा कुछ स्त्रियों ने कहा। फिर वे घर चली गयीं। पर वह कन्या नही चली। और लहरें (धारा) आकर उस पुतले को नष्ट न करें, पर दूर से उसकी परिक्रमा करती जायँ— इसका उपाय करती हुई वहीं खड़ी उसे बचाती रही। वह रेखा युक्त विशाल वरांग वाली कन्या (दूसरा उदाहरण है)। (प्रकीर्तित) ७-१०

(3)

मन्नन् करिकाल् वळवन् महळ् वञ्जिक्कोन्
तन्नैप् पुनल् कॊळ्ळत् तान् पुलन्नि पिन् शॅन्ऱु
"कन्नविल् तोळायो" ऍन्नक् कडल् वन्दु
मुन्निऱुत्तिक् काट्ट अवनैत् तळीइक् कॊण्डु
पॊन्नङ् गॊडिपोलप् पोदन्दाळ्; मन्नि 11-15

तीसरी

प्रकीर्तित राजा करिहाल् वळवन् (शोऴन्) की पुत्री (आदि मन्दि) का पति "आट्टन्नत्ति" 'वंजि' का राजा था। उसे काविरि की बाढ़ बहा ले गयी। आदिमन्दि पीछे-पीछे किनारे पर से चली और समुद्र तट पर जाकर उसने पुकारा— हे पर्वतोपम भुजा वाले ! तब समुद्र ने उसके पति को सामने लाकर प्रस्तुत किया। राजकुमारी उसका आलिंगन करके उसे ले आयी। वह स्वर्ण लता सी (राजकुमारी तीसरा उदाहरण है।) (गहन रूप से) ११-१५

(4)

मणल् मलि पूङ्काऩल् वरुकलन्ऩगळ् नोक्किक्
कणवन्ऩ वरक् कल्लुरुवम् नीत्ताळ्; इणैयाय 16-17

चौथी

गहन रूप से रेत से भरे समुद्र तट के बगीचे में एक सती पत्थर की प्रतिमा के रूप में आने वाली नौकाओं को देखती खड़ी रही। आखिर उसका प्रतीक्षित पति वापस आया। तब वह अपना प्रस्तर रूप त्यागकर पति से मिली। यह चौथी है। (जो सम दशा में रही) १६-१७

(5)

माऱ्ऱाळ् कुऴवि विऴत् तन्ऩ कुऴवियुम् किणऱ्ऱु
वीऴ्त्तु एऱ्ऱुक् कॊण्डु अॆडुत्त वेऱ्कण्णाळ्; वेऱ्ऱोरुवन्ऩ 18-19

पाँचवीं

जो सम दशा में रही उस सौत के बच्चे को कूप में गिरते देखकर अपने शिशु को भी गिराकर दोनों को ऊपर उठा दिया एक वेल् सम आखों वाली सती ने। (पर पुरुष की) १८-१९

(6)

नीळ् नोक्कम् कण्डु निऱ्ऱैमदि वाळ्मुहत्तैत्
ताऩोर् कुरक्कु मुहम् आह अॆन्ऱु पोऩ
कॊऴुनन्ऩ वरवे कुरक्कु मुहम् नीत्त
पऴुमणि उल्हुऱ्पूम् पावै; विऴुमिय 20-23

छठी

पर पुरुष की दीर्घ कामुक दृष्टि का शिकार बनी एक। (उसका पति विदेश गया था।) उसने अपने पूर्ण चंद्रोज्वल मुख को "बंदर का सा बने" कहकर वैसा बना लिया। फिर उसके पति के लौट आने पर अपना वानर-मुख त्याग दिया। श्रेष्ठ मणि जटित मेखलालंकृत कटि वाली वह सती (छठा उदाहरण है)। (उत्कृष्ट) २०-२३

(7)

"पॆण्णरिवु अॆऩ्बदु पेदैमैत्ते" अॆऩ्ऱुरैत्त
नुण्णरिविऩोर् नोक्कम्; नोक्कादे, अॆण्णिलेऩ्
वण्डल् अयर् विडत्तु; याऩोर् महळ् पॆऱ्ऱाल्
ऒण्डोडि; नीयोर् महऩ् पॆरिऩ् कॊण्ड
कॊळ्ुनऩ् अवळुक्कु अॆऩ्ऱु याऩ् उरैत्त माऱ्ऱम्
कॊळुमियवळ् उरैप्पक् केट्ट विळुमत्ताल्
चिन्दै नोय् कूरुम् तिरुविलेऱ्कु अॆऩ्ऱु अॆडुत्तुत्
तन्दैक्कुत् तायुरैप्पक् केट्टाळाय्, मुन्दियोर्
कोडिक् कलिङ्गम् उडुत्तुक् कुळल् कट्टि
नीडित् तलैयै वणङ्गित् तलैशुमन्द
आडहप् पूम्बावै अवळ्; पोलवार् नीडिय 24-34

सातवीं

"उत्कृष्ट भी हो तो भी स्त्री-बुद्धि मंद ही है। यह सूक्ष्म-बुद्धि वालों का कथन है। यह मैंने नहीं सोचा। घरौंदे बनाकर जब हम खेलती थी तब खेल ही खेल में मैंने अपनी सखी से कहा कि हे प्रकाशमय भूषणों वाली! अगर मेरे एक बच्ची पैदा होगी और तुम एक पुत्र जनाओगी वह मेरी बच्ची का ब्याहा पति होगा। उस दिन कही मेरी बात को मेरी सखी सच मानकर आज मेरा वादा मुझे याद करा रही है। उसको सुनकर मेरा मन व्यथित है। मैं श्रीहीन हो गयी हूँ।" इस तरह अपनी माता को पिता से कहते हुए सुनकर, जिस बाला ने स्वयं आगे बढ़कर नया वस्त्र पहन लिया, अपने केश को सँवार लिया और उसी वर से शादी करके अपनी माता के वादे के सामने अपना सिर झुका लिया (वादे को शिरोधार्य कर लिया) वह चटकीले स्वर्ण सम कोमल पुत्तलिका अन्य एक (सातवाँ) उदाहरण है। (इनके जैसे लंबे) २४-३४

3 याऩुम् पत्तिऩियाऩाल्

मट्टार् कुळलार् पिऱन्द पदिप् पिऱन्देऩ्;
पट्टाङ्गु याऩुम् ओर् पत्तिऩिये आमाहिल्
ऒट्टेऩ् अरशोडु ऒळिप्पेऩ् मदुरैयुम् अॆऩ्
पट्टिमैयुम् काण्गुरुवाय् नी अॆऩ्ऩा विट्टु अहला 35-38

३ अगर मैं सती हूँ तो

इनके जैसी लबे मधुभरे केशवाली सती स्त्रियां जहाँ पैदा हुई उसी (पुहार) नगर की जन्मी हूँ मैं भी। सचमुच मैं सती (पतिव्रता नारी) हूँ तो, हे रानी! मैं तुमसे नही मिलूंगी (तुम्हारे समान नही मरूँगी)। राजा के साथ मदुरै को भी मटियामेट कर दूंगी। मेरा वैर भी देखोगी तुम! ऐसी प्रतिज्ञा करके वह महल से बाहर आयी। ३५-३८

4 अॅल्लोरुम् केळुङ्गळ्

नान्माडक् कूडन् महळिरुम् मैनूदरुम्,
वानक् कडवुळरुम् मादवरुङ् केट्टीमिन्
यानमर् कादलन् तन्नैत् तवरु इऴैत्त
कोनहर् शीऱ्रिनेन्; कुऱ्रमिलेन् यान् अॅन्ऱु 39-42

४ सभी सुनो

"नान् माडक्कूडल् (चार देवालयों से युक्त) मदुरै नगर की नारियो और पुरुषो! आकाश के देवताओ! और महान तपस्वियो! सब सुनो! मेरे प्यारे पति के प्रति अन्याय करने वाले राजा के नगर पर मेरा क्रोध है। अन्यथा मैं बेक़सूर हूँ।" ऐसा कहते हुए— ३९-४२

5 इडमुलै अॅरिन्दाळ्

इडमुलै कैयाल् तिरुहि मदुरै
वलमुऱै मुम्मुऱै वारा अलमन्दु
मट्टार् मऱुहिन् मणि मुलैयै वट्टित्तु
विट्टाळ् अॅऱिन्दाळ् विळङ्गिळैयाळ् वट्टित्त 43-46

५ बायें स्तन को फेंका

अपने बायें स्तन को नोच लेकर उसने मदुरै की तीन बार प्रदक्षिणा की। फिर गंभीर दुख से व्यथित होकर उस ज्वलंत आभूषण भूषिता ने (मधु या) अच्छे वास देने वाली सड़क पर कुच को फेंक दिया। तब छने हुए (गहरे)। ४३-४६

6 तीक् कडवुळ् वन्दान्

नील निऱत्तुत् तिरिशक्कर् वार्शडैप्
पालपुरै वॅळ्ळॅयिऱ्ऱुप् पार्प्पनक् कोलत्तु

माल़ै ऎरियङ्गि वात्तवन् तान् तोन्ऱि
मापत्तिऩि ! निन्नै माणप् पिऴैत्त नाळ्
पायॆरि इन्दप् पदियूट्ट, पण्डेयोर्
एवल् उडैयेन्नाल्; यार् पिऴैप्पार् ईङ्गु ऎन्नप् 47-52

६ अग्नि देव आये

नीले रंग वाले पेचदार लंबी लाल जटा वाले, दुग्ध-समान श्वेत दाँतों के साथ शोभायमान, सर्वदाहक अग्निदेव विप्र के वेष में उसके सामने प्रकट हुए। उन्होंने कण्णहि से कहा कि हे महयिसी सती ! तुम्हारे प्रति जिस दिन अपराध होगा उस दिन इस नगर को जलती चलने वाली अग्नि का ग्रास बनाने को मुझे पहले ही आज्ञा मिली है। अब बताओ कि कौन-कौन बचाये जायँ ? अग्नि देव के ऐसा पूछने पर, ४७-५२

7 इवरै ऎरियादु कै विडुह

पार्प्पार् अऱवोर्, पशु, पत्तिऩिप् पॆण्डिर्
मूत्तोर् कुऴवि ऎनुम् इवरैक् कैविट्टुत्
तीत्तिऱत्तोर् पक्कमे शेर्ह ऎन्ऱु काय्त्तिय
पॊऱ्ऱॊडि एवप् पुहै अऴल् मण्डिऱ्ऱे
नऱ्ऱेरान् कूडल् नगर् 53-57

७ निम्नोक्त लोगों को मत जलायें; छोड़ दें

(उसने सूची दी :) ब्राह्मण, धार्मिक साधू, गाये, पतिव्रता स्त्रियाँ, वृद्ध-जन, शिशु इत्यादि इन लोगों को छोड़कर बुरे लोगो के पास ही जायँ। –ऐसा क्रोधतप्त स्वर्णाभरण वाली कण्णहि ने आज्ञा दी। आज्ञा देते ही धुएँ के साथ आग घने रूप से फैलकर जलाने लगी श्रेष्ठ रथी (अविवेकी) पांडियन् के कूडल् नगर को। ५३-५७

8 वॆण्पा

पॊऱ्पु वऴुदियुम् तन् पूवैयरुम् माळिहैयुम्
विऱ्पॊलियुम् शॆन्नियुम् मा वेऴमुम्—कऱ्पु उण्णत्
तीत्तरु वॆङ्कूडल् दॆय्वक् कडवुळरुम्
मात्तुवत् तान्मऱैन्दार् मऱ्ऱु।

वेॅण्बा

उज्वल कीर्ति पाण्डियऩ्, उसकी तन्वी रानी, उसका महल उसके धनुर्हस्त सेना-वीर, बड़े गज, इत्यादि को सतीत्व को खाने देकर जलने वाले मदुरै नगर से सब देवता अपने दैवत्व के कारण अदृश्य हो गये।

22 अऴऱ्पडु कादै

1 ॲरिमुहम् तिऱन्ददु

एवल् तेय्वत्तु ॲरिमुहम् तिऱन्ददु;
कावल् तेय्वम् कडैमुहम् अडैत्तऩ; 1-2

२२ पुर दहन गाथा

१ आग का मुख खुला

(पतिव्रता देवी की) आज्ञा पाकर आग ने अपना मुख खोल दिया। रक्षक देवताओं ने अपने कपाट बंद कर लिये। १-२

2 अऱम् विऴैत्त तेय्वङ्गऴ्

अरैशर् पेॅरुमाऩ् अडुपोर्च् चेॅऴियऩ्
वऴैकोल् इऴुक्कत्तु उयिर् आणि कोॅडुत्तु आङ्गु
इरुनिल मडन्दैक्कुच् चेॅङ्गोल् काट्टप्
पुरैतीर् कऱ्पिऩ् देवि तऩ्ऩुडऩ्
अरैशु कट्टिलिल् तुञ्जियदु अऱियादु 3-7

२ धर्म-साधक-देवता

राजाओं के राजा, संहारक-समर-समर्थ शेॅऴियऩ् ने, झुके हुए राजदण्ड की हीनता को अपने प्राणों का आधार देकर सम बना दिया और विशाल भूमि की देवी के सामने अपने राजदण्ड का सीधापन दिखा दिया। और यह देखकर निर्दोष पतिव्रता महिषी भी अपने पति के साथ राजासन पर दीर्घ निद्रामग्न हो गयी (प्राण छोड़ दिये)। यह जो हुआ वह कोई नही जानता था। ३-७

3 अत्तिवरुम् कलङ्गिऩर्

आशाऩ् पेॅरुङ्गणि अऱक्कळत्तु अन्दणर्
काविदि मन्दिरक् कणक्कर् तम्मोडु

कोयिल्　माक्कळुम्　कुरुन्दोडि　महळिरुम्
ओवियच्　चुऱ्ऱत्तु　उरैयविन्दु　इरुप्प
काळोर्　वादुवर्　कडुन्देर्　ऊरुनर्
वाय्वाळ्　मऱवर्　मयङ्गिन्नर्　मलिन्दु
कोमहन्　कोयिल्　कोट्ट्र　वायिल्
तीमुहम्　कण्डु　ताम्　विडै　कोळ्ळ　8-15

३ सभी आकुलित हुए

पुरोहित, ज्योतिषी, धर्माचारी ब्राह्मण, राजस्व-अधिकारी मंत्री गण; और महल के कर्मचारी, कंकणधारिणी लघु दासियाँ, —सब चित्रार्पित से अवाक रह गये। और अश्वारोही वीर, गज-वीर, तीव्र-रथ-सारथी और तलवार चलाने वाले सिपाही इत्यादि सभी चकित हो गये। एकत्र हुए, राजमहल के विजय द्वारपर आग की ज्वाला देखकर (डर के मारे) भाग गये। ८-१५

4 आदिप् पूदम्

नित्तिलप्　पैम्बूण्　निलात्तिहळ्　अविर्　ओळि
तण्कदिर्　मदियत्　तन्न　मेन्नियन्;
(ओण्　कदिर　नित्तिलम्　पूणोडु　पुनैन्दु
वण्णिऱत्　तामरै　अरुकै　नन्दि　अन्न
इन्नवै　मुडित्त　नन्निऱच्　चेन्नियन्;
नुरै　अन्न　विरिन्द　नुण्पूङ्　कलिङ्गम्
पुलरादु　उडुत्त　उडैयिन्नन्;　मलरा
वट्टिहै　इळम्बोरि　वन्निहै　शन्दनम्
कोट्टमोडु　अरैत्तक्　कोण्ड　मारबिन्नन्;
तेन्नुम्　पालुम्　कट्टियुम्　पॅट्पच्
शेर्वन　पॅरुउम्　तीम्बुहै　मडैयिन्नन्
तीर्त्तक्　करैयुम्　तेवर्　कोट्टमुम्
ओत्तिन्　शालैयुम्,　ओरुङ्गुडन्　निन्ऱु
पिन्　पहर्　पोळुदिल्　पेणिनन्　ऊर्वोन्
नन्　पहल्　वर　अडि　ऊन्ऱिव　कालिन्नन्
विरिकुडै,　तण्डे,　कुण्डिहै　काट्टम्
पिरियात्　तरुप्पै　पिडित्त　कैयिन्नन्
नावित्तुम्　मार्बित्तुम्　नवित्तुऱ　नूलिन्नन्)

मुत्ती वाऴ्क्कै मुऱ्ऱैमैयिऩ् वऴाअ
वेद मुदल्वऩ् केऴ्विक् कडवुळुम् 16–36

४ आदि (ब्राह्मण) भूत

(जो जो नगर छोड़ चले उनका विवरण दिया जाता है। पहले आदि या ब्राह्मण भूत के देवता का वर्णन है।)

वह बिल्कुल ताजे चटकीले मोतियों की लड़ियाँ पहने हुए था। वे मोती चाँदनी सा प्रकाश छिटकाते थे। उसका शरीर शीतल-किरण चंद्र के समान श्वेत था। [आगे की पंक्तियों को क्षेपक मानकर टीकाकारों ने इन पंक्तियों का अर्थ नही दिया है। पर मूल में है अतः यहाँ मैं (अनुवाद कर्ता) इसका अर्थ देता हूँ: वह ज्वलत मोतियों को अन्य आभरणों के साथ पहने हुए था। उसके केश में श्वेतकमल, दूर्वादिल और 'नन्दि' के फूल गुंथे हुए थे। शरीर में फेन फैला हो-ऐसा, पुष्प समान कोमल तथा महीन वस्त्र था जो सूखा नही था। टोकरी में लाजा थी। लेखनी थी। उसकी छाती पर चंदन तथा 'कोट्टम्' का पिसा लेप मला था। शहद, दूध, गुड़ इत्यादि खूब मिलाकर पके अन्न के साथ वना उसका भोजन था। वह तीर्थ तट, देवालय, और वेद पाठशाला में, दिन के अपराह्न में जाता और ध्यान में समय व्यतीत करता। मध्याह्न में पैर टेककर खड़ा रहता। उसके हाथों में खुला छाता, दण्ड, कमंडल, समिधा, दर्भ आदि रहते थे। जीभ में तथा वक्ष में (क्रमशः उपनिषदों और उपवीत के) सूत्र थे। —आगे ग्रंथ का भाग है] वह आहवनीय गार्हपत्य तथा दक्षिणात्य कथित तीनों अग्निहोत्र के क्रम में चूकने वाला नही था। वेदमूल ब्रह्मा के दिये श्रौत ज्ञान के साथ वह आदि भूत (विग्रह का अधिष्ठाता देवता उठकर चल पड़ा।) १६-३६

5 अरैश वूदम्

(वॆऩ्ऱि वॆङ्गदिर् पुरैयुम् मेऩियऩ्;
कुऩ्ऱा मणि पुऩै पूणियऩ्; पूणोडु
मुडिमुदऱ् कलऩ्गळ् पूण्डऩऩ् मुडियोडु
शण्वगम् करुविळै शॆङ्गू दाळम्
तण्कमऴ् पूनीर्च् चावियोडु इऩैयवै
) कट्टुम् कण्णियुम् तॊडुत्त मालैयुम्
ऑट्टिय तिरणैयोडु ऑशिनूर पूयिऩऩ्

अङ्गुलि कैयेरिनदु अञ्जु महन् विरित्त
कुङ्गुम वरुणङ् गॉण्ड मार्बित्तन;
पॉङ्गॉळि यारत्तप् पूमूवट्टु उडैयित्तन;
मुहिळ्त्त कैच् चालि अयित्ति पॉर् कलत्तु एन्दि
कौणर्न्दु; एलुम् नर्चुवै इयल्बुळिक् मडैयित्तन्
शॅमूमैयिल्) वॅमूमैयिन् कॉळ्ळम् तिहळॉळि मेन्नियत्र;
पवळच् चॅञ्जुडर् आळ्वोन् तन्नित्
आळ् कडल् ञालम् कवरि नॅडुङ् गॉडि
मुरैशॉडु वॅण् कुडै वडिवेल् वडिकयिरु
उरैशाल् अङ्गुशम् कैयित्तन आहि
ऑन्नविवै पिडित्त मन्नरै ओट्टि
ऑण्णरुञ् जिऱ्प्पिन्न शॅङ्गोल् ओच्चिक्
मण्णहङ् कॉण्डु कॉडुरम् कॉण्डु
कॉडुनदॉळिल् कडिनदु नात्तिलम् पुरक्कुम्
नडुम् पुहळ् वळर्त्तु नॅडियोन्न अन्नत
उरै शाल् शिऱ्प्पिन्न अरुन्दिऱल् कडवुळुम् 37-61
अरैश पूदत्तु

५ राज (क्षत्रिय) भूत

(आतंकमय गरम किरण माली का-सा शरीर वाला वह क्षत्रिय भूत अमंद तेजोमय मणि खचित आभरण पहने हुए था। शरीर पर के आभरणों के अलावा किरीटादि अलंकार से भी अलंकृत था। केश में "जण्वगम्" "करुविळै" "लाल कूदाळम्" शीतल जलपुष्प की जातियाँ, इत्यादि के फूलों की पिरोयी, विविध तरह की मालाओ के अलावा स्तबक आदि उसके शरीर पर हिलते थे। किरणों के द्वारा सूर्य के विखेरे कुंकुम वर्ण प्रकाश के समान उसके शरीर का रंग था। भड़कीली चमक के साथ वह रेशम का वस्त्र पहने था। उसके खुले हाथ में स्वणपात्र था जिसमें शाली चावल भरा था। उसमें सुरुचिपूर्ण, प्रकृत रूप से वने गरम आहार को खानेवाला था। —यहाँ तक क्षेपक माना जाता है। आगे का भाग मौलिक है—) लाल प्रवाल की ललाई-सा उस[illegible] शरीर का रंग था। गम्भीर सागरावृत्त भूमि का पालन क[illegible] [illegible] में ढोल, श्वेत छत्र, चामर, सफेद झण्डा, [illegible] पाश, आदि थे। अचित्य [illegible] गरिमामय

राजाओं को भगाकर भूमि छीन कर न्यायपूर्ण, दण्डधारण करनेवाला, अपराधी कर्मों को रोककर, विजेता बनकर और स्थायी कीर्ति स्थापित करके चतुर्दिक भूमि का पालन करनेवाला; सुविख्यात विष्णु के समान रहे उस राज-भूत का बलवान अधिष्ठाता देवता भी छोड़ गया। ३७-६१

6 वाणिहप् पूदम्

शॆन्निऱप् पशुम् बॊन् पुरॆयुम् मेऩियन्;
मन्ऩिय शिऱप्पिन् मऱवेन् मन्ऩवर्
अरैशु मुडि ऒळिय अमैत्त पूणिनन्
वाणिह मरविन् नीणिलम् ओम्बि
नान्जिलुम् तुलामुम् एन्दिय कैयिनन्;
(उरैशाल् पॊन्ऩिऱम् कॊण्ड उडैयिनन्;
वॆट्चि ताऴै कट्कमऴ् आम्बल्
शेडल् नॆय्दल् पूऴै मरुदम्
कूड मुडित्त शॆन्नियन्, नीडु ऒळिप्
पॊन्ऩॆन विरिन्द नऩ्ऩिऱच् चान्दम्
तन्ऩॊडु पुनैन्द मिन्ऩिऱ मार्विनन्;
कॊऴ्ळुम् पयऱुम् तुवरैयुम् उऴुन्दुम्
नऴ्ळियम् पलवुम् नयन्दु उडन् अळैइक्
कॊळ् अॆन्क् कॊळ्ळुम् मडैयिनन्; पुडैतरु
नॆल्लुडैक् कळने पुऴ्ळडैक् कळत्ति
वाणिहप् पोडिहै नीळ् निऴर् काञ्जिप्
पाणिहैक् कॊण्डु मुऱ्पहऱ् पॊऴुदिल्
उऴ् महिऴ्न्दु उण्णु वोऩे; अवऩे
नान्जिलम् पडैयुम् वायन्दुरै तुलामुम्
शूऴ्ऒळित् तालुम् याऴुम् एन्दि
विळैन्दु पदम् मिहुन्दु विरुन्दु पदम् तन्दु
मलैयवुम् कडलवुम् अरुम्बलम् कॊणर्न्दु
विलैय आह वेण्डुनर्क्कु अळित्तु आङ्गु)
उऴवु तॊऴिल् उदवुम् पऴुदिल् वाऴ्क्कक्
किऴवन् अन्बोन् किळर् ऒळिच् चॆन्नियिन्
इळम्पिऱै शूडिय इऱैयवन् वडिविन् ओर्
विळङ्गॊळिप् पूद वियन्पॆरुम् कडवुळुम् 62-88

६ वणिक भूत

यह भूत लाल रंग के चोखे स्वर्ण के समान शरीर वाला था। गहन महिमा-मंडित वीर,-'वेल्' सहित राजाओं के योग्य एक किरीट को छोड़कर अन्य आभूषण पहने हुए था। वणिक व्यापार द्वारा इस विशाल भूमि का पालन (हित) करनेवाला वह हाथ में हल और तुलादण्ड रखता था। (शंसित स्वर्णमय पोशाक वाला था। उसके सिर पर 'वेट्चि' केतकी, मधु-वास-युक्त 'आम्बल्' 'शेडल्' नेय्दल्', "पूळै", 'मरुदम्' आदि के फूल बँधे थे। गम्भीर रूप से प्रकाशमय सोने के समान फैले चन्दन का लेप उसके ज्वलन्त वक्ष पर लगा हुआ था। कुलथी, मूँग, तूर, उड़द आदि धान्यों का बना भोग, निवेदन करके 'भुगतो' कहने पर भोगने वाला था। पास रही धान की भूमि, पक्षी-सहित खेत, वणिकों की वीथी, काँजी वृक्ष की घनी छाया इत्यादि जगहों में पूर्वाह्न के समय अपने ही हाथ से, निवेदित आहार को खानेवाला था। वही हल का औजार, ठीक बना तुला और प्रकाशमय ताल और याऴ् लेकर दूर-दूर चलता और नयी-नयी चीजें जो या तो पर्वतों पर उत्पन्न होतीं, समुद्र से आती या भूमि पर ही मिलती, खरीद लाता और ग्राहकों के हाथ बेच देता। आगे मूल ग्रन्थ का भाग है : कृषि व्यवसाय तथा व्यापार की निर्दोष जीविका चलानेवाला वह छिटकते प्रकाशमय सिर पर बाल चन्द्र धारण करनेवाले ईश्वर के-से रूप में विद्यमान था। उस वणिकभूत का अधिष्ठाता तेजोमय देवता भी विदा हुआ। ६२-८८

7 वेळाण्बूदम्

(करु विऴै पुरैयुम् मेऩियऩ्; अरियॊडु
वॆळ्ळि पुत्तैन्द पूणिऩऩ्; तॆळ्ळॊळिक्
काऴहम् शॆऱिन्द उडैयिऩऩ्; काऴ्हिल्
शान्दु पुलर्न्दु अहऩ्ऱ मार्बिऩऩ्; एन्दिय
कोट्टिऩुम् कॊडियिऩुम् नीरिऩुम् निलऩ् तिऩुम्
काट्टिय पूविऱ् कलन्द पित्तैयऩ्;
कम्मियर् शॆय्विऩैक् कलप्पै एन्दिच्
चॆम्मैयिऩ् वरुउम् शिऱप्पुप् पॊरुन्दि)
मण्णुऱु तिरुमणि पुरैयुम् मेऩियऩ्
ऒण्णिऱक् काऴहम् जेर्न्द उडैयिऩऩ्
आडऱ्कु अमैन्द अवऱ्ऱॊडु पॊरुन्दिप्

पाडऱ्कु अमैन्द पलतुऱ़ै पोहिक्
कलिकॅऴु कूडऱ् पलिपॆऱु बूदव्
तलैवन्न् ऍन्नबोन्न् तान्नुम् तोन्ऱि 89–102

७ कृषक भूत

(क्षेपक:— करुविळै नाम के काले फूल के समान शरीरवाला था यह स्वर्ण तथा रजत के मिश्रित आभरण पहनता था। चटकीले काले रंग की पोशाक पहने हुए था। हीर बने अगरु का पिसा लेप उसकी छाती पर शोभा पाता था। तरुधृत शाखाओं, लताओं, जल और भूमि पर फूलने वाले फूलों की बनी मालाधारी था। लुहारों के बनाये हल को लेकर निष्कपट धधे में लगा हुआ था। आगे मूल ग्रंथ की पंक्तियाँ है।) सुन्दर नीलमणि वर्ण शरीर था। उसका वस्त्र चटकीले ढाल के साथ युक्त था। वह नृत्य कला को उसके अंगों के साथ खूब जानता था। और गीत के कई प्रकारों में पारंगत था। कोलाहल पूर्ण मदुरै में बलि पानेवाले भूतों का वह सरदार था। वह भी उठ चला। ८९-१०२

8 बूदङ्गळ् वॆळियेऱिन्न

कोमुऱ़ै पिऴैव्त नाळिल् इन्नगर्
तीमुऱ़ै उण्बदु ओर् तिर्न्नउण्डु ऍन्नबदु
आम् मुऱ़ैयाह अऱिन्दन्नम् आदलिन्न्
याम् मुऱ़ै पोवदु इयल्बु अन्नऱो ऍन्नक्
कॊड्गै कुऱिव्त कॊऱ्ऱ नङ्गै मुन्न्
नाऱ्पाल् बूदमुम् पाऱ्पाऱ् पॆयरक् 103–108

८ सब भूत निकले

वे भूत यह कहते हुए निकले कि राजा का न्याय जिस दिन कलंकित होगा उस दिन यह नगर आग में जल जायगा। ऐसी एक वाणी थी। हम उसको निश्चित रूप से जानते थे। इसलिए हमारा निकल जाना उचित ही है न? यह कहते हुए कुच द्वारा विजय-प्राप्त उस कण्णहि के सामने ही चारों वर्णों के भूत चारों दिशाओं में चल निकले। १०३-१०८

9 तॆरुक्कळ् ऍरिन्दन्न

कूल मऱुहुम् कॊडिव्तेर् वीदियुम्
पाल् वेऱु तॆरिन्द नाल्वेऱु तॆरुवुम्

[उरक्कुरङ्गु उयर्त्त उण्शिलै उरवोन्]
कावेरि ऊट्टिय नाळ्पोर् कलङ्ग
अरवोर् मरुङ्गिन् अळर् कोडि विडादु
मरवोर् शेरि मयङ्गु ॲरि मण्ड 109-114

९ सड़कें जल उठीं

(आग के लगने से) धान्य का बाजार, पताका युक्त रथ के मार्ग, अलग अलग वर्णो वालों के अलग-अलग मार्ग, उस दिन के समान जले और त्रस्त हो उठे जिस दिन हनुमत् ध्वज अर्जुन ने गांडववन को जला दिया। धर्मा-चारी लोगों के स्थानों में अग्नि ने ज्वाला नहीं दिखाई। अधर्मियों की सारी बस्तियाँ जलकर राख बनी। १०९-११४

10 विलङ्गिन्नम् ओडिन्न

करवैयुम् कन्नुम् कन्नल् ॲरि शेरा
अरवै आयर् अहन् तॆरु अडैन्दन्न
मरवॆङ् गळिरुम् मडप्पिडि निरैहळुम्
विरैपरिक् कुदिरैयुम् पुरमदिर् पॆयरन्दन्न 115-118

१० सब पशु भाग चले

दुधारू जानवर और बछड़े उस विशाल वीथी में जा पहुँचे जहाँ धर्म-निष्ठ ग्वाले रहते थे। बहुत बलवान हाथी और हथिनियाँ और तेज दौड़ने वाले अश्व प्राचीरों के उस पार भाग चले। ११५-११८

11 इळङ्कादलर्

शान्दन् तोय्न्द एन्दुइळ वन्नमुलै
मैत्तडङ् कण्णार् मैन्दर् तम्मुडन्
शॆप्पुवाय् अविळ्न्द तेम्बॊदि नरुविरै
नरुमलर् अविळ्न्द नारिरु मुच्चित्
तुरुमलर्प् पिणैयल् शॊरिन्द पून्दुहळ्
कुङ्गुमम् ॲळुदिय कॊङ्गै मुन्निल्
पॆङ्गाळ् आरम् परिन्दन्न परन्द
तूमॆन् शेक्कैत् तुन्निप्पदम् पाराक्
कामक् कळ्ळाट्टु अडङ्गिनर् मयङ्गत् 119-127

११ तरुण दम्पति

(इस हाहाकार के बीच में ही) चन्दन चर्चित उन्नत, तरुण तथा मनोरम उरोजों के साथ, विशाल कजरारी आँखों वाली तरुणियाँ पर्यंक पर बेसुध पड़ी थीं। उस सेज पर खुली डिबिया के समान विकसित मधुपूर्ण सुगन्धित मालाओं से सुगन्धित उनके केश से फूल और कुंकुम लिप्त उरोज तटों से मोती-माला के श्रेष्ठ मोती गिरे पड़े थे। उस सेज पर पड़ी वे नारियाँ अपने पतियों का पैर और काम-मद्य-पान-सुख भूले पड़ी रहीं। ११९-१२७

12 तायुम् पुदल्वरुम्

तिदलै अल्हुल् तेङ्गमऴ् कुऴलियर्
कुदलैच् चॅव्वाय्क् कुरुनडैप् पुदल्वरोडु
पञ्जि आर् अमळियिल् तुञ्जु तुयिल् ॲडुप्पि
वाऩरैक् कून्दल् महळि रोडु पोद; 128-131

१२ माता तथा संतानें

श्वेत धारियों सहित कटि प्रदेश और सुगन्धित केश के साथ शोभायमान स्त्रियाँ तुतलाती बोली वाले तथा मन्द-मन्द चलने वाले अपने बच्चों को रुई की सेज पर से, नींद से जगाकर, उठाकर लेते हुए पके केशवाली वृद्धा नारियों के पास गयी और उनके साथ चल दी। १२८-१३१

13 मुदु पॅण्डिर् एत्तित्तर्

वरुविरुन्दु ओम्बि मऩैयऱम् मुट्टाप्
पॅरुमऩैक् किऴत्तियर् पॅरुमहिऴ्वु ॲय्दि
इलङ्गु पूण् मार्बिऩ् कणवऩै इऴन्दु
शिलम्बिऩ् वॅऩ्ऱ् शेयिऴै नङ्गै
कॊङ्गैप् पूशल् कॊडिदो अऩ्ऱु ॲऩप्
पॊङ्गेरि वाऩवऩ् तॊऴुदऩर् एत्तित्तर् 132-137

१३ वृद्धा स्त्रियों ने स्तुति की

आगत अतिथियों का सत्कार करके गार्हस्थ्य धर्म से जो कभी च्युत नहीं होती थीं वे गृहिणियाँ बहुत खुश हुईं। "आभरण के साथ शोभने वाले वक्ष के अपने पति को खोकर उसका बदला श्रेष्ठ आभरण भूषिता ने अपने नूपुर के द्वारा ले लिया और "पाण्डियन्" को जीत लिया। इसका अपने उरोज के

जरिये किया गया काम क्रूर है ? नहीं।" (उन्होंने आग का स्वागत किया और) दाहक व्योमवासी अग्नि देव की स्तुति की —महिमा गायी। १३२-१३७

14 नडत्त मादर् वरुत्तम्

अॆण्णान्गु इरट्टि इरुङ्गलै पयिन्नर्
पण्इयल् मडन्दैयर् पयङ्गॆळु वीदित्
तण्णुमै मुळवम् ताळ्तरु तीङ्गुळल्
पण्णुक् किळै पयिरुम् पण्णि याळ्प् पाणियॊडु
नाडह मडन् दैयर् आडरङ्गु इळन्दु आङ्गु
'अॆन्नाट्टाळ् कॊल् ? यार्महळ् कॊल्लो ?
इन्नाट्टु इव्वूर् इऱैवत्तै इळन्दु
तेरा मन्नतैच् चिलम्बिन् वॆन्ऱु इव्
ऊर् ती ऊट्टिय ऒरु महळ् अॆन्न 138-146

१४ नर्तकी स्त्रियों का दुख

आठ के चार के दो (चौसठ) श्रेष्ठ कलाओं में अभ्यस्त कुशल नर्तकियों, जो गान विद्या में निपुण थी, की वीथी में मृदंग, पखावज मधुर स्वर वाली मुरली, राग-उत्पादक वादन योग्य याळ्, ताल-इत्यादि के साथ नर्तकियों ने रंगमंच भी खो दिया। (वे खीझ के साथ पूछने लगी।)" यह किस देश की है ? किसकी पुत्री है ? इस देश के इस पुर में अपने पति को खोकर अविवेकी राजा को अपने नूपुर के मिस जीत लेकर इस पुर में आग लगा देने वाली एक विलक्षण महिला !" ऐसा कहकर वे विस्मय-भयाविभूत हो रहीं। १३८-१४६

15 मालै ओय्न्दु किडन्दद्दु

अन्दि विळक्कुम् आरण ओदैयुम्
शॆन्दी वेट्टलुम् दॆय्वम् परवलुम्
मनैविळक्कु कुऱुत्तलुम् मालै अयर्दलुम्
वळङ्गु कुरल् मुरशमुम् मडिन्द मानगर् 147-150

१५ संध्या निर्जीव रही

संध्याकाल में होने वाला संध्या का उत्सव, वेदपारायण का नाद, पवित्र अग्निहोत्र, ईश्वर की पूजा, घरों में दीप प्रज्वलन, संध्या लीलाएँ, मृदंग-नाद इत्यादि सब उस पुर में शून्य हो रहे। (संध्या मरी-सी दिखी।) १४७-१५०

16 मदुरै मार्तॅय्वम्

कादलऱ् कॅडुत्त नोयॊडु उळङ्गत्तन्ऱु
ऊदुउलैक् कुरुहित्त उयिर्त् तत्तळ्; उयिर्त्तु
मऱुहिडै मऱुहुम् कवलैयिऱ् कवलुम्
इयङ्गलुम् इयङ्गुम् मयङ्गलुम् मयङ्गुम्
आरञर् उऱ्ऱ वीरपत् तिनि मुन्
कॊन्दळल् वॆम्मैक् कूर्ऍरि पॊऱ्ऱाअळ्
वन्दु तोन्ऱित्तळ् मदुरापदि-ऍन्न 151-157

१६ मदुरै की महती देवी

पति हीनता के दुख में घुलकर कण्णहि भाथी की चोंगी की तरह सांस छोड़ने लगी। साँसे छोड़ती हुई वह वीथी में आपा खोकर घूमने लगी। कही खड़ी हो जाती। वहाँ खड़ी होकर चिन्ता में तड़पती। फिर चलने लगती। कही चकित खड़ी रहती। इस तरह दुख मग्न उस वीर-पत्नी के सामने, जलती ज्वाला की तीक्ष्ण गर्मी को जो नहीं सह सकी वह मदुरै की देवी आ प्रत्यक्ष हुई। १५१-१५७

17 वॆण्पा

मामहळुम् ना महळुम् मा मयिडन् शॆऱ्ऱुहन्व
कोमहळुम् ताम् पडैत्त कॊऱ्ऱत्ताळ्;—नाम
मुदिरा मुलैकुऱैत्ताल्; मुन्नरे वन्दाळ्;
मदुरा पदि ऍन्नुम् मादु 158-161

१७ वॆण् बा

सागर-सुता, कला-सुता और महिषासुरमर्दनी हिमालय सुता-तीनों ने मिलकर विजय प्राप्त की हो, ऐसी महान विजय जिसने प्राप्त की थी; और जिसने भय उत्पन्न करते हुए अपने तरुण कुच को नोच फेका था उसके सामने मदुरापदि नाम की देवी आयी। १५८-१६१

23 कट्टुरै कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 मदुरा पदि

शडैयुम् पिऱैयुम् ताळ्न्द शॆन्निक्
कुवळै उण्कण् तवळवाळ् मुहत्ति
कडै ऎयिऱु अरुम्बिय पवळच्चॆव् वायत्ति;
इडैनिला विरिन्द नित्तिल नहैत्ति
इडमरुङ्गु इरुण्ड नीलम् आयिनुम्
वल मरुङ्गु पॊन्निऱम् पुरैयुम् मेनियळ्
इडक्कै पॊलम्बून् दामरै एन्दिनुम्
वलक्कै अम् शुडर्क् कॊडुवाळ् पिडित्तोळ्
वलक्काल् पुनैकळल् कट्टिनुम् इडक्काल्
तनिच् चिलम्बु अरऱ्ऱुम् तहैमैयळ्; पनित् तुऱैक्
कॊऱ्ऱैक् कॊणगन् कुमरित् तुऱैवन्
पॊऱ्कोट्टु वरम्बन् पॊदियिऱ् पॊरुप्पन्
कुलमुदऱ् किळत्ति; आदलिन् अलमन्दु
ऒरुमुलै कुऱैत्त तिरुमा पत्तिनि
आलमरु तिरुमुहत्तु आयिळै नङ्गैतन्
मुन्निलै ईयाळ् पिन्निलै तोन्ऱिक्
कॆट्टिशिन् वाळि नङ्गै ! ऎन्कुऱै ऎन 1–17

२३ व्याख्यान गाथा

१ मदुरापदि

(मदुरै की अधिष्ठात्री देवी मदुरापदि का वर्णन)

लटकती जटा तथा बालचन्द्र से भूषित सिरवाली; 'कुवळै'' के समान और काजलरंजित आँखोवाली; गौर मुखवाली; दष्ट्रशोभित प्रवालाधरा; कौमुदी-जनित मुक्ता हासिनी थी वह देवी। इस देवी के शरीर का वाम भाग निविड नीला था; दक्षिण भाग स्वर्णवर्ण था। वाम हस्त उज्वल कमलपुष्प धारण करता था; पर दक्षिण हस्त से वह मनोरम ज्वलंत प्रभा से युक्त भयंकर खड्ग पकडे थी। दाये पैर मे चित्रमय वीर कटक था। पर वाम चरण में नूपुर झनक-झनक करता था। वह समुद्रतटीय "कॊऱ्ऱै" नगर का

पति, 'कुमरि' घाट का स्वामी, स्वर्णिम मेरु को अपने राज्य की उत्तरी सीमा बनाये रखनेवाला और "पॅदियिल्" (नामक) पर्वत के प्रदेश का पति, पांडिय राजा के वंश की आदि कुलदेवी थी। वह उस महीयसी पत्नी देवी कण्णहि के सामने नहीं पर पीछे से प्रकट हुई; जिसने दुख के आवेश में एक स्तन को त्याग दिया और जिसका मुख भाव दुख के कारण विकृत हुआ था। देवी ने उसके पीछे से प्रकट होकर कहा—हे श्रेष्ठ नारी ! सुनो मेरी बात ; अच्छा होगा। जीती रहोगी। कहो क्या कष्ट है ? १-१७

2 नी अऱिवायो ?

वाट्टिय तिरुमुहम् वलवयिऱ् कोट्टि
'यारै नी ऍन्पिन् वरुवोय् ?' ऍन्ऱुडै
आर् अऩर् ऍव्वम् अऱिदियो ?' ऍन 18-20

२ तुम जानती हो क्या

(कण्णहि —बोली) म्लान मुख को दाहिनी तरफ़ झुकाते हुए मेरे पीछे-पीछे आ रही तुम कौन हो ? मेरा दुखड़े का समाचार कुछ भी जानती हो क्या ? ऐसा पूछने पर (मदुरापदि ने उत्तर दिया)। १८-२०

3 केळाय् पॅण्णे !

'आर् अऩर् ऍव्वम् अऱिनुदेन् अणि इळाअय् !
मा पॅरुङ् कूडल् मदुरापदि ऍन्बेन्
कट्टुरै याट्टियेन् यान् निन् कणवऱ्कुप्
पट्ट कवऱ्चियेन् पॅनुदॊडि केट्टि;
पॅरुनुदहैप् पॅण् ! ऑन्ऱु केळाय्, ऍन्नॅञ्जम्
वरुनुदिप् पुलम् बुरु नोय्
तोळी ! नी ईदॊन्ऱु केट्टि अँङ्को महऱ्कु
ऊळवित्तै वनुदक् कडै;
मादराय् ईदु ऑन्ऱु केळ् उन् कणवऱ्कुत्
तीदुऱ वनुद वित्तै कादिल्
मऱैना ओशै अल्लदु यावदुम्
मणिना ओशै केट्टदुम् इलन्;
अडितॊळुदु इऱैञ्जा मन्नर् अल्लदु
कुडिपळि तूऱ्ऱुम् कोलनुम् अल्लन् 21-34

३ सुनो बाला !

"तुम पर बीते कष्ट का हाल मैने जान लिया है। हे सुन्दर आभरण भूषिते ! मैं अतिविशाल 'मदुरै' पुर की (देवी) मदुरापदि कहाती हूँ। (कुछ बातों का) निबन्ध सुनानेवाली हूँ। मैं भी तुम्हारे पति की बात को लेकर दुःखिनी रहनेवाली हूँ। हे चटकीले आभरणधारिणी ! सुनो ! हे गरिमायुक्त रमणी ! एक बात सुनो ! मेरा मन जिसको लेकर विलाप रहा है वह (कष्ट-) रोग सुनो। हे सखी ! तुम यह एक बात सुनो ! —मेरे राजा पर घटित पूर्व-कर्म-फल का हाल ! हे ! नारीमणि ! और एक बात यह भी सुनो— तुम्हारे पति पर हानि लाते हुए आये तुम्हारे पूर्व-कर्म को ! (मेरा राजा) अपने कानो से वेदपारायण करनेवाली जिह्वा के स्वर को छोड़कर (न्याय मांगने हेतु बजने वाले) घण्टे की ध्वनि कभी भी सुननेवाला नही था। वह ऐसा दण्डधर था कि अपने पैरों पर गिरे वैरी राजाओं के ईर्ष्याजनित निंदा के वचन चाहे सुने हों पर अपनी ही प्रजा के ही अपराधारोपण के वचन उसने कभी नहीं सुने। वह कुशासन-दण्ड-धर नहीं था। २१-३४

4 पाण्डियरिन् पॅरुमै

इन्नुतुङ् केट्टि; नन्नुतुदल् मडन् दैयर्
मडङ्गॉळ् नोक्किन् मदमुहम् तिऱप्पुण्डु
इडङ्गळि नॅञ्जतु इळमै यानै
कल्विप् पाहन् कैयहप् पडाअदु
ऑल्हा उळ्ळतु ओडुम् आयितुम्
ऑळुक्कॉडु पुणरन् दविव् विळुक्कुडिप् पिऱन् दोर्क्कु
इळुक्कम् तारादु; इदुवुम् केट्टि 35–41

४ "पाण्डिय" की महिमा

"और भी सुनो ! (साधारण तौर पर) लतीफ़ भालवाली सुन्दरियों की चित्ताकर्षक दृष्टि से युवाओं की कामेच्छा का मुख (ढँकन) खुल जाता है। सीमा का उल्लंघन करके जवानी का हाथी विद्यारूपी महावत के अंकुश में नही आता और काबू तोड़कर भागता है। लेकिन सुशील आचरण से अभ्यस्त इस श्रेष्ठ कुल के लोगों में (युवावस्था की) यह हीनता नहीं पायी जाती है। यह भी सुनो— ३५-४१

5 कै तुणिन्द पाण्डियन्

उदवा वाऴ्क्कैक् कीरन्दै मत्तैवि
पुदवक् कदवम् पुडैत्तनन् ऑरु नाळ्
'अरैश वेलि अल्लदु यावदुम्
पुरैतीर् वेलि इल्' ॲन मॊऴिन्दु
मन्नर्त्तु इरुत्तिच् चॆन्ऱोर्, अव्वऴि
इन्नरव् वेलि कावा दो? ॲनच्
चॆविच् चूट्टु आणियिन्; पुहै अऴल् पॊत्ति
नॆञ्जम् शुडुदलिन् अन्जि नडुक्कुरूउ
वच्चिरत तडक्कै अमरर् कोमान्
उच्चिप् पॊन्मुडि ऑळिवळै उडैत्त कै
कुरैत्त शॆङ्गोल् कुरैयाक् कॊऱ्ऱत्तु
इऱैक्कुडिप् पिऱन्दोर्क्कु इऴुक्कम् इन्मै 42–53

५ खण्डित हस्त पाण्डियन्

(यह भी सुनो!) कीरन्दै की पत्नी अरक्षित (या दरिद्रता के कारण अनुपकारिणी) रही। (कीरन्दै तीर्थाटन करने चला गया था) वह जाते वक्त कह गया था कि तुम पाण्डियन् के शासन में अपने को अनाथ मत मानो। राजा तब वेश बदलकर नगर परीक्षण के लिये आया था। उसने यह कथन सुन लिया। वह अप्रत्यक्ष तौर से उस स्त्री की रक्षा करता था। एक रात वह उस घर के द्वार पर आया। पति आ गया था। राजा को मालूम नहीं था। राजा ने अंदर पुरुष-स्त्री का संवाद सुना तो (संदेह के मारे) राजा ने द्वार खटखटाया। यह सुनकर कोरन्दै की पत्नी ने कहा—तुम मुझे यह कहकर घर में छोड़ गये थे कि राज-संरक्षण की बाड से बढ़कर सुरक्षा गढ़ और कुछ नहीं है। आज तो क्या वह गढ़ सुरक्षा नहीं दे पाया? वह बात राजा के कान मे तपते लोहे (कील) के समान घुसी। वह डर गया। काप गया। विशाल वज्र-पाणी सुरेंद्र के सिर पर धृत स्वर्ण किरीट के वलय के भजक अपने हाथ को ही उसने काट कर दूर कर दिया। ऐसे न्यायपूर्ण राजदड धर (शासक) और विजयी राजा के कुल में जन्मे हुए राजाओं में कोई गिनता नहीं रही। यह तुम जान लो।४२-५३

6 पराशरन् कदै

इन्नुङ् केट्टि! नन्नवाय् आहुदल्
पॆरुळ् जोरु पयन्द तिरुनुवेल् तडक्कै

तिरुनिलै पॅट्र पॅरुनाळ् इरुक्कै
अरत्तुरै शॅङ्गोल् मरत्तुरै नॅडुवाळ्
पुरवु निरै पुक्कोन् करवै मुरै शॅय्दोन्;
पूम्बुत्तल् पळ्ळप् पुहार् नहर् वेन्दन्
ताङ्गा विळैयुळ् नन्नाडु अदन्नुळ्
वलवैप् पार्प्पान् पराशरन् ऍन्बोन्
कुलवु वेर् चेरन् कॉडैत् तिरम् केट्टु
"वण्डमिळ् मरैयोर्क्कु वान्उरै कॉडुत्त
तिण्डिरल् नॅडुवेर् चेरलन् काणगु ऍन्क्
काडुम् नाडुम् ऊरुम् पोहि
नीडुनिलै मलयम् पिर्पडच् चॅन्रु आङ्गु 54-66

६ पराशरन् की कथा

"और भी सुनो, कल्याणकारी सत्य बात है। बहुत परिमाण में जिस (शेरलादन्--शेर राजा ने) अन्न (पांडव और कौरव सेना को) खिलाया था वह सुनिर्मित शक्ति धर और धनधान्य समृद्ध श्रीसंपन्न शेरन् राजा एक दिन राजदरवार में विराज रहा था (तव एक विप्र आया) वह उस पुहार् नगर का था जिस के राजा लोग धर्मनिष्ठ शासक थे। और उनकी तलवार वीरता-पूर्ण कार्य में लगी रहती थी। उनमें एक (राजा शिबि) अपने शरणागत कबूतर के वजन के वराबर मॉस (चील को) देने के लिए तुला पर चढ़ा था। और एक ने (अपने पुत्र को रथ के नीचे डालकर) मरवाकर अपने वछड़े को खोकर दुःखिनी बनी गाय का न्याय किया था। वह पुहार् देश जल और खेतों से पूर्ण था और वहाँ अमित उपज होती थी। उस पुहार् नगर के उस बहुत ही ज्ञानी पराशर नामक ब्राह्मण ने सशक्त शक्तिधर शेरन् की दानशीलता सुनी। सुसमृद्ध वेदों का ज्ञान रखने वाले तमिळ पडितो को अत्यधिक दान देने वाले, और सबल शक्ति रखने वाले शेरन् से जाकर भेट करूंगा। यह संकल्प करके वह निर्जन वनों, सजन प्रदेशों और बस्तियों को पार करके अत्युन्नत पर्वत (पॉदियै) को भी पीछे छोड़कर आगे उसके देश में पहुँचा। ५४-६६

7 परिशु पॅट्रुत् तिरुम्बिन्नान्

ऑन्रु पुरि कॉळ्है इरु पिरप् पाळर्
मुत्तीच् चॅल्वत्तु नान्मरै मुट्रि;

ऐम्पॆरु वेऴ्वियुम् शॆय्तॊऴिल् ओम्बुम्
अऱुतॊऴिल् अन्दणर् पॆरुमुऱै वहुक्क
नावलम् कॊण्डु नण्णार् ओट्टि
पार्प्पन पाहै शूडि एऱ्पुऱ
नन्कलम् कॊण्डु तन्पदिप् पॆयर्वोन् 67–73

७ पुरस्कार पाकर लौटा

वे ब्राह्मण लोग एक(मुक्ति का) लक्ष्य रखने वाले, दो जन्म वाले (द्विज); तीन (आहवनीय, गार्हपत्य तथा दक्षिणाग्नि) अग्नियों के होता; चार वेदों के ज्ञाता; पंच महायज्ञ कर्त्ता; (ब्रह्म, देव, ऋषि; पितृ; भूत (पातृ यज्ञ) और अपने लिये निर्दिष्ट (यजन, याम, वेद पठन, पाठन, दान का ग्रहण और दान-इत्यादि) छहो कर्मों का पालन करने वाले थे। वह पराशर भी ऐसा ही ब्राह्मण था। उनकी ही दान-ग्रहण रीति अपनाकर उसने राजा की सभा में अपने तर्क ज्ञान के बल अपनी वाक्शक्ति से विपक्षियों को पलायित बना दिया। विजेता उसे उसकी योग्यता के अनुरूप अच्छे अच्छे आभरण पुरस्कार रूप मिले। वह उन्हे लेकर अपने गांव जा रहा था। ६७-७३

8 तिरुत्तङ्गाल् शेर्न्दान्

शॆङ्गोल् तॆन्नन् तिरुन्दुतॊऴिल् मऱैयवर्
तङ्काल् ॲन्बदु ऊरे; अव्वूर्प्
पाशिलै पॊदुळिय पोदि मन्ऱत्तुत्
तण्डे कुण्डिहै वॆण्कुडै काट्टम्
पण्डच् चिऱु पॊदि पावक् काप्पॊडु
कळैन्दनन् इरुप्पोन् कावल् वॆण्कुडै 74–79

८ तिरुत्तङ्गाल पहुँचा

(वह रास्ते में तिरुत्ङ्गाल् क्षेत्र मे आया) तिरुत्तङ्गल् ऋजु-राजदंड दक्षिण पति के वैदिक-कर्म-पुरोहित ब्राह्मणों का (पंचग्रामी) वास स्थान था। उस पुर में हरे पत्तों से भरे पीपल पेड़ की छाया में रहे एक मंडप में ठहरा। अपना दण्ड, कमण्डल, सफेद छत्र (शायद ताल-पत्र-निर्मित था) समिधा, वस्तुओं की गठड़ी और पादरक्षाओं को एक ओर रखकर वह विश्राम करने लगा। (प्रजा रक्षक श्वेत छत्र) ७४-७९

9 शेरत्तै वाळ्त्तितन्न

विळैन्दु मुदिर् कॊट्रत्तु विट्रलोन् वाळि !
कडट्कडम्बु ऍरिन्द कावलन् वाळि !
विडर्च्चिलै पॊरित्त वेन्दन् वाळि !
पून्दण् पॊरुनैप् पॊरैयन् वाळि !
मान्दरञ् जेरल् मन्नवन् वाळ्ह !" ऍन्नक् 80–84

९ शेरन्न की जय गायी ।

"प्रजा रक्षक श्वेत छत्र, और बढ़कर पक्की बनी रही विजय शीलता से युक्त वीर राजा की जय हो ! (वे जीते रहें ।)समुद्र में जिन्होंने 'कडम्बर्' लोगों के छक्के छुड़ाये वे राजा जीते रहें । बहुत महिमामय हिमय पर्वत पर जिन्होंने धनुष को अंकित किया वे राजा जीते रहें । शीतल धारा वाली 'आन्पॊरुनै' (ताम्रपर्णी) नदी के (प्रदेश के) स्वामी "पॊरैयन्" जीते रहें । मान्दरञ जेरल् इरुम् पॊरै (नाम के ये राजा) जीते रहें । ऐसा वह शेरन्न का जयगान कर रहा था । ८०-८४

10 शिरुवर् शॆयल् !

कुळ्ळुम् कुडुमियुम् मळलैच् चॆव्वायुम्
तळर् नडै आयत्तु तमर् मुदल् नीङ्गि
विळैयाडु शिरारर् ऍल्लाम् शूळ्तरक्
कुण्डप् पार्प्पीर् ऍन्नोडु ओदि ऍन्न
पण्डच् चिरुपोदि कॊण्डुपो मिन्न ऍन्नच् 85–89

१० बालकों का कृत्य

तब, अलक, चोटी, तुतलाता अरुण मुख, तथा लड़खड़ाती चाल-वाले कुछ बालक, अपने घरों से बाहर आकर वहाँ खेल रहे थे । उन्होंने उसे घेर लिया । (पराशर ने उनको देखकर कहा कि) हे बालक ब्रह्मचारियो ! मेरे साथ वेद का पारायण करो और (पुरस्कार में) यह (अमूल्य) वस्तुओं की गठरी ले जाओ । ८५-८९

11 वार्त्तिहन्न पुदल्वन्न

शीर्त्तहु शिरप्पिन्न वार्त्तिहन्न पुदल्वन्न
आलमर् शॆल्वन्न पॆयर् कॊण्डु वळर्न्दोन्न

पाल्नाऱु शॆव्वाय्प् पडियोर् मुन्नरत्
तळर्ना वायितुम् मऱैविळि वळाअदु
उळमलि उवहै योडु ऒप्प ओदत्
तक्किणन् तन्नै मिक्कोन् वियन्दु
मुत्तप् पूणूल् अत्तहु पुनै कलम्
कडहम् तोट्टोडु कैयुऱै ईत्तुत्
तन्पदिप् पॆयर्न्द तग्राह नन्कलन् 90–98

११ वार्तिहन् का पुत्र

असामान्य रूप से श्रेष्ठ, वार्तिहन् का पुत्र उस समूह में था। वह वरगद के वृक्ष के नीचे विराजमान ईश्वर, दक्षिणा मूर्ति के नाम से पल रहा था। वह दुधमुँहा वालक था उसकी बोली स्पष्ट नहीं थी। तो भी वेद मंत्रोच्चारण में गलती नही करता था। अपने आंतरिक सुख के साथ पराशर के ही समान वेदमंत्र दुहराया। उस दक्षिणामूर्ति से वेद-ज्ञान वृद्ध पराशर वहुत खुश हुआ और मोती का यज्ञोपवीत, वैसे ही अन्य आभरण, कंकण, कर्णफूल आदि को पुरस्कार के रूप में देकर अपने गाँव की ओर चला। (अच्छे आभरण)। ९०-९८

12 कळवो इदु ?

पुनैववुम् पूण्ववुम् पॊऱाअ राहि;
वार्त्तिहन् तन्नैक् कात्तत्तर् ओम्बिक्
कोत् तॊऴिल् इळैयवर् कोमुऱै अन्ऱिप्
"पडुपॊरुळ् वौविय पार्प्पान् इवन् ऎन
इडुशिऱैक् कोट्टत्तु इट्टनराह; 99–103

१२ यह चोरी का माल है ?

उसे अच्छे आभरण मिले। उनमें पहनने योग्य भी थे धारण करने योग्य भी। (गाँव के लोग) इसे सह नही सके और 'वार्तिहन्' पर निगरानी रखने लगे। राजकार्यों में नौसिखुए कुछ युवक वीरों ने राज (दंड) नीति को तोड़कर (यह मानते हुए कि) राजा के माल को चुरानेवाला है यह ब्राह्मण, यह मानकर उसे चोरों के योग्य कारागृह में वंद कर दिया। ९९-१०३

13 वार्त्तिहन्न मन्नैवि

वार्त्तिहन्न मन्नैवि कार्त्तिहै ऍन्नवोळ्
अलन्दन्नळ् एङ्गि अळुदन्नळ् निलत्तिल्
पुलन्दन्नळ् पुरण्डन्नळ् पोङ्गित्तळ् अडुकण्डु
मैयरु शिरप्पिन्न ऐयै कोयिल्
शॅय्विन्नैक् कदवम् तिरवा दाहलिन्न 104-108

१३ वार्त्तिहन्न की पत्नी

वार्त्तिहन्न की पत्नी, जिसका नाम कार्त्तिहै था, बहुत व्याकुल हुई; तिलमिलायी, रोयी। भूमि पर गिरी और लोटी। बिफर उठी। उसका दुख देखकर निर्दोष महिमायुक्त "ऐयै" देवी के मंदिर का सुनिर्मित कपाट बंद रह गया। (वह खोले नहीं खुलता था।) १०४-१०८

14 कॊर्रवै कोयिर् कदवु

तिरवादु अडैत्त तिण्णिलैक् कदवम्
मरवेल् मन्नवन्न केट्टनन्न मयङ्गिक्
कॊडुङ् गोल् उण्डु कॊल् ? कॊर्रवैक् कुर्र
इडुमबै यावदुम् अरिन्दीमिन् ऍन्न
एवल् इळैयवर् कावलन्न तॊळुदु
वार्त्तिहर् कॊणर्न्द वाय्मॊळि उरैप्प 109-114

१४ कॊर्रवै के मंदिर का किवाड़

किवाड़ नही खुलता था। सुदृढ़ रूप मे बंद कपाट का समाचार वीर शक्तिधर राजा ने सुना तो वह भ्रमित हो गया। उसने अपने आदमियों से कहा कि क्या राजदण्ड कुछ अत्याचारी हो गया है। कॊर्रवै देवी के प्रति क्या अपराध हो गया ? उनका क्या दुख है ? पता लगाकर बताओ। उन तरुण आज्ञाकारी वीरों ने आकर वार्त्तिहन्न के (कारागार मे) डाले जाने की बात कही। १०९-११४

15 वार्त्तिहन्न परिशु पॆर्रान्न

"नीर्त्तन्नरु इडु" ऍन्न नॆडु मॊळि कूरि
"अरिया माक्कळिन्न मुरैनिलै तिरिन्दवॆन्न

इऱैमुऱै पिऴैत्तदु; पॊऱुत्तलुनुम् कडन्न् ॲन्नत्
तडम् पुनल् कऴनित् तङ्गाल् तन्नुडन्न्
मडङ्गा विऴैयुऴ् वयलूर् नल्हिक्
कार्त्तिहै कणवन्न् वार्त्तिहन्न् मुन्नर्
इरुनिल मडन्दैक्कुत् तिरुमार्बु नल्हि अवऴ्
तणिया वेट्कैयुम् शिऱिदु तणित्तु तन्नते;
निलैक्कोऴु कूडल् नीऴ्नॆडु मऱुहिन्न्
मलैपुरै माडम् ऒङ्गणुम् केट्पक्
कलैयमर् शॆल्वि कदवम् तिऱ्न्ददु 115-125

१५ वार्त्तिहन्न् ने पुरस्कार पाया

राजा ने उन्हें धर्म समझाया कि यह उचित नही है। फिर वार्त्तिहन्न् को रिहा करके उससे क्षमा याचना की कि बुद्धिहीन लोगों के अनुचित व्यवहार से मेरा शासन-क्रम कलंकित हो गया; क्षमा करना आपकी शोभा होगा। फिर विशाल जलाशयों और खेतों से भरे तिरुत्तङ्गाल् के अलावा अक्षय उपज वाला "वयलूर्" भी देकर पुरस्कृत किया। फिर कार्त्तिहै और उसके पति वार्त्तिहन्न् के सामने ही वड़ी भू देवी को अपना श्री वक्ष प्रदान करके (दण्डवत् करके) उसकी अदम्य चाह को थोड़ा शॉत किया। तव स्थायी रूप से सौभाग्यपूर्ण कूडल नगर की लंवी वीथियों के सभी पर्वतोपम प्रासादों (में रहनेवालों) के कानो मे पड़े ऐसी उच्च ध्वनि के साथ हिरनारूढ़ा (या सिहारूढ़ा) देवी के मदिर का कपाट पट् से खुल गया। ११५-१२५

16 पऱै अऱैन्दत्तर्

"शिऱैप्पडु कोट्टम् शीमिन्न् यावदुम्
कऱैप्पडु माक्कऴ् कऱैवीडु शॆय्म्मिन्न्;
इडु पॊरुऴ् आयिनुम् पडु पॊरुऴ् आयिनुम्
उऱ्र्वर्क्कु उऱुदि पॆऱ्ऱ वर्क्कु आम् ॲन्न
यान्ने अरुत्तत्तु अणि मुरशु इरीइक्
कोन्नमुऱै अऱैन्द कॊऱ्ऱ वेन्दन्न्
तान्नमुऱै पिऴैत्त तहुदियुम् केऴ्नी; 126-132

१६ ढोल पिटवाया गया

(राजा ने ढिढोरा पिटवाया :) कारागारों को खोल दो। अपराधी हों तो उनका अपराध माफ़ किया जाय। गड़ा हुआ धन हो या कमाया हुआ धन हो वह जिसको मिला हो उसी का हो जाय! —ऐसे गज पर सुघड़ ढोल रखवाकर राजाज्ञा के रूप में ढिंढोरा पिटवाया। ऐसे अच्छे राजा ने अब यह अपराध क्यों किया उसका हाल भी सुन लो। १२६-१३२

17 पऴैय शॊल् उळदु

"आडित् तिङ्गळ् पेरिरुट् पक्कत्तु
अऴल्शेर् कुट्टत्तु अट्टमि ञान्ऱु
वॆळ्ळि वारत्तु ऒळ्ळॆरि उण्ण
उरैशाल् मदुरै योडु अरैशु केडुरुम् ॲतुम्
उरैयुम् उण्डे निरैतॊडि योये 133–137

१७ पुरानी वाणी है

"जेठ महीने के कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि के साथ कातिक नक्षत्र का अंश जब मिलेगा तब उस शुक्रवार के दिन इस नगर को अग्नि खा जायगा। और प्रकीर्तित मदुरै और राजा दोनों नष्ट हो जायँगे। ऐसी एक वाणी पहले से है। हे कंकण-पंक्ति-भूषिते। १३३-१३७

18 मुऱ्पिऱप्पुच् चॆय्दि

कडि पॊऴिल् उडुत्त कलिङ्ग नल् नाट्टु
वडिवेल् तडक्कै वशुवुम् कुमरनुम्,
तीम्बुनल् पऴनच् चिङ्ग पुरत्तिनुम्
काम्बुमॆऴु कान्नक् कबिल पुत्तिरनुम्
अरैशाळ् शॆल् वत्तु निरैतार् वेन्दर्
वीयात् तिरुविन् विऴुक्कुडिप् पिऱन्द
ताय वेन्दर् तम्मुट् पहैयुऱ
इरुमुक् कावदत्तु इडैनिलत्तु याङ्गणुम्
शॆरुवल् वॆन्ऱियिन् शॆल्वोर् इन्मैयिन्
अरुम् पॊरुळ् वेट्कैयिन् पॆरुङ्गलन् शुमन्दु
करन्दुऱै माक्कळिऱ् कादलि तन्नॊडु
शिङ्गा वण् पुहळ्च् चिङ्ग पुरत्तिन्ओर्

अङ्गाडिप् पट्टु अरुङ्गलन् पहरुम्
शङ्गमन् ॲन्नुम् वाणिहन् तन्नै
मुन्दैप् पिऱप्पिल् पैन्दोडि ! कणवन्
वॆन्दिऱल् वेन्दर्क्कुक् कोत्तोऴिल् शॆय्वोन्
परदन् ॲन्नुम् पॆयरन् अक् कोवलन्
विरदम् नीङ्गिय वॆऱुप्पिनन् आदलिन्
ऒऱ्ऱन् इवन् ॲनप् पऱ्ऱिनन् कॊण्डु
वॆऱ्ऱि वेल् मन्नर्क्कुक् काट्टिक् कॊल् वऴिक्
कॊलैक्कळप् पट्ट शङ्गमन् मनैवि
निलैक्कळङ् गाणाळ् नीलि ॲन्बोळ्
'अरशर् मुऱैयो ? परदर् मुऱैयो ?
ऊरीर् मुऱैयो ? शेरियीर् मुऱैयो ? ॲन
मन्ऱिनुम् मऱुहिनुम् शॆन्ऱनळ् पूशलिट्टु
ॲऴुनाळ् इरट्टि ॲल्लै शॆन्ऱपिन्
"तॊऴुनाळ् इदु" ॲनत् तोन्ऱ वाऴ्त्ति
मलैत्तलै एऱि ओर् माल् विशुम्बु एणियिल्
कॊलैत्तलै महनैक् कूडुबु निन्ऱोळ्
"ॲम्मुऱु तुयरम् शॆय्दोर् यावदुम्
तम्मुऱु तुयरम् इऱ् ऱाहुह" ॲन्ऱे
विऴुवोळ् इट्ट वऴुविल् शावम्
पट्टनिर् आदलिन् कट्टुरै केळ्नी; 138–170

१८ पूर्वजन्म की बात

मधुर गधमय उपवनों से घिरे कलिग के अच्छे देश मे सुंदर वेल् रखने वाले वसु और कुमरन् क्रमश: मधुर-जल-समृद्ध "सिंगपुरम्" और वंशीवन समृद्ध 'कपिलपुरम्, में रहते थे। दोनों राज्यश्री के हारालकृत स्वामी राजा थे। और दोनों अक्षय श्रीयुक्त उच्च कुल-जात दायाद थे। दोनों में वैर हो गया। इसलिए बीच के (दो के तीन) छः कोस की भूमि में परस्पर जीतने की इच्छा से वे युद्ध कर रहे थे। अत: उस प्रदेश में कोई आता जाता नही था।

बहुमूल्य धन की चाह में, अनेक आभरणों को लेता हुआ अपने देश को छोड़कर छिपे-छिपे जानेवाले लोगों में मिलकर अपनी प्रिया के साथ अमिट

तथा पुष्ट यश वाले सिंगपुरम में आया (कपिलपुरम् का एक वणिक) संगमन्न। वह बाजार में अपने अमूल्य आभरणो को बेचने लगा। वहाँ, हे चमकदार चूडी-धारिणी ! तुम्हारा पूर्व जन्म का पति वहाँ के भयंकर वीरता वाले राजा का नौकर था। उसका नाम परदन्न था। उस कोवलन्न ने, जो धर्म विरोधी और कपिलपुरम् वालों से घृणा करनेवाला था, संगमन्न को 'जासूस' कहकर पकड़वाया और विजय शक्तिधर राजा को दिखाकर वध करवा दिया। वध भूमि में हत हुए संगमन्न की पत्नी कहीं कुछ आश्वासन या आश्रय नहीं पा सकी। नीलि नाम की वह चिल्लाती हुई पूछती फिरी कि हे राजा ! यह न्याय है क्या ? परदन्न, क्या यह न्यायसंगत है ? हे पुर-वासियो यह संगत है ! वह मंडपों तथा मार्गो में घूमी। सात के दो दिन बीते और प्रेत वन्दना का दिन (सूतक के दिनों के बाद) आया। उसने वह पूजा का रस्म अदा किया। फिर वह पर्वत-शिखर पर चढ़ी और आकाश में हताहत अपने पति से मिलने हेतु खड़ी रही। और (तब उसने शाप दिया) हमें जिसने इतना बड़ा दुख दिया उसे ऐसा ही बड़ा दुख प्राप्त हो। यह शाप देकर वह गिर गयी। उसका दिया शाप निष्फल नही हो सकता। इसी के कारण तुमने यह दुख पाया। यह मेरा निबंध (विवरण-संग्रह) ध्यान में ले लो। १३८-१७०

19 उरुदि मॊऴि

"उम्मै विऩैवन्दु उरुत्त कालैच्
चॆम्मैयि लोर्क्कुच् चॆय्तवम् उदवादु;
वारोलि कून्दल् निऩ्ऩ् मणमहऩ्ऩ् तऩ्ऩै
ईरेऴ् नाळ् अहत्तु ऒल्लै नीङ्गि
वाऩोर तङ्गळ् वडिविऩ्ऩ् अल्लदै
ईऩ्ऩोर् वडिविऱ् काण्डल् इल्" ऎऩ्ऩ
मदुरैमा तॆय्वम् मापत् तिऩिक्कु
विदिमुऱै शॊल्लि अऴल् वीडु कॊण्डपिऩ्ऩ् 171-178

१९ वादे की बात

देवी ने आगे आश्वासन देते हुए कहा कि "जब कर्म फल देने आता है तब कुमार्गरत लोगों का, उनका कृत तप भी हित नही कर सकता। लवी घनी वेणी वाली ! तुम अपने पति को चौदह दिनों की (सूतक) अवधि बीतने के बाद देव के रूप में देखोगी। अन्यथा यहाँ के (मानवी) रूप में

नहीं देख सकोगी।" मदुरै की महीयसी देवी ने महीयसी पत्नी देवी को यह घटनाक्रम बताया। फिर वह मदुरै की आग को शांत करके अदृश्य हो गयी। १७१-१७८

20 कण्णहि वॅळियेऱिऩाळ्

'करुत्तुरु कणवऩ् कण्डपिऩ्ऩ् अललदु
इरुत्तलुम् इल्लेऩ्; निऱ्ऱलुम् इलऩ् ऍऩक्
कॊऱ्ऱवै वायिऱ् पॊऱ्ऱॊडि तहर्त्तु
'कीऴ्त्तिशै वायिऱ् कणवऩॊडु पुहुन्दु देऩ्
मेऱ्ऱिशै वायिल् वऱियेऩ् पॆयर्हु' ऍऩ 179-183

२० कण्णहि बाहर चली

"अपने मन में घर कर रहे प्रिय पति को देखे बिना मैं कहीं न बैठी रहूँगी न खड़ी रहूँगी।" यह कहकर कॊऱ्ऱवै के द्वार पर उस कण्णहि ने अपना स्वर्ण कंकण विसर्जित किया। 'पूर्वी द्वार में अपने पति के साथ प्रविष्ट हुई अब पश्चिमी द्वार से अकेली बाहर जाती हूँ।' यह कहकर वह चलने लगी। १७९-१८३

21 नडन्दाळ्! नडन्दाळ्!

इरवुम् पहलुम् मयङ्गिऩळ् कैयऱु
उरवु नीर् वैयै ऒरु करैक् कॊण्डु आङ्गु
अवल ऍऩ्ऩाळ् अवलित्तु इऴिदलिऩ्
मिशैय ऍऩ्ऩाळ् मिशै वैत्तु एऱलिऩ्
कडल् वयिऱु किऴित्तु मलै नॆञ्जु पिळन्दु आङ्गु
अवुणरैक् कडन्द शुडरिलै नॆडुवेल्
नॆडुवेळ् कुऩ्ऱम् अडिवैत्तु एऱिप् 184-190

२१ चली, चली, चलती चली

उसने सुध खोकर न रात देखी न दिन देखा। रव सहित वैगै नदी के एक किनारे को पकड़कर वह चलने लगी। दुख की अचेतन दशा में जाने के कारण वह उतारों को देख नही पाती। आकाश लोक (ऊपर) की चिंता में रहने के करण चढ़ाव भी नहीं देखती। (जिन कार्तिकेय ने) समुद्र का उदर चीर दिया था और (क्रौंच) पर्वत का हृदय विदीर्ण कर दानवो को मारा

था उन ज्वलंत फाल वाले लंबे वेल् के स्वामी के उन्नत पर्वत पर वह पग धरते-धरते चढ़ गयी। १८४-१९०

22 वेङ्गै निऴलिले

पूत्त वेङ्गैप् पॊङ्गरक् कीऴ् ओर्
तीत्तीॊऴिल् आट्टियेन् 'यान्' ॲन्ऱु एङ्गि
ॲऴुनाळ् इरट्टि ॲल्लै शॆन्ऱपिन्
'तीॊऴुनाळ् इदु' ॲन्न तोन्ऱ वाऴ्त्तिप्
पीडुकॆऴु नङ्गै पॆरुम् पॆयर् एत्ति
वाडा मामलर् मारि पॆय्दु आङ्गु
अमरर्क्कु अरशन् तमर् वन्दु एत्तक्
कोनहर् पिऴैत्त कोवलन् तन्नीॊडु
वान् ऊर्दि एऱिनळ् मादो
कान्मर् पुरिकुऴर् कण्णहि तान् ॲन् 191-200

२२ वेंगै (तरु) की छाया में

फूलों से पूर्ण वेंगै तरु के नीचे वह यह कहती हुई रोती खड़ी हुई कि मैं बुरे कर्म की मारी हूँ। फिर दो के सात (यानी चौदह) दिन बीते। "आज पूजा का दिन है" यह चेतना हुई तो उसने पूजा का रस्म अदा किया। तब गरिमामयी महान पत्नी की स्तुति करते हुए अम्लान (कल्प) पुष्पों की वर्षा करके देवराज के लोग आये। उन्होंने उसे, राजधानी नगर ने जिसके प्रति अपराध किया था उस कोवलन् के साथ सादर देव विमान पर बैठाया। वह वन सदृश काले, कुटिल केशवाली कण्णहि भी उस पर चढ़ी और व्योमलोक पहुँची। १९१-२००

23 वॆण्बा

दॆय्वम् तीॊऴाअळ् कीॊऴुनन् तीॊऴुवाळैत्
तॆय्वम् तीॊऴुन्दहैमै तिण्णिदाल्-दॆय्वमाय्
मण्णह मादर्क्कु अणियाय कण्णहि
विण्णह मादर्क्कु विरुन्दु

२३ वॆण् वा

ईश्वर का नमस्कार न करे पर पति को नमस्कार जो करे वह स्त्री देव-वन्द्या हो जाती है यह धारणा इस धर्ती में सुदृढ़ है। (इसको सावित करते हुए) देवी वनकर, धर्ती की स्त्रियों का श्रृंगार कण्णहि व्योमलोक की नारियों की अतिथि (आराध्य देवी) वन गयी।

24 कट्टुरै

मुडिकॊळ् वेन्दर् मूवरुळ्ळुम्
पडैविळङ्गु तडक्कैप् पाण्डियर् कुलत्तोर्
अऱत्तुम् मऱत्तुम् आऱ्ऱलुम् अवर्तम्
पऴविऱल् मूदूर्प् पण्बुमेम् बडुदलुम्
विऴवुमलि शिऱप्पुम् विण्णवर् वरवुम्
ऒडिया इन्बत्तु अवरुडै नाट्टुक्
कुडियुम् कूऴिन् पॆरुक्कमुम् अवर्तम्
वैयैप् पेरियाऱु वळञ्जुरन्दु ऊट्टलुम्
पॊय्या वानम् पुदुप्पॆयल् पॊऴि दलुम्
आरपडि शात्तुवदि ऒन्ऱिरु विरुत्तियुम्
नेरत् तोन्ऱुम् वरियुम् कुरवैयुम्
ऎन्ऱिवै अनैत्तुम् पिऱपॊरुळ् वैप्पोडु
ऒन्ऱित् तोन्ऱुम् तनिक्कोळ् निलैमैयुम्
वड आरियर् पडै कडन्दु
तॆन्न तमिऴ् नाडु ऒरुङ्गु काणप्
पुरैतीर् कऱ्पिन् देवि तन्नुडन्
अरैशु कट्टिलिल् तुञ्जिय पाण्डियन्
नॆडुञ् जॆऴिय नोडु ऒरु परिशा
नोक्किक् किडन्द
मदुरैक् काण्डम् मुऱ्ऱिऱ्ऱु 1-20

२४ सार निवंध

'मदुरैक् काण्डम' में: तीन किरीटी राजाओं में सेना विशिष्ट, विशाल-वाहु पाण्डियन् राजकुल की धर्म निष्ठा, वीरता, सामर्थ्य, उनके पुरातन विजय गाथा संयुक्त नगर की संस्कृति की बढ़ती, समारोहों की वहुलता की गरिमा, देवों

का आना, अक्षुण्ण सुखी उनके देश की प्रजा और रसद की अधिकता, वैगै की बड़ी नदी का समृद्धि प्रदान करना, अमोघ मेघों का समय समय पर नये रूप से बरसना, आरभटी, सात्वती नाम की वृत्तियो (नाट्य) का प्रदर्शन, क्रम से होने वाले एकाकी नृत्य और संघनृत्य-इत्यादि सभी विषय है। और अन्य कई विषय उनके साथ मिलकर टिक गये है। अतः उस विलक्षण स्थिति का भी इस काण्ड में वर्णन है। (इनके अलावा) उत्तर के आर्यो की सेना को हराकर सारे दक्षिण प्रदेश को एकीकृत करने का जो मूल कारण बना, वह अनिंद्य पतिव्रता देवी (रानी) के साथ राजासन पर ही मरे पाण्डियन् नॆडुञ् जॆऴियन् का प्राणोत्सर्ग भी जिसमें अन्य विषयों से मिलाकर वर्णित है; वह मदुरै काण्ड अब समाप्त हो गया। १-२०



३ वञ्जिक्काण्डम्

24 कुन्ऱक् कुरवै

(कौच्चहक् कलि)

1 विनावुम् विळक्कमुम्

कुरुवि ओप्पियुम् किळि कडिन्दुम्
कुन्ऱत्तुच् चेन्ऱु वैहि
अरुवि आडियुम् शुनै कुडैन्दुम्
अलवुऱ्ऱु वरुवेम् मुन्
मलै वेङ्गै नऱु निळलिन्
वळ्ळि पोल्विर् ! मनम् नडुङ्ग
मुलै इळन्दु वन्दु निन्ऱीर्
याविरो अन्न मुनियादे
मणमदुरैयोडु अरशु केडुऱ
वल्विनै वन्दु उरुत्त कालैक्
कणवनै अङ्गु इळन्दु पोन्द
कडुवितैयेन् यान् अन्ऱाळ् 1–6

'वंजि' काण्ड

२४ पहाड़ी "कुरवै"

(पहाड़ी कन्याओं का संघ-नृत्य)

(इसमें गान, नाट्य, नृत्य, सब मिले हुए रहते हैं)

(पद्य-गान रचना का छंद: कौच्चहक् कलि)

१ प्रश्न और उत्तर

(पहाड़ी रमणियाँ कहती हैं:) "कोदों के बागों से हमने चिड़ियों को दूर उड़ाया और शुकों को धमकाया, फिर पर्वत पर जाकर रही, नदियों में स्नान किया; स्रोतों में गोते लगाये। घूम-फिरकर थकी-माँदी हम आ रही हैं। पर्वत के "वेंगै' तरु की महकदार छाया में हमारी वळ्ळि (सुब्रह्मण्य देव की एक पत्नी का नाम 'वळ्ळि' है। वह 'कुऱवऱ' यानी पहाड़ी लोगों की कन्या है।) के समान, हे देवि ! घबड़ाते मन के साथ, एक स्तन खोकर आ खड़ी है, आप कौन हैं ? ऐसा पूछे जाने पर कण्णहि ने कहा: कल्याणमय मदुरै तथा

राजा को नष्ट करने वाला मेरा कर्म जब फल देने आया तब मैंने अपने पति को उधर गँवाया । इधर आयी-कठोर कर्म की मारी (या कर्म वाली) मैं । १-६

2 पॆरिय तॆय्वम्

अॆन्ऱलुम् इऱैनॅ्नि अञ्जि
इणै वळैक्कै अॆदिर् कूप्पि
निन्ऱर् अॆल्लैयुळ् वानवरुम्
नॆडुमारि मलर् पॊळिन्दु
कुन्ऱवरुम् कण्डु निऱ्पक्
कॊळुननॊडु कॊण्डु पोयिनार्
इवळ् पोलुम् नङ्गुलक्कोर्
इरुन् दॆय्वम् इल्लै आदलिन् 7–10

२ महा देवी

कण्णहि के ऐसा कहने पर उन्होंने उसका नमस्कार किया। चूड़ियों से अलंकृत अपने दोनों हाथों को जोड़कर उसके सामने वे खड़ी हो गयी। तब देवों ने उस पर बहुत देर तक फूल बरसाये। पहाड़ी रमणियों के देखते देखते वे उसे उसके पति के साथ लिवा ले गये। पहाड़ी कन्याओं ने विस्मय मिश्रित गर्व के साथ कहा कि इनके समान हमारे कुल की बड़ी देवी कोई नहीं है। अतः ७-१०

3 ऊरवरै अऴैत्तल्

शिरु कुडियीरे शिरु कुडियीरे !
दॆय्वङ् कॊळ्ळुमिन् ! शिरु कुडियीरे !
निऱङ् गिळर् अरुविप् पऱम्बिन् ताऴ्वरै
नऱुञ्जिनै वेङ्गै नन्निऴऱ् कीऴोर्
दॆय्वङ् कॊळ्ळुमिन् शिरु कुडियीरे !
तॊण्डहम् तॊडुमिन् शिरु परै तॊडुमिन्
कोडुवाय् वैम्मिन् ! कॊडुमणि इयक्कुमिन्;
कुऱिञ्जि पाडुमिन्; नऱुम्पुहै अॆडुमिन्;
पूप्पलि शॆय्म्मिन् काप्पुक्कडै निऱुमिन्;
परवलुम् परवुमिन्, विरवुमलर् तूवुमिन्
ऒरुमुलै इऴन्द नङ्गैक्कुप्
'पॆरु मलै तुञ्जादु वळञ्जुरक्क' अॆनवे 11–20

३ ग्राम वासियों को बुलाया

(उन्होने अपने ग्रामवासियों को निमन्त्रण दिया)

हे छोटे छोटे ग्रामों के रहने वालो; छोटे ग्रामों के रहने वालो ! इन्हे देवी के रूप में अपना लो। रंगीन तथा सरित्ता युक्त पर्वत की तलहटी में घनी शाखाओ से शोभित 'वेगै' की घनी छाया के नीचे एक देव-मदिर वना लो। हे ग्रामवासियो। "तोंण्ऽहम् (अप्रचलित वाद्य विशेष) वजाओ। छोटी ढोलकी बजाओ, श्रृंगियाँ मुख पर रखो (फूको)। उच्च नाद वाली घंटी बजाओ। "कुरिञ्जि" (पहाड़ी) गीत गाओ। सुगधित धूप दिखाओ। पुष्प-बलि चढ़ाओ। सरक्षक गढ (प्राचीर) निर्मित करो। स्तुति करो। फूल बिखेरो। ११-२०

यह सब एक-स्तन-हीना देवी की पूजा में करो ताकि यह वड़ा पर्वत हमें वंचित न करे और हमेशा समृद्धि दिला दे।

(यहाँ तक 'वचन' (पद्य) है जो गान-नाच के सिलसिले मे अंतर्हित रखा गया है। आगे नाच-गान है। कण्णहि को पहले पहाड़ी लोगों ने देवी बना लिया। बाद तीनों राजाओं ने उसे देवी मान लिया)।

4 अरुवि याडुदल्

आङ्गॊऩ्ऱु काणाय् अणियिऴाय् ! ईङ्गिदु काण्
अञ्जऩप् पूऴि अरितारत् तिऩ् ऩिडियल्
शिऩ्दुरच् चुण्णम् शॆऺॆडियत्तूय् तेङ्गमऴ्ऩ्दु
इन्दिरविल्लिऩ् ऎऴिल् कॊण्डु इऴुमॆऩ्ऱु
वन्दीङ्गु इऴियुम् मलैयरुवि आडुदुमे;
आडुदुमे तोऴि ! आडुदुमे तोऴि !
अञ्जलोम्बु ऎऩ्ऱु नलत्तुण्ड् नल्हादऩ्
मञ्जुशूऴ् शोलै मलैयरुवि आडुदुमे ! 2-3

४ झरने में स्नान

उधर देखो, हे आभरण-सुन्दरी ! (पास जाकर) इधर देखो यह अंजन चूर्ण, अरितारम् चूर्ण (रगीन रासायनिक पदार्थ) और सिदूर का चूर्ण आदि से अलकृत होकर, इंद्रधनुष की-सी रंग-विरगी शोभा के साथ मधुररव करते हुए गिरने वाले झरने में हम स्नान करें, हाँ सखी स्नान करे। सखी ! यह उसके पर्वत की नदी है जिसने यह संतोषदायक शब्द कहा हमसे कि मत डरो ! मेरी बात मानो ! पर अपनी बात नही रखी। वैसे अनुपकारी के मेघाच्छादित वनों से युक्त पर्वत के झरने में स्नान करेगे। २-३

5 नॆञ्जतूतिन्न नोवु

ऎऱ्ऱीन्ऱुम् काणेम् पुलत्तल् अवर् मलैक्
कऱ्ऱीण्डि वन्द पुदुप्पुन्नल्;
कऱ्ऱीण्डि वन्द पुदुप्पुन्नल् मऱ्ऱैयार्
उऱ्ऱाडिन् नोम् तोऴि नॆञ् जन्ऱे
ऎन्नॊन्ऱुम् काणेम् पुलत्तल् अवर्मलैप्
पॊन्नाडि वन्द पुदुप् पुन्नल्
पॊन्नाडि वन्द पुदुप्पुन्नल् मऱ्ऱैयार्
मुन्नाडिन् नोम्; तोऴि नॆञ्जन्ऱे
यादॊन्ऱुम् काणेम् पुलत्तल् अवर् मलैप्
पोदाडि वन्द पुदुप्पुन्नल्
पोदाडि वन्द पुदुप्पुन्नल् मऱ्ऱैयार्
मीदाडिन् नोम्; तोऴि नॆञ्जन्ऱे **4–6**

५ मन का दुख

इस जल मे उपालम्भ का कोई हेतु नहीं देखती (यद्यपि) यह उसके ही पर्वत की चट्टानों का स्पर्श करता आने वाला नया प्रवाह है। ऐसा स्पर्श करते आने वाले प्रवाह में हे सखी, कोई दूसरा नहाये तो दुखी होता है मेरा मन, यह क्यों ? (यद्यपि नायक वफादार नही रहा तो भी नायिका का मन अपने प्रेम में अटल है जिसके कारण उससे किसी विध का लगाव रखने वालों से ईर्ष्या, क्रोध तथा तज्जनित दुख होता है।) इस प्रवाह में मै कोई शिकायत का कारण नही देखती। (यद्यपि) यह उसके पर्वत पर गिरे स्वर्ण चूर्ण (पराग) को वहा ले आने वाला नया जल है। स्वर्णकण वहा ले आने वाले इस नये जल में मेरे पहले कोई नहा ले तो हे सखी मेरा मन पीड़ा का अनुभव करता है। रूठने का कोई हेतु नही देखती उनके पर्वत के पुष्पो के साथ क्रीडा करते आनेवाले इस नये प्रवाह में। पर पुष्प-क्रीड़ा करके आने वाले इस नये जल में अन्य स्नान करे, उन पर यह जल फैल जाय-यह देखा तो मेरा मन दुखता है यह क्यों री सखी ! ४-६

6 कुरवै पाडुवोम् (पाट्टु मडै)

उरैयिनि मादराय् उण्कण् शिवप्पप्
पुरैतीर् पुन्नल् कुडैन्दु आडिन् नोमायिन्

उरवुनीर् माकोन्ऱु वेल् एन्दि एत्तिक्
कुरवै तोडुत्तोन्ऱु पाडुहम् वा, तोळि 6–7

६ कुरवै गाओ
(अन्तर्हित गीत)

हे नारीमणि ! अब कुछ कहूंगी सुनो ! काजल लगी आँखों को लाल करते हुए बुराई-हो न इस जल में खूब गोते लगा लगाकर स्नान करने पर मन दुखी होगा तो समुद्र-मध्य जिन्होंने आम्र तरु (के रूप में रहे दानव) को मार गिराया उन वेल् के धारक की स्तुति में कुरवें में लगकर (रास क्रीड़ा में) गाये। गाओ सखी ! (षण्मुख,या कार्तिकेय, देव जिन्हें यहाँ मुरुगन् यानी सुंदर कहा जाता है पहाड़ी जनों के इष्ट देव है। उनकी एक पत्नी इन्द्रपुत्री हैं दूसरी पहाड़ी कुरवऱ् कन्या जिसका नाम वळ्ळि है। रीतिकालीन हिन्दी साहित्य के समान इनमें प्रेम का दैवी और मानवी का घुला-मिला संबंध है। ७

7 वेलिन् पुहळ् पाडियदु

शीर्कॊळ् शॆन्दिलुम् शॆङ्गोडुम् वॆण्कुन्ऱुम्
एरहमुम् नीङ्गा इऱैवन् कै वेलन्ऱे
पारिरुम् पौवत्तिन् उळ्पुक्कुप् पण्डोरु नाळ्
शूर्मा तडिन्द शुडरिलैय वॆळ्वेले !
अणि मुहङ्गळ् ओर् आऱुम् ईराऱु कैयुम्
इणैयिन्ऱित् तानुडैयान् एन्दिय वेलन्ऱे
पिणि मुहमेर् कॊण्डु अवुणर् पीडळियुम् वण्णम्
मणिविशुम्बिर् कोन्तेत्त माऱट्ट वॆळ्वेले !
शरवणप् पूम्पळ्ळियऱैत् तायमार् अऱुवर्
तिरुमुलैप्पाल् उण्डान् तिरुक्कै वेलन्ऱे
वरुतिहिरि कोलवुणन् मार्वम् पिळन्दु
कुरुहु पॆयरक् कुन्ऱम् कोन्ऱ नॆडुवेले 8–10

७ 'वेल्' की प्रशंसा का गाना

दिव्य श्री 'शॆन्दिल्' (तिरुच्चॆन्दूर), तिरुच्चॆङ्गोडु, तिरुवॆण्गुन्ऱम्, और तिरुवेरहम इत्यादि (दिव्यस्थलों) से अपृथक रहनेवाले देवता (मुरुगन्) के हाथ में धृत 'वेल्' ही न विशाल भूवलयित सागर में घुसकर 'आम्र-शूर'

को, पहले किसी दिन, काटनेवाला ज्वलंत-पत्र युक्त श्वेत वेल है ! (मुरुगन् के छः मशहूर क्षेत्रों में चार के नाम आये है। वर प्राप्त शूर पद्म नाम के असुर को मारने के लिए ही शिव-पार्वती का उद्वाह तथा कार्तिकेय षण्मुख देव का जन्म हुआ। देव सेनापति बनकर उन्होंने दानवों को मिटाया। यह शूरपद्म समुद्र में जाकर आम का पेड़ बना रहा। मुरुगन् ने उसे मार दिया।) ८

सुन्दर षडानन, विंशतिहस्त अनुपम देव का हस्त-धृत वेल ही न मयूरारूढ होकर दानवों के छक्के छुड़ानेवाले व्योमराजस्तुत (देव का) परंतप वेल है ! ९

शरवण के षड्मातास्तनपायी के हाथ का वेल ही न वर्धनशील पर्वत-चक्र-धारी दानव का हनन कर खग-नाम-धारी पर्वत को नष्ट करने वाला वेल है ! १०

(पौराणिक कथा है : शिव के वीर्य को पार्वती धारण नहीं कर सकी। वह सरकंडों से भरे सरोवर में (शरवण में) रखा गया। वह छः भागों में विभक्त हुआ और छः शिशु पैदा हुए। उन्हें छः कृत्तिकाओं ने स्तन्य पान करा के पाला। फिर माता पार्वती ने उन्हें अपने आलिंगन से एक शिशु में बदल दिया जिसके छः मुख और बारह हाथ रह गये। खग नामधारी पर्वत क्रौंच पर्वत है। उसमें छिपा रहा वह दानव जिसे कार्तिकेय ने पर्वत के साथ ही मारा।)

8 वेलन् वरुवाऩो ?

इऴैवळै नल्लाय् ! इदु नहै याहिऩ्ऱे
कऱिवळर् तण्शिलम्बन् शॅय्द नोय् तीर्क्क
अऱियाळ् मऱ्ऱु अऩ्ऩै; अलर्कडम्बन् ऎऩ्ऱे
वॆऱियाडल् ताऩ् विरुम्बि 'वेलऩ् वरुह' ऎऩ्ऱाळ्
आय्वळै नल्लाय् इदु नहैयाहिऩ्ऱे
मामलै वॆऱ्पऩ्नोय् तीर्क्क वरुम् वेलऩ् !
वरुमायिऩ् वेलऩ् मडवऩ्, अवऩिऩ्
कुरुहुपॆयर्क् कुऩ्ऱम् कॊऩ्ऱाऩ् मडवऩ्
शॆऱिवळैक्कै नल्लाय् इदुनहै याहिऩ्ऱे
वॆऱिकमऴ् वॆऱ्पऩ्नोय् तीर्क्क वरुम् वेलऩ्
वेलऩ् मडवऩ् अवऩिऩुम् ताऩ् मडवऩ्
आलमर् शॆल्वऩ् पुदल्वऩ् वरुमायिऩ्

नेरिळै नल्लाय् ! नहैयाम्-मलैनाडन्
मारबुतरु वॆन्नोय् तीर्क्क वरुम् वेलन्
तीर्क्कवरुम् वेलन् तन्निनुम् तान्‌ मडवन्
कार्क्कडप्पन तार् ॲम् कडवुळ् वरुमायिन् 11-14

८ वेलन् भी आयगा

हे कंकण पाणि सुन्दरी ! यह हँसी की बात सुनो ! काली मिर्च के उत्पादक पर्वत प्रदेश के नायक के कारण बना (विरह) रोग है यह (मेरा)। मेरी माता यह न पहचान कर समझती है कि 'कडम्ब' वनवासी मुरुगन देव का (मुझमें आवेश) है। वह 'आवेश नृत्य' का आयोजन करना चाहकर कहती है कि 'वेलन् आये।' (प्रेम वेदना से दुर्बल होने वाली का देव-प्रवेश द्वारा उत्पन्न रोग समझकर ओझा को बुलाने की प्रथा बहुत अर्से से है। ऐसे ओझा को वेलन् कहते हैं। वेलन् का अर्थ वेल् रखनेवाला है। प्रथमतः वेलन् मुरुगन् देव को कहते हैं। यहाँ वह शब्द उस आदमी को द्योतित करता है जो नाच-गान-पूजा आदि से उस देवता का आह्वान करता है और उसके वश से उस रोग-ग्रस्त युवती को छुड़ाता है ! इस प्रक्रिया को वॆरियाडल् यानी "आवेश नृत्य" कहा जाता है।) ११

हे कंकण सुन्दरी ! मुझे हँसी आती है ! पर्वत प्रदेश नायक जनित रोग इसे दूर करने वेलन् आयगा ! अगर आयगा तो वह वेलन् मूर्ख होगा। उससे भी अधिक मूर्ख होंगे खग नामधारी गिरि के नाशक (वेलन् देवता), अगर बुलाने पर आयेंगे तो ! १२

सुघड़ चूड़ियों से अलंकृत हाथों वाली सुन्दरी ! यह बड़ी ही हँसी की बात है। महकदार पर्वत प्रदेश नायक का दिया यह रोग दूर करने वेलन् आयगा ! वह अज्ञ होगा। वट-तल-स्थ ईश्वर के पुत्र (इसके बुलाने पर) आयेंगे तो वे इससे भी बड़े मूर्ख होंगे। (शिवजी ने वट वृक्ष के नीचे बैठकर सनत्कुमारों को ब्रह्मविद्या सिखायी। वह दक्षिणामूर्ति रूप है।) १३

योग्य आभरण भूषिता सुन्दरी ! यह हँसी सुनो। पर्वत देश नायक की प्यारी छाती द्वारा मिले इस कठिन रोग को दूर करने वेलन् आयगा। रोग-निवारणार्थ आनेवाला वेलन् बेवकूफ़ होगा। उसके निमंत्रण पर वर्षाकालीन "कडम्ब" पुष्प-माला धारी वेलन् देव आयेंगे तो वे इससे भी अधिक मूर्ख होंगे न ! १४

9 मणवणि वेण्डुवोम्

वेलन्नार् वन्दु वेरियाडुम् वेङ्गळत्तु
नीलप् परवैमेल् नेरिळै तन्नोडुम्
आलमर् शेल्वन् पुदल्वन् वरुम्; वन्दाल्
माल्वरै वेर्पन् मणिवणि वेण्डुदुमे !
कयिलैनन् मलैयिरै महत्ते ! निन्न मदिनुदल्
मयिलियल् मडवरल् मलैयर्-तम् महळार्
शेयलैय मलर् पुरै तिरुवडि तोळुदेम्
अयल्मणम् ओळि उरुळ् अवर् मणम् अन्नवे
मलैमहळ् महत्ते ! निन्न मदि नुदल् मडवरल्
कुलमलै उरैतरु कुरवर् तम् महळार्
निलै उयर् कडवुळ् ! निन्न इणैयडि तोळुदेम्
पलरऱि मणम् अवर् पडुहुवर् अन्नवे 17
कुरमहळ् अवळ् ऍम् कुलमहळ् अवळोडुम्
अरुमुह ओरुव ! निन्न अडियिणै तोळुदेम्
तुरैमिशै निन्नदिरु तिरु वडि तोडुनर्
पेरुह नल् मणम् विडु पिळैमणम् अन्नवे 18

९ विवाह-मंगल वर माँगेंगे

(उत्तर में उसकी सखी कहती है)

वेलन् श्रीमान (व्यंग) आकर जहाँ "आवेश नृत्य" करेगा उस गरम स्थान में वट-वृक्ष-ईश्वर के पुत्र नीले पक्षी (मोर) पर अपनी कमनीय भूषण-भूषिता (देवी) के साथ आयेंगे। आवे तो हम उनसे पर्वत-देश-नायक के साथ (सब के सामने) विवाह के मंगल का वर माँगेंगे। (इस भाँति :) १५

"हे कैलासेश्वर पुत्र ! आपके चंद्र-निभ ललाट मयूर-छटा, और सौंदर्य वाली पर्वत (कुरवर्)-कुमारी वळ्ळि के अशोक पल्लव प्रभ श्रीचरणों की वन्दना करते है। हमारे नायकेतर के साथ हमारा विवाह न होने दे। उन्ही (हमारे नायक) से हमारे विवाह का वर दें।" —यह वर माँगेंगे। १६

"हे पार्वती सुत ! आपकी सोमोपम भालवाली देवी के कुल की हैं हम ! हम पर्वत प्रदेश में रहने वाले कुरवर् कुल की पुत्रियाँ है। हमारे कुल को आपने (अपने विवाह से) उत्कृष्ट कर दिया। हे हमारे कुलोद्धारक

देव ! आपके चरणद्वय की वन्दना करते हैं। हमारे नायक के साथ हमारा, सबके जानते, विवाह हो—" ऐसा वर माँगेंगे। १७

"आपकी देवी कुऱवर् कन्या है। हमारे कुल की कन्या है। उसके और, हे षडानन देव ! आपके, दोनो के पैर पकड़ते हैं। घाट पर खड़े होकर जो आपके चरणद्वय की वन्दना करते हैं उनका अच्छी रीति से (मनोनुकूल) विवाह हो जाय ! गलत विवाह न हो !" —यह वर हम माँग लेंगे। १८

10 अवऩोडु उरैत्तदु

ऑऩ्ऱि याम् पाड मऱैनिऩ्ऱु केट्टरुळि
मऩ्ऱलम् कण्णि मलै नाडऩ् पोवाऩ् मुऩ्
शॆऩ्ऱेऩ् अवऩ् तऩ् तिरुवडि कै तॊऴुदु
निऩ्ऱेऩ्; उरैत्तदु केळ् वाऴि तोऴि" 19
कडम्बु शूडि उडम्बिडि एन्दि,
मडन्दै पॊरुट्टाल् वरुवदु इव्वूर्;
अऱु मुहम् इल्लै, अणि मयिल् इल्लै
कुऱमहळ् इल्लै शॆऱि तोळ् इल्लै
कडम्पूण् दॆय्व माह नेरार्
मडवर् मऩ्ऱविच् चिऱु कुडि योरे ! 20

१० नायक से मैंने कहा

(सखी कहती है)

"जव हम इस भाँति गा रही थी तव छिपे रहकर नायक ने सुनने की कृपा की। महकदार पुष्प मालाधारी वह जाने लगा तो उनके सामने मैं गयी और पैर छूकर खड़ी रहकर वोली जो मैं वह सुनो सखी ! जीती रहो। १९

'कडम्बु' पुष्प पहनकर, 'वेल्' को हाथ में लिए हुए एक वाला के कारण इधर आनेवाले ! आपके छः मुख नहीं ! सुन्दर मयूर (का वाहन) नहीं है। साथ कुऱस्त्री नही ! सुदृढ़ कंधे नहीं ! आपको वलिग्राहक कुमार देव नहीं मानेंगे यहाँ के लोग। ये छोटे ग्रामवासी अवोध हैं। (पर धोखा नहीं खायेंगे।) २०

11 पत्तिनियैप् पाडुवोम्

ॲन्रु ईङ्गु
अलर् पाडु पॅऱ्‌रमै यान् उरैप्पक् केट्टुप्
पुलर् वाडु नॅञ्जम् पुरङ् गॉडुत्तुप पोन
मलर् तलै वॅऱ्‌पन् वरै वानुम् पोलुम् !
मुलैयिनाल् मामदुरै कोळ्ळिळैत्ताळ् कादल्
तलैवनै वानोर् तमरारुम् कूडिप्
पलर् तोळु पत्तिनिक्कुक् काट्टिक् कॉडुत्त 21
निलै ऑन्रु पाड्डुम् याम् !

११ पत्नी देवी का गान करें

ऐसा—मैंने यहाँ के फैलते प्रवाद की बात सुनाई। सुनकर, वह खेद से मुरझाते मन को पीछे छोड़कर चला। मुरझाते मन को छोड़कर जाने वाला वह विस्तृत पर्वत प्रदेश का नायक आकर विवाह कर लेगा-ऐसा लगता है। अपने स्तन से महानगर मदुरै को नष्ट करने वाली के प्यारे पति को व्योम वासियों ने सर्ववन्द्य उस पत्नी-देवी को दिखा दिया न ! उस घटना का वर्णन हम सादर गायँ, (ताकि हमारा विश्वास चरितार्थ हो।) २१

पाडुहम् वा, वाळि, तोळि ! याम् पाडुहम्
कोमुरै नीङ्गक् कॉडि माडक् कूडलैत्
तीमुरै शॅय्दाळै एत्ति याम् पाडुहम्
तीमुरै शॅय्दाळै एत्ति याम् पाडुङ्गाल् 22
मा मलै वॅऱ्‌पन् मणवणि वेण्डुदुमे

गायँगे ! सखी ! आओ। आओ सखि ! हम गायँ। राजा के न्याय से हटने पर जिसने पताकायुक्त प्रासादों वाले मदुरै नगर को आग के द्वारा जला दिया उस देवी की स्तुति गायें। अग्नि से दग्ध करने वाली का हम जब गान करते है तब पर्वत-नायक के साथ विवाह का मंगल (वर स्वरूप) माँगेंगे। २२

पाडु उऱ्‌रुप् पॅण्डिर् परवित् तोळुवाळोर्
पत्तिनिप् पॅम्बुनत्तु उळ्ळाळे !
पैत्तर वल्हुल्नम् कणवनै वानोर्हळ्
पैत्तर वल्हुल् उरैयो ऑळि यारे 23
उय्त्तुक् कॉडुत्तुम्

वह महिमा मंडिता है ! पतिव्रता स्त्रियों द्वारा स्तुत्य देवी है ! अनुपम सर्प-फन के समान वरांगवाली वरांगना है। वह हमारे हरे उपवन में है। सर्प-फन-सम वरांग वाली वरांगना के पति को व्योमवासियो ने जिला दिया ही नही वरन वे उनके गुण-गान को भी नही छोड़ते। २३

वान्‍ऩह वाऴ्क्कै अमरर् तॊऴुदेत्तक्
कान्‍ऩ नऱु वेङ्गैक् कीऴाळोर् कारिहैये;
कान्‍ऩ नऱु वेङ्गक् कीऴाळ् कणव नॊडुम्
वान्‍ऩह वाऴ्क्कै मऱुतरवो इल्लाळे ! 24

वह महिमामयी वरदायिनी देवी सुगधमय वन्य 'वेंगै' तरु के नीचे आकर रही। व्योमवासी देवों ने उसकी स्तुति की। जंगली 'वेंगै' तरु तल स्थित उसे उसके पति के साथ स्थायी स्वर्ग वास मिल गया। उसका पुनरावर्तन नही होगा। २४

मऱुतरवु इल्लाळै एत्ति नाम् पाडप्
पॆऱु कदिल् अम्म, इव्वूरुम् ओर्-पॆऱ्ऱि
पॆऱ्ऱि उडैयदे, पॆऱ्ऱि उडैयदे
पॊऱ्ऱॊडि मादर् कणवन्‍ मणम् काणप्
पॆऱ्ऱि उडैयदु इव्वूर् 25

जिसका पुनरावर्तन नही है उस पतिव्रता को हम गाये। वैसा यह ग्राम भी भाग्यवान बने ! भाग्यवान है। भाग्यवान है ! स्वर्ण कंकण धारिणी सुदरियाँ अपने इच्छित वरो से विवाह कर लेगी। ऐसा भाग्य इस ग्राम का है !
(कण्णहि भूमि पर भी रहेगी। एक साथ स्वर्ग में भी क्योंकि वह देवी है) २५

12 शेर मान्‍नै वाऴ्त्तुदल्

ऒन्‍ऱुम् यास्
कॊण्डु निलैपाडि आडुम् कुरवैयैक्
कण्डु नम् कादलर् कैवन्‍दार्; आन्‍ऩादु

उण्डु महिळन्दाना वैहलुम् वाळियर्
विल् अँळुदिय इमयत्तोडु
कॉल्लि आण्ड कुडवर् कोवे

१२ शेरमान् का मंगलाशासन

ऐसा हमने "कौण्डु निलै" गान गाकर 'कुरवै' नृत्य किया; उसको देखकर हमारे प्रेमी हमारे हाथ लगे है। (यह मुरुगन की कृपा है।) धनुरंकित हिमालय और "कौल्लिमलै' पर शासन करने वाले कुडवर् (पश्चिमी देशवासियों) के राजा शेरन् शॆङ्गुट्टुवन् आये दिन बिना नागा के (सुरा-) पान-मस्त होकर जीते रहें।

(इस अध्याय के कुरवै द्वारा आराध्य देवता मुरुगन् है। आय्च्चियर् कुरवै के देवता श्री कृष्ण है। उसके गाने भी अलग है। इसके गाने का तर्ज भी अलग है। इसे "कौण्डु निळै" कहा गया है। अनु।)

25 काट्चिक् कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 मलै काण्गुवम्

मानीर् वेलिक् कडम् बॆऱिन्दु इमयत्तु
वानवर् मरुळ मलैविऱ् पूट्टिय
वानवर् तोन्ऱल् वाय्वाट् कोदै
विळङ्गिल वन्दि वॆळ्ळि माडत्तु
इळङ्गो वेण्माळ् उडनिरुन् दरुळित्
'तुञ्जा मुळविन् अरुवि ऑलिक्कुम्
मञ्जु शूळ् शोलै मलै काण् गुवम्' ऍन्नप्
पैन्दोडि आयमोडु परन् दॊरुङ्गु ईण्डि
वञ्जि मुऱ्ऱम् नीङ्गिच् चॆल्वोन् 1-9

२५ दृश्य गाथा

१ पर्वत देखें

विशाल जलाशय (सागर) रक्षित 'कडम्बु' तरु को गिराने वाले, और हिमालय पर देवों को भी भयभीत करते हुए 'धनुष' का चित्र खुदवाने वाले देवों (शेरर्) के वंश में उदित शॆङ्गुट्टुवन्, अमोघ-विजय-खड्ग धारी शेरन्

राजा रजत-तालाव-महल में अपनी रानी इळङ्गो वेण्माळ् के साथ रहा। तव उसने अपनी रानी से कहा कि अविराम मृदंग के समान जिस पर सरितायें शोर करती बह रही हैं उस मेघावृत वन-समृद्ध पर्वत को जाकर देखें। फिर वह मंडली सहित प्रभायुक्त कंकण धारिणी रानी को साथ लेते हुए 'वञ्जि' नगर का द्वार छोड़कर चलने लगा। १-९

2 इडुमणल् ऍक्कर् इरुन्दतर्

वळमलर्प् पूम् बॊऴिल् वात्तवर् महळिरॊडु
विळै याट्टु विरुम्बिय विऱल् वेल् वात्तवत्
पॊलम् पूङ्गावुम् पुत्तल् याऱ्ऱुप् परप्पुम्
इलङ्गु नीर्त् तुरुत्तियुम् इळमरक् कावुम्
अरङ्गुम् पळ्ळियुम् ऒरुङ्गुडत् परप्पि
ऒरु नूऱ्ऱु नाऱ्पदु योशत्तै विरिन्द
पॆरुमाल् कळिऱ्ऱुप् पॆयर् वोत् पोन्ऱु
कोङ्गम् वेङ्गै तूङ्गिणर्क् कॊन्ऱै
नाहम् तिलहम् नऱुङ्गाळ् आरम्
उदिर पूम् परप्पित् ऒऴुहु पुत्तल् ऒळित्तु
मदुहरम् ञिमिऱॊडु वण्डि तम् पाड
नॆडियोत् मार्बिल् आरम् पोन्ऱु
पॆरुमलै विलङ्गिय पेरियाऱ्ऱु अडैकरै
इडु मणल् ऍक्कर् इयैन् दॊरुङ्गु इरुप्पक् 10-23

२ नदी-रेत के पुलिन पर रहे

मान लीजिये कि पुष्प-शोभित नंदन वन में अप्सराओं के साथ केलि करना चाहा सशक्त शक्ति-(वज्र) पाणि इन्द्र ने। तदर्थ सुदर नंदनवन, जल-भरा नदी तल, नदी के बीच पुलिन, नव तरुवन, रंगशाला, शयनागार आदि मनोरंजन के साधन एक सौ योजन विस्तार में निर्मित किये। फिर वह अपने अतीव बड़े गज (ऐरावत) पर आरूढ़ होकर चला। ऐसा ही लगा जब शेरन् भी, "कोङ्गम्" "वेगै" लटकते स्तबकों वाले कॊन्ऱै, "नाहम्" "तिलहम्", हीरे बना चंदन इत्यादि के वृक्षों से गिरे फूलों के नीचे अपनी धारा को छिपा कर, मधुकरों, अलियों और भ्रमरों के गुंजार के साथ श्री विष्णु देव के पक्ष में हार के समान बड़े पर्वत से खिसकती आने वाली 'पेरि'

नदी के तटपर गया। वहाँ उस नदी के बीच बने पुलिन पर सब मिलकर जा रहे। १०-२३

3 अॅऴुन्दत्त औलिहऴ्

कुन्नरक् कुरवै यॊडु कॊडिच्चियर् पाडलुम्
वॆन्ऱिच् चॆव्वेऴ् वेलन् पाणियुम्
तिन्नैक्कुरु वळ्ळैयुम्, पुन्नत्तॆऴु विळियुम्
नऱुवुक्कण् उडैत्त कुऱवर् ओदैयुम्
पऱैयिशै अरुविप् पयङ्गॆळुम् ओदैयुम्
पुलियॊडु पॊरूउम् पुहर्मुह ओदैयुम्
कलिकॆऴु मीमिशैच् चेणोन् ओदैयुम्
पयम् बिल् वीऴ् यानैप् पाहर् ओदैदुम्
इयङ्गु पडै अरवमॊडु याङ्गणुम् ऒलिप्प 24–32

३ ध्वनियाँ उठीं

(तब उन्होंने निम्नलिखित शब्द सुने:) पहाड़ी कुरवै; "कॊडिच्चियऱ्" (कुऱवर् या पहाड़ी जाति की नारियों) के गाने, विजयी, लाल देव, वेलन् संबंधी (प्रार्थना) गीत, कोदों कूटने वालियों के "वळ्ळै" गीत; कोदों के बाग में पक्षियों को भगाने की ध्वनि, मधु-छत्ते तोड़ने वाले "कुऱवर्" के कोलाहल, भेरी-नाद के समान शब्द करने वाले प्रपातों का भयंकर रव, बाघ के साथ लड़ते रहे हाथियों की चिघाड़, मचान पर से जानवरों को तितर-बितर करने के लिये उठाया गया नाद, गड्ढों पर गिरे हाथियों के पकड़ने वाले हाथीवानों के नर्दन, और शेरन् की सेना के संचार का (या हथियारों का) हुल्लड़-इत्यादि सब तरह के नाद हर जगह उठ रहे थे। २४-३२

4 मलैमक्कळिन् काणिक्कैहळ्

अळनुदु कडै अऱिया अरुङ्गलम् शुमनुदु
वळनुदलै मयङ्गिय वञ्जि मुऱ्ऱत्तु
इऱै महन् शॆव्वि याङ्गणुम् पॆऱादु
तिऱै शुमनुदु निऱ्कुम् तव्वर् पोल
यानै वॆण् कोडुम् अहिलिन् कुप्पैयुम्
मान् मयिर्क् कवरियुम् मदुविन् कुडङ्गळुम्
शनदनक् कुऱैयुम् शिनुदुरक् कट्टियुम्
अञ्जनत् तिरळुम् अणि अरि तारमुम्;

एल वल्लियुम् इरुङ्गऱि वल्लियुम्
कूवै नूऱुम् कॊऴुङ्गॊडिक् कवलैयुम्
तॆङ्गिन् पऴनुम् तेमाङ् गऩियुम्
पैङ्गॊडिप् पडलैयुम् पलविन् पऴङ्गळुम्
कायमुम् करुम्बुम् पूमलि कॊडियुम्
कॊऴुन्दाट् कमुहिन् शॆऴुङ्गुलैत् तारुम्
पॆरुङ्गुलै वाऴैयिन् इरुङ्गनित् तारुम्
आळियिन् अणङ्गुम् अरियिन् कुरुळैयुम्
वाळ्वरिप् परळुम् मदहरिक् कळवमुम्
कुरङ्गिन् कुट्टियुम् कुडावडि उळियमुम्
वरैयाड् वरुडैयुम् मडमान् मऱियुम्
काशरैक् करुवुम् माशरु नहुलमुम्
पीलि मञ्ञैयुम् नावियिन् पिळ्ळैयुम्
कानक् कोऴियुम् तेन्मॊऴिक् किळ्ळैयुम्
मलैमिशै माक्कळ् तलैमिशैक् कॊण्डु आङ्गु 33-55

४ पहाड़ी लोगों के द्वारा समर्पित उपहार

उन्हें माप कर अंत जानना दुस्तर है। ऐसे बहुमूल्य पदार्थों को ढोकर ले आते है शत्रु राजा। शेरन् राजा के दरबार में उपहार लेने के लिए निर्मित आंगन में पहले ही अनेक उपहार की चीज़े समृद्ध रूप से मिली पड़ी रहती है। राजा के दर्शन तथा उसकी कृपा दृष्टि का सौभाग्य नहीं मिल रहा है अत: वे शत्रु राजा नज़र की वस्तुएँ ढोते हुए खड़े रहते है। उन्ही वैरी राजाओं के समान पहाड़ी लोग अपने सिरो पर निम्नलिखित भेट की चीज़ें लादकर ले आये : श्वेत हाथी-दांत, अगरू का ढेर, मृग-रोम के चामर, मधु के घड़े, चंदन के काठ, सिदूर के घन, अंजन राशि, "अरितारम्" (हरताल) नामक रासायनिक पदार्थ, जो शरीर पर मला जाता है। इनके अलावा एला की लता, काली मिर्च की लता, "कूवै' कंद का आटा, पुष्ट 'कवलै' लताएँ, नारियल के फल, मधुर आम्र फल, हरे पत्ते वाली "पडलै", कटहल के फल, हींग (या लहसुन), ईख, पुष्प-लताएँ, मोटे तने के पूग फलों के ठोस गुच्छे, वड़े गुच्छो के अति मधुर केले, आदि भी लाये थे। इनके अलावा निम्नलिखित प्राणी (शावक) भी थे : आऴि (शरभ ?) के शावक, सिंह-शिशु, चटकीले धारीदार व्याघ्र शावक, मत्त गज का कलभ, वानर का बच्चा, टेढे पैरों वाला छोटा रीछ, पहाड़ो पर संचार करने वाली बकरियों के बच्चे,

कस्तूरी मृग के बच्चे, निर्दोष नकुल, पंखों वाला मयूर, गंध-बिलाव का बच्चा, जगली मुर्गा, मधु-भाषी शुक इत्यादि अनेक जीवित प्राणी भी थे। इन सबको सिर पर लादकर वे पहाड़ी लोग आये। तब ३३-५५

5 कुऱवर् उरैत्तवै

एऴ्पिऱ्प्पु अडियोम्; वाऴ्ह निन्न् कॊऱ्ऱम्!
कान्न वेङ्गैक्कीऴोर् कारिहै
तान्न मुलै इऴन्दु तन्नित्तुयर् ॲय्दि
वानवर् पोऱ्ऱ मन्नॊडुम् कूडि
वान्नवर् पोऱ्ऱ वानहम् पॆऱ्ऱनळ्
ॲन्नाट् टाऴ्कॊल् यार्महळ् कॊल्लो?
निन्नाट्टु याङ्गळ् निन्नैप्पितुम् अऱियेम्;
पन्नू ऱायिरत्तु आण्डु वाऴियर् ॲन्न 56-63

५ "कुऱवर् के कथन"

(उन्होने शेरन्न शॆङ्गुट्टुवन्न को नमस्कार किया और निम्नप्रकार स्तुति की:) सात जन्मों के हम दास है। जय हो। जिये आप की जय! जंगली "वेगै' तरु के नीचे एक देवी, अपना एक स्तन गँवाकर अतीव दुखी होकर (खड़ी थी) फिर वह व्योमवासियों के स्तुति करते, अपने पति के साथ मिलकर व्योम लोक गयी और देवगण उसकी स्तुति करते रहे! वह किस देश की होगी? किसकी लड़की होगी? आपके राज्य के हम यह कल्पना भी नहीं कर पाते! (या ऐसा कुछ कभी पहले हुआ-यह भी स्मरण नहीं करते।) आप अनेक सौ के सहस्र वर्ष जियें। ५६-६३

6 शात्तन्नार् शॊन्नवै

मण्कळि नॆडुवेल् मन्नवर् कण्डु
कण्कळि मयक्कत्तुक् कादलोडु इरुन्द
तण्तमिऴ् आशान्न शात्तन्न इ··ङु उरैक्कुम्
'ऒण्डॊडि मादर्क्कु उऱ्ऱदै ॲल्लाम्
तिण्डिऱल् वेन्दे! शॆप्पक् केळाय्
तीविनैच् चिलम्बु कारणमाह
आय्तॊडि अरिवै कण्वर्कु उऱ्ऱदुम्;

वलम् पड्ु तात्तै मत्तवन् मुन्नर्च्
चिलम्बोड्ु शॅन्र् शेयिऴै वऴक्कुम्;
शॅन्जिलम्बु ॲरिन्दु देवि मुन्नर्
वन्जित्तम् शार्रिय मापॅरुम् पत्तिनि
'अन्जिल् ओदि!' अरिह ॲन्तप् पयर्न्दु
मुदिरा मुलै मुहत्तु ॲऴुन्द तीयिन्
मदुरै मूदूर् मानहर् शुट्टदुम्;
'अरिमान् एन्दिय अमळिमिशै इरुन्द
तिरुवीऴ् मार्विन् तॅन्नर् कोमान्
तयङ्गिणर्क् कोदै तन् तुयर् पॉरामन्
मयङ्गित्तन् कोल् ॲन मलरडि वरुडित्
तलैत्ताळ् नड्मोऴि तन् शॅवि केळाळ्
कलक्कम् कोळ्ळाळ्, कड्न्दुयर् पॉराअळ्;
'मन्नवन् शॅल्वऴिच् चॅल्ह यान् ॲनत्
तन्नुयिर् कॉण्डु अवन् उयिर् तेडिनळ् पोल्
पॅरुङ्गोप् पॅण्डुम् ऑरुङ्गुडन् माय्न्दनळ्
'कॉर्र वेन्दन् कॉडुङ्गोल् तन्मै
इर्रु' ॲनक् काट्टि इरैक्कु उरैप्पनळ् पोल्;
तन्नाट्टु आङ्गण् तन्मैयिर् चॅल्लाळ्
निन्नाट्टु अहवयिन् अडैन्दनळ् नङ्गै ॲन्रु
ऑऴिवु इन्रि उरैत्तु ईण्डु ऊऴि यूऴि
वऴि वऴिच् चिर्क्क निन् वलम् पड्ु कॉर्रम्' ॲन 64-92

६ शात्तनार् के कथन

भू-हर्ष-दायी, दीर्घ सांग धारी राजा शॅङ्गुट्टुवन् का दर्शन करके दृष्टि-हर्ष-मस्त, शीतल तमिऴ्-आचार्य शात्तनार् जो वहाँ थे, यों बोले : उज्वल आभरण-सुदरी पर जो बीता वह सब, हे साहसी और पराक्रमी राजा, मैं कहता हूँ। आप सुनें। कठोर कृत्य का हेतु, नूपुर के द्वारा उसके पति को जो हुआ वह; बलवती सेना के स्वामी पाण्डिय राजा के सामने नूपुर लेकर जो गयी उसकी बहस; ललित नूपुर फेककर, रानी के सामने प्रतिज्ञा करने वाली महीयसी सती का रानी से यह कहकर जाना कि कमनीय-कुतला! जान लो; और तरुण स्तन के अग्र भाग से उठी आग द्वारा प्राचीन मदुरै

के महानगर को जला देना; रानी का यह समझना कि सिंहासन पर आसीन श्री-प्रिय वक्षवाला दक्षिण पति मनोरम स्तबक धारिणी कण्णहि के दुख को न सह सका और इसलिए बेहोश हो गया है और उसके चरण कमलों को सहलाना (या कण्णहि के पैरों पडना) आदि बातें सुन लें। फिर रानी ने सत्य जाना और उस अचेतन स्थिति में प्रतिज्ञा कारिणी के शब्द नहीं सुने; न ही वह विचलित हुई। पर उस कठोर दुख को वह सह न सकी। "राजा के जाने के मार्ग में मैं भी जाऊँगी" यह कहते हुए, अपने प्राणों के सहारे उसके प्राणों को ढूँढती-सी वह पट्ट महिषी रानी भी उसके साथ प्राणों का अंत कर गयी। कण्णहि मानो यह आपको विदित करने कि विक्रमी राजा के (बुरे शासन) क्रूर राजदण्ड की हालत यही है इधर आयी है; अपने राज्य को (पति के बिना) एकाकिनी के रूप में जाना न चाहकर आपके राज्य में पधारी थी वह देवी! ऐसा शात्तन्नार ने सारी बातें बिना कुछ छोड़े बतायी और मंगला-शासन (बात का अंत) किया; यहाँ युग युगों तक परम्परागामी रीति से आपकी वीरता प्रदर्शक विजयश्री उत्तरोत्तर बढ़ती रहे। ६४-९२

7 अरश कुडियिन्नर् निलैमै !

तॆन्नत्तर् कोमान् तीत्तिर्म् केट्ट
मन्नत्तर् कोमान् वरुन्दिनन् उरैप्पोन्
ऎम्मो रन्नर वेन्दर्क्कु उऱ्ऱ
शॆम्मैयिन् इहन्द शॊऱ् चॆविप्पुलम् पडामुन्
उयिर्पदिप् पॆयर्त्तमै उऱुह ईङ्गु' अन्न
वल्विनै वळैत्त कोलै मन्नवन्
शॆल्लुयिर् निमिर्त्तुच् चॆङ्गोल् आक्कियदु
मऴैवळम् करप्पिन् वान्पेर् अच्चम्
पिऴैयुयिर् ऎय्दिन् पॆरुम् पेर् अच्चम्
कुडिपुर वुण्डुम् कॊडुङ्गोल् अञ्जि
मन्नपदं काक्कुम् नन् कुडिप् पिऱ्त्तल्
तुन्बम् अल्लदु तॊऴुतहवु इल् अॆन्त
तुन्नि्य तुन्बम् तुणिनदु वन्दु उरैत्त
नन्नूल् पुलवर्क्कु नन्कनम् उरैत्तु आङ्गु 93-106

७ राज कुल वालों की स्थिति

दक्षिण-शासक पर आ पड़ी हानि सुनकर राजाधिराज शॆंगुट्टुवन्न बहुत दुखी होकर बोला: हम जैसे राजाओं के कानों में युक्त नीति से

डिगने की यह बात जा नही लगे उसके पहले ही "हमारे प्राणों का अपना आगार (शरीर) खोना हो जाए!" —यह सोचकर क्रूर विधि के कारण झुके दण्ड को राजा ने जो प्राण त्याग दिया उसने सीधा करके ऋजु बना दिया। (राजा लोगो की विचित्र दशा देखो:) मेघ बरसाना छोड़ दे तो राजा को दोषी कहे जाने का बड़ा डर लगता है। प्रजाजन अपने अपने कर्मो के कारण ही सही, कोई कष्ट उठावे तो भी (निंदा का) बहुत बड़ा डर होता है। प्रजा पालन ठीक करते हुए भी (अप्रत्याशित रूप से) राजधर्म के विचलित होने के भय से सदा डरता रहना पड़ता है। अत: प्रजापालन करने वाले उत्तम (राज) कुल में जन्म लेना दु:ख ही है। वर्णनीय नही है! इस भांति, पाण्डिय राजा के हुए दुख को ठीक प्रकार से जान लेकर जिन्होंने बताया उन सद्ग्रंथो के (रचयिता अध्यायी) शात्तनार से गंभीर व्यथा के साथ राजा बोला तब, वहाँ। ६३-१०६

8 वियक्कुम् नलत्तोर् आर्

उयिरुडन् शॅन्ऱ ऑरु महळ् तन्निनुम्
शॅयिरुडन् वन्दविच् चेयिळै तन्निनुम्
नन्नुदल् वियक्कुम् नलत्तोर् यार्? ऍन्ऱ
मन्नवन् उरॅप्प, मापॅरुन् देवि 107–110

८ अधिक विस्मयकारी चरित्र किसका है

(शेरमान् ने पूछा) पति के प्राणों के साथ एक देवी (प्राण त्याग) गयी। और गुस्से के साथ दूसरी एक इधर आयी। इन दोनो में अधिक विस्मयकारी (श्लाघनीय) चरित्र किसका है? पटरानी ने कहा: १०७-११०

9 पत्तिनि परगल् वेण्डुम्

कादलन् तुन्बम् काणादु कळिन्द
मादरो पॅरुन्दिरु उऱुह, वान्हत्तु
अत्तिऱम् निऱ्क; नम् अहल्नाड्डु अडैन्दविप्
पत्तिनिक् कडवुळैप् परशल् वेण्डुम् ऍन्ऱ
मालै वॅण्कुडै मन्नवन् विरुम्बि
नूलऱि पुलवरै नोक्क आड्गवर् 111–116

९ पत्नी की पूजा होनी चाहिए

पति का दुख न सहकर जो प्राण छोड़ चुकी उस देवी को स्वर्ग में बड़ी श्री मिले ! आकाश लोक में उसकी अच्छी स्थिति हो। हमारे विशाल राज्य में जो आयी उस देवी की पूजा होनी चाहिए। यह बात माला तथा श्वेत छत्र वाले राजा को पसंद आयी। उसने शास्त्रज्ञ पंडितों पर (सार्थक प्रश्न सूचक) दृष्टि दौडायी। उन्होंने वहाँ- १११-११६

10 कल् कॉळ्वदु ऍङ्गे ?

ऑऱ्ऱका मरविल् पॉदियिल् अन्ऱियुम्
विऱ्ऱलैक् कॉण्ड वियत्पेर् इमयत्तुक्
कऱ्काल् कॉळ्ळिनुम् कडवुळ् आहुम्;
गङ्गैप्पेर् याऱ्ऱिनुम् काविरिप् पुनलिनुम्
तङ्गिय नीर्प्पडै तहवो उडैत्तु' ऍन 117-121

१० शिला कहाँ से लायी जाय

रहे (पंडितों ने) कहा— (शेरर् द्वारा अंकित) अक्षुण्ण हस्ती वाले "पॉदियिल्" से लायें, नही तो, धनु को सिर पर धारण करते रहने वाले बड़े हिमाचल से शिला लेकर आयें, दोनों में किसी का भी देवी का विग्रह बनाया जा सकता है। बड़ी गंगा नदी में या काविरि के जल मे अभिषेक कराना दोनो बराबर है, उचित हैं। यह सुनकर राजा बोला : ११७-१२१

11 शेरमान् अऱिवित्तवै

पॉदियिऱ् कुन्ऱत्तुक् कऱ्काल् कॉण्डु
मुदुनीर्क् काविरि मुन्नुतुऱैप् पडुत्तल्
मऱत्तहै नॆडुवाळ् ऍंमकुडिप् पिऱन्दोर्क्कुच्
चिऱप्पॉडु वरूउम् शॆय्हैयो अन्ऱु; 122-125

११ शेरमान ने सुनाया

"पॉदियै" पर्वत पर से शिला लेकर पुरातन काविरि के घाट में स्नान-रस्म करना, वीरता की परंपरा मे आये, खड्गधारी हमारे कुल में जात व्यक्ति के लिए गौरव लाने वाली बात नही होगा। १२२-१२५

12 शेरमान्न् वञ्जिन्नम्

पुन् मयिर्च् चडैमुडि पुलरा उडुक्कै
मुन्नूल् मार्बिन् मुत्तीच् चॅल्वत्तु
इरुपिऱप् पाळरॉडु पॅरुमलै अरशन्
मडवदिन्न् माण्ड मापॅरुम् पत्तिनिक्
कडवुळ् अॅळुदवोर् कल्तारान् अॅनिन्
वळि़ निन्ऱु पयवा माण्बिल् वाळ्क्कै
कळि़न्दोर् ऑळि़न्दोर्क्कुक् काट्टिय काञ्जियुम्
मुदुकुडिप् पिऱन्द मुदिराच् चॅल्वियै
मदि मुडिक्कु अळित्त महट्पाऱ् काञ्जियुम्
तॅन्न्दिशै अॅन्ऱन् वञ्जियॉडु वडदिशै
निन्ऱॅदिर् ऊन्ऱिय नीळ्पॅरुङ् गाञ्जियुम्
निलवुक्कदिर् अळैन्द नीळ्पॅरुञ् जॅन्नि
अलर्मन् दारमॉडु आङ्गयल् मलर्न्द
वेङ्गैयॉडु तॉडुत्त विळङ्गु विऱल्माले
मेम्वड मलैदलुम् काण्गुवल् ईङ्गुअॅन्नक् 126-140

१२ शेरमान की प्रतिज्ञा

अल्प-केश-जटा, गीला वस्त्र, त्रिसूत्र-वक्ष, और त्रिरग्निश्री वाले द्विजों के साथ रहने वाले बड़े हिमालय प्रदेश का राजा, अपनी कम वय में ही अमर बनी (मरी हुई) महान सती कण्णहि का विग्रह बनाने के लिए शिला नही देगा क्या ? नही देगा तो मेरी प्रतिज्ञा यह है कि मैं "काञ्जि" पुष्पों, मंदार पुष्पों और 'वेगै' पुष्पों की माला पहन कर उनको 'काञ्जि' इन पुष्पो के द्वारा द्योतित सीख सिखा दूंगा। (काञ्जि, एक पुष्प का नाम है। तमिऴ् साहित्य अहम् यानी अंतरंग और पुऱम् यानी वहिरंग के दो बड़े भागों में विभक्त है। अहम प्रेम से संबंध रखता है और पुरम युद्ध से। इन विभागों की बड़ी घटनाएँ 'तिणै' के अंतर्गत आती हैं और हर घटना के खण्ड या प्रकरण "तुऱै" के अंतर्गत। हर "तिणै" किसी पुष्प के नाम से जाना जाता है। यहाँ राजा बताता है कि "काञ्जि" द्वारा क्या क्या बातें समझी जाती है। अनु.) सुफल-दायक सन्मार्ग छोड़ गरिमाहीन निकृष्ट जीवन बिताकर वृद्ध हुए लोगों द्वारा परवर्ती लोगों को बतायी जाने वाली शरीर की नश्वरता की सीख— "मुदु काञ्जि"; पुरातन कुल में जनित बाला पार्वती को चंद्रशेखर को देने की

बात— "महट्ट् पाड् काञ्जि" दक्षिण दिशा की मेरी 'वञ्जि' (विजय की चढ़ाई) के सामने उत्तर के लोगों के डटने की बात— अतिदीर्घ काञ्जि। काञ्जि के फूल के साथ शीतल चंद्र किरण– सिक्त हिमालय के उच्च शिखर पर खिले मंदार और पास ही में खिले' वेगै' फूल गूंथ कर बनी जयमाला अपनी श्रेष्ठता साबित करते हुए पहनकर दिखाऊँगा। (यानी उनसे लड़ूंगा सबक सिखा दूंगा और शिला लाकर ही छोड़ूँगा।) १२६-१४०

13 वाळिऱ्कु वञ्जि शूड्डुम्

कुडैनिलै वञ्जियुम्, कौऱ्ऱ वञ्जियुम्
नेंडु मारायम् निलैपेऱ्ऱ वञ्जियुम्
वेन्ऱोर् विळङ्गिय वियत्तपेरु वञ्जियुम्
पिन्ऱाच् चिऱप्पिन् पेरुञ्जोऱ्ऱु वञ्जियुम्
कुन्ऱाच् चिऱप्पिन् कौऱ्ऱ वळ्ळैयुम्
वट्कर् पोहिय वात्पत्तन् दोट्टुडन्
पुट्कै शेत्त पौलियच् चूट्टिप्
पूवा वञ्जिप् पौन्ऩहर्प् पुऱत्तु अन्
वाय्वाळ् मलैन्द वञ्जि शूड्डुम् अन्तप् 141–149

१३ तलवार को "वञ्जि" पहनायेंगे

[वञ्जि— एक फूल, युद्ध यात्रा, युद्ध यात्रा के प्रारंभिक अनुष्ठान कृत्य इनका साहित्य में वर्णन; शेरन् की राजधानी का नाम— आदि।] राजा ने आज्ञा दी कि युद्ध सन्नद्ध हो जायें। साहित्यिक भाषा में कथन ऐसा होता है। अनु. छत्र प्रस्थान की "वञ्जि," विजय "वञ्जि," लंबी राज्य स्थिरता की "वञ्जि," विजेताओं की महिमा युक्त "वञ्जि," अक्षुण्ण महिमा की बड़े अन्न की "वञ्जि" के साथ अक्षय गरिमा वाले विजय- "वळ्ळै" के फूल को और अभग्न ताल के फूल को दृढ़-प्रतिज्ञ सेना के वीर पहन कर शोभित हों; और महिमामय वञ्जि के स्वर्ण नगर के बाहर मेरी तेज शत्रु-घातिनी तलवार को "वञ्जि" पहनायी जाय। (जैसे "वञ्जि" युद्ध यात्रा का चिह्न है वैसे वळ्ळै विजयोत्सव के साथ शत्रु पराजय पर शोक करने का भी चिह्न माना जाता है।) १४१-१४९

14 विल्लवन् कोदै शॉन्नतवै

पल्याण्डु वाऴ्ह निन् कॉऱ्ऱम् ईण्डु ॲन
विल्लवन् कोदै वेन्दऱ्कु उरैक्कुम्;
'नुम्पोल् वेन्दर नुम्मोडु इहलिक्
कॉङ्गर् शॅङ्गळत्तुक् कॉडुवरिक् कयऱ्कॉडि
पहैप् पुऱत्तुत् तन्दनर्; आयिनुम् आङ्गवै
तिशैमुह वेळत्तिन् शॅवियहम् पुक्कन
कॉङ्गणर् कलिङ्गर कॉडुङ् गरुनाडर्
पङ्गळर् गङ्गर् पल्वेऱ् कट्टियर्
वडवा रियरॉडु वण्तमिऴ् मयक्कत्तु उन्
कडमलै वेट्टमॅन् कट्पुलम् पिरियादु
गङ्गैप् पेर्याऱ्ऱुक् कडुम्पुनल् नीत्तम्
ॲम्को महळॊ आट्टिय अन्नाळ्
आरिय मन्नरीईर् ऐञ्ञूऱ्ऱु वर्क्कु
ऑरु नी आहिय शॅरुवॆङ् कोलम्
कण्विऴित्तुक् कण्डदु कडुङ्गण् कूऱ्ऱम्!
इमिऴ् कडल् वेलियैत् तमिऴ्नाडु आक्किय
इदुनी करुदिनै आयिन्, एऱ्पवर्
मुदुनीर् उलहिल् मुऴुवदुम् इल्लै;
इमयमाल् वरैक्कुम् ॲम्कोन् शॅल्वदु
कडवुऴ् ॲऴुदवोर् कऱ्के आवदॆन्
वडदिशै मरुङ्गिन् मन्नर्क्कु ॲल्लाम्
तॆन्तमिऴ् नल्नाट्टुच् चॆऴुविल् कयल् पुलि
मण्तलै एऱ्ऱ वरैह ईण्डु ॲन 150–172

१४ विल्लवन् कोदै का कथन

"यहाँ आपकी विजय श्री अनेक वर्ष जारी रहे"— इस अभिनदन के साथ मंत्री 'विल्लवन् कोदै' ने राजा से यों कहा— आपके ही समान है "पाडियन्" और 'शोऴन्'। उन्होने आपसे युद्ध किया और कोंकण के लाल वने युद्धस्थल मे हार कर अपने व्याघ्र और मीन ध्वज दे दिये। यह समाचार तभी अष्ठ दिग्गजो के कानो मे पहुँच भी गया। कॉङ्गणर्, कलिङ्गर्, क्रूर "करुनाडर्" "वङ्गळर," गङ्गर्, अनेक "वेल्" के पति कट्टियर् और आर्य— आदि की

सेनाओ के साथ जब आप जा भिडे, अपनी तमिळ् की सेना के साथ— वह गज-आखेट का सा दृश्य मेरी आँखो से अब भी नही हटता। गगा की बडी नदी की तेज धारा मेआपने अपनी राजमाता का पवित्र स्नान कराया। एक-एक सहस्र राजा आपसे लडने आये। उस लडाई में आपके अकेले ही उनसे लड़ने का वह भयकर दृश्य जो मैने आँख खोल-खोल कर देखा उसमें आप साक्षात् क्रूराक्ष यम ही से लगे।

ललकारती लहरो वाले समुद्र के परकोटे के अदर रहने वाले भारत देश को ही आपने तमिळ देश बना लिया है। वैसे आपने हिमालय से पत्थर लाने का सकल्प किया है तो आपका सामना करने वाला कोई नही होगा। हिमालय पर्वत पर आपका, हमारे राजा का जाना 'देव' विग्रहार्थ शिला लाने के लिए ही है। तो हम उत्तर दिशा के सभी राजाओ को यह सदेश भिजवा देगे कि वे दक्षिणी तमिळ देश की सम्पन्नता के द्योतक धनुप, मत्स्य और व्याघ्र की पताकाओ को अपने अपने देश मे ऊपर फहरा दे। १५०-१७२

15 अळुम्बुविल् वेळ् उरैत्तवै

'नावलम् तण् पॊळिल् नण्णार् ऒऱ्ऱु नम्
कावल् वञ्जिक् कडैमुहम् पिरिया;
वरुम्पणि यानै वेन्दर् ऒऱ्ऱे
तञ्जॆविप् पडुक्कुम् तहैमैय अन्ऱो ?
अऱ्ऱे पऱ्ऱे' ॲन्ऱे अळुम्बिल् वेळ् उरैप्प 173–177

१५ अळुम्बिल् वेळ् का कहना

(अळुम्बिल प्रात का अधिपति जो शेङ्गुट्टुवन का दरबारी था। उसने कहा:)

जम्बूद्वीप के इस देश भर में रहने वाले हमारे वैरी राजाओ के जासूस वञ्जि के राजद्वार से हटते नही। यही टिके हुए है। झूल आदि अलकार युक्त गजो के उन पतियों के चर ही उनके कानो में, (हमारे पुर में) ढिढोरा पिटवायेगे तो, वह समाचार सुना देगे न! १७३-१७७

16 वञ्जियिऱ् पोर्प्पऱै

निरैयरुम् तानै वेन्दनुम् नेर्न्दु
कूडार् वञ्जिक् कूट्टुण्डु शिऱन्द

वाडा वञ्जि मानहर् पुक्कपिऩ्-
वाऴ्ह ऍम्को मऩ्ऩवर् पॆरुन्दहै !
ऊऴि तॊऱु ऊऴि उलहम् काक्क' ऍऩ्ऩ
'विल्तलैक् कॊण्ड वियऩ्पेर् इमयत्तुओर्
कऱ्कॊण्डु पॆयरुम् ऍम् कावलऩ् आदलिऩ्
वडतिशै मरुङ्गिऩ् मऩ्ऩर् ऍल्लाम्
इडुतिऱै कॊडुवन्दु ऍदिरीर् आयिऩ्
कडऱ्कडम्बु ऍऱिन्द कडुम्बोर वार्त्तैयुम्
विडर्च्चिलै पॊऱित्त वियऩ्पेरु वार्त्तैयुम्
केट्टु वाऴुमिऩ्; केळीर् आयिऩ्
तोळ्तुणै तुऱक्कुम् तुऱवॊडु वाऴुमिऩ्;
ताऴ् कऴल् मऩ्ऩऩ् तऩ्ऩ तिरुमेऩि
वाऴ्ह शेनामुहम्, ऍऩ्ऩ वाऴ्त्ति
इऱैइयल् याऩै ऍरुत्तत्तु एऱ्ऱि;
अऱैपऱै ऍऴुन्ददाल् अणिनहर् मरुङ्गॆऩ 178–194

१६ वञ्जि में युद्ध का डंका

अनेक पंक्तियों में जाने वाली सेनाओं के पति राजा ने भी उस बात से अपनी सहमति प्रगट की। पश्चात् वे वैरी राजाओं को परास्तकर ग्रहण किये हुए धन से समृद्ध, अक्षय वञ्जि नगर जा पहुँचे। (फिर ढिंढोरा पीटा गया :) हमारे राजा, राजाओं में सर्वश्रेष्ठ की जय हो ! जिये वे ! युग युगों तक लोक-रक्षण करते रहें। धनुष-अंकित शिखर वाले बड़े हिमालय पर्वत से एक शिला काट ले आयँगे हमारे पालक। इसलिए उत्तर दिशा वासी सभी राजा लोग भेंटें लेकर आयें और उनकी अगवानी करें। समुद्र मध्य "कडम्बु" तरु को नष्ट करने जो युद्ध हुआ था उसका समाचार और हिमालय पर धनुष को खुदवाने का समाचार सुन कर जीने का रास्ता बना लो। (यानी आप समुद्र में या हिमालय पर जाकर भी रक्षा नहीं पा सकेंगे।) नहीं मानोगे तो बाहु-सगिनी को त्यागकर वैरागी बन कर जीवित रहो। वीरता सूचक पायल धारी राजा का श्री शरीर रूपी हरावल (सेना-मुख) जीता रहे। इस तरह मंगल कामना करते हुए राजगज की गर्दन पर ढक्का चढ़ाकर सुंदर नगर भर में ढिढोरा पीटा गया। १७८-१९४

26 काल्कोट् कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 अरशवै कूडिट्रु

अऱैपऱै अॆऴुन्द पिन्, अरिमान् एन्दिय
मुऱैमुदऱ् कट्टिल् इऱैमहन् एऱ
आशान् पॆरुङ्गणि अरुन्दिऱल् अमैच्चर
तानैत् तलैवर् तम्मॊडु कुऴीइ;
मन्नर् मन्नन् वाऴ्ह अॆन्ऱु एत्ति
मुन्निय तिशैयिन् मुऱैमॊऴि केट्प 1-6

२६ श्री शिला प्रापण गाथा

(छंद : निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

१ राज सभा एकत्र हुई

मुनादी पिटने के बाद सिंह धृत, परंपरा के गौरव वाले राजासन पर राजा चढ़ बैठे। आचार्य (पुरोहित), प्रधान ज्योतिषी, अतिशक्तिमान अमात्य और सेनापति-सब एकत्रित हुए। 'राजाधिराज जीते रहें!' यह जय जीव किया और पूर्वोक्त उत्तर दिशा की युद्ध-यात्रा संबन्धी पक्की आज्ञा सुनने तैयार हुए। १-६

2 शेरलन् वञ्जिन्तम्

वियन्पड् तानै विऱलोर्क्कु अल्लाम्
उयर्न्दोङ्गु वॆण्कुडै उरवोन् कूऱुम्
'इमैयत् तापदर् अॆमक्कीङ्गु उणर्त्तिय
अमैया वाऴ्क्कै अरशर् वाय्मॊऴि
नम्बाल् ऒऴिहुवदु आयिन् आङ्ग.·.दु
एम्बोल् वेन्दर्क्कु इहऴ्च्चियुम् तरूउम्
वडदिशै मरुङ्गिन् मन्नर्तम् मुडित्तलैक्
कडवुळ् अॆऴुद ओर् कऱ्कॊण्डु अल्लदु
वऱिदु मीळुम् अॆन् वाय्वाळ् आहिल्
शॆऱिकऴल् पुनैन्द शॆरुवॆङ् गोलत्तुप्
पहैअरशु नडुक्कादु पयङ्गॊऴु वॆप्पिऱ्
कुडिनडुक्कुऱूउम् कोलेन् आह अॆन 7-18

२ शेरन् की सौगंध

तब प्रकीर्तित अपनी सेना के सभी नायक वीरो से अत्युन्नत श्वेत छत्र-धर पराक्रमी राजा बोले। हिमालय के तपस्वियो ने इधर हमारे पास जो समझाकर कहा वह अव्यवस्थित जीवन बिताने वाले आर्य राजाओं के मुख से निकला निंदक कथन हमारी ओर से उपेक्षित वैसे ही रह जाय तो वह हमारे जैसे राजाओ के लिए अपमान की बात होगी। उत्तर की तरफ से वहाँ के राजाओ के किरीटधारी सिरो पर रखकर देवता के शिल्प निर्माण के लिए शिला लाये बिना मेरी विजय-जननी तलवार कोश वापस आयगी तो मैं ऐसा राजदंडधर माना जाऊँ जो वीर पायल पहन कर युद्ध में गया हो और भयंकर युद्ध भूमि मे शत्रु राजाओं को कपा नही सका हो पर जो सुसपन्न राज्य की अपनी प्रजा को त्रस्त करता हो ! ७-१८

3 अमैह निन् शिनम्

'आरॣपुनै तॆरियलुम् अलर्ताऱ् वेम्बुम्
शीर्कॆऴु मणि मुडिक्कु अणिन्दोर् अल्लाल्
अञ्जिनर्क्कु अळिक्कुम् अडुपोर् अण्णल् ! निन्
वञ्जिनत्तु ऎदिरुम् मन्नरुम् उळरो ?
इमैय वरम्ब, निन् इहऴ्न्दोर् अल्लर्
अमैह निन् शिनम् ऎन्न आशान् कूऱ 19–24

३ आपका क्रोध शांत हो

तब आचार्य (पुरोहित) बोले· "अगस्त्य' के फूलो की बनी माला से और खिले नीम के फूलों की गुँथी माला से अलंकृत सुदर किरीटधारी (क्रमश: शोऴन और पाण्डियन्) राजाओं के अलावा जो भी आप से डरते हैं उनको भी करुणा प्रदान करने वाले हे समर-समर्थ वदान्य ! तुम्हारी प्रतिज्ञा को असत्य कर देने वाला कोई राजा भी होगा क्या ? हे 'इमैय वरम्ब' (हिमालय को अपने राज्य की सीमा बनाने वाले) ! उन्होने अकेली तुम्हारी निंदा नही की (ऐसा मानो) ! इसलिए अपना क्रोध शात करो। १९-२४

4 नल्ल मुऴुत्तम्

आरिऱ मादियिनुम् काऱुह अडिप्पयिनरु
एनडु केळ्वियुम् अमैन्दोन् ऒऴुन्दु

वेन्न कोट्रम् !
'वेन्दिरल् वेन्दे वाळ्ह निन्न कोट्रम् !
इरुनिल मरुङ्गित्न मन्नर् ऍल्लाम् नित्न
तिरुमलरत्त तामरैच् चेवडि पणियुम्
मुळुत्तम् ईङ्गिदु मुन्नत्निय तिशैमेल्
ऍळुच्चिप् पालै आह ऍन्नरु एत्त
मीळा वॅन्नरि वेन्दत्न केट्टु
'वाळुम् कुडैयुम् वडतिशैप् पॅयर्क्क' ॲन्न 25-33

४ अच्छा मुहूर्त है।

बारहो मासों (राशियों) की ग्रह-स्थिति का ज्ञान- अभ्यास करके जो
(तिथि, नक्षत्र, वार, योग तथा कारण; या मित्र, जय, उच्च, शत्रु तथा नीच)
पांचों तथ्यों का विवरण जानता था वह ज्योतिषी उठा। बोला : हे शत्रु भयंकर
वीर राजा ! आपकी विजय श्री सतत हो ! अब ऐसा मुहूर्त है जिसमें काम
प्रारम्भ करने से बड़ी पृथ्वी के सारे राजा आपके श्री चरण कमलों में सिर
नवायँगे। इस लिए जिस दिशा में जाना चाहते है उस उत्तर-दिशा में जाने
के लिए निकले। उसने राजा की इस भाँति स्तुति की। अपृथक-विजय
राजा ने यह सुनकर आज्ञा दी कि तलवार और छत्र को उत्तर की ओर
बढ़ा लो। २५-३३

5 पुऱ निलैक् कोट्टम् वन्दत्नर्

उरवुमण् शुमन्द अरवुत्तलै पत्निप्पप्
पॊरुनर् आर्प्पॊडु मुरशॊळुन्दु ऑलिप्प
इरविडङ् गॆडुत्त निरैमणि विळक्कित्न
विरवुक्कॊडि अडुक्कत्तु निरयत्त तात्नैयोडु
ऐम्पॆरुङ् कुळुवुम् ऍण्पेर् आयमुम्
वॆम्परि यात्नै वेन्दर्क्कु ओङ्गिय
करुम वित्नैञरुम् कणक्कियल् वित्नैञरुम्
तरुम वित्नैञरुम् तन्दिर वित्नैञरुम्
'मण्तिणि ञालम् आळ्वोन्न वाळ्हॆत्तप्
पिण्डम् उण्णुम् पॆरुङ्गळिट्रु ऍरुत्तित्न
मऱमिहु वाळुम् मालॆवॆण् कुडैयुम्
पुऱनिलैक् कोट्टप् पुरिशैयिऱ् पुहुत्तिप्
पुरैतीर् वञ्जिप् पॊन्दैयित्न तॊडुप्पोन्न
अरैशु विळङ्गु अवैयम् मुऱैयिऱ् पुहुतर 34-47

५ गढ के बाहर मंडप में आये

(राजा ने कूच आरंभ किया तो) भारी पृथ्वी के वाहक शेष नाग के सिर काँप उठे। सिपाहियों के नर्दन के साथ नगाड़े बज उठे। रात को रहने (का स्थान) न देकर दीप पंक्तियों में जल उठी। उस रोशनी में झंडों को बहुत संख्या में फहराते हुए, शत्रु-दृष्टि, में नारकीय सेना उठी। साथ पंच महा परिषद और अष्ठ-महा-मंडल, कठोर और तीव्र गामी गजों के पति राजा के श्रेष्ठ कर्मी, गणक (या लेखपाल) धर्मानुष्ठान कर्त्ता, तंत्र कर्ता, आदि भी साथ गये। उन्होने मगल ध्वनि निकाली कि मट्टी भरी पृथ्वी के शासक जीते रहें। पिडभोक्ता बड़े राजगज की गर्दन पर वीर खड्ग, तथा मालायुक्त श्वेत छत्र रखवाकर उन्हे गढ के बाहर के मडप में ले आये। बाद, निर्दोष "वञ्जि" तथा ताल (पुष्प) पत्र की मालाधारी राजा तथा दरबारी लोग वहाँ आ पहुँचे। ३४-४७

6 वञ्जि शूडित्तान्

अरुम् पडैत् तात्तै अमर्वेट्टुक् कलित्त
पॆरुम्पडैत् तलैवर्क्कुप् पॆरुञ्जोरु वहुत्तुप्
पूवा वञ्जियिर् पूत्त वञ्जि
वाय्वाळ् नॆडुन्दहै मणि मुडिक्कु अणिन्दु 48-51

६ 'वञ्जि' धारण किया

अत्युग्र आयुधधारी वीरों, और एकत्रित युद्धेच्छुक बड़े सेनानायकों को राजा ने खूब भोजन खिलाया। फिर पूवा "वञ्जि" नगर में खिले "वञ्जि" के फूल को वीर खड्ग धारी राजा ने अपने मणि-किरीट में धारण किया। (यह एक रस्म है— युद्ध यात्रा के समय अदा किया जाता है।) ४८-५१

7 यात्तैप् पिडर्त्तलै अमर्न्दनन्

आलम् कावलर् नाळ्तिऱै पयिरुम्
कालै मुरशम् कडैमुहत्तु ऎऴुदलुम्
निलवुक्कदिर् मुडित्त नीळिरुञ् शॆन्नि
उलहुपॊदि उरुवत्तु उयर्न्दोन् शेवडि
मऱञ्जेर् वञ्जि मालैयॊडु पुनैन्दु;
इऱैञ्जाच् चॆन्नि इऱैञ्जि वलम् कॊण्डु;
मऱैयोर् एन्दिय आवुदि नऱुम्पुहै

नरैक्कोळु मालैयिन् नल्लहम् वरुत्तक्
कडक्कळि यानैप् पिडर्त्तलै एऱिनन् 52–60

७ गज-गर्दन पर आसीन हुआ

(सवेरा हुआ।) अवनिपालों को कर देने बुलाते हुए उषा-नगाड़ा राज-द्वार पर बज उठा। चाँदनी-गुथित जटा जूट धारी, सारे लोकों को समाहित करने वाले दिव्य शरीरी परमेश्वर के श्रेष्ठ चरणों को वीरता सूचक वञ्जि के साथ अपने सिर पर राजा ने धारण किया (स्मरण किया)। और अपने अनन्यनमित सिर को नवाया और (उनके मंदिर की) परिक्रमा की। ब्राह्मणों के द्वारा हुत आहुति के धूप ने राजा की सुगंधित माला के अंतस्थल को मुरझा दिया। इस वातावरण में राजा मदमत्त गज की गर्दन पर चढ़कर विराजमान हुआ। ५२-६०

8 तिरुमालिन् शेडम्

कुडक्कोक् कुट्टुवन् कॉऱ्ऱड् कॉळ् हॅन्न
आडह माडत्तु अऱितुयिल् अमरन्दोन्
शेडम् कॉण्डु शिलर् निन्ऱु एत्तत्
तॅण्णीर् करन्द शॅञ्जडैक् कडवुळ्
वण्णच् चेवडि मणिमुडि वैत्तलिन्
आड्गदु वाड्गि अणि मणिप् पुयत्तुत्
ताड्गिनन् आहित् तहैमैयिन् शॅल्वळि 61–67

८ श्री विष्णु का प्रसाद

तब कुछ लोगों ने आकर मंगल उच्चारण किये कि पश्चिमी देश का राजा कुट्टुवन् विजयी होवे! वे तिरुवनन्तपुरम् से योगनिद्रारत श्री विष्णु का प्रसाद लाये थे। राजा स्वच्छ-सलिल (गगा को) जटा में छिपाने वाले लाल जटा धारी ईश्वर के शुभ चरणो को अपने सिर पर धारण कर चुका था। अतः उसने वह प्रसाद लेकर अलंकृत अपनी सुदर बाहुओं पर धारण किया। फिर बड़े शान के साथ राजा चला। मार्ग में ६१-६७

9 नाडह महळिर् वाळ्त्तितर्

नाडह मडन्दैयर् आडरङ्गु याङ्गणुम्
कूडैयिर् पॉलिन्दु कॉऱ्ऱ वेन्दे !

वाहै तुम्बै मणित्तोट्टप् पोन्ऱैयोडु
ओडै यानैयिन् उयर् मुहत्तु ओङ्ग
वेण्कुडै नीऴलॅम् वॅऴ्वळे कवरुम्
कण्कळि कॉळ्ळुम् काट्चियै आह अॅन 68–73

९ नाट्यांगनाओं ने बधाई दी

नाट्यागनाओं ने सभी रंगशालाओ में हाथ जोड़े खड़ी होकर मंगला शासन किया— हे विजयी राजा ! "वाहै," तुम्बै और सुदर ताल पत्र की बनी माला मुखपट्टशोभित गजराज के सिर पर सदा शोभा पावे। श्वेत छत्र की छाया में आप हमारे श्वेत कंकणों को हरते हुए हमारी दृष्टि को आनंद देने वाले रूप-सौदर्यवान बने रहे। ६८-७३

10 वञ्जि नीङ्गित्तन्

मागदप् पुलवरुम् वैता ळिहरुम्
शूदरुम् नल्वळम् तोन्ऱ् वाऴ्त्त;
यानै वीररुम् इवुळित्तलै वरुम्
वाय्वाळ् मऱवरुम् वाळ्वलन् एत्तत्
तानवर् तम्मेल् तम्बदि नीङ्गुम्
वानवन् पोल वञ्जि नीङ्गित 74–79

१० वञ्जि नगर छोड़ा

और मागधों, कवियों, वैतालिको और सूतों ने मंगल गान गाये। गज-वीरों अश्व वीरों और खड्गधर वीरों ने तलवार की वीरता की प्रशंसा गायी। (यह सब सुनते हुए) दानवों से युद्ध करने के लिए जो अपना नगर छोड़कर निकले उन देव (सेनापति) के समान राजा "वञ्जि" छोड़कर आगे बढ़ा। ७४-७९

11 नील गिरि शेर्न्दत्तन्

तण्डत् तलैवरुम् तलैत्तारच् चेनैयुम्
वेण्तलैप् पुणरियिन् विळिम्बु शूऴ् पोद
मलैमुदुहु नॆळिय निलै नाडु अदर्पड
उलहमन्नवन् ऑरुङ्गुडन् शॆन्ऱाङ्गु
अलुम् पुरवि अणित्तेरुत् तानैयोडु
नील गिरियिन् नॆडुम् पुऱत्तु इरुत्ताङ्गु

आडियल् यात्तैयुम् तेरुम् मावुम्
पीडुकॅळु मऱवरुम् पिऱळाक् काप्पित्र
पाडि इरुक्कैप् पहल्चॅय् योन्ऱतन्
इरुनिल मडन्दैक्कुत् तिरुवडि अळित्ताङ्गु
अरुन्दिऱल् माक्कळ् अडियीडु एत्तप्
पॅरुम्पेर् अमळि एऱिय पिन्ऩर् 80-91

११ नीलगिरि पहुँचा

सेनानायक, तथा हरावल के वीर तीर पर टकराती श्वेत शीर्ष (झाग-युक्त) लहरो के समान लगातार गये। पर्वतों की पीठ पर सिकुड़न लग गयी। देशो के मार्गो में बाधा पड़ी। लोक शासक राजा उन सेनाओ के साथ गया और हिनहिनाते अश्वों के सवार वीरो और सुदर रथ-सेनाओं को लेकर नीलगिरि पर्वत की लंबी घाटी में एक ओर पहुँचा (वहाँ पड़ाव डाला)। विजय चरित्र वाले हाथी, रथ, अश्व, वीरता मे बढ़े सिपाही आदि अचूक सुरक्षा के साथ पड़ाव में गये। अवनि देवी को, दिनकर के समान, अपने श्री चरण को देते हुए अवनिपति उतरा और वीर लोगों की अपनी चाल की प्रशंसा सुनते हुए, जाकर अपने उत्कृष्ट आसन पर जा विराजा। बाद। ८०-९१

12 वानियङ्गु मुनिवर् वन्दनर्

इयङ्गु पडै अरवत्तु ईण्डॉलि इशैप्प
विशुम्बियङ्गु मुनिवर् वियत्न निलम् आळुम्
इन्दिर तिरुवत्तैक् काणगुदुम् ऍन्ऱे
अन्दरत्तु इळिन्दाङ्गु, अरशु विळङ्गु अवैयत्तु
मिन्ऩॊळि मयक्कुम् मेऩियॊडु तोन्ऱ
मन्ऩवन् ऍळुन्दु वणङ्गि निन्ऱोर्च्
चॅञ्जडै वाऩवन् अरुळिऩिल् विळङ्ग
वञ्जित् तोन्ऱिय वाऩव ! केळाय्
मलयत्तु एहुदुम् वान्पेर् इमैय
निलैयत्तु एहुदल् निन्करुत्तु आहलिन्
अरुमऱै अन्दणर् आङ्गुळर् वाळ्वोर्
पॅरुनिल मन्ऩ पेणल् निन्न कडन्न ऍन्ऱु
आङ्गवर् वाळ्त्तिप् पोन्ददऱ् पिन्नर् 92-104

१२ व्योमचारी मुनि आये

चलती सेना का कोलाहलपूर्ण नाद (जो) गूंज उठा था (यह सुनकर) आकाश में संचार करने वाले मुनिगणों ने सोचा कि विशाल भूमि के शासक, इंद्र सम श्रीमान राजा से भेंट करें। वे आकाश से उतरे। और राजा के दरबार में विद्युत् के प्रकाश को भी चकित करने वाले तेजोमय रूप में उसके सामने प्रगट हुए। राजा से, जो उठकर नमस्कार करके खड़ा रहा, वे बोले : लाल जटाधारी देवता (परमेश्वर) की कृपा से प्रख्यात होकर "वञ्जि" में रहने वाले देव (तुल्य राजा) ! सुनो ! हम मलय पर्वत जा रहे हैं। बहुत ऊँचे हिमालय के प्रदेश में जाना तुम्हारा अभिप्राय रहा तो हे बड़ी भूमि के शासक ! वहाँ उत्तम वैदिक ब्राह्मण रहते है, उनका संरक्षण करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। फिर वे उसे आशीर्वाद देकर चले गये। बाद ९२-१०४

13 कूत्तर् वन्दऩर्

वीङ्गुनीर् ञालम् आऴ्वोऩ् वाऴ्हॆऩक्
कॊङ्गणक् कूत्तरुम् कॊडुङ्गरु नाडरुम्
तङ्गुलत्तु ओदिय तहैशाल् अणियिऩर्
'इरुळ्पडप् पॊदुळिय शुरुळिरुङ् गुञ्जि
मरुळ्पडप् परप्पिय ओलियल् मालैयर्
वडम् शुमन्दु ओङ्गिय वळर्इळ वऩमुलैक्
करुङ्गयल् नॆडुङ्गण् कारिहै यारोडु
'इरुङ्गुयिल् आल इऩवण्डु याऴ्शॆय
अरुमबविऴ् वेऩिल् वन्ददु वारार्
कादलर्' ऎऩ्ऩुम् मेदहु शिऱप्पिऩ्
मादर्प् पाणि वरियॊडु तोऩ्ऱक् 105-115

१३ नट आये

"जल-पूर्ण सागर सह भूमि के शासक जीते रहें।" यह कहते हुए कोंकण तथा विकृत कर्नाटक के नट आये। वे अपने कुल के लिए निर्दिष्ट आभरण पहने हुए थे। उनके अधकार को परास्त करने वाले घने केश को भ्रमित करने वाली माला अलकृत कर रही थी। वे मणि की लड़ियों का भार वहन करने वाले उन्नत पीन तरुण उरोजों, काले "कयल्" के समान लंबे नेत्रों वाली नटनी स्त्रियों को भी साथ लाये थे। वे ("स्त्री गान")

"मादर पाणि" कहलाने वाले नाच-गान करने लगे जिसमें यह गान गाया जाता : काली कोयलें कूकती है। भ्रमरगण याळ् का सा संगीत निकालते है। कलियों को छिटकाते हुए वसंत आ गया पर हमारे प्रेमी नही आये। यह नाच उन्होंने बहुत श्रेष्ठ रूप से किया। (यह नाच नाचते हुए वे राजा के सामने आये।) १०५-११५

14 कुडहर् वन्दनर्

'कोल्वळै मादे कोलङ्ग गॊळ्ळाय्
कालङ् गाणाय् कडिदु इडित्तु उररिक्
कारो वन्ददु ! कादलर् एऱ्रिय
तेरो वन्ददु शॆय्वित्ते मुडित्तंनक्
काअर्क् कुरवैयॊडु करुङ्गयल् नॆडुङ्गण्
कोऱ्रॊडि मादरॊडु कुडहर् तोन्ऱ्रत 116-121

१४ कुडगर् आये

"गोल चूड़ियों से अलंकृत हाथों वाली रमणी! शृंगार कर लो। समय देखो! गरजते कड़कते वर्षा ऋतु आयी। प्रिय जिस पर चढ़कर गये थे वह रथ, अपना काम पूरा करके आ गया" इस गीत के साथ वर्षाकालीन रास नृत्य (संघ नृत्य) करते हुए गोल काले 'कयल' से नेत्रों वाली और शोभित चूड़ियों को धारण करने वाली अंगनाओं के साथ कुडगर् नट आये। ११६-१२१

15 ओवर्हळ् वन्दनर्

ताळ्तरु कोलत्तुत् तमरॊडु शिऱन्दु
वाळ्वित्ते मुडित्तु मऱवाळ् वेन्दन्
ऊऴि वाऴि ! अॆन्ऱु ओवर् तोन्ऱक्
कूत्तुळ् पडुवोन् काट्टिय मुऱैमैयिन्
एत्तिनर् अऱिया इरुङ्गलन् नल्हि
वेत्तिनम् नडक्कुम् वेलोन् इरुन् दुळि 122-127

१५ "ओवर्" लोग आये

"मनोहारी रूप से सजी हुई अपनी प्रिय सुदरियों के साथ शोभित रहकर, तलवार का कार्य पूरा करके वीर कार्यकारी तलवार वाले राजा युग युग तक जीते रहें।" यह मंगल-गीत गाते हुए ओवर् लोग आये। योग्य नाट्याचार्य के द्वारा सिखायी गयी रीति से जो लोग आकर नाचे, गाये उनको

राजा ने बहुमूल्य आभरण प्रदान किये। इस भाँति परंतप कर राजा जब रहा तब : १२२-१२७

16 शत्रुजयन् मुदलोर् वरुहै

नाडह महळिर् ईर् ऐम्बत् तिरुवरुम्
कूडिशैक् कुयिलुवर् इरुनूऱ्ऱु ऍण्मरुम्
तॉण्णूऱ्ऱु अऱुवहैप् पाशण्डत्तुऱै
नण्णिय नूऱ्ऱुवर् नहैवे ळम्बरुम्
कॉडुञ्जि नॆडुन्देर् ऐम्बदिऱ्ऱु इरट्टियुम्
कडुङ्गळि यानै ओरञ्ञूऱुम्
ऐयी रायिरम् कॉय्युळैप् पुरवियुम्
ऍय्या वडवळत्तु इरुपदि न्नायिरम्
कण्णॆळुत्तुप् पडुत्तत कैपुत्तै शहडमुम्
शत्रुजयन् मुदलात् तलैक्कीडु पॆऱ्ऱ
कत्रुह मुदल्वर् ईर् ऐन्नूऱुवरुम्
शेयुयर् विऱ्कॉडिच् चॆङ्गोल् वेन्दे
वायिलोर् ऍन्न वायिल् वन्दु इशैप्प
'नाडह महळिरुम् नलत्तहु माक्कळुम्
कूडिशैक् कुयिलुवक् करुवि याळरुम्
शत्रुजयन् तन्नॊडु वरुह ईङ्गु ऍन्नच्
चॆङ्गोल् वेन्दन् तिरुविळङ्गु अवैयत्तुच्
चत्रुजयन् पुहुन्दु ताळ्न्दु पल एत्ति
आणैयिऱ् पुहुन्द ईर् ऐम्बत्तिरु वरॊडु
माण्वित्तै याळरै वहै पॆऱक् काट्टि
'वेऱ्ऱुमै यिन्ऱि निन्नॊडु कलन्द
नूऱ्ऱुवर् कन्नरुम् कोऱ्ऱॊळिल् वेन्दे !
'वडदिशै मरुङ्गिन् वानवन् पॆयर्वदु
कडवुळ् ऍळुद ओर् कऱ्के आयिन्
ओङ्गिय इमैयत्तुक् कऱ्काल् कॉण्डु
वीङ्गुनीर्क् कङ्गै नीर्प्पडै शेय्दु आङ्गु
यान्तरुम् आऱ्ऱलम् ऍन्नरतर् ऍन्ऱु
वीङ्गु नीर् ञालम् आळ्वोय् वाळ्ह ऍन्न 128-155

१६ संजयत्न आदि का आगमन

"एक सौ दो अभिनेत्रियाँ, सगत देने वाले दो सौ आठ वाद्यवादक, छियानबे प्रकार के पाखण्ड सम्प्रदाय के लोग, निपुणता प्राप्त सौ विदूषक, कमल के आकार के एक सौ रथ, अति मस्त पाँच सौ गज, दस हजार बाल कटे अयाल वाले अश्व, दुर्लभ, उत्तर देश की समृद्ध उपज के साथ, नामांकित तथा सुनिर्मित, बीस सहस्र छकड़े— इत्यादि के साथ सजय के नेतृत्व में (दो के पाँच सौ) एक सहस्र कंचुकी नेता, हे अति उन्नत धनुर्ध्वज ऋजु दंड वाले राजा ! द्वार पर आये हैं।"— ऐसा द्वारपाल ने आकर कहा। (राजा ने आज्ञा दी कि) नाट्य रमणियाँ, अन्य श्लाघ्य लोग, संघ-गायक,— वादक आदि संजय के साथ इधर सामने आ जाये ! उस पर नेक राजदंड वाले राजा जिस स्थान को शोभा दे रहे थे उस सभा में संजय आया। नमस्कार किया। अनेक प्रकार से स्तुति की। फिर राजाज्ञा से आयी एक सौ दो गणिकाओं और अन्य श्रेष्ठ कलाकारो को यथाक्रम राजा के सामने प्रस्तुत किया। फिर निवेदन किया कि बिना भेदभाव के आपके साथ, हे सु-राज्य-शासक राजा, मित्र रहने वाले शतकन्नर् राजाओं ने (इनका देश आदि समझना कठिन है यह भी संदिग्ध है कि वे एक थे या सौ उनका राज्य गंगा के दोनों तटों पर फैला हुआ था— ऐसा लगता है) कहा है कि उत्तर दिशा मे देव (राजा) का जाना, देव निर्माणार्थ एक पत्थर के लिए है। तो उच्च हिमालय से शिला खण्ड लेकर पुष्ट जल वाली गंगा में उसका श्री मज्जन कराकर हम ला दे सकेंगे। सागर मेखला पृथ्वीपति की आयु बढ़े। १२८-१५५

17 अरुन्दमिऴ् आऱ्ऱल् अऱियार्

अडल्वेल् मन्नर् आरुयिर् उण्णुम्
कडलन् ताक्कै कावलन् उरैक्कुम्
'बाल कुमरन् मक्कळ् मऱ्ऱवर्
कावा नाविर् कन्नहनुम् विशयन्नुम्
विरुन्दिन् मन्नर् तम्मोडुङ् कूडि
अरुन् तमिऴ् आऱ्ऱल् अरिन् दिलर् आङगु अन्नक्
कूऱ्ऱङ् गोण्डिच् चेन्नै शेल्वदु
नूऱ्ऱुवर् कन्नर्क्कुच् चाऱ्ऱि आङ्गुक्
कङ्गैप् पेरु यारु कडत्तऱ्कु आवन
वङ्गप् पेरु निरै शेय्ह ताम् अन्नच्
चञ्जयन् पोन्न पिन्न् कञ्जुह माक्कळ् 156–166

१७ अति मान्य तमिळ् (राजा) का पराक्रम नहीं जानते

परहंतक वेल् वाले, वैरी राजाओं के प्राणांतक, सागर सम विशाल सेना के नायक राजा ने कहा बाल कुमरन् के पुत्र, वाक् संयम न रखने वाले कनहन् और विशयन् एक दावत में अन्य राजाओं के साथ रहे। वे अतिश्रेष्ठ तमिळ की शक्ति से अनभिज्ञ थे। (तब वे तमिळ राजाओं को अपने से कम शक्ति वाले मानकर कुछ बोल गये।) यम को साथ लेकर यह सेना उनके ही लिए जा रही है, यह बात "शतकन्नर्" को बताओ और वहाँ गंगा की बड़ी नदी को पार करने के लिए आवश्यक वड़ी पंक्तियों में नौकाएँ तैयार करें वे! यह सुनकर, संजय के जाने के बाद कंचुकी लोग। १५६-१६६

18 तॆन्नवरिन् तिऱै

अॆन्जा नावित्तर् ईरैन्जूऱ्ऱुवर्
शन्दिन् कुप्पैयुम् ताळ्नीर मुत्तुम्
तॆन्नवर् इट्ट तिऱैयॊडु कॊणर्न्दु
कण्णॆळुत् ताळर् कावल् वेन्दन्
मण्णुडै मुडङ्गलम् मन्नवर्क्कु अळित्ताङ्गु
आङ्गु अवर् एहिय पिन्नर् मन्नतिय 167-172

१८ दक्षिणवासियों की भेंटें

एक सहस्र कंचुकी लोग, जिनकी जीभ कभी व्यर्थ बात नही करती थी चदन काष्ठ का ढेर और गहरे सागर के मोतियों को दक्षिण देश के लोगों की दी गयी भेटों के साथ लाये। लेखपालों ने अपने शासक की आज्ञा से एक पत्र लिखा और उसको मोड़कर मुखपर मट्टी का लांछन लगाया और उन राजाओ को देने के लिए कंचुकियो के पास दिया। उसे लेकर वे अपने यहाँ चले गये। तब स्थायी १६७-१७२

19 वडनाडु शॆन्ऱान्

वीङ्गुनीर् ज्ञालम् आळ्वोन् ओङ्गिय
नाडाळ् शॆल्वर् नल्वलन् एत्तप्
पाडि इरुक्कै नीङ्गिप् पॆयर्न्दु
कङ्गैप् पेरियाऱ्ऱुक् कन्नरिऱ् पॆऱ्ऱ
वङ्गप् परप्पिन् वड मरुङ्गु अॆय्दि

आङ्गवर् अँदिर् कौळ अन्नाडु कळिन्ताङ्गु
ओङ्गु नीर् वेलि उत्तरम् मरीइप्
पहैप्पुलम् पुक्कुप् पाशरै इरुन्द
तहैप्परुन् दानै मऱवोन् तन्मुन् 173-181

१६ उत्तर में गया

स्थायी भूलोक का शासक अन्य भूपतियों के उसकी शक्ति की महिमा गाते पड़ाव को छोड़ आगे बढ़ा। गंगा की बड़ी नदी के किनारे पर कन्नर् से प्राप्त नौकाओं के समूह में चढ़कर गंगा के उत्तरी तट पर पहुँचा। वहाँ उन्होने उसकी अगवानी की। फिर उनके भी राज्य को छोड़कर विशाल जलाशयों को बाड़ के स्थान में रखने वाले उत्तर के प्रदेश में पहुँचा। फिर शत्रु राजा के देश में प्रवेश करके पड़ाव डालकर रहा। तब अजेय सेना के स्वामी उस वीर के सामने १७३-१८१

20 पोरुक्कुप् पहैवर्

उत्तरन् विशित्तिरन् उरुत्तिरन् पैरवन्
शित्तिरन् शिङ्गन् तनुत्तरन् शिवेदन्
वडदिशै मरुङ्गिन् मन्नवर् ॲल्लाम्
तॆन्तमिळ् आऱ्ऱल् काण्गुदुम् याम् ॲन्क्
कलन्द केण्मैयिऱ् कनह विशयर्
निलन्तिरैत् ताऩैयोडु निहर्त्तु मेल् वर 182-187

२० युद्ध में शत्रु

उत्तरन्, विशित्तिरन्, उरुत्तिरन्, बैरवन्, शित्तिरन्, शिङ्गन्, तनुत्तरन्, शिवेदन्, इत्यादि (सब संस्कृत के ही नाम है जिनके तमिळ अपभ्रंश रूप ये है) उत्तर दिशा के सभी राजा लोग, यह ख्याल करके मिलकर मित्र भाव से आये कि दक्षिणी तमिळ् देश का विक्रम देख लें उनके साथ कनहन् विशयन् भी धर्ती को अपर्याप्त बनानें वाली बड़ी सेना को लेकर भिड़ने आगे बढ़ने लगे। १८२-१८७

21 पोर् तॊडङ्गिऱ्ऱु

इरंतेर् वेतट्टनु ॲळुन्द अरिमाक्
करिमाप् पॆरुनिरै कण्डळम् शिऱन्दु

पाय्न्द पण्विड़् पल्वेल् मन्नार्
काञ्चित् तात्तैयोडु कावलन्न् मलैप्प
वैयिड़् कदिर् विळुङ्गिय तुहिड़्कोडिप् पन्दर्
वडित्तोड़् कोडुम् पड़ै वाल्वळै नेडुवयिर्
इडिक्कुरल् मुरशम् इळुमेन्न पाण्डिल्
उयिर्प्पलि उण्णुम् उरुमुक्कुरल् मुळक्कत्तु
मयिर्क्कण् मुरशमोडु मादिरम् अदिरच् 188–196

२१ युद्ध आरम्भ हुआ

आहारान्वेपक केसरी करि-समूहों को देखकर जैसे चित्तोत्साह के साथ उन पर झपटता है उसी प्रकार अनेक भालाधारी राजाओं के 'कान्ञि' (प्रतिरोधी) सैन्यों से राजा शॅङ्गुट्टुवन् जा भिड़ा। सूर्य की किरणों को निगलने वाली पताकाओं के वने वितान के नीचे छँटे चमड़े के वने युद्ध नगाड़े, श्वेत शंख, लंवी शृंगियाँ अशनि-ध्वनि मुरशु (ढोल), चीखने वाले पांडिल् प्राण-वलि लेने वाले शव्द के साथ वजने वाले 'रोमाक्ष मुरशु' आदि नाद कर उठे और दिशाएँ थर्रा उठीं। १८८-१९६

22 पुळुदि ॲळुन्ददु

शिलैत्तोल् आडवर् शॅरुवेल् तडक्कैयर्
करैत्तोल् मड़वर् कडुन्देर् ऊरुनर्
वॅण्कोट्टु यानैयर् विरैपरिक् कुदिरैयर्
मण्कण् कॅडुत्त विम् मानिलप् पॅरुन् दुहळ्
कळङ्गोळ् यानैक् कविळ्मणि नावुम्
विळङ्गु कोडि नन्दिन्न् वीङ्गिरो नावुम्
नडुङ्गु तॊळिल् ऑळिन्दु आड्गु ऑडुङ्गि उळ् शॅड़ियत् 197–203

२२ गर्द उठी

पर्वत-वाहु, वीर भयंकर, भाला रखने वाले बडे हस्तों से युक्त वीर, काले ढाल रखने वाले "मड़वर् (वीर) तेज रथों के सवार, श्वेत दंती गजारूढ़, तीव्रगामी अश्वारोही-आदि इनके कारण पृथ्वी की आँख को धुधलाते हुए उठी वडी धूल राशि से समरागण स्थित गजो की औंधी घटियों की जीभें और हिलने वाली पताकाओं से वधे शखो की उच्चनादकारिणी जीभे हिल न पाकर वहाँ अदर बंद होकर मौन रह गयीं। १९७-२०३

23 पेय्हळ् कळित्तन

तारुम् तारुम् तामिडै मयङ्गत्
तोळुम् तलैयुम् तुणिन्दुवे राहिय
शिलैत् तोळ मरवर् उडर्पोरै अडुक्कत्तु
ॲरिपिणम् इडरिय कुरैयुडर् कवन्दम्
परैक्कट् पेय्महळ् पाण्िक्कु आडप्
पिणञ्जुमन्दु ऑळुहिय पिणम्बडु कुरुदियिल्
कणङ्गॊळ् पेय्महळ् कदुप्पु इहुत्तु आड 204–210

२३ भूत खुश हुए

हरावल हरावल से गुँथे। जिनके कंधे और सिर कटकर अलग हो गये उन पर्वत-स्कंध मरवरो की लाशों के ढेर पर कबध चढ चले। ठोकर खाकर गिरे। और ढालो के नादो के लय में भूतनियों के गाने के अनुगमन में नाच उठे। लाशों को ढोते हुए रक्त बह रहा था और उस धारा में भूतनियो के समूह केशो को नीचे लटकाते हुए स्नान करके उल्लसित हुए। २०४-२१०

24 तुम्बै शूडिनान्

अडुन्देरत् तानै आरिय अरशर्
कडुम्पडै माक्कळैक् कॊन्रु कळम् कुवित्तु
नेडुन्देर्क् कॊडुञ्जियुम् कडुङ्गळिरुरु ॲरुत्तमुम्
विडुम्परिक् कुदिरॆयिन् वेरिनुम् पाळ्पड
"ॲरुमैक् कडुम्बरि ऊर्वोन् उयिर्त्तोहै
ऑरुपहल् ॲल्लैयिल् उण्णुम् ॲन्नबदु
आरिय अरशर् अमर्क्कळत्तु अरिय
नूळि लाट्टिय शूळ्कळल् वेन्दन्
पोन्दैयोंडु तोडुत्त परुवत् तुम्बै
ओङ्गिरुञ् जॆन्नि मेम्पड मलैय 211–220

२४ 'तुम्बै' पहना

शेरन् राजा ने लड़ने वाले रथ-सैन्य के साथ आर्य राजाओं के निर्मम हथियारधारियों को मार कर युद्ध भूमि में उनके ढेर लगा दिये। ऊँचे रथों के भागों को, कठोर हाथियों की गर्दनों को और सवार से रहित बने अश्वों की पीठों को काट गिराया। आर्य राजाओं ने यह जान लिया कि

महिष पर सवार यमराज इतनी बड़ी संख्या में प्राणों को एक ही अह (दिन) में खा सकता है। दृढ़ संकल्प, वीर पायल से अलंकृत शेङ्गुट्ट्वन् ने ताल पत्र के साथ पिरोये गये नवीन तुम्बै फूल को अपने उन्नत किरीट के ऊपर पहन लिया (तुम्बै फूल् युद्ध-संकल्प का चिह्न है।) २११-२२०

25 कनह विशयर् अहप्पट्टत्तर्

वाय्वाळ् आण्मैयिन् वण्तमिळ् इहळ्न्द
काय्वेल् तडक्कैक् कनहनुम् विशयनुम्
ऐम्बत् तिरुवर् कडुन्दे राळरॊडु
शङ्गुट् टुवन्तन् शिनवलैप् पडुदलुम्
शडैयिनर् उडैयिनर् शाम्बर् पूच्चिनर्
पीडिहैप् पीलिप् पॆरुनोन् बाळर्
पाडु पाणियर् पल्लियत् तोळिनर्
आडुकूत्तर् आहि ऎङ्गणुम्
एन्दुवाळ् ऒळियत् तान् दुरै पोहिय
विच्चैक् कोलत्तु वेण्डुवयिर् पडर्दरक् 221-230

२५ कनह विशयर् (कनहन् और विशयन् दोनों) कैद हुए

जिह्वा रूपी तलवार चलाने में वे निपुण थे। अतः उन्होंने समृद्ध तमिळ् (देशवासियों) की अवहेलना की। वे शत्रुघातक 'वेल्' वाले कनहन् और विशयन् बावन तीव्र गति रथियों के साथ शॆङ्गुट्टुवन् के क्रोध जाल में फंस गये। अतः वे जटाधारी, (काषाय) वस्त्रधारी और भस्मधारी वनकर, घंटा और मयूर पंख वाले बड़े तपस्वियों के वेश में गायक, वादक और नर्त्तक का कार्य करते हुए भाग खड़े हुए। उन्होने कही भी तमिळ् सेना के विरुद्ध तलवार (कोई अस्त्र) वाद नही पकड़ी। पारंगत अपनी कलाओं के अनुरूप वेश धारण कर मनमाने मार्गगामी हो गये। २२१-२३०

26 वॆन्त्रिक् कूत्तु

कच्चै यानैक् कावलर् नडुङ्गक्
कोट्टुमाप् पूट्टि वाट्कोल् आह
आळ्ळि वाङ्गि अदरि तिरित्त
वाळेर् उळवन् मरक्कळम् वाळ्त्तित
तॊडियुडै नॆडुङ्गै तुङ्गत तूक्कि
मुडियुडैक् करुन्दलै मुन्दुर एन्दिक्

कडल् वयिरु कलक्किय ञान्‍ट्पुम् कडलहळ्
इलङ्गैयिल् ॲळुन्द शमरमुम् कडल्वणन्
तेरुर् शॆरुवुम् पाडिप् पेरिसै
मुन्नतेर्क् कुरवै मुदल्वन्नै वाळ्त्तिप्
पिन्नतेर्क् कुरवैप् पेयाडु परन्दलै 231-241

२६ विजय नर्त्तन

कंठ की रस्सी वाले हाथियों के अधिपतियों को भयभीत करते हुए दंत-युक्त गजों को जोतकर, तलवार को ही छड़ी बनाकर, (आर्य) वीरों को धान के पौधों का ढेर बनाकर सर्वत्र कुचलते हुए जिसने माँडा उसकी विजय को मनाते हुए भूत नाचे। वे अपने वीरता सूचक कंकण शोभित लंबे हाथों को ऊपर उठाकर, केश सहित काले सिरों को आगे करते हुए नाचे। नाचते समय देव-दानव युद्ध में कृष्ण का सागर का उदर आलोडित करना; सागर- परिखा-लंका में उठा युद्ध, सागर वर्ण विष्णु का रथ चलाना— आदि की विशेषता को गाते हुए "रथाग्र कुरवै" और "रथ पृष्ठ कुरवै" के गीत भी गाये। इस तरह भूत-भूतनियों का नृत्य-रंग बना समरागण ! २३१-२४१

27 कल् कॊण्डान्

मुडित्तलै अडुप्पिर् पिडर्त्तलैत् ताळित्
तॊडित्तोळ् तुडुप्पिन् तुळैइय ऊन्शोरु
मरुप्पेय् वालुवन् वयित्तरिन्दु ऊट्टच्
चिरुप्पूण् कडियित्तञ् जॆङ्गोर् कॊर्‌र्त्तु
अरक्कळञ् जॆय्दोन् ऊळि वाळ्ह' ॲन्न
मरक्कळम् मुडित्त वाय्वाळ् कुट्टुवन्
वडदिशै मरुङ्गिन् मरैकात्तु ओम्बुनर्
तडवुत्ती अवियात् तण्पॆरु वाळ्क्कै
करुरु दाळरैप् पोर्‌रिक् कामिनॆन्न
विल्लवन् कोदैयॊडु वॆन्रुवित्तै मुडित्त
पल्वेल् तान्नैप् पडैपल एविप्
पॊर्‌रकोट्टु इमैयत्तुप् पॊरुवरु पत्तिनिक्
करकाल कावलन् आङ्गॆन् 242-254

२७ प्रस्तर प्राप्त किया

किरीटधारी सिरों की अंगीठी बनाकर, गज रुंड को कड़ाही में चूड़ी कटकों से अलंकृत हाथों की कलछुली से हिला हिलाकर भूत रसोइया ने मांसाहार बनाया। उस वीर भूत ने ठीक पक्व स्थिति में उसे सब भूतों को खिलाया। उस विशिष्ट आहार को खाकर भूतों ने मंगल गान गाया कि सीधे राजदंड द्वारा धर्म स्थल बनाने वाले राजा युग-युग जियें। इस भाँति समरांगण का कार्य वीर खड्‌धारी शॆङ्गुट्टुवन्‌ ने सम्यक रूप से पूरा किया। फिर राजा ने अपने वीरों में आज्ञा घोषित की कि उत्तर दिशा में वेद संरक्षक विप्र अपनी अग्नि को बुझने न देकर अपना श्रेष्ठ अग्निहोत्री जीवन विता रहे है उनका संरक्षण करो। फिर विल्लवन्‌ कोदै और उसके साथ अन्य कृतकृत्य अनेक मालाधारी वीरों को भेजा और वे स्वर्णमय हिमालय से अनुपम पत्नी देवी की प्रतिमा निर्माणार्थ, प्रस्तर काट कर लाये। राजा ने प्रस्तर लाने का अपना संकल्प कार्यान्वित कर लिया। २४२-२५४

27 नीर्प्पडैक् कादै

(निलैमण्डिल आशिरियप्पा)

1 कत्तह विशयर् कदिर्मुडि एऱ्ऱित्तउ

वडपेर् इमयत्तु वात्तरु शिऱप्पिर्
कडवुट् पत्तिनिक् कऱ्काल् कॊण्डपिन्
शिन्नवेल् मुन्नबिऱ् चॆरुवॆङ् गोलत्तुक्
कत्तह विशयऱ्तङ् कदिर्मुडि एऱ्ऱिच् 1-4

२७ श्रीस्नापन गाथा

(छंदः निलै मंडिल आशिरियप्पा)

१ कनह विशयर् के प्रभामय सिर पर चढ़ाया

उत्तर दिशा में रहने वाले अत्युच्च हिमालय पर्वत से देववन्द्य पत्नी देवी के लिए शिला खण्ड लेने के बाद, क्रुद्ध 'वेल्' के पराक्रम से युद्ध के मैदान में (पकड़े गये) कनहंन्‌ और विशयन्‌ के प्रकाशमय सिर पर (शॆंगुट्टुवन्‌ ने) उसे धरवा दिया। १-४

2 कूट्टुणवु

शॆऱि कळल् वेन्दन् तॆन्नतमिळ् आऱ्ऱल्
अऱियादु मलैन्द आरिय मन्नरैच्

चॆयिर्त्त तॊऴिल् मुदियोन् शॆय्तॊऴिल् पॆरुह
उयिर्त्त तॊहै उण्ड ऒन्ब पदिऱ्ऱु इरट्टि यॆन्ऱु
याण्डुम् मदियुम् नाळुम् कडिहैयुम्
ईण्डुनीर् ञालम् कूट्टि ऎण्कॊळ
वरुपॆरुन् दानै मऱक्कळ मरुङ्गिन्
ऒरुपहल् ऎल्लै उयिर्त्त तॊहै उण्ड
शॆङ्गुट्टुवन् तन् शिनवेल् तानैयॊडु 5–13

२ सह भोज (यम तथा राजा का-अनु.)

वीर-कऴल् कडा या पायलधारी कंकड़ वीरों के राजा के विरुद्ध दक्षिण के तमिऴ्शौर्य से अज्ञात होने के कारण युद्ध करने आये आर्य राजाओं के प्राण शॆङ्गुट्टुवन् ने हनन-कार्य में अभ्यस्त वृद्ध यम के कार्य को बढ़ाते हुए, खा (हर) लिये। अब अठारह की गिनती में इसको मिला रखकर ससागरा पृथ्वी गिन सकी। (यानी देवासुर संग्राम) अठारह साल, (राम-रावण युद्ध) अठारह मास, (भारत-युद्ध) अठारह दिन और (शॆगुट्टुवन् का युद्ध) अठारह नाऴिहै (एक घंटा=२½ नाऴिहै; नाऴिहै=२४ मिनट) में पूरा हुआ। इस तरह युद्ध स्थल में सामने आयी बड़ी सेना के एक ही आह में प्राण हरने वाले शॆङ्गुट्टुवन् अपनी क्रुद्ध 'वेल्' (रखने वाले वीरों) की सेना के साथ। ५-१३

3 नीर्प्पडै शॆय्दान्

गङ्गैप् पेर्याऱ्ऱुक् करैयहम् पुहुन्दु
पाऱ्पडु मरबिऱ् पत्तिनिक् कडवुळै
नूऱ्ऱिरुन् माक्कळिन् नीर्प्पडै शॆय्दु 14–16

३ जलमज्जन कराया

बड़ी नदी गंगा के तीर पर गया। और सब तरह के लोगों की वंदनीय पत्नी-देवी (के प्रस्तर-खण्ड) का शास्त्रज्ञ पंडितों की सहायता से श्री सलिल मज्जन कराया। १४-१६

4 पाडियिल् तङ्गितान्

मन्न पॆरुङ् गोयिलुम् मणिमण् डवङ्गळुम्
पॊन्पुनै अरङ्गमुम् पुनैपूम् बन्दरुम्
उरिमैप् पाळ्ळियुम् विरिपून् जोलैयुम्
तिरुमलर्प् पॊय्हैयुम् वरिकाण् अरङ्गमुम्
पेरिशै मन्नर्क्कु एर्पवै पिऱवुम्
आरिय मन्नर् अळहुर अमैत्त
तॆळ्ळुनीर्क् कङ्गैत् तॆन्करै आङ्गण्
वॆळ्ळिडैप् पाडि वेन्दन् पुक्कु 17–24

४ पड़ाव में ठहरा

(शॆङ्गुट्टुवन् जिस पड़ाव में जा ठहरा उसमें :) बड़ा राज महल, मणिमय मंडप, स्वर्ण रचित रंग शाला, पुष्पों से निर्मित वितान, राजा की स्त्रियों के रहने का अंतःपुर; विशाल पुष्पोद्यान, कमल-सर, 'वरि' का नाट्यगृह, और बड़े यशस्वी राजा के लिए योग्य और आवश्यक अन्य बातें भी थी। वह आर्य-राजाओं द्वारा गंगा के दक्षिणी किनारे पर निर्मित किया गया था। उस मनोमुग्धकारी पड़ाव में जाकर शॆंगुट्टुवन् ठहरा। १७-२४

5 वीररैप् पोऱ्ऱितान्

नीणिल मन्नर् नॆञ्जु पुहल् अळित्तु
वानव महळिरिन् वदुवै शूट्टु
उलैया वॆञ्जमम् ऊर्तमर् उळक्कित्
तलैयुम् तोळुम् विलै पॆऱक् किडन्दोर्
नाळ् विलैक् किळैयुळ् नल्लमर् अळुवत्तु
वाळ्वित्तै मुडित्तु मऱत्तॊडु मुडिन्दोर्
कुळिक्कण् पेय्म्महळ् कुरवैयिन् तॊडुत्तु
वळिमरुङ्गु एत्त वाळॊडु मडिन्दोर्
किळैहळ् तम्मॊडु किळर्पूण् आहत्तु
वळैयोर् मडिय मडिन्दोर्; मैन्दर्
मलैत्तुव तलै वन्दोर् वाळॊडु मडियत्
तलैत्तार् वाहै तम्मुडिक्कु अणिन्दोर्
तिण्तेर्क् कॊडुञ्जियॊडु तेरोर् वीळप्
पुण्तोय् कुरुदियिर् पॊलिन्द मैन्दर्

मार्र्रुञ् जिर्प्पिन्न मणिमुडिक् करुनदलैक्
कूर्रुक्कण् णोड, अरिनुदुकळङ् गोण्डोर्
तिरळ्जिदै कवयमोडु निर्प्पुणुण् कूर्न्दु
पुरम्पेर् वन्द पोर्वाळ् मर्वर्
'वरुह ताम्' अंन वाहैप् पोलनदोडु
पेरुनाळ् अमयम् पिर्क्किडक् कोडुत्तुत
तोडार् पोन्दै तुम्बैयोडु मुडित्तुप्
पाडुतुरै मुर्रिय कोर्र वेन्दन्
आडुकोळ् मार्बोडु अरशु विळङ्गु इरुक्कै यित्त 25–47

५ वीरों को सम्मानित किया

(कई प्रकार के वीरों को राजा बुलाकर सम्मानित करता है। उनमें मरे हुए भी है। उनके विषय में यही समझना चाहिए कि उस अवसर पर उनके नाम लिये गये। पर पुरस्कार आदि या तो उनके कोई पुत्र आदि आये थे और उन्हें दिया गया; या पीछे उनके कुटुंब वालों को दिया गया। बीच में 'मैन्दर' शब्द आया है, ३४ वीं पंक्ति में। उस शब्द का अर्थ पुत्र भी है, तरुण वीर भी। उस 'पुत्र' के अर्थ को लेकर कहा गया है उन मरे वीरों के पुत्र वहाँ थे। अनु-) बड़ी भूमि के पालक राजाओं के अहंकार को नष्ट करके जो वीर स्वर्ग पहुँचे और वहाँ व्योमांगनाओं की पहनायी गयीं वरमाला धारण करके उल्लासमग्न थे वे वीर; लड़ते-लड़ते जो पुरता नही था ऐसा भयंकर, युद्ध-मंथन करके जो सिर-कटे और बाहु-कटे पड़े थे वे अनोखे वीर; जीवन को ही राजा को मोल देकर, उस बड़े समर-सागर में अपनी तलवार का कृत्य अच्छी रीति से अंजाम करके जो वीरता के साथ ही मरे वे वीर; धंसी हुई आँखों वाली भूत-वालाएँ कुछ वीरों के साथ मार्ग भर में "कुरवै" (आल्हा) गाती जाती थी। ऐसा तलवार चलाकर जो मरे वे वीर; अपने बंधु वर्ग के साथ, भूषण-वक्षा, वलय-हस्ता प्रियाओं को रुलाते हुए, जो मरे वे वीर; अपने विरुद्ध लड़ने आये वीरों के तलवार सहित मरने पर अपने सिर पर पहले रही माला के साथ "वाहै" (विजय) माला भी जिन्होने पहनी वे वीर; सुदृढ़ रथ, रथ के भाग आदि के साथ रथ पर सवारों को भी गिराते हुए जो व्रणों से वहने वाले रक्त के साथ शोभायमान थे वे वीर; अप्रतिहत श्रेष्ठता से युक्त मणिकिरीटधारी वीरों के काले (भयंकर) सिरो को यम को भी द्रवित करते हुए जो काट लेकर समर भूमि में घूमे वे वीर; मंद पडे प्रकाश वाले कवच के साथ नये-नये व्रणों से भूषित होकर भागने वाले वीरों को भागने देकर युद्ध भूमि में जो डटे रहे वे योद्धा-तलवार के मऱवर् वीर— इन सब वीरों को राजा ने आओ कहकर

स्वागत किया। दिन के वीतने तक सभा में रहकर राजा ने "स्वर्ण के वने वाहै" पुष्पों को उनको प्रदान किया। फिर स्वयं तालपत्र माल के साथ तुम्बै के फूलों से अपने को सजा लिया। इस तरह युद्ध गान (आल्हा) गाने वाले विद्वानों से वर्णित सभी प्रकरणों का खूब निर्वाह किया। फिर कृत-कृत्यता के उल्लासमय मन के साथ वह सभासदो के मध्य सानंद रहा। तव २५-४७

6 माडलन् वाऴ्त्तु

माडल मऱैयोन् वन्दु तोन्ऱि
'वाऴ्ह' ॲङ्गो ! मादवि मडन्दै
कानल् पाणि कनह विशयर् तम्
मुडित्तलै नॆरित्तदु; मुदुनीर् ञालम्
अडिप् पडुत्तु आण्ड अरशे वाऴ्ह ॲनप् 48-52

६ माडलन् का साधुवाद

विप्र माडलन् आकर प्रगट हुआ। (और साधुवाद देने लगा कि) जियें हमारे राजा! अवोध रमणी मादवि ने जो कानल् वरि का गीत गाया उसने "कनह विशयर्" के किरीटधारी सिरों को कुचल दिया। सागर मेखला पृथ्वी को वश में करके शासन करने वाले राजा! जीते रहो। ४८-५२

7 शेरन्ऱन् केळ्वि

पहैप् पुलत्तु अरशर् पलरीङ्गु अऱिया
नहैत् तिऱम् कूऱितै मान्मऱै याळ !
यादुनी कूऱिय उरैप्पॊरुळ् ईङ्गॆन
माडल मऱैयोन् मन्नवऱ्कु उरैक्कुम् 53-56

७ शेरन् का प्रश्न

(शेरन् ने यह सुनकर प्रश्न किया कि) हे विप्र! यहाँ उपस्थित वैरी देश के अनेक राजाओं को अज्ञात कोई कौतूहलवर्धक (चटकीली) बात कही है आपने। हे चतुर्वेदी ब्राह्मण! आपके कथन का अर्थ क्या है? बताये इधर! तब ब्राह्मण माडलन् ने राजा से कहा। ५३-५६

8 माडलनिन् वदिल्

कातलम् तण्तुऱैक् कडल्विळै याट्टिनुळ्
मादवि मडन्दै वरिनविल् पाणियोडु

ऊडर् कालत्तु ऊळ्विनै उरुत्तॅळक्
कूडाद् पिरिन्दु कुलक्कॊडि तन्नुडन्
माडमूदूर् मदुरै पुक्कु आङ्गु
इलैत्तार् वेन्दन् ऒळिल्वान् अॅय्दक्
कॊलैक्क् कळप् पट्ट कोवलन् मनैवि
कुडवर् कोवे निन्नाडु पुहुनदु
वडदिशै मन्नर् मणिमुडि एरिसळ्
इन्नुम् केट्टरुळ् इहलवेल् लडक्कै
मन्नर् कोवे ! यान् वरुम् कारणम् 57–67

८ माडलन् का उत्तर

माडलन् ने कहा-समुद्र तट के उद्यान में शीतल घाट पर सागर लीला हो रही थी। तब सुदरी मादवि ने 'वरि' गीत गाया ! कोवलन् (कुछ का कुछ समझ कर) रूठ गया दैवी संयोग था। पूर्व कर्म भी पक्व होकर फल देने आ गया। वह फिर मादवि से नही मिला पर अलग हो गया। फिर अपनी कुलवती स्त्री के सह प्रासाद शोभित पुरातन मदुरै नगर पहुँचा। वहाँ पल्लव मिश्रित मालाधारी राजा के सुदर स्वर्ग जाने का कारण बनते हुए वधभूमि में (हत हुआ ;) हत उस कोवलन् की पत्नी, हे पश्चिमी लोगों के शासक ! तुम्हारे राज्य में आयी और उत्तर के राजाओं के मणि मंडित सिरो पर चढ़ बैठी। और सुनो, शत्रुघाती वेल् के धारण करने वाले विशाल बाहु राजाधिराज ! मेरे आने का कारणः—५७-६७

9 वन्द कारणम्

मामुनि पॊदियिन् मलैवलङ् गॊण्डु
कुमरियम् पॆरुन्दुरै याडि मोळ्वेन्
ऊळ्वितैप् पयन् कॊल् ? उरैशाल् शिरप्पिन्
वाय्वाळ् तॆन्नवन् मदुरैयिल् शॆन्नरेन्
'वलम्पडु तानै मन्नवन् तन्नैच्
चिलम्बिन् वॆन्ऱनळ् शेयिळै अॆन्नलुम्
तादेरु मन्ऱत्तु मादरि अॆळुन्दु
'कोवलन् तीदिलन् कोमहन् पिळैत्तान्
अडैक्कलम् इळन्देन् इडैक्कुल माक्काळ्
कुडैयुम् कोलुम् पिळैत्त वो? अॆन

इडैयिरुळ् यामत्तु ऍरियहम् पुक्कदुम्
तवन्दरु शिऱप्पिऱ् कवुन्दि शीऱ्ऱम्
निवन्दोङ्गु शॅङ्गोल् नीणिल वेन्दन्
पोहुयिर् ताङ्गप् पॊऱ्ऱैशाल् आट्टि
"ऍन्नॊडु इवर्विनै उरुत्तदो? ऍन्न
उण्णा नोन्बोडु उयिर् पदिप् पॆयर्त्तदुम्
पॊऱ्ऱेरच् चॆळियन् मदुरै मा नहर्क्कु
उऱ्ऱदुम् ऍल्लाम् ऒऴिविन्ऱि उणर्न्दु आङ्गु
ऍन् पदिप् पॆयर्न्देन् ऍन् तुयर् पोऱ्ऱिच्
चॆम्बियन् मूदूर्च् चिऱन्दोर्क्कु उरैक्क 68-87

९ आने का कारण

महर्षि (अगस्त्य) के पॊदियै पर्वत की परिक्रमा करके मैं कुमरि के महिमा युक्त घाट पर स्नान करके वापस आ रहा था। पूर्वकर्म का फल शायद था। लोक शसित महिमा वाले वीर खड्गधारी दक्षिणपति पाण्डियन् के मदुरै में गया। वहाँ मैने ये बाते सुनीं: सवल-सेना-स्वामी राजा को आभरण सुदरी ने नूपुर द्वारा पराभूत किया! यह सुनकर गोभूमि के मैदान में मादरि दुखी हुई। यह उद्गार निकाल। कि कोवलन् निरपराध था। राजा ने गलती की; मैने आश्रिता स्त्री धरोहर खो दी। हे ग्वाल जनो! छत्र और दंड क्या सचमुच अपराधी हो गये है? वह यह कहते हुए अंधेरे के अर्धयाम में अग्नि में प्रवेश कर गयी। तपोभूत महिमा वाली कवुन्दि देवी को गुस्सा हुआ। उनके कोप को अत्युन्नत तथा सीधे राजदडधर बड़े अवनिप के गये प्राणों ने कुछ शांत किया तो भी उन क्षमाशील देवी ने यह मानते हुए अनशन व्रत करके अपने प्राण दे दिये। कि मेरे कर्म के ही कारण इनका कर्म भी फल देने आया क्या? इन सब बातों को, मैने स्वर्णरथी शॆळियन् के मदुरै नगर मे जाते ही सभी विवरण केसाथ सुना। फिर वहाँ से मै (शोळन्) 'शॆम्बियन्' के पुरातन नगर के सम्मानित लोगो को सुनाने के लिए अपने नगर में पहुँचा। ६८-८७

10 माशात्तुवान्तुम् मनैवियुम्

मैन्दर्कु उऱ्ऱदुम् मडन्दैक्कु उऱ्ऱदुम्
शॆङ्गोल् वेन्दर्कु उऱ्ऱदुम् केट्टुक्
कोवलन् तादै कॊडुन्तुयर् ऍय्दि

मा पॆरुन् दात्तमा वात्पोरुळ् ईत्तु आङ्गु
इन्दिर विहारम् एळुडन् पुक्कु आङ्गु
अन्दर शारिहळ् आरु ऐम् पदित्तमर्
पिऱन्द याक्कैप् पिऱप्पऱ मुयन्ऱु
तुऱन्दोर् तम्मुन् तुऱवि ऎय्दवुम्
तुऱन्दोन् मनैवि महन् तुयर् पॊऱाअळ्
इऱन्द तुयर् ऎय्दि, इरङ्गि मॆय्विडवुम्; 88–97

१० माशात्तुवान् और उसकी पत्नी

अपने पुत्र का जो हाल हुआ और अपनी पुत्र बधू पर जो बीता और नेक राजदंड वाले राजा का जो बना वह सब सुनकर कोवलन् के पिता को कठोर दुख हुआ। अपनी अत्यधिक संपत्ति का दान कर दिया। सातों इन्द्र बिहारों (बौद्ध बिहारों) में प्रवेश कर के वहाँ जो तीन सौ अंतर चारी भवबंधन काटने के लिए वैरागी बने थे उनके सामने उसने संन्यास ग्रहण कर लिया। बैरागी बने मासात्तुवान् की पत्नी पुत्र शोक नही सह सकी। अपार दुख पाकर आखिर शरीर त्याग गयी। ८८-९७

11 मानाय्हत्तुम् मनैवियुम्

कण्णहि तादै कडवुळर् कोलत्तु
अण्णलम् पॆरुन् दवत्तु आशीवकर् मुन्
पुण्णिय दानम् पुरिन्दु अऱम् कॊळ्ळवुम्
दानम् पुरिन्दोन् तन्मनैक् किळत्ति
नाळ् विडूड नल्लुयिर् नीत्तु मॆय्विडवुम् 98–102

११ मानाय्हन् और उसकी पत्नी

कण्णहि के पिता ने देवता रूपी, महान, और बड़े तपस्वी आजीवकों के सामने पुण्य दान किये और "धर्म" अपना लिया (स्वयं आजीवक बन गया।) दानकारी उसकी गृहिणी ने अपने दिन व दिन घुलते प्राणों को शरीर से अलग कर शरीर छोड़ दिया। (भारतीय दर्शन के अनुसार जीव शरीर को त्यागता है, प्राणों को नही। प्राण जीव का ही पर्यायवाची शब्द है।) ९८-१०२

12 मादवि तुऱवियात्ताळ्

मऱ्ऱदु केट्टु मादवि मडन्दै
नऱ्ऱाय् तनक्कु "नऱ्ऱिऱम् पडर्हेन्
मणिमेहलैयै वान्तुयर् उऱुक्कुम्
कणिहैयर् कोलम् काणा दौऴिह" अनक्
कोदैत् तामम् कुऴलोडु कळैन्दु
पोदित् तानम् पुरिन्दु अऱम् कोळ्ळवुम् 103-108

१२ मादवि वैरागिनी बनी

यह सब सुनकर सुदरी मादवि ने अपनी माता से कहा कि मैं आगे से अच्छे आभरण नही धारण करूँगी। मणिमेहलै भी अनंत परिमाण का दुख देने वाला गणिका का जीवन न देखे (अपनाये)। कहकर माला के साथ सिर के बालों को भी हटाकर (मुंडन करके) उसने वोधि-दान किया और धर्म अपना लिया। १०३-१०८

13 माडलन् वरक्कारणम्

ऍन्नवायक् केट्टोर् इऱन्दोर् उण्मैयिन्
नन्नीर्क् कङ्गै आडप् पोन्देन्
मन्नर् कोवे वाऴ्ह ईङ्गु !" अन्नत् 109-111

१३ माडलन् के आगमन का कारण

मैने जिनके संबंध में समाचार सुना उनमें मरे हुए भी लोग है। अतः पवित्र गंगा में स्नान करने निकला। हे राजाधिराज ! जियो ! कह चुकने पर शेरन् ने पूछा। १०९-१११

14 तॅन्नवन् नाट्टु निलैमै

तोडार् पोन्दै तुम्बैयोडु मुडित्त
वाडा वञ्जि वानवर् पॅरुन्दहै
"मन्नवन् इऱन्द पिन् वळङ्गॆळु शिऱप्पिन्
तॅन्नवन् नाडु शॆय्ददु ईङ्गु उरै अॆन
नीडु वाऴियरो नीळ्निल वेन्दु ! अॆन
माडल मऱैयोन् मन्नवऱ्कु उरैक्कुम् निन्
मैत्तुत्त वळवन् किळ्ळियोडु पॊरुन्दा
ऒत्त पण्बिनर् ऒन्बदु मन्नर्

इळवरशु पॊरुआऱ् एवल् केळार्
वळनाडु अळिक्कुम् माण्बिनर् आदलिन्
ऒन्बदु कुडैयुम् ऒरु पहल् ऒळित्तु अवर्
पॊन्पुनै तिहिरि ऒरुवळिप् पडुत्तोय् !
पळैयन् काक्कुम् कुळैपधिल् मॆडुङ्गोट्टु
वेम्बु मुदल् तडिन्द एन्दुवाळ् वलत्तु
पोन्दैक् कण्णिप् पॊरैय केट्टरुळ्
कॊऱ्कैयिल् इरुन्द वॆऱ्ऱि वेऱ् चॆळियन्
पॊन्तॊळिर् कोल्लर् ईरऐम् ऊरुवर्
ऒरुमुलै कुऱैत्त तिरुमा पत्तिनिक्कु
ऒरुपहल् ऎल्लै उयिर्प्पलि ऊट्टि
उरैशॆल वॆऱ्त्त मदुरै मूदूर्
अरैशु कॆडुत्तु अलम्वरुम् अल्लर् कालैत्
तॆन्पुल मरुङ्गिन् तीदुतीर् शिऱप्पिन्
मन्नवर्क् काक्कुम् मुरैमुदर् कट्टिलिन्
निरैमणिप् पुरवि ओर् एळ् पूण्ड
ऒरुतति आळिक् कडवुळ् तेर्मिशैक्
कालैच् चॆङ्गदिरक् कडवुळ् एरित्तन् ऎन्न
मालैत् तिङ्गळ् वळियोन् एरित्तन्;
ऊळि तॊरु ऊळि उलहम् कात्तु
वाळ्ह ! ऎम्को ! वाळिय पॆरिदु ऎन्न
मऱैयोन् कूऱिय माऱ्ऱम् ऎल्लाम्
इरैयोन् केट्टाङ्गु, इरुन्द ऎल्लैयुळ् 112–142

१४ दक्षिण पति के देश की स्थिति

दल-लसित ताल पुष्प को तुम्बै के फूलों से बांधकर धारण करने वाले अक्षय-श्री वञ्जि नगर के देव-श्रेष्ठ ने (राजा को देव कहना सर्वसाधारण बात है) पूछा कि राजा के मरने के बाद श्रीसमृद्ध दक्षिणपति का देश क्या करता है, वह कहो। उसके यह कहने पर विप्र माडलन् ने कहा धराधिप दीर्घायु रहे। कहकर आगे सुनाया : तुम्हारे श्याल किळ्ळिवळवन् के विरोधी, परस्पर मित्र नौ राजा थे। वे इस बात को सह नहीं सके कि किळ्ळि कम उम्र में ही राजा बन गया। उन्होंने उसका आधिपत्य नहीं माना बल्कि वे उस समृद्ध देश का नाश करने पर तुले हुए थे। तुमने एक दिन में उनके नवों छत्रों

को फाड़ डाला और किळ्ळि के स्वर्णमय आज्ञा-चक्र को ठीक तरह से स्थिर कर दिया। मोहूर् में "पळैयन्" जिस गौरव चिह्न की रक्षा करता था उस पत्र-कलित, शाखा वहुल नीम के पेड़ को (जो राज्य का गौरव चिह्न था,) जड़ से काट गिराने वाले हे खड्गधारी वलवान ताल पुष्पालंकृत "पोऱ्‌ऱैय" ! सुनो ! क्या हुआ ? कौऱ्‌कै का विजयदायिनी शक्ति का स्वामी राजा मॊऴियन् (पाण्डिय वंश का) मदुरै आया; उसने एक सहस्र सुनारों की एक-स्तन हीना पत्नी देवी को एक आह् में प्राण-वलि चढायी। फिर अपनी पुरानी ख्याति को और अपने राजा को खोकर जो पुरातन मदुरै नगर संकट में पड़ा हुआ था उसके सिंहासन पर दक्षिण प्रदेश का निर्दोष, महिमामय प्रजापालक राजशिरोमणि राजा बैठा। पक्तिवद्ध सात अश्वों वाले विलक्षण दिव्य एक-चक्र रथ पर प्रातःकाल में चढने वाले लाल किरणों का स्वामी सूर्य के समान यह सायंकाल प्रकाशक चंद्र के वंश में आया राजा सिंहासनारूढ़ हुआ। (यानी पाण्डिय राज्य का दुख-अपमान-अँधकार को दूर किया)। युग युग संसार का रक्षण करते हुए हे हमारे राजा ! जीते रहो ! दीर्घकाल जियो ! इस भाति ब्राह्मण ने जो भी कहीं वे सव वाते लोकनाथ सुनता रहा। ११२-१४२

15 कऴिन्द कालम् ऎत्तनै ?

अहल्वाय् ञालम् आरिरुळ् विऴुङ्गप्
पहल्शॆल मुदिर्न्द पडर्कूर् मालैच्
चॆन्दीप् परन्द तिशैमुहम् विळङ्ग
अन्दिच् चॆक्कर् वॆण्पिऱै तोन्ऱप्
पिऱैयेर् वण्णम् पॆरुन्दहै नोक्क !
इऱैयोन् शॆव्विचिर् कणियॆऴुन्दु उरैप्पोन्
ऎण्णान्गु मदियम् वञ्जि नीङ्गियदु;
मण्णाळ् वेन्दे वाऴ्ह ऎन्ऱु एत्त 143–150

१५ कितना समय वीता ?

विस्तृत भूतल को अंधकार को निगलने देते हुए दिन अस्त हो गया। संध्या वढ़ती आयी। लाल अग्नि (के समान प्रकाश) पश्चिमी दिशा में फैली। पश्चिमी दिशा जाज्वल्यमान दिखी। फिर वालचंद्र उग आया। उस दृश्य को राजा ने देखा। तव राजा का इगित समझकर ज्योतिषी उठा और वोला : वत्तीस महीने हो गये हमको वञ्जि छोड़े। हे पृथ्वीपति राजा ! जियें। १४३-१५०

16 चित्तिर माळिहै शेरन्दान्

नॆडुङ्गाळ्कु कण्डम् निरल्पड निरैत्त
कॊडुमुपड नॆडुमदिऌ कॊडित्तेर् वीदियुळ्
कुऱियवुम् नॆडियवुम् कुन्ऱु कण्डन्न
उऱैयुळ् मुडुक्कर् ऒरु तिऱम् पोहि
वित्तहर् कैविनै विळङ्गिय कॊळ्हैच्
चित्तिर विदानत्तुच् चॆम्बॊऩ् पीडिहैक्
कोयिल् इरुक्कैक् कोमहन् एऱि 151-157

१६ चित्र महल पहुँचा

फिर वह राजा लंबे स्तंभों के ऊपर पंक्तियों में टेढ़े पटों की बनी प्राचीरो के बाजू में बद्ध पताकाओं वाले मार्ग से गया। वहाँ छोटे और बड़े पर्वतों के समान पटगृह (डेरे) बने थे। उनके बीच से एक तंग गली में एक ओर गया। वहाँ कुशल कारीगरों की हस्त-कला को दरसाने वाले, चित्र वितान के नीचे रहे, एक लाल स्वर्णमय आसन पर जा विराजमान हुआ। १५१-१५७

17 शोऴरित्त निलैमै

वायि लाळरिन् माडलन् कूउय्
इळङ्गो वेन्दर् इऱन्ददऱ् पिन्ऱर्
वळङ्गॆळु नन्नाट्टु मन्नवन् कॊऱ्ऱमॊडु
शॆङ्गोल् तन्मै तीदुइन् ऱोअन्
अॆङ्गो वेन्दे वाऴ्ह अॆन्ऱु एत्ति
मङ्गल मऱैयोन् माडलन् उरैक्कुम्
मॆयिल् विळङ्गु मणिप्पूण् विण्णवर् वियप्प
अॆयिल् मून्ऱु अॆऱिन्द इहल्वेऱ् कॊऱ्ऱमुम्
कुरुनडैप् पुऱवित् नॆडुन्दुयर् तीर
अॆरितरु परुन्दिन् इडुम्बै नीङ्ग
अरिनुडम्बु इट्टोन् अऱन्दरु कोलुम्
'तीदो इल्लै शॆल्लऱ् कालैयुम्
तिरिन्दु वेऱाहुम् कालमुम् उण्डो ?
काविरि पुरक्कुम् नाडुकिऴ वोऱ्कु अॆन्ऱु 158-171

१७ शोऴर् की स्थिति

वहां से राजा ने द्वारपालों द्वारा माडलन् को बुलवाया। पूछा- छोटे राजकुमारों के मर जाने के वाद धन-धान्य-श्री समृद्ध और श्रेष्ठ राज्य का राजा (शोऴन्) शक्ति सम्पन्न होकर राज्य चला रहा है क्या ? उसका राजदंड दोष रहित है न ? उत्तर में विप्र बोला कि "हमारे राजाधि-राज ! जियो' ! अभिनंदन वचन कहकर मंगलमय माडलन् ने कहा : धूप के समान ज्वलंत मणिमय आभरणों से भूषित देवों को विस्मय में डालते हुए जिस विजयशीलता ने आकाश में तीन गढ़ों को नष्ट किया वह भयंकर "वेल्' की शक्ति और; लघु चाल वाले कबूतर का संकट और उसे खाने आये बाज का (बुभुक्षा का) त्रास दूर करने जिसने अपना शरीर काट काटकर तुला पर रखा उसका धर्म-युक्त (दण्ड) शासन अब भी कुछ नही विगड़ा। और बुरे समय आयें तो भी उसके शासन के बिगड़ने का मौका भी, काविरि-सिंचित उस देश के राजा को आयेगा क्या ? १५८-१७१

18 तुलावारम् तन्दान्

अरुमऱै मुदल्वन् शॊल्लक् केट्टे
पॆरुमहन् मऱैयोर् पेणि आङ्गु अवर्क्कु
'आडहप् पॆरुनिऱै ऐयैन्दु इरट्टित्
तोडार् पोन्दै वेलोन् तन्निऱै
माडल मऱैयोन् कॊळ्ह ऎन्ऱु अळित्तु आङ्गु
आरिय मन्नर् ऐयिरु पदिन्मरैच्
चॆर्कॊऴु नन्नाट्टुच् चॆल्ह ऎन्ऱु एवित् 172-178

१८ "तुलाभारम्" दिया

उत्कृष्ट वेदज्ञ शिरोमणि का कहना सुनने के वाद वदान्य शेरन् ने ब्राह्मण का खूब सत्कार किया। फिर माडलन् को हाटक-स्वर्ण का (दो के पाच के पाँच यानी) "पचास तुलाम' जो दल-खिले ताल पुरुषधारी राजा का अपना वजन था, 'माडलन्, स्वीकार करें" कहकर प्रदान किया। पश्चात (दुगुने पाच के दस) सौओं आर्यराजाओ को, 'अपने सुसमृद्ध देश चले' कहकर विदा किया। (अपने वजन के वरावर तोलकर चीजों को देना "तुला भारम" कहा जाता है अनु.) १७२-१७८

19 काट्टि वरुवीर्

तापद वेडत्तु उयिर् उय्न्दु पिळैत्त
मा पेरुन् दानै मन्नर कुमरर्
शुरुळिडु ताडि मरुळ्पडु पूङ्गुळल्
अरि परन्दु ऒळ्हिय शॆळुङ्गयल् नॆडुङ्गण्
विरिवॆण् तोट्टु वेण्णहैत् तुवर् वाय्च्
चूडह वरिवळै आडमैप् पणैत्तोळ्
वळरिळ वनमुलै तळरियल् मिन्निडै
पाडहच् चीरडि आरियप् पेडियोडु
ऎञ्जा मन्नर् इरैमॊळि मरुक्कुम्
कञ्जुह मुदल्वर् ईर् ऐम्बूरुवर्
आरियिर् पोन्दै अरुन्दमिळ् आर्रल्
तॆरियादु मलैन्द कनह विशयरै
इरुपॆरु वेन्दर्क्कुक् काट्टिड एवित् 179–191

१६ दिखा आओ

(फिर राजा ने कंचुकियों को आज्ञा दी कि) तपस्वी के वेश में प्राण बचाते जो भागे उन विशाल सेनाओ के नायक राजकुमारों और उन आर्यजाति के हिजड़ों को, जिनके मुख के बाल घुँघराले थे; (अच्छा अनुवाद होगा : जिनके गालों में हँसते समय, गड्ढे पड़ जाते थे) कोमल केश सुवासित थे; आँखे लंबी, कयल् मछली सी और लाल डोरों के साथ शोभायमान थी; मुल्लै पुष्प के श्वेत दलों के समान दांत थे; अधर लाल थे, कंधे चूड़ियाँ धारण करने वाले हाथो वाले और हिलते बाँस के समान थे; उरोज पीन, तरुण और मनोरम थे; रूप की छटा पल्लव की सी थी; कटि विद्युत् सी; छोटे चरण 'पाडहम्' से अलकृत थे और उद्धत कनहन्न और विशयन्न को जिन्होने ताल पुष्प धारी राजा की वीरता की अवज्ञा की थी उन निडर एक सहस्र अन्य कंचुकियो के हवाले किया और कहा कि इन्हें तमिळ देश के दोनों राजाओं को दिखा आओ। १७९-१९१

23 कुऱत्तियरिऩ् कुऱिञ्जिप् पाणि

अमैविळै तेऱल् माऩ्दिय काऩवऩ्
कवण्विडु पडैयूउक् कावल् कैविड
वीङ्गुपुऩम् उणीइय वेण्डि वऩ्द
ओङ्गियल् याऩै तूङ्गु तुयिल् ऎय्द
वाहै तुम्बै वडविशैच् चूडिय
वेहयाऩैयिऩ् वऴियो नीङ्गु ऎऩ्ऩ
तिऱत्तिऱम् पहर्ऩ्दु शेणोङ्गु इदणत्तुक्
कुऱत्तियर् पाडिय कुऱिञ्जिप् पाणियुम् 217–224

२३ कुऱवर् नारियों का कुरिञ्जि गीत

(कुऱिञ्जि पाणि=कुरिञ्जि यानी पर्वत के प्रदेश में पहाड़ी नारियों द्वारा गाया जानेवाला विशेष तर्ज का गीत शेरन् राजा विविध प्रदेश-विशेषों से होकर आ रहा है। रास्ते में उस उस प्रदेश के विशिष्ट नाद सुनता आता है। अनु-) "वास में उत्पन्न ताड़ी को पाकर काननवासी ने, ढेला बांस छोड़ कर पक्षियों को भगाने का अपना रखवाली का काम छोड़ दिया। तो कोदों के वाग में धान को खाने की ऊँची अभिलापा वाले हाथी खूब खाकर अघा गये और वही सो भी गये। पर उत्तर दिशा में जाकर "वाहै" और तुम्बै पहनकर जो दूसरा वेगवान हाथी आ रहा है उसके रास्ते से हट जाओ इस अर्थवाला "साधारणीकृत" यानी चार स्वरो वाला, विजय गीत गा रही थी कुऱवर् नारियां ऊँचे मचानों पर अपने काननवासी पुरुषों के साथ बैठकर। वह कुऱिञ्जिप्पाणि (सुनता) और। २१७-२२४

24 उऴवरिऩ् ओदैप्पाणि !

वडदिशै मऩ्ऩर् मऩ्ऩॅयिऩ् मुरुक्किक्
कवडि वित्तिय कऴुदैयेर् उऴवऩ्
कुडवर् कोमाऩ् वऩ्दाऩ् नाळैप्
पडुनुहम् पूणाय् पहडे, मऩ्ऩर्
अडित्तळै नीक्कुम् वॆळ्ळणि आम् ऎऩ्ऩुम्
तॊडुप्पुणर् उऴवर् ओदैप् पाणियुम् 225–230

२४ कृषकों का ओदैप्पाणि

(यह मरुदम् प्रदेश के विशिष्ट गीतका प्रकार है)

उत्तर के राजाओ के सुदृढ तथा सुस्थिर किलों का नाश करके उनमें "वरहु (नामक) धान को, बोने के लिए गधो द्वारा जुतवाने का प्रबंध करनेवाले (यह विजय का स्थिरीकरण कार्य है) तलवार रूपी हल चलाने वाले पश्चिमी देश के राजा आये। कल राजाओ की बेड़ियाँ काटने का दिन है ! इसलिए हे बैल ! कल तुम्हारे भी हल धारण करने का प्रथम उत्सव दिन है। ऐसा कहने वाला गीत गाते हुए और कूँड़ बनाते हुए हल चलाने वाले कृपकों का 'ओदैप्पाणि' भी सुनाई दिया। और २२५-२३०

25 कोवलर् कुळलिन्न पाणि

तण्णान्न	पोँरुनै	आडुनर्	इट्ट	
वण्णमुम्	शुण्णमुम्	मलरुम्	परन्दु	
विण्णुरै	विट्पोल	विळङ्गिय	परुन्दुरै	
वण्डुण	मलर्न्द	मणित्तोट्टुक्	कुवळै	
मुण्डहक्	कोदैयोँडु	मुडित्त	कुञ्जियिन्न	
मुरुहुवरि	तामरै	मुळ्मलर्	तोयक्	
कुरुहलर्	ताळैक्	कोट्टुमिशै	इरुन्दु	
विल्लवन्न	वन्दान्न	वियन्नपेर्	इमयत्तुप्	
पल्लान्न	निरैयोँडु	पडर् हुविर्	नीर्' अन्नक्	
कावलन्न	आनिरै	नीर्त्तुरै	पडीइक्	
कोवलर्	ऊदुम्	कुळलिन्न	पाणियुम्	231–241

२५ ग्वालों का मुरली 'पाणि'

(यह मुल्लै प्रदेश का विशिष्ट संगीत है। विषय भी तदनुकूल है। राग भी तदनुकूल विशिष्ट) शीतल "आन्नपोँरुन्नै" नदी में स्नान करने वालों द्वारा छोड़े गये रंगीन बुकनियाँ, चूर्ण, और पुष्प उसके जल में फैले है। तब वह जल घाट आकाश में बने इंद्रधनुष के समान दिखाई देता है। भ्रमरों को (मधु) खिलाने के लिए जो मणिमय दलो वाले "कुवळै" के फूल खिले है उनको 'मुळ्ळि' के फूलो के साथ ग्वालों ने अपने केश मे पहने है और उसपर चटकीली सुन्दरता से पूर्ण कमल के फूल भी है। वे "कुरुहु" पक्षी के समान खिले केतकी पुष्पों वाली शाखाओं पर बैठकर यह गा रहे हैं कि धनुर्धर

आया-अत्युन्नत हिमालय के प्रदेश के अनेक गो-समूहों के साथ। वे ग्वाल राजा की गायों के झुंडों को घाट पर नहला रहे हैं। ऐसे ग्वालों के मुरली-गान का शब्द भी सुनाई देता था। २३१-२४१

26 नॆय्दऱ् पाणि

वॆण्डिरै पॊरुद वेलॆवा लुहत्तुक्
कुण्डुनीर् अडैकरैक् कुवैयिरुम् पुन्नै !
वलम्पुरि ईन्ऱ नलम् पुरि मुत्तम्
कळङ्गाडु महळिर् ओदै आयत्तु
वळङ्गु तॊडि मुन्कै मलर एन्दि
'वान्वन् वन्दान् वळरिळ वत्तमुलै
तोळ्नलम् उणीइय; तुम्बै पोन्दैयॊडु
वञ्जि पाडुदुम् मडवीर् याम् ऎन्नुम्
अञ्जीर् किळवियर् अन्दीम् पाणियुम् 242-250

२६ नॆय्दल गीत

(नेय्दल् समुद्र तटीय प्रदेश है।)

श्वेत (झागयुक्त) लहरें वालुका कणों को लाकर तीर पर उनके ढेर लगा देती है। उन वालुका के टीलों पर पुष्ट, बड़े "पुन्नै" तरुओं की छाया में शंखों द्वारा जनित मोतियों को लेकर वालाएँ "कळ्ङ्गु" खेल (कंदुकलीला) खेल रही है। उन कोलाहलपूर्ण भीड़ में वे अपने वलयशोभित हाथों को खिले पुष्प के समान खोलकर उठाते हुए गाती है कि शॆरन् महान आये। देव आ ये। अब वर्धनशील, मनोरम स्तन उनकी वाहुओं का सुख भोगेंगे। इसलिए "तुम्बै और पोन्दै (ताल पुष्प) के साथ वञ्जि भी गायें-नारियो! हम"! ऐसा मधुरवाणी रमणियों का मीठा गान भी सुनाई दिया - २४२-२५०

27 वञ्जि वन्दान् !

ओर्त्तुडन् इरुन्द कोप्पॆरुन् देवि
वाल्वळै शॆऱिय वलम्पुरि वलन्ऎळ
मालॆवॆण् कुडैक्कोळ् वाहैच् चॆन्नियन्
वेह यानैयिन् मीमिशैप् पॊलिन्दु
कुञ्जर ऒळुहैयिऱ् कोनहर् ऎदिर्कॊळ
वञ्जियुट् पुहुन्ददन् शॆङ्गुट्टुवन् ऎन् 251-256

२७ वञ्जि आया

पटरानी भी यह सब स्वर सुन रही थी और उसका मन उसमें लयीभूत था। उसके हाथ के कंकण (हाथ के संतोष के कारण बढ़ने से) चुस्त हो गये। दक्षिणावर्त शंखों ने विजयनाद उठाया। माला से अलंकृत श्वेतछत्र के नीचे 'वाहै' पुष्पधारी सिरवाला शॆङ्गुट्टुवन् तेज चलने वाले गज के ऊपर शोभायमान होकर आ रहा था। हाथियों की पंक्तियों के साथ महानगर-वासियों ने जाकर अगवानी की। शॆङ्गुट्टुवन् वञ्जि में प्रविष्ट हुआ। २५१-२५६

28 नडुकर् कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 वञ्जियिले महिळ्च्चि

तण्मदियन्न तमनिय नॆडुङ्गुडै
मण्णहम् निळल्शॆय मरुवाळ् एन्दिय
निलन्दरु तिरुविन् नेडियोन् तन्नाडु
वलम्पडु शिरप्पिन् वञ्जि मूदूर्
ऒण् तॊडित् तडक्कैयिन् ऒण्मलर्प् पलितूउय्
वॆण्तिरि विळक्कम् एन्दिय महळिर्
उलह मन्नवन् वाळ्ह ऎन्रु एत्तिप्
पलर् तॊळ वन्द मलरविळ् मालै १-8

२८ प्रतिष्ठापन गाथा

(छंद: निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

१ वञ्जि (नगर) में हर्षोल्लास

शीतल-किरण चंद्र के समान स्वर्ण का बना बड़ा छत्र पृथ्वी भर में छाया करे— इसी वास्ते जिसने प्रखर तलवार धारण की थी वह भूदत्त-समृद्धि के कारण उन्नत "शॆङ्गुट्टुवन्" अपने विजय-श्री मंडित पुरातन नगर वञ्जि में ससुख रहा। तव उज्वल ककण शोभित अपने विशाल हाथों से चटकीले फूलो की बलि समर्पित कर स्त्रियों ने वर्तिका को जलाकर प्रज्वलित दीप हाथ में धारण किये। और "लोक शासक जिये।" कहकर मंगल गान गाये। यह सायंकाल था। अनेकों ने ऐसी स्तुति की। वैसे सायंकाल के समय में पुष्पों ने भी दल खोले। १-८

2 वेदु ऑऴ्रित्तर्

पोन्दैक्	कण्णि	पॉलम्बून्	दॆरियल्	
वेन्दुविनै	मुडित्त	एन्दुवाळ्	वलत्तर्	
यात्तै	वॆण्कोडु	अऴुन्दिय	मार्बुम्	
नीळ्वेल्	किऴित्त	नॆडुम्पुण्	आहमुम्	
अॆय्कणै	किऴित्त	मणिप्पूण्	मार्बमुम्	
वैवाळ्	किऴित्त	नॆडुम्पूण्	मार्बमुम्	
मैम्मलर्	उण्कण्	मडन्दैयर्	अडङ्गाक्	
कॊम्मै	वरिमुलै	वॆम्मै	वेदुऱीइ;	9–16

२ सेंक दी

ताल पुष्प माला शोभित, और स्वर्ण की बनी 'तुम्बै' फलों की माला के धारक राजा का कार्य अंजाम कर जो आये थे उन खड्गधारी वीर सिपाहियों में कुछ के वक्षों में हाथी के श्वेत दाँतों के धँसने से बने व्रण थे। कुछ के लंबी शक्ति के चीरने से बने व्रणों के वक्ष थे। कुछ के, चलाये गये बाणों से चिरे मणि भूषण भूषित वक्ष थे। और कुछ के तीक्ष्ण खड्गों से कटे दीर्घ आभरण भूषित छातियाँ थीं। उनके, कजरारी नीलोत्पल सी आँखों वाली पत्नियों ने गले लगकर अपने कोमल गरम वर्ण-चित्र-युक्त और अंगिया के बंधन मे न समाने वाले स्तनो की गर्मी से सेंक दी। ९-१६

3 मरुन्तदुम् इदुओ

अहिल्उण	विरित्त	अम्मॆन्न्	कून्दल्	
मुहिल्नुळै	मदियत्तु	मुरिकरुञ्	जिलैक्कोळ्	
महरक्	कॊडियोन्न	मलर्क्कणै	तुरन्दु	
शिदररि	परन्द	शॆळुङ्गडैत्	तूदुम्	
मरुन्दुम्	आयदु	इम्मालै	ऍन्नुरेत्त	17–21

३ दवा भी यही है क्या ?

वीरों ने अपनी पत्नियों की चिरौरी में स्तुति की। इनके केश अगरु का धुआँ खाने के लिए बिखरे है। उस कोमल केश राशि रूपी मेघ में घुसा है चद्र (मुख)। उसमे टेढा काला धनुष है। (भौहें) उस धनुद्वय के नीचे मकर केतन के पुष्प बाणो को भी हराते हुए डोरो सहित रहे उनके मत्त अपांगों का सदेशा आ रहा है। अतः यह सायंकाल हमारे व्रणों के लिए औषध बन गया। (इस भाति एक वीर ने हर्ष किया।) १७-२१

4 इन्नबम् अळिन्तनर्

इरुङ्गनित्	तुवर्वाय्	इळनिला	विरिप्पक्	
करुङ्गयल्	पिऱळुम्	कामर्	शॅव्वियिन्	
तिरुन्दॅदॉयिरु	अरुम्बिय	विरुन्दिन्	मूरलुम्	
मान्दळिर्	मेनि	मडवोर्	तम्माल्	
एन्दुपूण्	मार्बिन्	इळैयोर्क्कु	अळित्तु	22–26

४ सुख-भोग प्रदान किया।

उन प्रमदाओं के बड़े बिंब फल सदृश अधरों में मंदहास रूपी (शिशु) कौमुदी छिटक उठती है। काली 'कयल्' सी आँखे इधर उधर चलित होती है। उस प्रेम गुफित मनोरमता मे सुघड़ सुदर दाँत सुरुचिपूर्ण चित्तहारी आकर्षण पैदा करते है। आम्रपल्लव के समान शरीर वाली वे स्त्रियाँ अपने आभरण-धारी उरोजों का आनंद अपने प्रेमी तरुण वीरो को प्रदान करती है। २२-२६

5 नाडह महळिर्

काशरैत्	तिलहक्	करुङ्गरै	किडन्द	
माशिल्वाण्	मुहत्तु	वण्डॊडु	शुरुण्ड	
कुळलुम्	कोदैयुम्	कोलमुम्	काण्मार्	
निळल्काल्	मण्डिलम्	तम्मॅदिर्	निऱुत्ति	
वणर्कोट्टुच्	चीऱियाळ्	वाङ्गुवु	तळीइप्	
पुणर्पुरि	नरम्बिऱ्	पॊरुळ्पडु	पत्तरक्	
कुरल्	कुरलाह	वरुमुरैप्	पालैयिन्	
तुत्तङ्	गुरलात्	तॊन्नमुरै	इयर्कैयिन्	
अन्दोड्	गुऱिञ्जि	अहवन्	महळिरिन्	
मैन्दर्क्कु	ओङ्गिय	वरुविरुन्दु	अयर्न्दु	27–36

५ नाट्यांगनाएँ

कस्तूरी-तिलक रूपी श्याम लांछनयुक्त अपने सुदर निर्दोष तथा उज्वल मुखों को, और (मधुपायी) भ्रमरों के साथ घुंघुराले बने केश जाल को और माला आदि अलंकारों से शोभायमान अपने रूप सौंदर्य को देखने के लिए नाट्यागनाओं ने प्रतिबिंबित करने वाले गोल स्फटिक फलक (दर्पण) को अपने सामने रख लिया। फिर वक्र दंडयुक्त और स्वर-संबद्ध तारो और 'पत्तर' नामक भाग के साथ बने "शीऱियाळ्" को अपने से लगा लिया (शरीर

पर टिका लिया)। "शॆम्बालै" राग "कुरल्" (षड्जम) को स्थायी स्वर बनाकर गाया जाता है। और "तुत्तम्" को (रिषभ को) स्थायी स्वर बनाकर प्राचीन क्रम का 'पडुमलैप्पालै" का राग गाया जाता है। इन दोनों रागों के साथ, अतिमधुर 'कुऱिञ्जि' राग के आनंद की गाने वाली स्त्रियों ने अपने तरुण प्रेमियों को बहुत ही उत्कृष्ट नयी दावत दिलायी। ('रि' को स्थायी स्वर बनाकर गाया जाने वाला राग ही कुऱिञ्जि है— ऐसी भी टीका मिलती है। गृहिणियों ने अपने युद्ध से लौटे पतियो को अपने रूप, हंसी तथा शरीर का सुख दिया और नर्तकियों द्वारा नाच और गान का आनंद भी दिलवाया। अनु.) २७-३६

6 मदियमुम् वन्ददु !

मुडिपुऱम् उरिनुजुम् कऴऱ्काल् कुट्टुवन्न
कुडिपुऱन् तरुङ्गाल् तिरुमुहम् पोल
उलहुतॊऴत् तोन्ऱिय मलर्कदिर् मदियम्
पलर्पुहऴ् मूदूर्क् काट्टि नीङ्ग 37–40

६ चाँद भी आया

विरोधी-मुकुट-घर्षक-वीर-कटक-धारी शॆङ्गुट्टुवन्न का श्रीमुख प्रजा-पोषण के समय प्यारा लगता था उसी मुख की भाति प्रभामय चाद को विखरती किरणों वाला लोक पूजित सूर्य बहुजन वंदित पुरात्तन नगर 'वञ्जि' को (समक्षकर) दिखाकर सायंकाल हट गया। ३७-४०

7 ऎङ्गुम् निलवु

मैन्दरुम् महळिरुम् वळिमॊळि केट्प
ऐङ्गणै नॆडुवेळ् अरशुवीऱ् ऱिरुन्द
वॆण्णिला मुन्ऱिलुम् वीळ्पूल् जेक्कैयुम्
मण्णीट्टु अरङ्गमुम् मलर्प्पूम् पन्दरुम्
वॆण्काल् अमळियुम् विदान वेदिहैहळुम्
तण्कदिर् मदियम् तान्कडि कॊळ्ळ 41–46

७ सर्वत्र चाँदनी

(चाँदनी का लाक्षणिक अर्थ है प्रेमियो का संगम अनु.) तरुण और तरुणियों को अपने वशवर्ती बनाते हुए पंच सुमनशर राजा मनोभव जहाँ अपना दर्बार

लगाये था उन चंद्र शालाओं; मनोरम पुष्प शय्याओ, मट्टी के (या चूने के) बने रंग गृहों, पुष्पलसित वितानों, श्वेत-चरण पर्यकों, और वितान युक्त वेदियों पर शीतल-किरण चाँद तपाक से जा पहुँचा। ४१-४६

8 तिङ्गळ् काण वन्दाळ् !

पडुतिरै शूळ्न्द पयङ्गॆळु मानिलत्तु
इडैनिन्ऱु ओङ्गिय नॆडुनिलै मेरुविन्
कॊडिमदिल् मूदूर् नडुनिन्ऱु ओङ्गिय
तमनिय माळिहैप् पुनैमणि मरुङ्गिन्
वदुवै वेण्माळ् मङ्गल मडन्दै
मदियोर् वण्णम् काणिय वरुवळि 47–52

८ कुमुद पति को देखने आयी।

शब्दित लहर-युक्त सागर वलयित तथा लाभदायी विशाल भूतल पर, बीच में उन्नत खड़े रहते सशिखर मेरु के समान फहरती पताकाओं से शोभित प्राचीरों के घिरे प्राचीन नगर वञ्जि में, मध्यस्थल में उन्नत वह स्वर्ण महल था। उसमें मणियों से अलंकृत चंद्रशाला थी। वहाँ कल्याणी देवी महिषी रानी "वेण्माळ्" चंद्र की कमनीय शोभा के दर्शनार्थ आयी। ४७-५२

9 अरशियिन्न वरुहै

ऍल्वळै महळिर् एन्दिय विळक्कम्
पल्लाण्डु एत्तप् परन्दन्न ऑरुशार्;
मण्कणै मुळवुम् वणर्कोट्टु याळुम्
पण्कनि पाडलुम् परन्दत्त ऑरुशार्
मान्मदच् चान्दुम् वरिवॆण् शान्दुम्
कूनुङ् कुऱळुम् कॊण्डत्त ऑरुशार्
वण्णमुम् शुण्णमुम् मलर्प्पूम् पिणैयुलुम्
पॆण्णणिप् पेडियर् एन्दिनर् ऑरुशार्
पूवुम् पुहैयुम् मेविय विरैयुम्
तूवियम् शेक्कै शूळ्न्दनर् ऑरुशार्
आडियुम् आडैयुम् अणितरु कलन्नगळुम्
शेडियर् शॆव्वियिन् एन्दित्तर् ऑरुशार् 53–64

९ रानी का आगमन

(रानी जब कही जाती है तब वह अकेली नही जाती। साथ अलंकार, आभरण, दीप आदि मंगल-वस्तुएँ लिये दासियाँ, परिचारिकाएँ आदि जाती है। और भी रक्षणार्थ नियुक्त हिजड़े, नाटे, ठिगने लूले-लंगड़े भी जाते हैं। जाकर वे सब अपने-अपने निर्दिष्ट स्थानों में खड़े हो जाते है। अनु.) जब रानी जाने लगी तब चमकदार चूड़ियों से अलंकृत हाथों वालियों से घृत दीपक, 'अनेक वर्प' के गीतों के साथ, फैल आये एक ओर। स्याही पुते मृदग, वक्र-दड याऴ् और रागरंजित गान— इनके नाद फैले दूसरी एक ओर। मृगमद का लेप, शरीर पर चित्र लिखने के लिए उपयोगी लेप कूवड़ों और ठिगनों से घृत होकर फैल आये एक ओर, और दूसरी एक ओर वर्ण, चूर्ण पुष्पमालाएँ आदि को लेते हुए स्त्री वेश में हिजडे आये। पुष्प, धूप, और श्रेष्ठ वास-द्रव्य लेकर कुछ लोग एक ओर हंस-रोम-वितरित आसन को (जिस पर वह वैठ के आयी या जिस पर वह जाकर बैठ गयी) घेर आये। दर्पण, वस्त्र, और पहनने के आभरणो को लेकर एक ओर चेटियाँ जाकर खड़ी हुईं। (सव कौमुदी-आँगन पहुँचकर रानी के आसन के चारो ओर अपने-अपने स्थान पर खड़ी हो गयी)। ५३-६४

10 शेरनुम् वन्दात्

आङ्गु अवळ् तन्नुडन्नु अणिमणि अरङ्गम्
वीङ्गुनीर् ञालम् आळ्वोन् एऱ्िद् 65–66

१० शेरन्न् भी आया

तव वहाँ, उसके साथ, सुदर मणियो से अलकृत उस चद्रशाला मे पूर्ण-जल सागर की पृथ्वी का शासन करने वाला राजा भी जाकर आसन पर बैठा। ६५-६६

11 शाक्कैयर् कूत्तु

तिरुनिलैच् चेवडिच् चिलम्बुवाय् पुलम्बवुम्
परितरु शेङ्गैयिऱ् पडुपरै आर्प्पवुम्
शेङ्गण् आयिरम् तिरुक्कुऱिप्पु अरुळवुम्
शेञ्जडै शन्रु दिशैमुहम् अलम्बवुम्
पाडहम् पदैयादु शूडहन् दुळङ्गादु
मेहलै ऑलियादु मेन्मुलै अशैयादु
वार्कुऴै आडादु मणिक्कुऴल् अविऴादु

उमैयवळ् ऑरुतिरन् आह ओङ्गिय
इमैयवन् आडिय कॉट्टिच् चेदम्
पात्तरु नाल्वहै मरैयोर् परैयूर्क्
कूत्तच् चाक्कैयन् आडलिन् महिळ्न्दु अवन्
एत्ति नीङ्ग इरुनिलम् आळ्वोन्
वेत्तियल् मण्डबम् मेविय पिन्नर् 67–79

११ शाक्कैयर् कूत्तु

(शक्कैयन्‌ नटों की एक जाति) नट आया। शिव के शरीर का एक भाग उमा थी। दूसरा पुरुष शिव था। उन्होंने "कौडुकॉट्टि" नाच किया था इसका जिक्र पहले भी आया है। शाक्कैयन्‌ ने भी उभयांगी बनकर यह नाच नाचा था। तब पुरुष भाग में स्थिर रूप से शोभायुक्त, चरण का नूपुर क्वणित होता; ललित हाथ पर हिलने वाला डमरू बजता; लाल आँखें हजारों सुंदर भाव प्रदर्शित करतीं; लाल जटाएँ जाकर दिशाओं के मुखों को मारतीं; (पर स्त्री भाग में :) पाडहम् नामक (नूपुर:) चरणाभरण नही छटपटाता; चूड़ियाँ नहीं हिलतीं। मेखला स्वर नही करती। कोमल स्तन नही हिलता। लटकते कुडल चंचल नही होते। मणि भूषित जूड़ा नही खुलता। ऐसी स्थिति में उमा को एक भाग में लेकर अति पूज्य हिमालय के ईश्वर शिव ने 'कॉट्टि' च् 'चेदम्' नाम का नृत्य किया। उसी का अब शाक्कैयन्‌ ने अभिनय किया। वह 'पऱैयूर' का रहने वाला नट था जहाँ भागो में विभक्त चारो प्रकारों के वेदों के ज्ञाता रहते थे। उस नट शाक्कैयन्‌ के नृत्य से राजा मुदित हुआ। शाक्कैयन्‌ स्तुति करके चला गया। बाद विशाल भूतल का पालक राजा अपनी राज सभा में गया। ६७-७९

12 शोळ पाण्डियर् निलै !

नीलन् मुदलिय कञ्जुह माक्कळ्
माडल मऱैयोन् तन्नॉडुम् तोन्ऱि
वायिलाळरिन् मन्नवऱ्कु इशैत्त पिन्
कोयिल् माक्कळिन् कॉऱ्ऱवन् तॉळुदु
तुम्बै वॆम्बोर्च् चूळ्कळल् वेन्दे
शॆम्बियन् मूदूर्च् चॆन्ऱु पुक्कु आङ्गु
वच्चिरम् अवन्दि मगदमॊडु कुळीइय
चित्तिर मण्डबत्तु इरुक्क वेन्दन्
अमरहत्तु उडैन्द आरिय मन्नरॊडु

तमरिऱ् चॆन्ऱु तहैयडि वणङ्ग
नीळमर् अऴुवत्तु नॆडुम्बोर् आण्मैयोडु
वाळुम् कुडैयुम् मऱक्कळत्तु ऒऴित्तुक्
कॊल्लाक् कोलत्तु उयिरुय्न्न् दोरै
वॆल्पोर्क् कोडल् कॊऱ्ऱम् अन्ऱु ऎन्नत्
तलैत्तेर्त् तानै तलैवर्क्कु उरैत्तन्न्
शिलैत्तार् अहलत्तुच् चॆम्बियर् पॆरुन्दहै
आङ्गु निन्ऱु अहन्ऱ्पिन् अऱक्कोल् वेन्दे
ओङ्गुशीर् मदुरै मन्नवऩ् काण
आरिय मन्नर् अमर्क्कळत्तु ऎडुत्त
शीरियल् वॆण्कुडैक् काम्बुनत्ति शिऱन्द
शयन्दन्न् वडिविन्न् तलैक्कोल् आङ्गु
कयन्दलै यानैयिऩ् कविहैयिऩ् काट्टि
इमैयच् चिमयत्तु इरुङ्गुयि लालुवत्तु
उमैयोरु पाहत्तु ऒरुवऩ् वणङ्गि
अमर्क्कळम् अरशऱ्दु आहत् तुऱन्दु
तवप्पॆरुङ् गोलम् कॊण्डोर् तम्मेऩ्
कॊदियळल् शीऱ्ऱम् कॊण्डोन्न् कॊऱ्ऱम्
पुदुवदु अन्ऱ्तन्न् पोऱ्वेऩ् चॆऴियन्न् ऎन्ऱु
एऩ्ऩै मन्नर् इरुवरुम् कूऱिय
नीळ् मॊऴि ऎल्लाम् नीलन्न् कूऱ्त् 80-109

१२ शोऴ़ पाणडियर् का हाल (मनोभाव)

तब नीलन आदि कंचुकी लोगों ने माडलन्न् के साथ आकर द्वारपाल द्वारा राजा को समाचार भेजा। राज कर्मचारी राजा की आज्ञा लेकर आये। उनके साथ वे जाक़र राजा को नमस्कार करके बोले "तुम्बै" भूषित, शत्रु-भयंकर योद्धा, वीर कटकधारी राजा! हम शॆम्बियन्न् (शोऴ़न्न्) के पुरातन नगर में गये। वहाँ राजा वच्चिरम्, अवन्ति और मगदम् के (देशों के) राजाओं के उपहार में दिये भागों से पूर्ण बने मंडप में विराजमान थे। युद्ध में परास्त हुए राजाओं को साथ लेकर हमने उनके योग्य चरणों में नमस्कार किया। (राजा ने कहा:) विशाल समर भूमि में अपने बड़े युद्ध-पराक्रम के साथ तलवार और छत्र को वीर-भूमि की बलि में देकर अवध्य वेश में जो प्राण लेकर भागे उनको पकड़ लाना समर विजेता के लिए वीरता की शोभा

नहीं है ! ऐसा अपने श्रेष्ठ रथों के सेनापतियों से कहा इंद्रधनुष समान हारों से अलंकृत वक्ष वाले वदान्य शॅम्बियन्न ने ! वहाँ से हम चले; और बाद हे धर्म दंडधर राजा ! उन्नतिशील सौभाग्यवान मदुरै के राजा से भेंट करने पर उन्होने कहा: आर्य राजाओं ने समरांगण में सम्मान्य श्वेत छत्र के दंड को लेकर, अतिमानित जयंत के रूप में तलैक्कोल् बनाने के लिए गज-सिर पर हौदे पर विराजमान (आपके) राजा को दिखाया। ('तलैक्कोल्' छोटा दण्ड है। जो अगस्त्य शापित जयंत के स्थान में नृत्यमंच पर पूजित होता है। वह परास्त राजा के छत्र का मूठ होता है जो या तो अपहृत होता है या जिसे स्वयं पराभव को मानने वाला राजा दे देता है। वही कोल् उच्चस्तरीय मूर्धन्य नर्त्तकी को राजा द्वारा प्रदान किया जाता है। तलैक्कोल् प्राप्त करने वाली 'तलैक्कोलि' को उपाधि से अलंकृत की जाती है। उसे एक हजार आठ कळञ्जु स्वर्ण मुद्राएँ एक रात के लिए प्रेमी पुरुष से लेने का हक और नियम बंधा रहता है। अनु.) फिर वे हिमालय के शिखरपर "कुयिलालुवम्" में गये। उमा-वाम-भागी परमेश्वर का नमस्कार करके युद्ध भूमि को आपके राजा के अधीन छोड़कर तपस्वी के वेश में बच चले। उस श्रेष्ठ वेश में रहे उन पर जलती आग के समान क्रोध दिखाने वाली वीरता का गौरव भी नये प्रकार का लगता है ! ऐसा फ़र्माया समर समर्थ 'वेल्' वाले शॅळियन्न ने ! इस भाँति अन्य दोनों राजाओं के सब कथन नील ने राजा को बताये। ८०-१०९

13 शेरन्न् शिन्नन्दान्न्

तामरैच् चॅङ्गण् तळल् निऱम् कॊळ्ळक्
कोमहन्न् नहुदलुम् कुरैयाक् केळ्वि
माडलन्न् ऍळुन्दु मन्नवर् मन्ने !
वाळ्ह निन्न् कॊऱ्ऱम् वाळ्ह ऍन्नरु एत्तिक् 110-113

१३ शेरन्न् ने गुस्सा किया

यह सुनकर राजा के कमल वर्ण अक्षों ने अग्नि का रंग अपनाया। उसके क्रोध की हंसी हसते ही पूर्ण-श्रुति-ज्ञानी माडलन्न् उठा और बोला। पहले उसने अभिनंदन के शब्द कहेः हे राजाधिराज ! जीती रहे। तुम्हारी विजय-शीलता जीती रहे। ११०-११३

14 माडलन् पेच्चु

करिवळर्	शिलम्बिऱ्	रुण्जुम्	यानैयिन्	
शिरुकुरल्	नेय्दल्	वियलूर्	ऍरिन्दपिन्	
आर्पुनै	तेरियल्	ऑन्बदु	मन्नरै	
नेरि	वायिल्	निलैच्चॆरु	वॆन्ऱु	
नॆडुन्देर्त्	तानैयॊडु	इडुम्बिऱ् पुऱत्तु	इरुत्तुक्	
कॊडुम्पोर्	कडन्दु	नॆडुङ्गडल्	ओट्टि	
उडन्ऱुमेल्	वन्द	आरिय	मन्नरैक्	
कडुम्बुनर्	कङ्गैप्	पेर्याऱ्ऱु	वॆन्ऱोय्	
नॆडुन्दार्	वेय्न्द	पेरुम्पडै	वेन्दे !	
पुरैयोर्	तम्मॊडु	पॊरुन्द	उणर्न्द	
अरैशरेऱे	अमैह	निन्	शीऱ्ऱम्	
मण्णाळ्	वेन्दे !	निन्	वाळ्नाट्कळ्	
तण्णान्	पॊरुनै	मणलित्तुम्	शिऱक्क !	
अहळ्कडन्	ञालम्	आळ्वोय्	वाळि	
इहळा	देन्शॊऱ्	केट्टल्	वेण्डुम्	114-128

१४ माडलन् का कथन

(माडलन् ने राजा को शांत करते हुए उपदेश दिया :) काली मिर्च की लताएँ जिन पर उगती है उन पहाड़ियों पर जाने वाले हाथियों और छोटे छोटे गुच्छों में फूलने वाले नेय्दल् फूलों से युक्त वियलूर् (मतलब है कि वहाँ पहाड़ भी थे और समुद्र तट भी था) को मिटाने के बाद, आर् (अगस्त्य पुष्प) हार धारी नवों राजाओं को 'नेरिवायिल्' नामक स्थान में तुमने युद्ध में हराया। रथ की विशाल सेना सहित "इडुम्बिल् नामक स्थान में भी शत्रुओं को पीठ दिखाने को मजबूर किया। तुम अनेक भयंकर युद्धों में जीते। विशाल सागर में नौकाएँ लेकर तुमने लड़ाइयाँ लड़ीं। तुम्हारे ऊपर चढ़ आये आर्य राजाओं को भी तेज धारावाली गंगा की बड़ी नदी के तट पर तुम जीते! हे दीर्घ मालाधारी, विशाल सेनानायक राजा! बुद्धिमान बड़े लोगों की टक्कर का ज्ञान रखने वाले राजसिंह! शांत हो तुम्हारा क्रोध! हे पृथ्वीपति! तुम्हारे आयु के दिन शीतल "आन् पॊरुनै" नदी के बालुओं से भी अधिक हों। हे (सगर पुत्र) खनित सागर मध्य भूमि का पालन करने वाले। जियो! अवहेलना किये बिना मेरी बात सुनो। ११४-१२८

15 याक्कैयिन् निलैयामै

वैयङ्कावल् पूण्डनिन् नल् याण्डु
ऐयैन्दु इरट्टि शॆन्ऱदऱ् पिन्ऩुम्
अऱक्कळ वेळ्वि शॆय्यादु याङ्गणुम्
मऱक्कळ 'वेळ्वि शॆय्वोय् आयिनै !
वेन्दुविऩै मुडित्त एन्दुवाळ् वलत्तुप्
पोन्दैक् कण्णि निऩ् ऊङ्गणोर् मरुङ्गिन्
कडऱ्कडम्बु ऎऱिन्द कावलन् आयिनुम्
विडर्च्चिलै पॊऱित्त विऱलोन् आयिनुम्
नान्मऱै याळन् शॆय्युट् कॊण्डु
मेल्निलै उलहम् विडुत्तोन् आयिनुम्
पोऱ्ऱि मन्ऩुयिर् मुऱैयिऱ् कॊळ्ह ऎऩक्
कूऱ्ऱुवरै निऱुत्त कॊऱ्ऱवन् आयिनुम्
वन्शॊल् यवनर् वळनाडु आण्डु
पॊन्पडु नॆडुवरै पुहुन्दोन् आयिनुम्
मिहप्पॆरुम् तानैयोडु इरुञ्जॆरु वोट्टि
अहप्पा ऎऱिन्द अरुन्दिऱल् आयिनुम्
उरुकॆळु मरबिन् अयिरै मण्णि
इरुकडल् नीरुम् आडिनोन् आयिनुम्
शदुक्कप् पूदरै वञ्जियुळ् तन्दु
मडुक्कॊळ् वेळ्वि वेट्टोन् आयिनुम्
मीक्कूऱ्ऱाळर् यावरुम् इन्मैयिन्
याक्कै निल्लादु ऎन्बदै उणर्न्दोय् !
मल्लन् मा ञालत्तु वाळ्वोर् मरुङ्गिन्
शॆल्वम् निल्लादु ऎन्बदै वॆल्पोर्त्
तण्डमिळ् इहळ्न्द आरिय मन्नरिन्
कण्डनै अल्लैयो, कावल् वेन्द !
इळमै निल्लादु ऎन्बदै ऎडुत्तीङ्गु
उणर्वुडै माक्कळ् उरैक्क वेण्डा;
तिरुञॆमिर् अहलत्तुच् चॆङ्गोल् वेन्दे
नरैमुदिर् याक्कै नीयुम् कण्डनै 129–158

१५ शरीर की नश्वरता

भूरक्षण का भार वहन किये तुम्हारे अच्छी आयु के पचास साल बीत गये। इसके बाद भी धार्मिक क्षेत्र का यज्ञ किये बिना सर्वत्र वीरता के (युद्ध क्षेत्र में) यज्ञ करने वाले बने हुए हो। कृत-राज-कर्म, निषंग धारक, ताल-पुष्प-माली तुम्हारे पूर्वजों में (किसी को भी लो) समुद्र मध्य (द्वीप में शत्रुरक्षित गौरव चिह्न) 'कडम्बु' तरु भग्नकारी राजा हो; हिमालय पर धनुरंकक पराक्रमी राजा हो; चतुर्वेदी का श्लोक पढ़कर उसके अनुसार उसमें स्वर्ग भेजने वाला हो; जीवों का उचित रक्षण तथा क्रमिक हरण करने की आज्ञा देकर यम को सीमा के अंदर रखने वाला हो, कठोर-वाणी यवनों का समृद्ध राज्य पालन करके स्वर्णमय हिमालय प्रदेश का विजेता जो रहा वह हो; बहुत बड़ी सेना सह बड़ी युद्धभूमि में शत्रुओं को भगाकर उनके गढ़ों को नष्ट जिसने किया वह हो; भयावनी प्रकृति के "अयिरै" पर्वत की 'कॊट्रवै' देवी को जिसने दोनों (पूर्वी और पश्चिमी) समुद्रके जल से अभिषिक्त कराया वह हो; जिसने चौक के भूतों को वञ्जि नगर में लाकर स्थापित किया और सोमरस पीकर सोम यज्ञ किया वह हो;—इन तुम्हारे पूवर्जो में क्या अब कोई जीवित है? ऐसे बड़े यशस्वियों में कोई भी अब नही है। इससे "शरीर टिकने वाला नही है" यह नही समझे क्या? कोलाहलमय इस संसार में रहने वालों के पास धन भी स्थिर नही रहता—यह बात युद्धविजयी मधुर तमिऴ् के निंदक आर्य राजाओं में तुमने देखी न! हे पालनहार राजा! वैसे ही जवानी भी ठहरेगी नही—यह बात ज्ञानियो को लेकर कहने की आवश्यकता नही है! पके बालों से युक्त अपने ही शरीर को देखकर समझ पाओगे। श्रीमन्त विशाल वक्ष और नेक राजदण्ड वाले राजा! और भी सुनो। १२९-१५८

16 उयिरिऩ् इयल्बु

विण्णोर् उरुविऩ् ऎय्दिय नल्लुयिर्
मण्णोर् उरुविऩ् मऱिक्कित्तुम् मऱिक्कुम्
मक्कळ् याक्कै पूण्ड मऩ्ऩुयिर्
मिक्कोय् विलङ्गिऩ् अय्दितुम् ऎय्दुम्;
विलङ्गिऩ् याक्कै विलङ्गिय इऩ्ऩुयिर्
कलङ्गजर् नरहरैक् काणितुम् काणुम्
आडुम् कूत्तर् पोल् आरुयिर् ऒरुवऴि
कूडिय कोलत्तु ऒरुङ्गु निऩ्ऱु इयलादु
'शॆय्विऩै वऴित्ताय् उयिर्शॆलुम् ऎऩ्बदु
पॊय्यिल् काट्चियोर् पॊरुळुरै आदलिऩ्

ॲळ्मुडि मार्ब नी एन्दिय तिहिरि
वळिवळिच् चिऱक्क वयवाळ् वेन्दे' 159-170

१६ जीवों की प्रकृति

(अब जीव-गति सुनो) देवों के रूप में जो स्वर्ग गये वे जीव फिर से मर्त्य जीव (मानव) के रूप में आकर पैदा हो सकते हैं। मानव शरीर में आये जीव, हे श्रेष्ठ! प्राणियों का शरीर भी ले सकते हैं। प्राणी-शरीर में विलसते जीव दुखदायी नारकीय जीवन भी पा सकते हैं, नाचने वाले नट के समान यह प्यारा जीव एक ही गति से एक ही शरीर में हमेशा रहकर आयु नहीं विता सकता। 'कृत कर्म के अनुरूप जीव की गति होगी' —यह तत्व-दर्शी ज्ञानियों का कथन सार्थक कथन है। इसलिऐ हे (विजित राजाओं के) सप्त-किरीट-वक्ष! (सात राजाओं के किरीटों से लिए उपकरणों मे बना आभरणधारी वक्ष) तुमने जो चक्र धारण किया है वह तुम्हारी आने वाली पीढ़ी दर पीढ़ी श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर होता जाये! हे विजय-खड्ग-धर राजा! १५९-१७०

17 यान् पॊऱुक्केन्

अरुम् बॊरुट् परिशिलेन् अल्लेन् यानुम्
पॆरुम्बेर् याक्कै पॆऱ्ऱ नल्लुयिर्
मलर्नलै उलहत्तु उयिर्पोहु पॊडुनॆऱि
पुलवरै इऱन्दोय् पोहुदल् पॊऱॆॲन् 171-174

१७ मैं सह नही सकूँगा

मैं अलभ्य उपहार पाने का इच्छुक वंदी नहीं हूँ। उत्तम महत्व का यह मानव-शरीर लेकर भी अच्छा कोई जीव इस विशाल धर्ती के अन्य साधारण जीव-गम्य गति में जाये, हे पारंगत बुद्धिमान! मैं इसे सह नही सकूँगा। १७१-१७४

18 वेळ्वि शॆय्ह

वान्वर् पोऱ्ऱम् वळि निन्क्कु अळिक्कुम्
नान्मऱै मरुङ्गिन् वेळ्विप् पार्प्पान्
अरुमऱै मरुङ्गिन् अरशर्क्कु ओङ्गिय
पॆरुनल् वेळ्वि नी शॆयल् वेण्डुम्

नाळैच् चॆय्हुवम् अऱम् ऎऩिऩ् इऩ्ऱे
केळ्वि नल्लुयिर् नीङ्गिऩुम् नीङ्गुम्
इदु ऎऩ वरैन्दु वाळुनाळ् उणर्न्दोर्
मुदुनीर् उलहिऩ् मुळुवदुम् इल्लै
वेळ्विक् किळत्ति इवळोडुङ् कूडित्
ताळ्कळल् मऩ्ऩर् निऩ्ऩडि पोऱ्ऱ
ऊळियॊडु ऊळि उलहङ् कात्तु
नीडु वाळियरो नॆडुन्दहै! ऎऩ्ऱु
मऱैयोऩ् मऱैना उळुदु वाय्पॊरुळ्
इऱैयोऩ् शॆवि शॆऱुवाह वित्तलिऩ् 175-188

१८ यज्ञ करो

जो देव-मानित गति तुम्हें दिलायगा वह, राजाओं के लिये निर्दिष्ट बड़ा अच्छा यज्ञ चतुर्वेद-विहित-याजन-निपुणब्राह्मण के पौरोहित्य में, तुम करो। 'धर्म कल करेंगे' —यह सोचो तो आज ही श्रुति-ज्ञात अच्छे प्राण छोड़ जायं—इसकी संभावना है। "यही है अवधि' यह निश्चय रूप से रेखा खींचकर आयु जानने वाले इस सागर-मेखला पृथ्वी भर में कोई नहीं है। यज्ञ (में साथ देने) की अधिकारिणी अपनी रानी के साथ मिलकर, प्रणमनकारी, पायल वाले राजाओं की स्तुति पाते हुए, युग युग तक लोक-पालन करो। और दीर्घायु रहो हे वदान्य! इस भाँति वेदज्ञ माडलन् ने अपनी वेद-निवास जीभ से जोतकर उन्नततत्व रूपी बीजों को राजा के कानों (की भूमि में) बहुत सावधानी से बो दिया। १७५-१८८

19 वेळ्विक्कु अनुमदि

वित्तिय पॆरुम्बदम् विळैन्दु पदम् मिहुत्तु
तुय्त्तल् वेट्कैयिऩ्, शूळ्कळल् वेन्दऩ्
नाऩ्मऱै मऱबिऩ् नयन्दॆरि नाविऩ्
केळ्वि मुडित्त वेळ्वि माक्कळे
माडल मऱैयोऩ् शॊल्लिय मुऱैमैयिऩ्
वेळ्विच् चाऩ्ऱियिऩ् विळाक् कोळ एवि 189-194

१९ यज्ञ की अनुमति

बीजारोपण की पक्वता से वे उपदेश उगे, बढे और फलीभूत हुए। फल-भोग-आकांक्षा से कटक-वलयित-चरण राजा ने, चतुर्वेद गतिविधि की सूक्ष्मता से परिचित जीभ वाले और श्रुतिपारगत याज्ञिको को आज्ञा दी कि ब्राह्मण माडलन् के कहे अनुसार (उसके निर्देश मे) यज्ञ-शाँति-उत्सव का आयोजन हो। १८९-१९४

20 आरिय अरशरै विडुवित्तान्

आरिय अरशरै अरुञ्जिरै नीक्किप्
पेरिशै वञ्जि मूदूर्प् पुरत्तुत्
ताळ्नीर् वेलित् तण्मलर्प् पूम्बॉळिल्
वेळा विक्को माळिहै काट्टि
नन्पेरु वेळ्वि मुडिन्ददन् पिन्नाळ्
तम्पेरु नॅडुनहर्च् चार्वदुम् शॊल्लि अम्
मन्नवर्क्कु एऱ्पन शॅय्ह नी' ॲन
विल्लवन् कोदैयै विरुप्पुडन् एवि
'शिऱैयोर् कोट्टम् शीमिन् याङ्गणुम्
करैकॊळ् नाडु करैवीडु शॅय्म् ॲन
अळुम्बिल् वेळॊडु आयक् कणक्करै
मुळङ्गुनीर् वेलि मूदूर् एवि 195–206

२० आर्य राजाओं को मुक्त कराया

(राजा ने) आर्य राजाओ को कठोर कारागार से मुक्त कराया। उन्हें, वडी प्रशसित 'वञ्जि' के महानगर के पास, समृद्ध जलाशयो के मध्य शीतल (सुखदायो) पुष्पोद्यान मे 'वेळावि राजा' के महल में ठहराया। न्यौता दिया कि वे अच्छे और श्रेष्ठ यज्ञ के पूरा होने के वाद के दिन अपने-अपने वडे नगरों को चले जायें। फिर उनकी योग्य परिचर्या करो—कहकर विल्लवन् कोदै को हर्ष के साथ नियुक्त किया। कैदियो के कारागारो को खोल दो। कर देने वाले अधीन राजा कर देने से मुक्त हो जायें।—यह आज्ञा देकर "अळुम्बिल्वेळ्" को कर-गणको के साथ उन श्रेष्ठ स्थानो को भेजा जिनके चारो ओर वाड़ के समान जल रहता था (अधीन राजाओं के पास सदेशा सुनाने।) १९५-२०६

21 मूवर्क्कुम् उणर्त्तिन्नळ्

‘अरुन्दिऱल् अरशर् मुऱैशॅयिन्न अल्लदु
पॅरुम् पॅयर्प् पॅण्डिर्क्कुक् कऱ्पुच् चिऱवादु’ ॲन्नप्
पण्डैयार् उरैत्त तण्तमिऴ् नल्लुरै
पार्तॊऴुदु एत्तुम् पत्तिनि आहलिन्न
आर्पुन्नै शॅन्निन्न अरशऱ्कु अळित्तु
शॅङ्गोल् वळैइय उयिर् वाऴामै
तॅन्नपुलम् कावल् मन्न्नवऱ्कु अळित्तु
‘वञ्जिनम् वाय्त्तपिन्न अल्लदै यावदुम्
वॅञ्जिनम् विळियार् वेन्दर्’ ॲन्नबदै
वडदिशै मरुङ्गिन्न मन्नवर् अऱियक्
कुडदिशै वाऴुम् कॊऱ्ऱवऱ्कु अळित्तु; 207–217

२१ तीनों से सीख दिलायी

(कण्णहि ने अपने कृत्य से तीनों राजाओं को निम्नोक्त प्रकार सीख दिलायीः) “वड़े वलवान राजा न्यायसम्मत राज्य करे (तभी, होगा) नही तो वड़ी प्रशसनीय सती का पातिव्रत्य (सुहागिन का जीवन) निखरा हुआ नही रहेगा।” यह प्राचीन ज्ञानियो की कही मधुर तमिऴ् सूक्ति है। यह सीख लोकवंद्य सती होने के नाते कण्णहि ने ‘आर्’ (अगस्त्य) पुष्पालकृत किरीट वाले राजा शोऴन्न को दिलाई। (उसके ही राज्य में पतिव्रता कण्णहि पति के सग जीवन विता नही सकी, ‘राजदड वक्र हुआ (न्याय करने में चूक गया)।’ तो प्राणवान नही वना रहना “यह सीख दक्षिण रक्षक पाण्डिय राजा के द्वारा दिलायी,” प्रतिज्ञा पूरी होने तक पहले नही। राजा लोग अपना कठोर क्रोध नही छोड़ेगे। यह सीख, उत्तर दिशा के राजाओ को देने का मौका पश्चिमी देश के शासक को दिलाया। २०७-२१७

22 कडवुऴ् मङ्गलम् शॅय्‌ह

मदुरै मूदूर् मानहर् केडुर्
कॊदियऴल् शीऱ्ऱम् कॊङ्गैयिन्न विळैत्तु
तन्ननाडु अणैन्दु नळिर् शिन्नै वेङ्गैप्
पॊन्नणि पुदुनिळल् पॊरुन्दिय नङ्गैयै
‘अऱक्कळत्तु अन्दणर् आशान्न् पॅरुङ्गणि
शिऱप्पुडैक् कम्मियर् तम्मॊडुञ् जॅन्नऱ

मेलोर् विळैयुम् नूर्नेरि माक्कळ्
पाल्पेऱ् वहुत्त पत्तिनिक् कोट्टत्तु
इमैयवर् उऱैयुम् शिमैयच् चेव्वरैच्
चिमैयच् चेन्नित् तेय्वम् परशिक्
कैवित्रै मुऱ्ऱिय देय्वप् पडिमत्तु
'वित्तहर् इयऱ्ऱिय विळङ्गिय कोलत्तु
मुऱ्ऱिळै नन्कलम् मुळुवदुम् पूट्टिप्
पूप्पलि शेय्दु काप्पुक्कडै निऱुत्ति
वेळ्वियुम् विळावुम् नाळ्तोऱुम् वहुत्तु
'कडवुळ् मङ्गलम् शेय्ह' अन्न एविनन्
वडदिशै वणक्किय मन्नवर् एऱेन् 218–234

२२ देवी का मंगल कार्य करो

(कण्णहि) पुरातन मदुरै महानगर को नष्ट करने वाले अपने जलती आग के समान क्रोध को अपने स्तन द्वारा फलीभूत करके श्रेष्ठ (शेर) देश में पहुँचकर सुहावने शाखादार "वेङ्गै" की स्वर्णसम छाया में आकर रही। धार्मिक अनुष्ठान में दक्ष ब्राह्मण, आचार्य, ज्योतिषी और योग्य कारीगर आदि के साथ राजा वहाँ गया। वहाँ उच्च वर्ग द्वारा स्वीकृत (शिल्प) शास्त्र के ज्ञाता लोगो से शास्त्रविहित भागों के साथ पत्नी-मदिर जो वनाया गया उसमें देवों के निवासस्थान हिमालय पर्वत से, हिम-शिखर-स्थित देवों की पूजा करके जो लाया गया था उस पत्थर का बहुत सुदर रूप से वना देवी का विग्रह था। उसको उत्कृष्ट कारीगरों द्वारा सुनिर्मित, दृष्टि-मनोहारी, सभी श्रेष्ठ आभरण पहनाये गये। पुष्प-बलि चढ़ायी गयी। फिर सुरक्षा की प्राचीरे वनायी गयी तथा कपाट आदि लगा दिये गये। राजा ने दैनिक-उत्सव का आयोजन करवाया। उत्तर दिशा को नम्र करने वाले राज-ऋषभ शेङ्गुट्टुवन्न ने देवी का मंगल (पूजा नैवेद्य आदि) करने की आज्ञा अपने कर्मचारियो को दी। २१८-२३४

29 वाळ्त्तुक कादै

उरैप्पाट्टुमडै

1 वञ्जिक्कु वन्दाऩ्

कुमरियोडु वडविमयत्तु ऑरु मोळि वैत्तु उलहाण्ड
शेरलाद ऱ्कुत्तिहळ् ऑळि जायिऱ्ऱुच्

चोळऩ् महळ् ईन्ऱ मैन्दन्, कॊङ्गर् शॅङ्गळम्
वेट्टुक् कङ्गैप् पेर् याऱ्ऱक् करै पोहिय शॅङ्गुट्टुवऩ्
शिऩम् शॆरुक्कि वञ्जियुळ् वन्दु इरुन्द कालै

२९ मंगल-कामना गाथा

१ वञ्जि आया।

कुमारी से लेकर उत्तर मे हिमालय तक सारे देश को एक भाषा के अंतर्गत रखकर जिसने लोकशासन किया उस शेरलादन् का, प्रभा-किरण सूर्य-वशी शोळन् की पुत्री द्वारा जन्मा था शेरन् शॅङ्गुट्टुवन् । वह कोंङ्गर' के साथ सतापक युद्ध-यज्ञ कर चुका था, और गगा की बड़ी नदी के तट पर भी विजय पायी थी। वह राजा शॅङ्गुट्टुवऩ् (एक दिन) क्रोध के साथ "वञ्जि" मे राजसभा में आकर आसीन था।

2 वड आरिय मऩ्ऩर् उरैत्तदु

वड आरिय मन्नर् आङ्गोर् मडवरलै मालै शूट्टि
उडऩ् उरैन्द इरुक्कै तन्ऩिल् ऑन्ऱुमॊऴि
नहैयिऩ् राय्
'तॆऩ् तमिळ् नाडु आळुम् वेन्दर् शॆरुवेट्टुप् पुहऩ्ऱ
ॲळुन्दु मिऩ् तवळुम् इमय नॆऱ्ऱियिल्, विळङ्गु
विऱ्पुलि कयल् पॊऱित्त नाळ् ॲम्पोलुम् मुडिमऩ्ऩर्
ईङ्गु इल्लै पोलुम् ॲन्ऱ् वार्त्तै अङ्गु वाळुम्
मादवर् वन्दु अरिवुऱुत्त इडत्तु, आङ्गण्
उरुळ्हिऩ्ऱ् मणि वट्टैक् कुणिल् कॊण्डु तुरन्ददु पोल्
इमयमाल् वरैक् कऱ्कडवुळ् आम्
ॲऩ्ऱ वार्त्तै इडम् तुरप्प

२ उत्तरीय आर्य राजाओं का कथन

उत्तर के आर्य राजा एक राजकुमारी के स्वयंवर के अवसर पर एकत्रित थे। उस सभा में आपस मे हँसते हुए उन्होंने कहा कि दक्षिण देश के राजा, युद्ध का लालच करके सगर्व चढ आये और विद्युत्-प्रभावित हिमालय के भाल पर प्रकाशमय धनु, व्याघ्र और मत्स्य खुदवा गये। उन दिनों हमारे जैसे किरीटधारी राजा यहाँ नही रहे शायद ! इस कथन को,

वहाँ रहने वाले महान तपस्वी लोगों ने आकर राजा से कह दिया। शेङ्गुट्टुवन् के मुख से झट, घूमते मणि-चक्र को डंडे से घुमाया गया जैसे, अकस्मात् यह शब्द निकल आया कि हिमालय का प्रस्तर ही देवी का विग्रह वनेगा और उस सकल्प वचन ने शेङ्गुट्टुवन्न को उत्तर की ओर प्रेरित कर दिया।

3 वडवरै वेन्ड्रान्

आरिय नाट्टु अरशु ओट्टि अवर् मुडित्तलै
अणङ्गु आहिय
पेर् इमयक्कल् शुमत्तिप् पेयर्न्दु पोन्दु; नयन्द
कोळ्हैयिन्; गङ्गैप् पेर् यार्रु इरुन्दु नङ्गै तन्नै
नीर्प् पडुत्ति, वॆञ्जिनम् तरु वॆम्मै नीङ्गि. वञ्जि
मानहर् पुहुन्दु, निल अरशर् नीळ् मुडियाल् पलर्
तॊळु पडिमम् काट्टित् तडमुलैप् पूश लाट्टियैक्
कडवुळ् मङ्गलम् शॆय्द पिन्नाळ्; कण्णहि तन्
कोट्टत्तु मण्णरशर् तिरै केट्पुळि

३ उत्तर के राजाओं को हराया

उसने वहाँ आर्यदेश के राजाओं को हराया और उनके किरीटधारी सिरों पर देवी-निर्माण-योग्य बडे हिमालय के पत्थर को रखवाकर ले आया। स्व-कृत सकल्प के अनुसार गगा की उत्तम नदी के तट पर रहकर श्रीमज्जन की रस्म अदा की। फिर अपने क्रोधभूत ताप को शात कर वञ्जि नगर आया। वहुजनवद्य देवी की प्रतिमा बनवायी और पीनस्तनी का देवी मगल (स्थापना, पूजा आदि) करवाया। इसके पश्चात् एक दिन कण्णहि के मदिर के परिसर में अन्य राजाओ द्वारा दिये जाने वाले उपहारो के सबंध में अपने कर्मचारियो से विवरण सुन रहा था। (उपहार-देवी के पूजार्थ दिये जाने वाले उपहार।)

4 कण्णहि कदै

अलम् वन्द मदि मुहत्तिल् शिल शॆङ्गयल् नीर्
उमिळप् पॊडि आडिय करु मुहिल् तन् पुरम् पुदैप्प
अरम् पळित्तुक् कोवलन् तन् विनै उरुत्तुक्
कुरुमहनार् कॊलैयुण्णक्; कावलन् तन् इडम् शन्र्

कण्णहि तन्न् कण्णीर् कण्डु, मण्णरशर्
पॅरुम् तोन्ऱल्
उळ्नीर् अऱ्ऱु उयिर् इऴन्दमै मामऱैयोन् वायक्केट्टु
माशात्तुवान् तान् तुऱप्पवुम् मन्नैक्किऴत्ति उयिर्
इऴप्पवुम्, अन्नैप् पॅरुम् तुन्बम् ऍय्दिक् कावऱ्
पॅण्डुम् अडित्तोऴियुम् कडवुट् चात्तनुडन् उऱैन्द
देवन्दियुम् उडन् कूडिच् चेयिऴैयैक् काण्डुम् अन्नऱ्
मदुरै मा नहर् पुहून्दु
मुदिरा मुलैप्पूशल् केट्टु आङ्गु अडैक्कलम् इऴन्दु
उयिर् इऴन्द इडैक्कुल महळ् इडम् ऍय्दि
ऐयै अवळ् महळोडुम् वैयै ऑरु वऴिक् कॊण्डु
मामलै मीमिशै एऱिक् कोमहळ् तन्न् कोयिल् पुक्कु
नङ्गैक्कुच् चिऱप्पु अयर्न्द शॆङ्गुट्टुवऱ्कुत्
तिऱम् उरैप्पर् मन् 1

४ कण्णहि की कथा

(कण्णहि के) व्यथा भरे चंद्र-मुख की अरुण कयल सी आँखों से छोटी छोटी बूंदे गिर रही थी; धूल-भरा मेघ (केश) पीठ को छिपा रहा था। धर्मानुष्ठान के पुण्य की अवहेलना करके कोवलन् के पूर्व-कर्म फल देने आये। उस कारण एक छोटे आदमी द्वारा वह मारा गया। उस पर कण्णहि राजा के यहाँ गयी। उसके आँसू को देखकर पृथ्वीपतियों में शीर्षस्थ वदान्य राजा का अंतःसत्व शुष्क हो गया और वह मर गया। उसका मरना महानुभाव ब्राह्मण द्वारा सुनकर माशात्तुवान् सन्यासी बना और उसकी वृद्धा गृहिणी ने प्राण त्याग दिये। इस पर असह्य दुख पाकर धाई और अतरंग सखी दोनों शात्तन् देव के साथ रही देवन्दि को साथ लेकर उत्कृष्ट उस आभरण-सुंदरी को जाकर देखने का उद्देश्य करके महानगर मदुरै पहुँची। वहाँ उन्होंने सुदृढ़ स्तन संबंधी बुरा समाचार सुना। फिर वे अपनी धरोहर को खोकर जो (उस व्यथा से) अपना प्राण त्याग गयी उस गोपाल नारी मादरि के स्थान पर गयी। वहाँ से उसकी पुत्री "ऐयै" को साथ लेकर वैयै के एक किनारे से उस उन्नत गिरि पर चढी। वहाँ देवी बनी कण्णहि के मंदिर में प्रवेश कर देवी के उत्सव में लगे रहे शॆङ्गुट्टुवन् के सामने जाकर अपनी हालत बताने लगी। १

(यहाँ तक उरैप्पाट्टु मडै यानी अंतर्हित 'वचन पद्य' है। यह एक रचना शैली है जो गद्य ही है। पर वह साधारण गद्य के समान नहीं है। न ही

वह पद्य या गीत के समान है। बल्कि वह लगातार लिखा जा सकता है। पंक्ति की लंबाई का कोई नियम नहीं। पर उसमें पद्य के कुछ गुण जैसे ध्वनि-माधुर्य, अनुप्रास अलंकार आदि होते है।)

5 देवन्दि शॊन्नदु

मुडिमन्नर् मूवरुम् कात्तु ओम्बुम् दॆय्व
वडपेर् इमय मलैयिर् पिऱन्दु
कडुवरल् गङ्गैप् पुनल् शूडिप्पोन्द
तॊहुवळैत् तोऴिक्कुत् तोऴि नान् कण्डीर्
शोणाट्टार् पावैक्कुत् तोऴिनान् कण्डीर् 2

५ देवन्दि ने जो कहा

(इधर रोना भी गानो में किया जाता है; मातमपुर्सी के रोने के गानो का साहित्य बड़ा ही चित्तद्रावक तथा कल्पना को उभारने वाला होता है।) तीनों किरीटी राजाओं से संरक्षित; उत्तर के दिव्य हिमालय पर्वत में जनित; तेज धारा वाली गगा में स्नान कर इधर आगत वक्र-वलय स्कंध सखी की मै सखी हूँ। (देख) जान लो! शोळ देश की पुत्तलिका की मै सखी हूँ। (देख) जान लो। २

6 कावऱ्पॆण्डु शॊन्नदु

मडम्पडु शायलाळ् मादवि तन्नैक्
कडम्पडाळ् कादऱ् कणवन् कैप्पऱ्ऱिक्
कुडम्बुहाक् कूवऱ् कॊडुङ्गानम् पोन्द
तडम्पॆरुङ् गण्णिक्कुत् तायर्नान् कण्डीर्
तण्पुहार्प् पावैक्कुत् तायर् नान् कण्डीर् 3

६ धाई का विलाप

(जो) सुदर छटा वाली मादवि से वैर नही करती थी, अपने प्रेमीपति का हाथ पकड़कर घडा (भर भी जल) हीन और, चिल्लाहट भरे जंगल मे जो गयी थी उस विशालाक्षी (कण्णहि) की धात्री हूँ मै। देख लो। शीतल पुहार् नगर की पुत्तलिका की धात्री हूँ— मै। देख लो। ३

7 अडित्तोऴि शॊन्नदु

तऱ्पयन्दाट्कु इल्लै; तन्नैप् पुऱङ्गात्त
अऱ्पयन्दाट्कुम् अन्नक्कुमोर् शॊल्लिल्लै;

कऱ्‌पुक् कडम् पूण्डु कादलन् पिन्‌पोन्द
पोऱ्‌ऱोडि नङ्‌गैक्कुत् तोऴि नान् कण्डीर्
पूम् पुहाऱ्‌प् पावैक्कुत् तोऴिनान् कण्डीर् 4

७ अंतरंग (या प्रधान) सखी का विलाप

(उसने) अपनी जननी माता से नही, अपनी धात्री मेरी माता से भी नही, बल्कि मेरे साथ भी एक शब्द नही कहा। (जो) पातिव्रत्य का व्रत मानकर पति के पीछे चली, उस स्वर्णकंकणधारिणी की सखी हूँ मैं, देख लो! 'पूम् पुहार्' की पुत्री की मैं सखी हूँ, देख लो। ४

8 देवन्‌दि पुलम्बुदल्

शॅय्‌तवम् इल्लादेन् तीक्कन्नाक् केट्ट नाळ्
ॲय्‌द उणरादिरुन्‌देन् मऱ्‌ऱॆन्न शॅय्‌देन्न ?
मॊय्‌कुऴन् मङ्‌गै मुलैप्पूशल केट्टनाळ्
अव्वै उयिर् वीवुम् केट्टायो तोळी ?
अम्मामि तन्न वीवुम केट्टायो तोळी ? 5

८ देवन्‌दि का विलाप

भाग्यहीना मैं अकृत-पुण्या हूँ! जिस दिन मैने दुःस्वप्न की वात (कण्णहि से) सुनी तव मै भावी की वात जाने विना रह गयी। ओह, मैने क्या ही कर दिया; गहन केशवाली का स्तन-सवद्ध दुख-समाचार सुनकर तुम्हारी माता का प्राण-वियोग हुआ; वह समाचार भी तुमने सुना क्या ? हे सखी! अपनी सास का मरना भी तुमने सुना क्या ? हे सखी। ५

9 कावऱ्‌पॆण्डु पुलम्बुदल्

कोवलन्न तन्नॆक् कुऱुमहन् कोऴिऴैप्पक्
कावलन् तन्नुयिर् नीत्तदुतान्न केट्टु एङ्‌गिच्
'चावदुतान् वाऴ्‌वु ॲन्‌ऱु तानम् पल शॅय्‌दु
माशात्तुवान्न तुऱवुम् केट्टायो अन्नै ?
मानाय्‌कन्न तन्नतुऱवुम् केट्टायो अन्नै ? 6

९ धाई का विलाप

कोवलन्न को एक छोटे आदमी ने कपट से मरवा दिया। और उसी

सिल-सिले में (प्रजा) पालक ने अपने प्राण त्याग दिये; इन बातों को सुनकर, व्याकुल होकर, "मरना ही अब जीना है"—ऐसा विचार करके अनेक दान देने के बाद माशात्तुवान् का उत्कृष्ट सन्यास ग्रहण कर लेना भी सुना क्या हे माँ ! मानाय्कन् का सन्यास भी सुना क्या हे माँ। ६

10 अडित्तोऴि अरऱ्ऱुवदु

कादलन् तन्वीवुम् कादलि नी पट्टदूउम्
ऐदिलार् ताङ्गूरुम् एच्चुरैयुम् केट्टु एङ्गिप्
पोदियिन् कीऴ् मादवर्मुन् पुण्णिय तानम् पुरिन्द
मादवि तन्तुरवुम् केट्टायो, तोऴी ?
मणिमे हलैतुरवुम् केट्टायो तोऴि ? 7

१० अंतरंग सखी का विलपना

(मादवि की बात) अपने प्रेमी की मृत्यु, उसकी प्रिया, तुम्हारा मरना, अन्य लोगों की निंदा का प्रवाद आदि सुनकर टीस से भर कर बोधि तरु-तल के महान तपस्वी के सामने जिसने दान-कर्म किया उस मादवि का वैराग्य भी तुमने सुना क्या ? हे सखी ! मणिमेहलै का वैराग्य (ग्रहण) भी तुमने सुना क्या ? हे सखी। ७

11 ऐयैयैक् काट्टि अरऱ्ऱुवदु

'ऐयन्दीर् काट्चि अडैक्कलम् कात्तोम्ब
वल्लादेन् पेऱ्ऱेन् मयल् अन्ऱु उयिर् नीत्त
अव्वै महऴिवऴ् तान् अम्मणम् पट्टिला
वैयेयिऱ्ऱु ऐयैयैक् कण्डायो तोऴी ?
मामि मडमहळैक् कण्डायो तोऴी ? 8

११ ऐयै को दिखाकर कलपना

"असदिग्ध तत्व-दर्शिनी कवुन्दि की धरोहर के रक्षण में मै समर्थ नही रही ! मेरा मन पागल बना है।" ऐसा कहते हुए जिस माता ने प्राण त्याग दिया उस माता की पुत्री यही है। जिसका अब तक शुभ विवाह नही हुआ है, उस तीक्षण दाँतों वाली 'ऐयै' को देखा क्या, हे सखी ! तुमने। "मामि" की (सास बनी देवी की) सुन्दर कन्या को देखा है, क्या हे सखि !

(कण्णहि ने मादरि को अपनी रिश्ते की सास और ऐयै को ननद मान लिया था, यह बात पहले ही कही गयी है।) ८

12 शॆङ्गुट्टुवऩ् वियप्पु

ऍऩ्ऩे इ.·.दु ऍऩ्ऩे ! इ.·.दु ऍऩ्ऩे ! इ.·.दु ऍऩ्ऩे कॊल् ?
पॊऩ्ऩऩ् जिलम्बिऩ् पुऩै मेहलै वळैक्कै
नल् वयिर्प् पॊऩ्तॊट्टु नावलम् पॊऩ्ऩिऴै शेर्
मिऩ्ऩुक् कॊडियॊऩ्ऱु मीविशुम्बिल् तोऩ्ऱुमाल् 9

१२ शॆङ्गुट्टुवऩ् का विस्मय !

(तब शेङ्गुट्टुवऩ् ने एक अभूतपूर्व अत्यन्त विस्मयकारी दृश्य देखा।) "क्या ? यह क्या ? यह क्या ? यह क्या ही आश्चर्य है ! स्वर्ण नूपुर, चित्रमय मेखला, कंकण वाले हाथ, उत्तम हीरों के कर्णफूल, और जांबूनद स्वर्णाभरणों के साथ एक विद्युल्लता ऊँचे आकाश में दिखाई देती है ! हा ! यह क्या है ? ९

13 कण्णहि पेशिऩाऴ्

तॆऩ्ऩवऩ् तीदिलऩ् तेवऱ् कोऩ् तऩ् कोयिल्
नल्विरुन्दु आयिऩाऩ्; नाऩवऩ् तऩ् महऴ्
वॆऩ्वेलाऩ् कुऩ्ऱिल् विळैयाट्टु याऩहलेऩ्
अंऩ्ऩोडुम् तोऴिमीर् ॲल्लीरुम् वम्मॆल्लाम् 10

१३ कण्णहि बोली

(कण्णहि अपने दैवी रूप में रहकर बोली) दक्षिणपति निरपराध है। देवेंद्र के प्रासाद मे सम्मान्य अतिथि बना है। मै उसकी पुत्री हूँ। रजत शक्तिधर 'मुरुगऩ्' देव के इस (तिरुच्चेङ्गुऩ्ऱम) गिरि पर आकर लीला करना मैं नही छोडूँगी। हे सखियो ! सभी मेरे पास आती रहो। १०

14 पाडुवोम् वारीर्

वञ्जियीर् वञ्जि इडैयीर् ! मऱवेलाऩ्
पञ्जडि आयत्तीर् ! ऍल्लीरुम् वम्मॆल्लाम्
कॊङ्गैयाऱ् कूडऱ् पदिशिदैत्तुक् कोवेन्दैच्
चॆञ्जिलम्बाल् वॆऩ्ऱाळैप् पाडुदुम् वम्मॆल्लाम् 11
वॆऩ्ऩवऩ् तऩ् महळैप्पाडुदुम् वम्मॆल्लाम्
शॆङ्गोल् वळैय उयिर् वाऴार् पाण्डियर् ऍऩ्ऱु
ऍङ्गो मुऱै ना इयम्ब इन्नाडु, अडैन्द
पैन्दॊडिप् पावैयैप् पाडुदुम् वम्मॆल्लाम्
पाण्डियऩ् तऩ् महळैप् पाडुदुम् वम्मॆल्लाम् 12

१४ गावें, आओ

हे वञ्जि वालियो ! वञ्जि-लता सी कटि वालियो (या वञ्जि के आंतरिक प्रदेश में रहनेवालियो ।) वीरतासूचक वेल् के स्वामी राजा की अलक्तक रंजित चरणों वाली वशवर्तिनी मंडलीवालियो ! सभी आ जाओ । स्तन से कूडल् नगर को छिन्न करके स्वर्ण नूपुर द्वारा (राजा को) हराने वाली की स्तुति गायें, आओ सब ! दक्षिणपति की दुहिता का गाना गायें, आओ सभी । (कण्णहि ने स्वयं पाण्डियन् को अपना पिता कहा है शायद वह अपने दैवी रूप का जनक उसको मानकर ऐसा कह गयी है ।) अगर सीधा दंड (न्यायसम्मत आज्ञा का क्रम) झुका (विचलित हुआ) तो पाण्डियर् नही जिएँगे ! ऐसा हमारे राजा की जय अनतिक्रमी जिह्वा बोले, (सत्य यह बात सब कहें) यह स्थिति लाते हुए जो इस देश में आई उस हरी चूड़ी वालियों की स्तुति का गाना गायें—आओ सभी । पाण्डियन् की लड़की की महिमा गायें, आओ सभी । ११-१२

15 आयत्तार् शॊत्तद्दु

'वाऩवऩ् ऍम् को, महळ्' ऍऩ्ऱाम्; वैयैयार्
कोऩवऩ् ताऩ् पॆऱ्ऱ कॊडि ऍऩ्ऱाळ्-वाऩवऩै
वाऴ्त्तुवोम् नामाह वैयैयार् कोमाऩै
वाऴ्त्तुवाळ् देवमहळ् । 13

१५ मंडली वालियों का कहना

शेरऩ् देव, हमारे राजा की पुत्री-कहा हमने । पर कण्णहि ने कहा कि मै वैगै नदी के स्वामी राजा की दुहिता लता हूँ । देव की बन्दना करे हम; तब वैगै के स्वामी राजा को वह देव-सुता आशीर्वाद देगी । १३

16 वाऴ्त्तु (पाण्डियऩ्)

तॊल्लै विऩैयाल् तुयर् उऴन्दाळ् कण्णिऩ्नीर्
कॊल्ल उयिर् कॊडुत्त कोवेन्दऩ् वाऴियरो !
वाऴियरो, वाऴि वरूपुऩल् नीर् वैयै
शूऴुम मदुरैयार् कोमाऩ्ऱऩ् तॊल् कुलमे । 14

१६ मंगल कामना (पाण्डियन् की)

री ! पूर्व कर्म के फलस्वरूप दुःख-भोगिनी (कण्णहि) के अश्रुजल को

पोछने से जिसने प्राण दिये वह राज-राज जिये ! जिये री जिये ! अविरल रूप से बहने वाली वैगै नदी से आवृत्त मदुरै नगर का राजकुल दीर्घायु बना रहे। १४

17 वाऴ्ततु (शेरन्)

मलैयरैयन् पेऱ्ऱ् मडप्पावै तन्नै
निलवरशर् नीळ् मुडिमेल् एऱ्ऱिनान् वाऴियरो !
वाऴियरो वाऴि वरुपुनल् नीर् आन् पॊरुनै
शूऴ्तरुम् वञ्जियार् कोमान्ऱन् तॊल्कुलमे 15

१७ मंगल कामना-शेरन् की

नगाधिराज हिमराज की पुत्री को जिसने भूपतियों के लंबे (किरीट युक्त) सिरों पर धरवा दिया वह राजा जिए। जिये रे जिये ! लगातार बहने-वाली आन्पॊरुनै नदी से आवृत वञ्जि नगर वालों के शासक का प्राचीन कुल लंबे युग तक जिये। (कण्णहि देवी अब पार्वती मान ली गयी है।) १५

18 वाऴ्त्तु (शोऴन्)

ऎल्ला ! नाम्
काविरि नाडन्नैप् पाडुदुम्; पाडुदुम्
पूविरि कूनदल् पुहार् 16

१८ मंगल कामना-शोऴन् की

री ! हम काविरि-देश के राजा का गान करे ! गाएँ ! प्रफुल्ल पुष्प-शोभित (केश वाली !) पुहार् नगर का गान करे। १६

19 पुहार् नहरैप् पाडल् (अम्मानै)

वीङ्गु नीर् वेलि उलहुआण्डु विण्णवर् कोन्
ओङ्गरणम् कात्त उरवोन् यार् अम्मानै ?
ओङ्गरणम् कात्त उरवोन् उयर् विशुम्बिल्
तूङ्गॆयिल् मून्ऱॆऱिन्द शोऴन् काण् अम्मानै
शोऴन् पुहार्नहरम् पाडेलोर् अम्मानै 17

१६ पुहार् नगर का गीत

(अम्मानै)

(अम्मानै काठ के कंदुको को लेकर खेली जाने वाली एक क्रीड़ा है। स्त्रियां तीन गेंदों को, गाते हुए, एक के बाद एक उछालती है और पकड़ लेती है। एक को उछालना तभी दूसरे को पकडना, तीसरे का समय भी निर्धारित रखना यह सब अभ्यास से ही आता है! अम्मानै का या अम्मनै का अर्थ है माता देवी। दक्षिण में मंदिरो में देवी को (शैव मंदिरो में) अम्मन् या अम्बाळ्, वैष्णव मदिरों मे तायार् बोलते है। पाच पक्तियो के इन गानो में दो बार अम्मानै शब्द आता है।) पुष्कल-सलिल-सागर मे घिरी हुई पृथ्वी का शासन करते हुए व्योमवासियो के राजा के उन्नत गढ़ को जिसने बचाया वह बलशाली कौन है? अम्मानै! उन्नत गढ़ के रक्षक बलशाली, ऊँचे आकाश में, जिसने लटकते गढ़ों का नाश किया था वही शोळन् है देखो, अम्मानै! शोळन् के पुहार् नगर की महिमा गाएँ! अम्मानै। (हे माता)। १७

पुरवु निरैपुक्कुप् पोन्नुलहम् एत्तक्
कुरैविल् उडम्बरिन्द कोर्रवन् यार्; अम्मानै?
कुरैविल् उडम्बरिन्द कोर्रवन् मुन् वन्द
करवै मुरै शेय्द कावलन् काण् अम्मानै;
कावलन् पूम्बुहार् पाडेलोर् अम्मानै; 18

कबूतर को बचाने हेतु स्वर्गलोक—(अमरावती) द्वारा स्तुत्य होकर अक्षुण्ण स्व-शरीर छेत्ता जो बना वह महाराजा कौन है, अम्मानै? अक्षुण्ण शरीर-छेत्ता महाराजा वह है जिसने अपने द्वार पर आयी दुधारू गाय का भी न्याय किया था, देखो-अम्मानै! उस राजा के पूम्बुहार् का गान करें अरी अम्मानै। (री माँ) १८

कडवरैहळ् ओर् अँट्टुम् कण्णिमैया काण
वडवरै मेल् वाळ्वेङ्गै ओर्रिनन् यार्, अम्मानै?
वडवरै मेल् वाळ्वेङ्गै ओर्रिनन् तिक्कु अँट्टुम्
कुडै निळलिल् कोण्डळित्त कोर्रवन् काण् अम्मानै
कोर्रवन् पूम्बुहार् पाडेलोर् अम्मानै! 19

आठों दिग्गज अपलक आखों से देखते रहे ऐसा उत्तर के पर्वत पर लंबा व्याघ्र-चिह्न अंकित करने वाला कौन है, अम्मानै? उत्तर के पर्वत पर लंबा व्याघ्र-चिह्न अंकित करने वाला वही राजा है जिसने अपनी छत्रछाया

के नीचे आठों दिशाओं को लाकर पाला था। अम्मात्ते ! (री मां) उस राजा के पूम्बुहार् का गान करें। १९

अम्मनै तङ्कैयिऱ् कॊण्डु अङ्गु अणि इळैयार्
तम्मनैयिऱ् पाडुम् तहैयेलोर् अम्मानै ?
तम्मनैयिऱ् पाडुम् तहैयेलाम् तार्वेन्दन्
कॊम्मै वरिमुलै मेऱ् कूडवे अम्मानै
कॊम्मै वरिमुलै मेऱ् कूडिन् कुलवेन्दन्
अम्मॆन् पुहार् नहरम् पाडेलोर् अम्मानै; 20

अम्मात्ते (काठ के गेंद) हाथ में लेकर सुदर आभरणवालियों के अपने घरों में गाने का मतलब क्या है, अम्मात्ते ? अपने घरों मे गाने का मतलब हार-धारी राजा के आकर उनके पीन, सजावट के चित्र सहित स्तनों पर लग जाने की आशा है ! अम्मात्ते ! पीन चित्रित स्तनों पर लग जावे तो उस कुलीन राजा के सुखद पुहार् नगर का गान करे हम, अम्मात्ते ! (री माँ, हे माँ) २०।

20 पाण्डियन् वाळ्ह (कन्दुह वरि)

पॊन्निलङ्गु पूङ्गॊडि ! पॊलन्जॆय् कोदै विल्लिड
मिन्निलङ्गु मेहलैहळ् आर्प्प आर्प्प ऎङ्गणुम्
तॆन्नवन् वाळ्ह, वाळ्ह ! ऎन्ऱु शॆन्ऱु पन्दु अडित्तुमे;
तेवर् आर मार्वन् वाळ्ह ! ऎन्ऱु पन्दु अडित्तुमे 21

२० पाण्डियन् जीते रहें।

(कंदुक गान)

हे सौंदर्यवती लते ! स्वर्ण-माला इंद्रधनुप की सी छटा छिटकाती है। विद्युत् सी-चमकदार मेखलाएँ झनझनाती है। झनझनाती हैं ! सर्वत्र दक्षिण-पति जीते रहें। जीते रहे-यह मिन्नत करते हुए हम गेंद मारेंगी। देव-हार-वक्ष पाण्डियन् जीते रहे—कहकर गेद मारेगी। (कहा गया है कि देवेन्द्र ने एक पाण्डिय राजा को एक हार पहनाया जो वड़ा भारी था और जिसे स्वयं इन्द्र वहन नही कर सकता था ! उसे इस विचार से पहनाया कि वह राजा भार से दवकर मर जायगा। पर वह वलशाली राजा उसी के साथ शोभायमान वन गया)। २१

पिन्नुम् मुन्नुम् ऎङ्गणुम् पॆयर्न्दु उवन्दु
अळुन्दुलाय् !
मिन्नुमिन् निळङ्गॊडि वियनिलत्तु इळिन्दॆन्न

तॆन्नन् वाऴ्ह ! वाऴ्ह ऎन्ऱु शॆन्ऱु पन्दु अडित्तुमे !
तेवर् आर मार्बन् वाऴ्ह ! ऎन्ऱु पन्दु अडित्तुमे ! 22

हम आगे, पीछे, सब जगह छलांग मारकर, मानो चमकती चपल बिजली विशाल धरती पर उतर आयी हो, वैसा यह कहते हुए गेंद मारेगी कि दाक्षिणात्य (पाण्डियन्) जीते रहें, जीते रहें। देव-हार-वक्ष जीते रहें कहकर हम गेद मारेंगी। २२

तुन्नि वन्दु कैत्तलत्तु इरुन्द दिल्लै नीणिलम्
तन्निनिन्ऱुम् अन्दरत्तु ऎऴुन्द दिल्लै तान् ऎनत्
तॆन्नन् वाऴ्ह ! वाऴ्ह ! ऎन्ऱु शॆन्ऱु पन्दु अडित्तुमे
तेवर् आर मार्बन् बाऴ्ह ऎन्ऱु पन्दु अडित्तुमे 23

"तेजी से पास आकर (गेंद) हाथ में लगा नही रहे, न ही वह बड़ी धरती से आकाश में उठे ऐसा; यह कहते हम गेद मारें कि दाक्षिणात्य जीते रहें, जीते रहें" देव-हार-वक्ष जीते रहें—कहकर गेद मारे। २३

21 शेरन् पुहऴ् (ऊशल् वरि)

वडङ्गॊळ् मणियूशल् इरीइ ऐयै
उडङ्गु ऒरुवर् कैनिमिर्त्ताङ्गु; ऒर्ऱैमेल् ऊक्कक्
कडम्बुमुदल् तडिन्द कावलनैप् पाडिक्
कुडङ्गै नॆडुङ्गण् पिऱऴ आडामो ऊशल्
कॊडुविर् पॊऱ्ऱिपाडि आडामो ऊशल् ! 24

२१ शेरन् की महिमा

(झूला-गान)

रस्सी से बंधे सुन्दर झूले पर बिठाकर, ऐयै के पास खड़ी रही एक सखी अपने एक हाथ को उठाकर ऐयै के हाथ से एक ताल देकर मारेगी, झूला चलाते हुए हम कडम्बु को निर्मूल करने वाले राजा का गान करें और कर पृष्ठों के पीछे लंबी आँखो के चलित होते न झूलेगे झूला ? वक्र धनु-लांछन (की कथा) गाकर नही झूलेगे झूला (झूलेगे अवश्य !) २४

ओर् ऐवर् ईरैम्पदिन्मर् उडन्ऱॆऴुन्द
पोरिल् पॆरुञ्जोऱु पोऱ्ऱादु तान्अळित्त
शेरन् पॊऱैयन् मलैयन् तिऱम् पाडिक्
कार्शय् कुऴल् आड आडामो ऊशल्;
कडम्बु ऎऱिन्द वापाडि आडामो ऊशल् ! 25

(एक तरफ) पांच (पाडव) और दूसरी तरफ एक सौ (कौरव) सनद्ध हो उठे। उस युद्ध में बड़ा अन्न भोज, बिना नाहिं कहे, जो देता रहा उस शेरन् पॅरुँयन् मलैयन् (पार्वत्य) का वल गाकर, मेघसम केश को बिखरने देते हुए हम झूलेंगे न झूला! 'कडमूवु' निर्मूल करने का चरित्र गाकर हम नहीं झूलेंगे झूला ? २५

वन्शॉल् यवन्नर् वळनाडु वन् पॅरुङ्गल्
तॅन् कुमरि आण्ड शॅरुविऱ् कयल् पुलियान्
मन्पदै काक्कुम् कोमान् मनन्न् तिऱम् पाडि
मिन्शॅय् इडै नुटङ्ग आडामो ऊशल्;
विऱल् विऱ् पॉऱि पाडि आडामो ऊशल् 26

शेरन् कठोर-भाषी भवनों का हरा भरा देश, कठोर (हिमालय) पर्वत-प्रदेश, दक्षिण में कुमरि, बीच के देश आदि सभी का शासक है; युद्ध-प्रयुक्त धनु, मत्स्य, व्याघ्र वाला प्रजापालक है। उस राजा का हम गान करते हुए और विद्युत-कटि को लचकाते हुए क्यों न झूले झूला? विजयसूचक धनु के लाँछन का गान करते झूला झूलेंगे अवश्य।

22 वळ्ळैप् पाट्टु (शोळन्)

तीङ्गरुम्बु नल्लुलक्कै याहच् चंळुमुत्तम्
पूङ्गान्जि नीळल् अवैप्पार् पुहार् महळिर्
आळिक् कॉडित्तिण् तेर्च् चॅम्बियन् वम्बलर् तार्प्
पाळित् तडवरैत् तोळ् पाडले पाडल्
पावैमार् आरिक्कुम् पाडले पाडल् 27

२२ वळ्ळैप् पाट्टु (धान कूटते वक्त का गाना)

(शोळन् की महिमा)

मधुर इक्षु दंड मूसल है, मोटे मोती धान है। मनोरम 'कान्जि' तरु की छाया में पुहार् की स्त्रियाँ कूटती हैं। (उस नगर का राजा) सचक्र, सध्वज, सुदृढ रथी शॅम्बियन् की सुगंधमय "आर्" पुष्प शोभित, सबल, वृहत् गिरिसम बाहुओं का गान ही गान है! रमणियाँ उस "आर्" माला को माँगते हुए जो गाती है वही गान है। २७

पाण्डियन्

पाडल्शाल् मुत्तम् पवळ उलक्कैयाल्
माडमुदुरै महळिर् कुरुवरे,
वात्तवर् कोन् आरम् वयङ्गिय तोळ् पञ्जवन् तन्
मीनक् कॊडि पाडुम् पाडले पाडल्
वेप्पन्दार् नॆञ्जुणक्कुम् पाडले पाडल्; 28

(पाण्डियन् की महिमा)

काव्य वर्णित मोतियों को प्रवाल के मूसल से प्रासादपूर्ण मदुरै नगर की बालायें कूटती है। देवेंद्र दत्त हार शोभित बाहु वाले पञ्जवन् के मीन ध्वज पर का गान ही गान है। नीम का हार जब-चित्त को (आह्लादपूर्ण) दुख देता है तब का रमणियों का गाना ही गाना है। २८

शेरन्

शन्दु उरऱ् पॆय्दु तहैशाल् अणि मुत्तम्
वञ्जि महळिर् कुरुवरे वान् कोट्टाल्
कडन्दडुदार्च् चेरन् कडम्बॆऱिन्द वार्त्तै
पडर्न्द निलम् पोर्त्त पाडले पाडल्
पत्तन्दोडु उळङ्गवरुम् पाडले पाडल् 29

शेरन् का गान

चंदन की ओखली में श्रेष्ठतायुक्त सुन्दर मोतियों को डालकर वञ्जि नगर (या देश) की कन्याये कूटती है। युद्ध में चढ़ जाकर विजेता बनने वाले ताल-मालाधारी शेरन् के "कडम्ब" तरु भंजन का चरित्र विशाल भू पर फैलाते हुए गाया जाने वाला गान ही गान है! तालपुष्पहृत चित्तवालियों का गान ही गान है। २६

23 अवळ् वाळ्त्तित्ताळ् !

आङ्गु
नीणिल मन्नर् नॆडुविऱ् पॊऱैयन् नल्
ताळ् तॊळार् वाळ्त्तल् तमक्करिदु शूळ् ऑळिय
ऍङ्गो मडन्दैयुम् एत्तित्ताळ्, नीडूळि
शॆङ्गुट्टुवन् वाळ्ह 'ऍन्ऱु 30

२३ उसने बधाई दी

यहाँ : विस्तृत भूमि के शासक (शोळन् व पाण्डियन् आदि) बड़े धनुर्धर पोरैयन् (शेरन्) के चरणों की वन्दना नही करते; अतः स्वस्ति पाना उनके लिए कठिन है। पर हमारे राजा की तेजस्विनी पुत्री (कण्णहि) ने भी स्वस्तिवचन कहा कि शेङ्गुट्टुवन् युग युग जिए। ३०

30 वरन्दरु कादै

(निलै मण्डिल आशिरियप्पा)

1 यार् अन्द मणिमेहलै ?

वडदिशै वणक्किय वान्वर् पेरुन्दहै
कडवुट्कोलम् कट्पुलम् पुक्क पिन्
देवन्दिहैयैच् चॆव्विदिन् नोक्कि
वाय् ऒंडुवतु अरड्रिय मणिमेहलैयार्
यादवळ् तुड्रवुतड्कु ऐदु ? इङ्गु उरै ऎन्नक् 1–5

३० वरदान गाथा

(छंदः–निलैमण्डिल आशिरियप्पा)

१ कौन है वह मणिमेहलै ?

(यह अध्याय भी पिछले अध्याय की तरह पूर्व घटित कथा ही कहता है।) उत्तर दिशा को जिसने नत कर दिया था वह देव-श्रेष्ठ शेङ्गुट्टुवन् कण्णहि के दैवी-रूप को अपनी आँख भर देख हर्षित हुआ। उसके बाद देवन्दिहै पर आँख जमाकर (देखकर) पूछा कि (कण्णहि की अतरंग सखी के) प्रलापमें चर्चित मणिमेहलै कौन है ? उसके सन्यास लेने का हेतु क्या है ? यहाँ वह बताओ। १-५

2 देवन्दि शॊन्नदु

कोमहन् कोड्रम् कुड्रैविन् ड्रोङ्गि
नाडु परुवळम् शुरक्कॆन ऎड्रेवुति
अणिमेहलैयार् आयत्तु ओङ्गिय
मणिमेहलैतन् वान्तुड्रवु उरैक्कुम् 6–9

२ देवन्दि ने कहा

(पहले अभिनंदन वचन) राजा की विजय अखंडित रीति से बढ़े। उसका राज्य भी खूब समृद्धि प्रदान करे। कहकर देवन्दि सुंदर मेखलालंकृत

नर्त्तकियों की मंडली में उच्च स्थान पर रही मणिमेहलै के उत्कृष्ट संन्यास ग्रहण की बात कहने लगी। ६-९

3 चित्तिरापदियिन् केळ्वि

मैईर् ओदि वहैपॆरु वत्तप्पिन्
ऐवहै वहुक्कुम् परुवम् कॊण्डदु
शॆव्वरि ऑळुहिय शॆळुङ्गडै मळैक्कण्
अव्वियम् अऱिन्दन; अदुतान् अऱिन्दिलळ्
ऑत्तु ऑळिर् पवळत् तुळ्ळॊळि शिऱन्द
नित्तिल इळनहै निरम्बा अळविन
पुणर्मुलै विळुन्दन पुल्लहम् अहन्ऱदु
तळरिडै नुणुहलुम् तहै अल्हुल् परन्ददु
कुऱङ्गिणै तिरण्डन; कोलम् पॊऱाअ
निऱङ्गिळर् शीऱडि नॆय्तोय् तळिरिन;
तलैक्कोल् आशान् पित्तुळ नाहक्
कुलत्तलै माक्कळ् कॊळ्हैयिऱ् कॊळ्ळार्
यादुनिन् करुत्तु ? ॲन्ऩॆय् हो ? ॲन
मादवि नऱ्ऱाय् मादविक्कु उरैप्प 10-23

३ शित्तिरापदि का प्रश्न

(शित्तिरापदि मादवि की माता है। वह मणिमेहलै के भविष्य के संबंध में पूछते हुए कहती है) काला घना केश पाँचों प्रकार से संवारने योग्य स्थिति में आ गया। (मणिमेहलै के) लाल डोरों वाले मत्त अपागों के काले नेत्रों ने कपट जान लिया। (मणिमेहलै से ही उनकी अभिनव मादकता छिपी थी।) वह उसे नही जानती है। परस्पर सम रहकर प्रकाश छिटकाने वाले प्रवालों के बीच आंतरिक छटा से युक्त मोती रखे गये जैसे उसका मंद-हास भी पूर्ण रूप से पक्का नही हुआ है। जुड़वें स्तन बढ़ गये है। आलिगन योग्य छाती भी चौड़ी हो गयी। कटि क्षीण हो गयी और वरांग विशाल लगने लगा है। दोनों ऊरु वर्तुल हो गये है। आगे सौदर्य के लिए स्थान न रखने वाले (पूर्ण सौदर्य युक्त) रंगीन छोटे चरण स्निग्ध पल्लव के समान शोभायमान हो गये। उसके पीछे तलैक्कोल् का आचार्य (नाट्याचार्य) अयोजित रह गया। यानी अब तक उसने शिक्षा आरंभ नही की है। इस स्थिति में उच्चकुल के लोग मणिमेहलै को नही अपनायेगे। तुम्हारा विचार क्या है ? ऐसा मादवि की माँ ने मादवि से पूछा। १०-२३

4 तुऱवऱप् पडुत्तित्तळ्

वरुह अॅन्ऩ मडमहळ् मणिमेहलै अॅन्ऱु
उरुविलाळऩ्ऩ ओरु पॅरुञ्जिलैयोडु
विरैमलर् वाळि वॅऱुनिलत्तु अॅऱियक्
कोदैत्तामम् कुऴलोडु कळैन्दु
पोदित्त तात्तम् पुरिन्दऱम् पडुत्तत्तळ् 24–28

४ संन्यास में लगा दिया

(मादवि ने अपना उत्तर अपने कार्य द्वारा दिया :) "आओ मेरी अवोध पुत्री मणिमेहलै !" कहकर मादवि ने अपनी पुत्री को बुलाया (उसने जो कराया उसके फलस्वरूप) अनग को अपने अनुपम पुष्पशरों को रिक्त भूमि पर फेकना पड़ गया। मादवि ने उसकी माला, केश, आदि सब निवार दिया। और वोधि दान देकर मणिमेहलै को संन्यासाश्रम में प्रविष्ट करा दिया। २४-२८

5 अरऱ्ऱिऩ्ऩ कारणम्

आङ्गु अदुकेट्ट अरशऩुम् नहरमुम्
ओङ्गिय नऩ्मणि उऱुकडल् वीऴ्त्तोर्
तम्मिऱ् ऱुऩ्बम् ताम् नऩि अॅय्दच्
चॅम्मोऴि मादवर् "शेयिऴै नङ्गै
तऩ्ऩुऱवु अॅमक्कुच् चाऱ्ऱिऩळ्" अॅऩ्ऱे
अऩ्बुऱु नऩ्मोऴि अरुळोडुम् कूऱिनर्;
परुवम् अऩ्ऱियुम् पैन्दोडि नङ्गै
तिरुविऴै कोलम् नीङ्गिनळ् आदलिऩ्
अरऱ्ऱिनेऩ् अॅऩ्ऱु आङ्गु, अरशऱ्कु उरैत्त पिऩ् 29–37

५ विलापने का कारण

(देवन्दि ने आगे कहा:)

वहाँ वह वात सुनकर, राजा से लेकर प्रजा तक सभी अतिश्रेष्ठ अच्छे रत्न को समुद्र में डाल दिया जैसे वहुत दुख से भर कर दुखी होने लगे। पर सद्वाणी वोलने वाले तपस्वी धर्मात्मा अऱवण अडिहल् इस वात पर खुश हुए कि "आभरण-सुदरी कन्या ने अपने सन्यास ग्रहण की वात हमसे वतायी !" उन्होंने दया करके प्रेम के साथ उपदेश वचन भी कहे। पर देवन्दि ने

कहा मणिमेहलै का पर्व (आयु) इस योग्य नहीं था। तो भी हरी चूडी वाली बाला ने श्री लक्ष्मी को भी मोह लेने वाले अपने रूप को विकृत कर लिया (भिक्षुणी बन गयी)। वही सोचकर मैं रोयी! ऐसा देवन्दि ने राजा से कहा। २६-३७

6 दॆय्वम् उऱ्ऱत्तळ् !

कुरल् तलैक् कून्दल् कुलैन्दु पिन्न वीऴत्
तुडित्तनळ् पुरुवम् तुवरिदऴ्च् चॆव्वाय्
मडित्तु ऎयिऱु अरुम्बित्तळ् वरुमॊऴि मयङ्गित्तळ्
तिरुमुहम् वियर्त्तत्तळ् शॆङ्गण् शिवन्दत्तळ्
कैविट्टु ओच्चित्तळ् काल् पॆयर्न्दु ऎऴुन्दत्तळ्
पलरऱि वाराद तॆरुट्चियळ् मरूट्चियळ्;
उलऱिय नावित्तळ् उयर्मॊऴि कूऱित्
तॆय्वमुऱ्ऱु ऎऴुन्द देवन्दिहै तान् 38-45

६ देवाविष्ट हुई।

(देवन्दि पर देवता आविष्ट हुआ) मिलाकर गांठ बनाया गया उसका केश खुलकर पीठ पर बिखर गया। भौहें छटपटायी; वह लाल अधरो को मोड़कर हँसी। उसके मुख के शब्द अव्यवस्थित तथा भ्रांत थे। श्रीमुख स्वेदयुक्त हो गया। अरुण आँखें लाल हो गयी। हाथों को ऊपर उछाल कर पटका। पैरों को उठाये नृत्य किया। बहुत लोग जान पायें—ऐसो एक भ्रांति और एक मोह के साथ जीभ सूख सी गयी। फिर ऊँची-ऊँची बाते कहने लगी। दैव के आवेश को स्पष्ट दिखाते हुए देवन्दि उठी और बोली (उसमें शात्तन् देव प्रविष्ट हुआ था) ३८-४५

7 मून्ऱु शिऱुमिहळ्

कॊय्तळिर्क् कुऱिञ्जिक् कोमान् तन् मुन्
कडवुळ् मङ्गलम् काणिय वन्द
मडमॊऴि नल्लार् माणिऴै योरुळ्
अरट्टन् शॆट्टितन् आयिऴै ईन्ऱ
इरट्टैयम् पॆण्गळ् इरुवरुम् अन्ऱियुम्;
आडह माडत्तु अरवणैक् किडन्दोन्
शेडक् कुडुम्बियिन् शिऱुमियुम् ईङ्गुळळ् 46-52

७ तीन बालिकाएँ

(शात्तन् ब्राह्मणी देवन्दि द्वारा बोला :)

तोड़ने योग्य पल्लवों से भरपूर कुऱिञ्जि के प्रदेश के राजा के सामने देवी-मंगल (उत्सव) देखने जो आयी है उन सात मधुर वाणी भूपित—सुदरियों में अरट्टन् शेट्टि की दो जुडवी पुत्रियां और "हाटक मंदिर" के शेषशायी भगवान के पुजारी के कुटुंब की लड़की है। ४६-५२

8 शुत्तै नीर्

मङ्गल मडन्दै कोट्टत्तु आङ्गण्
शेङ्गोट्टु उयर्वरैच् चेणुयर् शिलम्बिल्
पिणिमुह नॆडुङ्गर् पिडर्त्तलै निरम्बिय
अणिकयम् पलवुळ आङ्गवै इडैयदु
कडिप्पहै नुण्कलुम् कविरिदळ्क् कुऱुङ्गलुम्
इडिक्कलप्पु अन्न इळॆन्दुहु नीरुम्
उण्डोर् शुत्तै अदनुळ् पुक्कु आडिनर्
पण्डैप् पिऱविचियर् आहुवर्; आदलिन्
आङ्गदु कॊणर्न्दु आङ्गु आयिऴै कोट्टत्तु
ओङ्गिरुङ् गोट्टि इरुन्दोय् 'उन् कैक्
"कुऱिक्कोळ् तहैयदु कॊळ् हॆनत् तन्देन्";
उऱित्ताळ् करहमुम् उन कैयदु अन्ऱे;
कदिर् ऒळि काऱुम् कडवुळ् तन्मै
मुदिराडु; अन्नीर् मुत्तिऱ महळिरत्
तॆळित्तनै आट्टिन् इच् चिऱुकुऱु महळिर्
ऒळिवत पिऱप्पित्तर् आहुवर् काणाय्;
पाशण्डन् यान्; पार्प्पनि तन् मेल्
माडल मऱैयोय्! वन्देन् ऎन्ऱलुम् 53–70

८ सोते का जल

वंणीवन सहित मंगला देवी (कण्णहि) के मंदिर में लाल पाटों वाले आकाशोन्नत पर्वत पर, मयूर रूप एक चट्टान पर जल-पूर्ण अनेक सुदर स्रोत है। उनके मध्य छोटे श्वेत राई के समान बालुओं तथा मुरूङ्गु (पलाश) के फूलों की पंखुड़ियों के समान लाल कंकड़ो को कूटकर बनी बुकनी के साथ मिलकर रहता जैसा एक सोता भी है। उसमें जो उत्तर कर स्नान करे वे

अपने पूर्व जन्म की बातें जान लेंगे। इसलिए वहाँ से वह जल लाकर, हे देवी मंदिर के ऊँचे द्वार पर विद्यमान माडलन्‌ ! यह कहकर कि तुम्हारे हाथ में लो। यह लेने योग्य है तुम्हारे हाथ में दिया था। छीके में लटकता कमण्डल भी तुम्हारे हाथ में है (उसमे वह जल है) न ? सूर्य के अस्त होने तक उस जल का अलौकिक गुण लुप्त नही होगा। उस जल को लेकर अगर तुम इन तीनों लड़कियों पर छिड़को तो ये बालाएँ अपने पूर्व जन्म के भूले जीवन को प्राप्त कर लेगी। पाशण्ड शात्तन्‌ हूँ मैं। ब्राह्मणी में प्रविष्ट हूँ। हे ब्राह्मण माडलन्‌ ! ५३-७०

9 अरशत्तित् वियप्पु

मन्नन् विम्मिदम् अय्दि, अम् माडलन्
तन्मुहम् नोक्कलुम् तात्ति महिऴ्न्दु
'केळिदु मन्ना'। कॅडुह निन् तीयदु 71–73

९ राजा का विस्मय

राजा विस्मयाभिभूत हुआ। उसने उस माडलन्‌ के मुख पर दृष्टि फेरी; माडलन्‌ बहुत खुश होकर बोला : सुनो यह हे राजन्‌ ! तुम्हारा बुरा कर्म मिट जाय। ७१-७३

10 देवन्दि वरलाऱु

मालदि अन्बाळ् माऱ्ऱाळ् कुऴवियैप्
पाल्शुरन्दु ऊट्टप् पळवित्तै उरुत्तुक्
कूऱ्ऱुयिर् कॉळ्ळक्, कुऴविक्कु इरङ्गि
आऱ्ऱात् तन्मैयळ् आरञर् 'अय्दिप्
पाशण्डन् पाऱ् पाडु किडन्दाट्कु
आशिल् कुऴवि अदन् वडिवु आहि
वन्दनन्; अन्नै नी वान्तुयर् ऑऴिह। अन्नच्
चॅन्दिरम् पुरिन्दोन् शॅल्लल् नीक्किप्
पाऱ्पपनि तन्नोडु पण्डैत्ताय् पाल्
काप्पियत् तॉल्कुडिक् कविन् पॅऱ वळर्न्दु
देवन्दिहैयैत् तीवलञ् जॅय्दु
नालीर् आण्डु नडन्ददर् पिन्नर्
मूवा इळनलम् "अन्नकोट्टत्तु
नीवा" गय शात्तन् 7

१० देवन्दि का चरित्र

मालदि नामक एक स्त्री ने सौत के बच्चे को, अपने स्तन से स्रवते दूध को पिलाया। पूर्व जन्म का कर्म फल देने आ गया और बच्चे को यम ले गया। शिशु के लिए शोकमग्न हुई मालदि असह्य व्याकुलता से पाशण्डन् के मंदिर में धरना बैठ गई। उसके पास शात्तन् बच्चा बन कर आया। दुरित हीन शिशु बनकर, हे माता! मै आया हूँ। तुम अपना आकाश-सा (बड़ा) दुख दूर करो। वैसा सुकृत्यकारी शात्तन् उस ब्राह्मणी का बड़ा दुख दूर कर उसके और बच्चे की असली माता के साथ "काप्पियक् कुडि" (या तो ग्राम का नाम है या कुल का) में रहता था। वह सुदर रूप से बढ़ा और "देवन्दिहै" के साथ उसने अग्नि की तीन परिक्रमा करके विवाह कर लिया। आठ साल बीते। अपना अजर युवा का (दैवी) रूप दिखाकर उसने अपनी पत्नी से कहा कि तुम मेरे मदिर में आ जाओ। फिर वह उसे छोड़कर चला गया। ७४-८७

11 मुन् तन्द कमण्डलम्

मङ्गल मडन्दै कोट्टत्तु आङ्गण्
अङ्गुरै मऱैयोऩाहत् तोन्ऱि
उऱित् ताऴ् करहमुम् ऍन् कैत् तन्दु
कुऱिक् कोऴ् कूऱिप् पोयिनन्; वारान्
आङ्गदु कॉण्डु पोन्देन् आदलिन्
ईङ्गिम् मऱैयोऴ् तन् मेल् तोन्ऱि
"अन्नीर् तॆळि" ऍन्ऱु अऱिन्दोन् कूऱिनन्
"मन्नवर् कोवे! मडन्दैयर् तम्मेल्
तॆळित् तीङ्गु अऱिहुवम्" ऍन्ऱुवन् तॆळिप्पक् 88-96

११ पूर्व-दत्त कमंडल

(माडलन् ने :जारी रखा:) मगला-देवी के मंदिर के पास वहाँ के ब्राह्मण के रूप में आकर शात्तन् ने मेरे हाथ छीके में रखकर एक कमंडल दिया। और वह कुछ सकेत वचन भी कह गया। फिर वह मेरे पास आया ही नही। वहाँ से वह कमंडल लेकर इधर आया हूँ। उसने भी इस ब्राह्मणी में आविष्ट होकर मुझसे कहा है कि वह जल छिड़क दो! वह बहुत कुछ जानता है। हे राजाधिराज! हम उन बालाओं पर जल छिड़केंगे और साफ़-साफ़ बाते जान लेगे। कहकर उसने जल छिड़का। ८८-९६

12 कण्णहियिन् ताय् कूट्रियदु

ऑळित्त पिरप्पु वन्दु उरुदे आहलिन्
पुहळ्न्द कादलन् पोट्रा ऑळुक्किन्
इहळ्न्ददर्कु इरङ्गुम् अन्नैयुम् नोक्काय्
एदिल् नन्नाट्टु यारुमिल् ऑरुतनिक्
कादलन् तन्नोडु कडुन्दुयर् उळन्दाय्;
यान् पेरु महळे ! अन् तुणैत् तोळी !
वान् तुयर् नीक्कुम् मादे वाराय् ! 97–103

१२ कण्णहि की माँ ने कहा

गत जन्म की याद आ गयी; अतः कण्णहि की माँ ने कहा— पहले तुम्हारा प्रशसक रहा पति तुम्हारी उपेक्षाकारी बन गया। वह तुम्हारी उपेक्षा करके चला गया। तुमने दुखदग्धा मेरा ध्यान भी नही किया। परदेश में बिना किसी और की सहायता के अकेले अपने पति के साथ गयी और कठोर दुख के वश में पड़ गयी। मेरी जायी सुते ! मेरी संगिनी सखी ! मेरे दुख-हारिणी कन्ये ! तुम मेरे पास आओ तो।— ९७-१०३

13 कोवलन्नि ताय् कूट्रियदु

अन्नतोडु इरुन्द इलङ्गिळै नङ्गै
तन्नतोडु इडैयिरुळ् तनित्तुयर् उळन्दु
पोन्नदर्कु इरङ्गिप् पुलम्बुरूम् नॅञ्जम् !
यात्तदु पोरॆन्न महन् वाराय् 104–107

१३ कोवलन् की माता का कहा

"मेरे साथ प्यार रखती रही आभरण भूषिता रमणी के साथ अर्ध रात्रि के अंधकारमय याम में अनन्यभुक्त दुख सहते हुए तुम गये। तदर्थ गम खाकर विलपता है मेरा मन ! मैं सह नही पा रही हूँ। रे पुत्र ! आओ तुम। १०४-१०७

14 मादरि शॊन्नदु

वरुपुत्तल् वेयै वान्तुरैप् पॆयरन्देन्
उरुकॆळु मूदूर् ऊर्क्कुरु माक्कळिन्
वन्देन् कॆट्टेन् मत्तैयिर् काणेन्;
अन्दाय् इळैयाय् अॆङ्गु ऑळित्तायो ? 108–111

१४ मादरि का कहा

नियमित नये प्रवाहों के जल से पूर्ण वैगै के बड़े घाट पर गयी थी। सुदरतापूर्ण पुरातन नगर के छोटी उम्र के लोगों से घटित बात सुनी। दौड़ के आयी। आफ़त सुनी। तुम्हें घर में नहीं देखा। मेरे तात! हे नौ जवान! कहाँ जा छिपे? १०८-१११

15 अरऱ्ऱिऩार्

ऍऩ्ऱाङ्गु अरऱ्ऱि इत्तैन्दु इत्तैन्दु एङ्गिप्
पोऩ् ताऴ् अहलत्तुप् पोर्वॆय्योऩ् मुऩ्
कुदलैच् चॆव्वायक् कुऴन्दोडि महळिर्
मुदियोर् मॊऴियिऩ् मुऩ्ऱिल् निऩ्ऱऴ 112–115

१५ विलाप किया

इस भाँति विलाप करके, लट लट कर, गम खाकर, श्रीरम्य वक्ष वाले युद्ध-परंतप राजा के सामने, तुतलाती बोली वाली और छोटी, चूड़ीधारिणी बालिकाओं ने वृद्धाओं की सी भाषा में, आंगन में खड़ी होकर, विलाप किया। ११२-११५

16 मऩ्ऩऩिऩ् ऐयम्

तोडलर् पोन्दैत् तोडुकऴल् वेन्दऩ्
माडल मऱैयोऩ् तऩ्मुहम् नोक्क,
'मऩ्ऩर् कोवे, वाऴ्हेऩ्' ऱेत्ति,
मुन्नूल् मार्बऩ् मुऩ्ऩियदु उरैप्पोऩ् 116–119

१६ राजा का संशय

विकच पंखुड़ियों का ताल-पुष्प-हार-धारी, वीर पायल से अलंकृत राजा ने विप्र माडलन् के मुख को देखा। माडलन् ने 'राजाधिराज! दीर्घायु हो कहकर अभिनदन किया। त्रिसूत्रधारी उसने राजा का अभिप्राय जान लिया। वह बोला। ११६-११९

17 पिऱविियिऩ् कारणम्

'मऱैयोऩ् उऱ्ऱ वाऩ्तुयर् नीङ्ग,
उऱैकवुळ् वेऴम् कैयहम् पुक्कु

वाऩोर् वडिवम् पॆऱ्ऱवऩ् पॆऱ्ऱ
कादलि तऩ्मेऱ् कादलर् आदलिऩ्
मेऩिलै उलहत्तु अवरुडऩ् पोहुम्
तावा नल्लऱम् शॆय्दिलर् अदऩाल्
अञ्शॆञ् शायल् अञ्नाडु अणुहुम्
वञ्जि मूदूर् माऩहर् मरुङ्गिल्
पॊऱ्कॊडि तऩ्मेऱ् पॊरुन्दिय कादलिऩ्
अऱ्पुळम् शिऱन्दाङ्गु अरट्टऩ् शॆट्टि
मडमॊऴि नल्लाळ् मऩमहिऴ् शिऱप्पिऩ्
उडऩ्वयिऱ् ऱोराय् ऒरुङ्गुडऩ् तोऩ्ऱिऩर्
आयर् मुदुमहळ् आयिऴै तऩ्मेल्
पोय पिऱप्पिऱ् पॊरुन्दिय कादलिऩ्
आडिय कुरवैयिऩ् अरवणैक् किडन्दोऩ्
शेडह कुडुम्बियिऩ् शिऱुमहळ् आयिऩळ् 120-135

१७ जन्म का कारण

(दान लेने जो आया था) उस ब्राह्मण पर बड़ी आफत आयी थी। उसको दूर करने मदस्रावी कपोल वाले हाथी की सूंड़ के (पकड़ के) अंदर घुसकर कोवलन् ने (उस ब्राह्मण को क्रुद्ध हाथी से) बचाया था। फिर वह देव रूप पा गया। उसकी प्रिय पत्नी (कण्णहि) पर ये तीनों प्यार रखने वाली है। पर उनके समान मोक्ष लोक जाने का निर्दोष पुण्य इन्होने नहीं किया है। इसलिए सुंदरी (कण्णहि) वेखटके जहाँ आ पहुँची उस पुरातन नगर, वञ्जि में आयीं और कंचनलता कण्णहि पर प्रेम के कारण, स्नेह के बढ़ने से, अरट्टन् शॆट्टि की अच्छी सौदर्यवती स्त्री को आनंद देते हुए जुड़वीं बहनें होकर एक साथ पैदा हुईं। ग्वाल नारी भी गत जन्म में श्रेष्ठ आभरण-सुदरी कण्णहि पर प्रेम रखती थी। और उसनें "कुरवै" (कृष्ण-पूजन-नृत्य) भी किया था। उस पुण्य के कारण, शेषशायी भगवान के अर्चक (पुजारी) के कुटुंब में शिशु बनकर पैदा हुई। १२०-१३५

18 नियदि इडुवे

नऱ्ऱिऱम् पुरिन्दोर् पॊऱ्पडि ऎय्दलुम्
अऱ्पुळम् शिऱन्दोर् पऱ्ऱु वऴिच् चेऱलुम्;
अऱप्पयऩ् विळैदलुम् मऱप्पयऩ् विळैदलुम्

पिऱन्दवर् इऱत्तलुम् इऱन्दवर् पिऱत्तलुम्;
पुदुव दन्ऱे तॊन्ऱियल् वाऴ्क्कै
आन् एऱु ऊर्न्दोऩ् अरुळिल् तोन्ऱि
मानिलम् विळक्किय मऩ्ऩवऩ् आदलिऩ्
शॆय्दवप् पयऩ्गळुम् शिऱन्दोर् पडिवमुम्
कैयहत् तनपोऱ् कण्डऩै यऩ्ऱे
ऊऴि तोऱु ऊऴि उलहङ्गात्तु
नीडुवाऴियरो नॆडुन्दहै ! ॲऩ्ऱ्
माडल् मऱैयोऩ् तऩ्ऩॊडु महिऴ्न्दु 136–147

१८ नियति यही है।

पुण्यकृत्यकारी लोगों का स्वर्ण लोक (स्वर्ग) पहुँचना, प्रेम रखने वालों का इच्छा के अनुसार जन्म लेना; धर्म का फल (सुख) होना और अधर्म का फल (दुख) मिलना, पैदा हुओं का मरना, मरे का जन्म लेना— ये कोई नयी बाते नही है। सनातन कार्य है ये। वृषभ वाहन परम शिव के अनुग्रह से पैदा होकर तुम बड़े देश का पालन कर रहे हो। अत: कृत तपों का फल, पुण्यवान लोगों की स्थिति आदि को हस्तगत वस्तु के समान साफ-साफ़ देख चुके न ! युग-युग तक लोकसरक्षण करते हुए, हे सुयोग्य राजा ! दीर्घायु भव ! माडलन् का मगल वचन सुनकर शॆङ्गुट्टुवन् हर्षित हुआ १३६-१४७

19 विऴावुम् पोऱ्ऱुदलुम्

पाडल् शाल् शिऱप्पिऱ् पाण्डि नऩ्ऩाट्टुक्
कलिकॆऴु कूडल् कदऴॆरि मण्ड
मुलैमुहम् तिरुहिय मूवा मेऩिप्
पत्तिऩिक् कोट्टम् पडिप्पुऱम् वहुत्तु
'नित्तल् विऴावणि निहऴ्ह ॲऩ्ऱु एविप्
'पूवुम् पुहैयुम् मेविय विरैयुम्
देवन् दिहैयैच् चॆय्ह, ॲऩ्ऱु अरुळि
वलमुऱै मुम्मुऱै वन्दवऩ् वणङ्गि 148–155

१९ उत्सव और आराधना

काव्य महिमा युक्त पाण्डियर् के अच्छे देश के कोलाहल पूर्ण कूडल् नगर को बड़ी आग में जलाने के लिए जिसने अपना चूचुक ऐंठ लेकर फेका था, उस

अजर दैवी स्थिति वाली कण्णहि के मंदिर के विभिन्न भागों का निर्माण कराया राजा ने। फिर दिन ब दिन उत्सव होता रहे- कहकर उसका प्रबंध कराया। फिर देवन्दि से कहा, "पुष्प पूजा, धूप- पूजा और गंध पूजा तुम करो" फिर उसने मंदिर की तीन बार परिक्रमा की और नमस्कार किया १४८-१५५

20 पिऱवरशर् वेण्डुदल्

उलह मन्नवन् निन्ऱोन् मुन्नर्
अरुञ्जिऱै नीङ्गिय आरिय मन्नरुम्
पॆरुञ्जिऱैक् कोट्टम् पिरिन्द मन्नरुम्
कुडहक् कॊङ्गरुम् माळुव वेन्दरुम्
कडल् शूऴिलङ्गैक् कयवाहु वेन्दनुम्
'ऎन्नाट्टु आङ्गण् इमैय वरम्बनिन्
नन्नाळ् शॆय्द नाळणि वेळ्वियिल्
वन्दुईह' ऎन्ऱे वणङ्गिनर् वेण्डत् 156-163

२० अन्य राजाओं की मिन्नत

नमस्कार करने के बाद जो खड़ा रहा उस लोक शासक राजा के सामने कठोर कारामुक्त आर्य राजा लोग, बड़े कैदखाने से बाहर आये अन्य राजा-गण, "कुडहम्" के 'कॉङ्गर्', 'माळुव' देश के राजा, सागर से घिरे लंका देश का राजा 'कयवाहु' (गजवाहु) इत्यादि राजा लोगों ने नमस्कार करके प्रार्थना की कि हमारे देश में जब हम इमयवरम्बन् (जिसके राज्य की उत्तरी सीमा हिमालय थी) के जन्म दिवस की जयन्ती मनायेगे आप उस उत्सव में उपस्थित रहिए और अनुग्रह कीजिए। १५६-१६३

21 वरम् तन्दन्ऩळ्

तन्देन वरम्! ऎन्ऱु ऎऴुन्दद्दु ऒरु कुरल्
आङ्गु अदु केट्ट अरशनुम् अरशरुम्
ओङ्गिरुम् तानैयुम् उरैयोडु एत्तत;
वीडुकण् डवर्पोल् मॆय्न्नॆऱि विरुम्बिय
माडल मऱैयोन् तन्नॊडुम् कूडित्
ताऴ्कऴल् मन्नर् तन्नडि पोऱ्ऱ
वेळ्विच् चालैयिन् वेन्दन् पोन्द पिन् 164-170

२१ वर प्रदान किया।

तब 'दिया वर!' कहके एक ध्वनि उठी। उसको सुनकर राजा शॆङ्गुट्टुवन् और अन्य राजा और उनकी विपुल सेनाओं ने उच्च स्वर में स्तुति की। वे इतने हर्षित हुए मानो मोक्ष पा गये हों। सत्यगति के इच्छुक विप्र माडलन् के साथ मिलकर वीरता सूचक कटकधारी राजाओं ने शॆङ्गुट्टुवन् के चरणों में नमस्कार किया। फिर राजा यज्ञशाला में चला गया। १६४-१७०

22 नूलाशिरियरुक्कु अरुळुदल्

यानुम् शॆन्ड्रेन् ऎन्नॆदिर् ऎळुन्दु
देवन्दिहै मेल् तिहळ्न्दु तोन्ऱि
'वञ्जि मूदूर् मणि मण्डबत् तिडै
नुन्दै ताणिळल् इरुन्दोय् निन्नै
'अरशु वीट्रिरुक्कुम् तिरुप्पोऱि उण्डु' ऎन्ऱु
उरै शॆय् तवन् मेल् उरुत्तु नोक्किक्
कॊङ्गविळ् नऱुन्दाऱ्कु कॊडित्तेर्त् तानैच्
चॆङ्गुट्टुवन् तन् शॆल्लल् नीङ्गप्
पहल् शॆल् वायिर् पडियोर् तम्मुन्
अहलिडप् पारम् अहल नीक्किच्
चिन्दै शॆल्लाच् चेण्नॆडुन् दूरत्तु
अन्दमिल् इन्बत्तु अरशाळ् वेन्दु ऎन्ऱु
अत्तिरम् उरैत्त इमैयोर् इळङ्गोडि,
तत्तिरम् उरैत्त तहैशाल् नन्मॊळि
तॆळिवुऱक् केट्ट तिरुत्तहु नल्लीर्! 171-185

२२ ग्रंथकार पर अनुग्रह

(ग्रंथकार इळङ्गो अडिहळ् कहते है)

मै भी गया। मेरे सामने वह "देवन्दिहै" में प्रवेश कर आयी और प्रगट हुई। (मेरा पहले का चरित्र कहा :) वञ्जि के पुरातन नगर के मणि मंडप में तुम अपने पिता की छाया में रहे। तब जिसने भविष्यवाणी कही कि तुम्हें राजा बनने का सौभाग्य है उसको तुमने गुस्से से देखा। सुगंध खोलने वाले गंध—वह पुष्पों की माला और ध्वज-रथ-सेना के स्वामी

शेङ्गुट्टुवन् की चिंता को दूर करते हुए सूर्यागमन की दिशा के "कुणवायिर् कोट्टम्" में वहाँ रहे साधुओं केसामने तुमने विशाल भू भार वहन का अधिकार त्याग दिया ! चित्त जहाँ नही जा सकता उस दूर में रहते अनंत सुख के राज्य के शासक बन गये ! इस भाँति उसने मेरा चरित्र कहा, हिमवान की बाल-लता कण्णहि ने । उसका चरित्र वर्णन करके मैने जो-जो सूक्तियाँ कही है उनको स्पष्ट रूप से सुनने वाले हे श्रेष्ठ सुयोग्य लोगो ! (उन पर ध्यान दो) । १७१-१८५

23 नूलाशिरियर् वेण्डल्

परिवुम् इडुक्कणुम् पाङ्गुऱ नीङ्गुमिन्
दॅय्वम् तॆळिमिन्, तॆळिन्दोर्प् पेणुमिन्
पॊय्युरै अञ्जुमिन्; पुऱञ्जॊल् पोऱ्ऱुमिन्;
ऊऩूण् तुऱमिन्, उयिर्क्कॊलै नीङ्गुमिन्
दानम् शॆय्म्मिन्, तवम् पल ताङ्गुमिन्
शॆय्न्नन्ऱि कॊल्लन्मिन्, तीनट्पु इहळ्मिन्
पॊय्क्करि पोहन्मिन्, पॊरुळ्मॊऴि नीङ्गन्मिन्
अऱवोर् अवैक्कळम् अहलादु अणुहुमिन्
पिऱवोर् अवैक्कळम् पिळैत्तुम् पॆयर्मिन्
पिऱर्मनै अञ्जुमिन्; पिळैयुयिर् ओम्बुमिन्
अऱमनै कामिन् अल्लवै कडिमिन्;
कळ्ळुङ् गळवुम् काममुम् पॊय्युम्
वॆळ्ळैक् कोट्टियुम् विरहिनिल् ऒऴिमिन्;
इळमैयुम् शॆल्वमुम् याक्कैयुम् निलैया
उळनाळ् वरैयादु ऒल्लुवदु ऒऴियादु;
शॆल्लुम् तेएत्तुक्कु उऱुतुणै तेडुमिन्
मल्लन् मा ञालत्तु वाऴ्वीर् ईङ्गॆन् **186–202**

२३ ग्रंथाचार्य का समझाना

चिंता और दुख को उचित रीति से (साधना द्वारा) त्याग दो। ईश्वर का अस्तित्व साफ जान लो, ज्ञान-तत्व ज्ञानियो का उपदेश पालो ! असत्य वचन से डरो। पिशुनता त्याग दो ! मांस खाना छोड़ दो। जीव हत्या से दूर रहो। दान करो। अनेक तप करो। कृतघ्न मत बनो। बुरी मित्रता

को निकृष्ट मानो। झूठी गवाही मत दो। सत्य वचन से मत हटो। धार्मिक लोगों की संगति मे विना अलग हुए लगे रहो। इतरों की सभा-संगति में भूल कर भी मत जाओ। पर गृह (पर दारा गमन) से डरो। दुखी जीवों की सहायता करो। गृह धर्म का पालन करो। इतर बुरी बातों को निंद्य मानो। मद्यपान, चोरी, काम, असत्य, निरर्थक भाषण-आदि को दृढ़ता से छोड़ दो! जवानी, धन और शरीर नही टिकेंगे। आयु, जो निश्चित है, वह कम नही होगी। अपरिहार्य मृत्यु आये विना नही रहेगी। गंतव्य लोक के लिए साथी (धर्म) को खोजो! हे कोलाहलमय संसार के जीवो! अपना जीवन इस भाँति चलाओ! १८६-२०२

24 कट्टुरै

मुडियुडै वेन्दर् मूवरुळ्ळुम्
कुडदिशै आळुम् कॊऱ्ऱम् कुन्ऱा
आर मार्विन् शेरर् कुलत्तु उदित्तोर्
अऱनुम् मऱनुम् आऱ्ऱलुम् अवर्तम्
पळविऱल् मूदूर्प् पण्बु मेम्बडुदलुम्
विळवु मलि शिऱप्पुम् विण्णवर् वरवुम्
ऒंडिया इन्बत्तु अवरुऱै नाट्टुक्
कुडियिन् शॆल्वमुम् कूळिन् पॆरुक्कमुम्
वरियुम् कुरवैयुम् विरविय कॊळ्हैयिन्
पुऱत्तुऱै मरुङ्गिन् अऱत्तॊडु पॊरुन्दिय
मऱत्तुऱै मुडित्त वाय्वाळ् तानैयॊडु
पॊङ्गिरुम् परप्पिन् कडल्पिऱक्कु ऒट्टिक्
कङ्गैप् पेर् याऱ्ऱुक् करै पोहिय
शॆङ्गुट्टुवनोडु ऒरु परिशु नोक्किक्
किडन्द वञ्जिक् काण्डम् मुऱ्ऱिऱ्ऱु 203–217

२४ उपसंहार या सार वचन

किरीटधारी तीनों कुलो के राजाओं में पश्चिमी दिशा के शासक, अक्षुण्ण विजयी, हार धारी वक्ष वाले शेरकुल जातो की धर्म निष्ठा, वीरता, विक्रम, उनके पुरातन राजधानी नगर की सास्कृतिक श्रेष्ठता, उत्सवों की बहुलता की विशेपता, व्योमवासियो का आना, अविराम सुख भोग के साथ उनके

राज्य में रहने वाली प्रजा की धन समृद्धता, धान्य समृद्धता, एकाकी नृत्य गान, संध-नृत्य गान, (अंतरंग साहित्य के) और बहिरग साहित्यक विधाओं के साथ लगे वीरता के प्रकरण मे सफल तेज तलवार वाली सेना के साथ विस्तृत पाट के समुद्र को भी पीछे ढकेल कर, बड़ी नदी गगा के तट तक जाने का शॆङ्गुट्टुवन् का चरित्र इत्यादि को एक साथ देखने योग्य रीति से रचित रहा "वञ्जिक्काण्डम्" पूरा हुआ। २०३-२१७

नूऱ् कट्टुरै

कुमरि वेङ्गडम् कुणकुड कडला
मण्तिणि मरुङ्गिऩ् तण्तमिऴ् वरैप्पिल्
शॆऩ्दमिऴ् कॊडुन्दमिऴ् ऎऩ्ऱिरु पहुदियिऩ्
ऐन्दिणै मरुङ्गिऩ् अऱम् पॊरुळ् इऩ्बम्
मक्कळ् तेवर् ऎऩ विरु शार्क्कुम्
ऒत्त मरबिऩ् ऒऴुक्कॊडु पुणर
ऎऴुत्तॊडु पुणर्न्द शॊल् अहत्तु ऎऴ् पॊरुळै
इऴुक्का याप्पिऩ् अहत्तुम् पुऱत्तुम्
अवऱ्ऱु वऴिप्पडूउम् शॆव्वि शिऱन्दु ओङ्गिय
पाडलुम् ऎऴालुम् पण्णुम् पाणियुम्
अरङ्गु विलक्के आडल् ऎऩ्ऱु अऩैत्तुम्
ऒरुङ्गुडऩ् तऴीइ उडम्बडक् किडन्द
वरियुम् कुरवैयुम् शेदमुम् ऎऩ्ऱु इवै
तॆरिवुऱु वहैयाऩ् शॆन्तमिऴ् इयऱ्कैयिल्
आडि नल् निऴलिऩ् नीडु इरुङ्गुन्ऱम्
काट्टुवार् पोऱ् करुत्तु वॆऴिप्पडुत्तु
मणिमेहलै मेल् उरैप्पॊरुळ् मुऱ्ऱिय
शिलप्पदिहारम् मुऱ्ऱुम्।

ग्रंथ सार

(शिलप्पदिहारम निम्नलिखित बातो की चर्चा करता है :)

(दक्षिण में) कुमरि (घाट); (उत्तर में) वेंकट पर्वत, पश्चिम और पूर्व में समुद्र, इन सीमाओ के अंदर धर्ती के प्रदेश में तमिऴ्नाडु है। इसके शॆन्दमिऴ्, कॊडुन्दमिऴ् बोलने वाले दो प्रदेश है। इनमें पांच भू प्रदेश—(कुरिञ्जि, मुल्लै मरुदम, नॆय्दल और पालै) है। यहाँ रहने वालो के लिए

धर्म, अर्थ, काम; मानव, देव दोनों को उन-उनके योग्य रीति से आचरण के साथ लगाते हुए, अक्षरो के मिलकर बने शब्दो के अर्थो से इंगित विपयों को, निर्दोष वाक्य-रचना में कहना; अतरग और वहिरग जीवन का प्रतिविव वनकर जो मुदर रीति से रचे जाते है वे गान; याऴ् का संगीत, कंठगीत, ताल, रग, विलक्कु (नाटक), नृत्य आदि सव मिलकर जिनमे प्रगट होते है, वे एकाकी गीत, सघ नृत्य गीत, "चेदम्" नृत्य— इत्यादि का साफ वर्णन करके शेन्दमिऴ (परिमार्जित भाषा मे) दिखाये गये है। वे इस रीति से दर्शित है जैसे एक आइने में दिखने वाला वडा और ऊँचा पर्वत अपने सूक्ष्म भागो के साथ दिखाई देता हो। अनेक भाव प्रकट किये गये है। ऐसा, शिलप्पदिहारम जिसकी* उद्देश्य-पूर्ति "मणिमेहलै" काव्य के साथ होती है, यहाँ समाप्त होता है।

॥ शिलप्पदिहारम् समाप्त ॥

---

* महाकाव्य के प्रधान लक्षणों मे एक है चारों पुरुषार्थों का विवरण। शिलप्पदिहारम् में धर्म, अर्थ और काम तीन ही विषय हैं। मोक्ष मणिमेहलै काव्य का विषय वना है। मणिमेहलै इससे जुड़ा काव्य है। मणिमेहलै का दूसरा नाम हो "मणिमेहलै तुऱवु" है। 'तुऱवु' शब्द का अर्थ मोक्ष और संन्यास है।

कणणहि की कथा का अतिम अश भी मणिमेहलै काव्य में कहा गया है। कण्णहि मणिमेहलै को अपने पूर्वा-पर जन्मों का विवरण और भविष्य मे मोक्ष प्राप्ति का हाल भी वताती है।

'मणिमेहलै' का भी सलिप्यंतरण अनुवाद भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित हो रहा है।

।। ग्रामे-ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे-ग्रामे कथा शुभा ।।

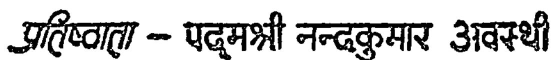
भुवन ग्रन्थ-गाथा भुवन सन्त-वाणी

देवनागरी अक्षयवट

भाषा-सुमन-पल्लवित उपजा, भारत में तरु एक अनूप।
देवनागरी-अक्षयवट' का देखो कैसा भव्य स्वरूप ॥

विश्व-वाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा ।
पहन नागरी-पट सबने अब भूतल भ्रमण विचारा॥

भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ


प्रतिष्ठाता – पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी

परिशिष्ट

[कथा-सार उपकथाएँ, सहायक स्रोत]

१ पुहार्क् काण्डम्

(१—१० अध्याय)

सर्व समृद्ध शोळ देश की विख्यात राजधानी पुहार् नगर मे, 'इप्पर', 'कविप्पर्' और 'पॅरुङ्गुडियर्' नाम के तीन धनाढ्य वणिक्-कुल थे। उनमें 'पॅरुङ्गुडियर' कुल में उदित 'माशात्तुवान्' नामक वणिकराज ने अपने सोलह साल के पुत्र, कोवलन् का विवाह उसी के समान रईस व्यापारी 'मानाय्कन्' की बारह साल की 'कण्णहि' से करवाया। विवाह का उत्सव समाज में सुप्रतिष्ठित उन व्यापारियो की हैसियत के अनुकूल तथा परपरागत रीति से ब्राह्मण पुरोहित के मार्गदर्शन में धूम-धाम से मनाया गया। स्त्री-चित्तापहारी युवक कोवलन् और मनमोहनी कण्णहि परस्पर अगाध प्रेम के साथ भोग-मग्न रहे। कोवलन् की माता ने कुछ काल के अनतर, उन्हें गृहस्थ धर्म मे अभ्यस्त कराने तथा कुशल बनाने हेतु उन्हें एक अलग मकान में सभी सुख-सुविधाओं के साथ बसा दिया।

उस नगर मे राज-सम्मान-प्राप्त मादवि नाम की नर्तकी थी, जो नृत्य, गायन तथा प्रसाधन में उज्ज्वल थी। वह अपनी अति सुन्दर नृत्य कला के उत्तम प्रदर्शन के बल पर राजा से "तलैक्कोल् (शीर्ष स्थान)" प्राप्त कर सर्वश्रेष्ठ नर्तकी ('तलैक्कोलि') बन गयी। उसे यह शासन-सम्मत अधिकार भी मिल गया कि वह अपने प्रेमी पुरुष से हर रात एक हजार आठ स्वर्ण मुद्राये ले सकती है। कोवलन् उस गणिका पर आसक्त हुआ और घर-बार भूलकर उसी के घर मे उसी के सग रहने लग गया। उसके अपार धन कम होते गये। उधर कण्णहि पति-स्मृति और पति-भजन के मुकाबले में देव-पूजन को त्याज्य मानने की सती-प्रथा को माननेवाली होने के कारण अकेली घुलती-छीजती अपनी कुल-चर्या करती रही।

उस नगर मे हर साल इन्द्रोत्सव बड़ी चहलपहल, धूमधाम और कोलाहल के साथ, नृत्य-गान, धार्मिक व्याख्यान, बलि-पूजा, मन्दिरों में उत्सव आदि के साथ मनाने की प्रथा थी। उसे देवगण भी अदृश्य रहकर देखते थे। इस साल मादवि का 'ग्यारह-नृत्य' बड़ा आकर्षण था। एक विद्याधर-दम्पति भी आये। उस उत्सव के अन्त में पूर्णिमा के दिन सब लोग सागर-तट पर लीला के लिए गये। कोवलन् और मादवि भी गये। वहाँ विधि ने अपना पाँसा फेका। कोवलन् ने मादवि के रंजनार्थ वीणा पर

"कान्नल् वरि' गाया। उस गीत में अन्यत्र लगाव की बू समझकर मादवि ने उसका दिल जलाने के लिए 'गुप्त पर-प्रेम' का आशय रखनेवाला 'वरि' गीत गाया। कोवलन् खीझ उठा और रूठकर अकेला चला गया। मादवि दहल उठी। वह पछताने लगी और अकेली अपनी सखियों, दासियों सहित घर आयी। अशान्तमना उसने अपनी कुबडी दासी वयन्तमालै (वसन्त-माला) के हाथ केवडे के दल पर "पित्तिहै" के फूल की कली मे गाढ़े लाक्षारस की स्याही का उपयोग करके विरह-व्यथा-निवेदन और क्षमायाचना का पत्र लिखकर भेज दिया। वयन्तमालै ने कोवलन् को बाजार मे पाकर पत्र दिया। पर कोवलन् ने निर्दयता से मादवि के प्रेम को एक जन्मजात नटिनी का ढोंग कहकर तिरस्कार के साथ पत्र को बिना मुहर खोले ही लौटा दिया।

कण्णहि की एक ब्राह्मण साथिन थी, जिसका नाम देवन्दि था। वह कण्णहि के पास आकर आश्वासन देने लगी। कण्णहि ने एक बुरा स्वप्न देखा था। उसमें उसका पति और वह किसी बड़े नगर मे गये थे। वहाँ कोवलन् का राजाज्ञा से वध करा दिया गया। कण्णहि ने राजा के सामने जाकर न्याय माँगा। कण्णहि के द्वारा स्वयं राजा पर ही नहीं, बल्कि नगर पर भी बन आयी। कण्णहि अवाक् ही रही। फिर बोली कि इतना बुरा करने पर भी मेरे और मेरे पति के मिलन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। क्या यह परिहास योग्य बात नही है ? देवन्दि ने यह सुनकर सलाह दी कि तुम कुण्ड मे स्नान करके देवता की पूजा करने का व्रत पालो। पति अवश्य मिल जायेंगे। कण्णहि ने कह दिया कि पति को छोड़कर किसी अन्य का पूजन करना पति-व्रत के खिलाफ है। वह कह ही रही थी कि दासी ने आकर कोवलन् के द्वार पर आने की इत्तला दी।

कोवलन् ने पत्नी को शयनकक्ष मे ले जाकर अपनी करनी पर खेद प्रकट किया और कहा कि मै निर्धन हो गया हूँ। कण्णहि ने समझा कि शायद यह मादवि को कुछ देने के लिए अपने पास कुछ न रहने के कारण दुखी है। उसने अपने नूपुर प्रस्तुत किये। कोवलन् ने कहा कि मै मदुरै जाकर ये नूपुर बेचूंगा और विक्रय के रुपये को व्यापार में लगा दूंगा। तुम भी मेरे साथ चलो। पतिपरायणा सती तुरन्त उठ गयी।

विधि की योजना थी : दूसरे दिन मुँह अँधेरे ही दोनों पुहार् छोड़कर चुपचाप चल निकले। काविरि के उत्तरी किनारे से ही चलकर जैन भिक्षुणी कवुन्दि अडिहळ् के आश्रम में आये। वे उनकी स्थिति तथा उनका उद्देश्य जानकर स्वय उनके साथ जाने को उद्यत हो निकली। वे तीनों मार्ग के अनेक सुरम्य दृश्यों के दर्शन-सुख में कठिनाइयों तथा श्रम को भूलकर चलते रहे। जब वे श्रीरगम् में आये वहाँ चारण आये हुए थे। तीनो ने उनके

दर्शन तथा उपदेश श्रवण का लाभ उठाया। पश्चात् वे एक नाव में बैठकर काविरि नदी पारकर दक्षिणी किनारे पर आये। वे आगे चलकर एक उपवन में ठहरे। वहाँ एक धूर्त कामुक अपनी नयी पेशेवाली प्रेमिका के साथ आया। उसने कोवलन्-दम्पति के सम्बन्ध में कुछ अनुचित टिप्पणी की। अडिहळ् को गुस्सा हुआ और उन्होने उन्हे सियार बनने का शाप दे दिया। बाद में कोवलन् के निवेदन करने पर अडिहळ् ने दया से शाप-मोचन का वचन कहा कि एक साल सियार बनकर रहने के बाद वे पुन: अपने पूर्व स्थिति में आ जायँगे। वे तीनों आगे चलकर उरैयूर पहुँचे। वहाँ वे निर्ग्रंथ-विहार में श्रावकों के मेहमान रहे। अडिहळ् ने उन श्रावकों को चारणों से श्रुत उपदेश सुनाये। रात को वे वही ठहरे।

२ मदुरैक् काण्डम्

(११—२३ अध्याय)

वे तीनो दूसरे दिन वहाँ से चलकर कुछ दूरी पर एक बाग में आये। वहाँ "माङ्गाडु (आम्रवन)" का रहनेवाला एक ब्राह्मण आया था। वह तीर्थ-यात्रा के लिए निकलकर श्रीरंगम्, तिरुप्पदि (वाला जी का मन्दिर) आदि के दर्शन करने की चाह में आया था। कोवलन् ने उससे मदुरै के मार्ग के सम्बन्ध में प्रश्न किया। उसने तीन भिन्न-भिन्न मार्गो का विवरण दिया और सम्भाव्य बाधायें बतायी। उसने उन्हे सचेत किया कि रास्ते में अच्छी बुरी अप्सराये मिल सकती है। वे उसे विदा करके आगे बढे और एक जलाशय के निकट आये। कोवलन् अकेला जलाशय पर गया तो वयन्दमालै के छद्मवेश में एक मोहनी अप्सरा ने मादवि द्वारा अपने पर दोषारोपण की झूठी बात कहकर कोवलन् के प्रेम की याचना की। कोवलन् ने हिरण-वाहना दुर्गा-मन्त्र का जाप किया और वनचारिणी मायाविनी की कलई खुल गयी। वह क्षमायाचना करके चली गयी। फिर वे तीनो आगे चल कर एक तरुवन में आये। वहाँ "ऐयै' देवी का मन्दिर था जिसमें आकर एक आड़ के स्थान मे विश्राम वे करने लगे। "ऐयै" देवी दुर्गा का एक रूप है और वह कण्टकाकीर्ण कंकड़ भरे 'रेगिस्तान' के रहनेवाले व्याध लोगो की आराध्य देवी है। वे लोग मानते थे कि उसकी ही कृपा से उनके धन्धे में सफलता मिलती है। उनका धन्धा राह-जनी, अन्य गाँवों पर छापा मारकर उनके ढोरों का हरण करना आदि था।

तब वहाँ व्याध लोग (वेट्टुवर्) "ऐयै" की पूजा करने आये। उनके साथ "शालिनि", भी थी जिसपर अदृश्य रीति से आरूढ़ होकर देवी बोलती

थी। वह स्त्री-स्वय देवी के रूप में अलकृत हुई थी। उन्होंने उसकी तथा प्रतिमा की पूजा-आराधना के क्रम में सघनृत्य किया। "शान्तिनि" पथ-श्रम-परिहारार्थ अलग बैठी रही कण्णहि को देखकर बोल पड़ी। 'अरे! यह तो कौड्गु देश की श्री है। पश्चिमी पर्वत की रानी! दक्षिण की तमिळ् देवी का तपोभूत पल्लव! एक महारत्न और ससार की सर्वश्रेष्ठ मणि!' यह पहेली सुनकर कण्णहि संकुचित हुई। व्याध लोग अपना कर्म पूरा करके चले गये।

दिन की धूप असह्य थी, क्योंकि ग्रीष्म की धूप थी और ककड-वन का रास्ता। रात मे पाण्डियन् के राज्य मे उनके प्रखर तथा जाग्रत शासन मे कोई भय नही था। रात को चन्द्रोदय के बाद निकलकर वे एक बस्ती मे आये जहाँ जाति-भ्रष्ट ब्राह्मण लोग रहते थे। सबेरे कोवलन् ने जलाशय में जाकर पुहार् के कौशिहन्न को देखा। वह ब्राह्मण मादवि का पत्र लेकर कोवलन् की टोह मे उनका पीछा करता आया था। मादवि के आँसुओं से भीगे पत्र को अब की बार कोवलन्न ने लेकर पढा। कोवलन् को मादवि की निर्दोषिता का पता चला। वही स्वय दोषी था। उसने उस पत्र को कौशिहन्न के हाथ में देकर कहा कि इसे ले जाकर मेरे माँ-बाप को दो। इस पत्र से वे मेरी सच्ची स्थिति समझ लेगे। कौशिहन्न को भेजकर कोवलन् अडिहळ् और कण्णहि के पास लौट आया और वहाँ "पाणर्' (घुमक्कड गवैये)" लोग आये। उन घुमक्कड़ गवैयो के साथ कोवलन् नाचा, गाया। उनसे पूछकर मालूम किया कि मदुरै पास ही है; वहाँ के वाद्यो का नाद ही सुनाई दे रहा है और पवन के साथ मिलकर मदुरै की ही गध आ रही है। वे तीनों आगे चलकर 'वैयै' नदी पर आये। नदी, झडे आदि का माहौल ही ऐसा लग रहा था मानो वे उनको आने से मना कर रहे हों। वे वैयै पार कर मदुरै के गढ के बाहर उपनगर पहुँचे।

दूसरे दिन सबेरे कोवलन् ने मदुरै के अदर जाकर नगर वालो के व्यवहारो को देख आना चाहा। अकस्मात् अपनी पिछली करनियों को याद कर वह थोडा मायूस हुआ तो अडिहळ् ने श्री रामचन्द्र, राजा नल आदि का उदाहरण देकर धीरज दिलाया कि विधि के आगे किसी का कोई वश नही चलता।

कोवलन् कण्णहि को अडिहळ् के आश्रम मे छोडकर मदुरै नगर के अदर गया। वही गली-कूच सब जगह घूमकर अनेक दृश्य देखे। प्रेमी युगल छत पर बैठकर ग्रीष्म की तपिश से घवड़ाते हुए अन्य ऋतुओ का स्मरण कर रहे थे। नगर की शासन-व्यवस्था तथा प्रजा का सलूक देखकर उसके मन मे विश्वास होने लगा।

कोवलन्न् लौट आया तो वहाँ तलैच्चेंङ्गानम् का माडलन्न् नामक ब्राह्मण आया हुआ था। वह शोऴ देशवासी ब्राह्मण तीर्थयात्रा के दौरान इधर आया था। वह कोवलन्न् की दयालुता, दानवीरता, साहस, जान पर खेलकर परोपकार करने का गुण आदि की प्रशसा करके बोला कि यह आज का सकट पूर्व जन्म कर्म का ही फल होगा। उसने सलाह दी कि यह स्थान छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर जाकर रहो। तभी वहाँ मादरि नाम की ग्वालनारी यक्षिणी देवी को दूध का निवेदन करके लौटते समय मार्ग में कवुन्दि अडिहळ् के दर्शन के लिए आ पहुँची। कवुन्दि अडिहळ् ने उसे विश्वसनीय मानकर उसके पास कोवलन्न् दम्पति को सौपा। दान-धर्म तथा धरोहर के रूप में आये की सहायता करने से मिलने वाले पुण्य फल का उदाहरण सहित उपदेश सुनकर मादरि अपने को कृतार्थ मानकर कोवलन्न् दंपति को साथ ले आयी। उन्हे अपने ग्वाल-ग्राम मे एक नये घर में रखकर अपनी पुत्री ऐयै को कण्णहि के सहायतार्थ नियुक्त किया। कण्णहि ने उससे ननद का और मादरि से सास का रिश्ता मान लिया। ऐयै की सहायता लेकर उसने श्रावकव्रती अपने पति के लिए स्वयं भोजन बनाया और आदरपूर्वक जिमाया।

भोजन के बाद कोवलन् जब नूपुर लेकर निकला तो उसे बरबस कण्णहि की सोचकर दिल में कसक हुई। भावान्मेष में उसने कण्णहि की प्रशंसा कर पूछा कि तुम कैसे मुझे माफ कर मेरे साथ इतनी दूर आने को तैयार हो गयी ? कण्णहि ने कहा कि मैने आप पर विश्वास कभी नही खोया था। आप निश्चिन्त होकर जाइए। आपका शुभ हो।

कोवलन्न् को बाजार में अपने सहयोगियों के साथ आता हुआ राजमहल का प्रमुख सुनार मिल गया। उसे कोवलन्न् ने अपना नूपुर दिखाया। उस छली सुनार ने रानी का नूपुर चुरा रखा था। उसने मन मे कपट रखकर कोवलन् को अपने घर के पास ठहराया और महल में जाकर रूठी हुई रानी को मनाने जा रहे राजा से निवेदन किया कि नूपुर का चोर मेरे वश में फँस गया है और उसे मै घर मे छोड़ आया हूँ। अन्यमनस्क राजा ने झट आज्ञा दी कि उसका वध करके नूपुर ले आओ। सुनार वधिक सिपाही लेकर घर पहुँचा और सिपाहियो को कोवलन्न् को दिखाकर कहा कि यही चोर है। सिपाहियों को कोवलन्न् की संभ्रातता देखकर उसके चोर होने में सशय होता था। पर सुनार ने चौर्य कला के पाठ पढाकर कहा कि चतुर चोर इस तरह नही पहचाने जाते। तुम लोग राजा की आज्ञा मानो। एक अनभ्यस्त युवक वधिक ने बेरहमी से कोवलन्न् के शरीर मे अपनी तलवार से वार कर ही दिया। कोवलन् कट कर मर गया।

उधर ग्वालों की बस्ती मे उत्पात (बुरे शकुन) होने लगे। मादरि ने

शांत्यर्थ 'कुरवै (गोपाल रास)' का आयोजन किया। श्रीकृष्ण वलराम 'नप्पिन्नै (तमिळ् भक्ति साहित्य में राधा की प्रतिकृति)' आदि की भूमिकाएँ अदा करती हुई ग्वाल बालाएँ नाचीं, गायी। नृत्यांजलि पूरा करके मादरि स्नान करने 'वैयै' नदी गयी। तव नगर से एक स्त्री कोवलन् पर चोरी का आरोपण तथा उसके राजाज्ञा से वध की वुरी खवर ले आयी। कण्णहि यह सुनकर वज्राहत साँप के समान काँप उठी। उसे राजा के अन्याय पर क्रोध आया। उसने प्रतिज्ञा की कि मैं चुपचाप विधवा-व्रत पालती हुई गम खाती नही रहनेवाली। इसका प्रतिकार करूँगी। उसने सूर्य को ललकारा कि तुम सच कहो। आकाशवाणी हुई कि तुम्हारा पति चोर नही है; यह नगर जलेगा।

कण्णहि आहत साँप के समान फुफकार कर उठी। नगर भर को रुलाते हुए विक्षिप्त-सी घूमी। कई प्रण करती हुई वह लड़खड़ाती चाल में चलती, पागल-सी दौड़ती वध भूमि पहुँची। कोवलन् का कटा शरीर देखकर उसका दुख पारा पार कर जाने लगा। वह पूछने लगी कि क्या इस नगर में नारियाँ नही हैं? साधु-सज्जनों का विलकुल अभाव है क्या? ईश्वर है भी? फिर ऐसा राजा कैसे हुआ? रोते हुए उसने कोवलन् के पैर पकड़े, मिन्नत की कि कुछ तो वोलो। कोवलन् जीवित हो उठा। उसने उसके आँसू पोंछे और कहा तुम रहो, मै स्वर्ग जा रहा हूँ। वह दैवी रूप में ऊपर चला गया। यह करामात देखकर कण्णहि विस्मित हुई। उसने प्रतिज्ञा की कि राजा से प्रतिशोध लेने से पहले मैं पति से नही मिलूँगी।

वह आँधी सम राजमहल गयी। भयकर काली देवी के समान उसे देखकर पहरेदार घवड़ा उठा। उसने राजा से जाकर निवेदन किया कि दुर्गा देवी तो नही है, पर दुर्गा के समान आयी है कोई अपने पति को खोकर। आपसे मिलना चाहती है। तभी रानी अपने देखे हुए बुरे स्वप्न के वारे में कह रही थी। राजा ने कण्णहि को अपने सामने वुला लिया। आते ही कण्णहि ने गरजकर आरोप लगाया कि तुम अविवेकी हो। अत्याचारी हो। उसके आरोप का कारण जानकर राजा ने कहा कि चोर को मारना अत्याचार नही। कण्णहि ने कहा कि मेरे नूपुर के अंदर माणिक मणियाँ हैं। रानी का नूपुर मोतियो से भरा था। राजा ने यह स्मरण कर कण्णहि के नूपुर को उसके सामने करा दिया तो कण्णहि ने वह नूपुर लेकर जमीन पर दे मारा और मणियाँ छितर पडी। एक मणि राजा के मुख के पास गिरी। ज्यो ही राजा ने यह हाल देखा त्यों ही वह यह कहते हुए सिहासन पर ही गिर गया कि हाय! मैं ही चोर रहा। रानी भी वेहोश हो गिर पड़ी। कण्णहि ने निष्ठुर प्रतिशोध की वात कही कि मैं नगर को भी जला दूंगी। मैं उस

नगर की हूँ जहाँ सात पतिव्रताएँ रही। अगर मै उनके समान पतिव्रता हूँ तो अग्निदेव को मेरी आज्ञा माननी ही पड़ेगी। वह अपने बाये स्तन को नोचकर अपने हाथ में लिए बीथियों में घूमी। उसने ज्यों ही स्तन को भूमि पर फेंका त्यों ही अग्निदेव विप्र के वेश में प्रगट हुआ। उसे पहले ही नगर को जलाने की आज्ञा मिलो थी। कण्णहि ने उसके पूछने पर बताया कि ब्राह्मण लोगों, गायों, वृद्धों, शिशुओं और धर्माचारी लोगों के पास मत जाओ। अन्य बुरे लोगों को जला दो।

नगर जलने लगा। चारों वर्ण-भूत भाग खड़े हुए। नगर के खास देवता भी कपाट बंद करके अंदर ही रह गये।

तब मदुरै की अधिष्ठात्री देवी मदुरापदि कण्णहि के पीछे से उसके पास आकर बोली कि कण्णहि सुनो! मै तुम्हारी व्यथा समझती हूँ। पर यह जान लो कि पाण्डियन्न वंश के राजा भी अन्यायी नही हैं। उसने उस वश के राजाओं के निष्पक्ष व्यवहारों के उदाहरण दिये। देवी का वचन सुनकर कण्णहि कुछ स्थिर हुई। तब मदुरापदि ने कोवलन्न के पिछले जन्म का अपराध बताया। उसने पिछले जन्म में एक निरपराध वणिक् युवक का राजा से चर बताकर वध करा दिया था। उसकी पत्नी पहाड़ की चोटी से कूदकर मरते वक्त यह शाप दे गयी कि मेरी जैसी स्थिति उनकी भी हो। उसी शाप के प्रभाव से तुम दोनों की यह स्थिति हुई। फिर उसने विश्वास दिलाया कि आज से चौदहवे दिन तुम अपने देव बने पति से मिलोगी और स्वर्ग जाओगी।

कण्णहि वेचैनी तथा मूर्छा-सी अवस्था में मदुरै को छोड़कर पश्चिमी द्वार से बाहर निकली और चलकर शेरन्न के राज्य के अदर 'तिरुच्चेंङ्गुन्नरम्' नाम के पर्वत पर एक 'वेङ्गै' के तरु के नीचे जा खड़ी रही। चौदहवे दिन देवेन्द्र के कुछ निजी देव विमान में कोवलन्न के साथ आये और कण्णहि को स्वर्ग ले गये।

३ वञ्जिक् काण्डम्

(२४—३० अध्याय)

पर्वतीय लोग कुऱवर् कहाते है। उन लोगों ने 'वेङ्गै' तरु के नीचे एक स्तनहीन कण्णहि को खड़ा देखा। उन्होने विस्मय और भय से भरकर उससे प्रश्न किया और उत्तर में उसका वृत्तांत सुनकर वे प्रभावित हुए। जव उन्होने उसके स्वर्ग जाने का दृश्य देखा तो वे उसे अपनी आराध्य देवी ही मान

गये। उसकी आराधना के रूप में 'कुरवै (संघ नृत्य-गान)' की नृत्यांजली समर्पित की।

पश्चात् वे शेरन् राजा के पास गये जो अपनी महिषी, अपने भाई, शात्तन्नार् नामक कवि मित्र तथा परिवार के साथ पहाड़ी दृश्य देखने आकर 'पेरि नदी' के वालू के मैदान मे पड़ाव डाले हुए था। पर्वत-जन्य विशेष पदार्थ और प्राणी की भेट समर्पित कर उन्होने कण्णहि सबंधी अत्यद्‌भुत वृत्तात का निवेदन किया। राजा की इच्छा जानकर शात्तन्नार् ने मदुरै की कण्णहि संबधी घटनाएँ विस्तार मे सुनायी। तब राजा के छोटे भाई इळङ्गो ने अपना इरादा बताया कि मैं इसपर एक काव्य रचूँगा। राजा शेङ्गुट्टुवन् ने पाण्डियन् की कहानी से प्रभावित होकर कहा कि प्रजापालक शासक का पद आखिर काँटो का ताज है। फिर उसने रानी से पूछा पाण्डियन् की पत्नी और कण्णहि —इन दोनो पतिव्रता देवियो मे किसको अधिक श्लाघनीय माना जाय। रानी ने चातुरी से उत्तर दिया कि रानी का स्वर्ग मे सम्मान हो। हम अपने देश मे आयी देवी की पूजा करेगे।

राजा को बात जँची। उसे तब उत्तर के कुछ राजाओ की बात याद आयी, जिन्होने तमिळ् लोगो की वीरता की अवहेलना के शब्द कहे थे, और हँसी उड़ायी थी। इसलिए राजा ने प्रतिज्ञा की— हम उन्हे परास्त करके हिमालय से शिला काट लेकर गंगा मे नहलाकर ले आयेंगे और उसी का पत्नी देवी का विग्रह बनेगा। उसने आज्ञा दी कि उत्तर मे चरों को भेजा जाय। पर मत्री विल्लवन्न् कोदे के सुझाव पर राजा ने कहा कि "वञ्जि" मे मुनादी पीटी जाय। हमारी राजधानी मे तो सभी देशों के चर है। वे अपने-अपने राजाओ को हमारे कूच का समाचार भेज देगे। राजा वहाँ से निकलकर वञ्जि मे आया। उसने प्रण किया कि मै विजयी होकर नही आया तो मेरी निन्दा, 'परतप नही, स्व-प्रजा-पीड़क अधम राजा' कहकर की जाय।

अच्छे मुहूर्त मे कूच आरम्भ हुआ। पहले छत्र और ध्वजा को भेजने का रस्म अदा किया गया। राजा परमेश्वर के प्रसाद को सिर पर और तिरुवनन्दपुरम् के विष्णु के प्रसाद को वाहुओ पर धारण कर और युद्ध-यात्रा का साकेतिक चिह्न 'वञ्जि' के फूलों की माला पहनकर निकला। बड़ी सेना, सेनापति, मत्री आदि भी साथ चले। सब नीलगिरि पर आकर रुके।

वहाँ हिमालय से आकर बसे हुए ब्राह्मण लोग थे। उन्होने आशीर्वाद देकर प्रार्थना की कि हिमालयपर्वतवासी तपस्वी ब्राह्मणो का अहित न किया जाय। नट-नटिनियाँ गवैये आदि कलाकारो ने आकर मनोरंजन किया। प्रधान चर सञ्जयन् कलाकारो और युद्ध सामग्री, रसद आदि के साथ आकर मिला। दक्षिण के राजाओं के भेजे हुए एक हजार कचुकी, मोती, रत्न आदि भी मिले।

राजा उत्तर में जाकर गंगा के दक्षिणी किनारे पर अगुवानी करने आये मित्र राजा शतकन्नर् की सहायता से नावों पर चढकर उत्तरी किनारे गया। घमासान युद्ध हुआ। प्रधान शत्रु और कन्नहन् और विशयन् उनके मित्रों के साथ परास्त कर कैदी बनाये गये। विल्लवन् कोदै जाकर हिमालय से शिला लेकर शत्रु-राजाओं के सिर पर लाद लाया। गगा में उसका श्रीमज्जन कराने की विधि पूर्ण हुई। फिर नियमानुसार वीरो का सम्मान, सहभोज आदि योग्य रीति से सपन्न हुए। तव वहाँ गंगा-स्नानार्थ आगत माडलन् ने राजा से भेंट की। उसने हँसी-हँसी में कहा कि मादवि के कान्नल् वरि (वेला गान) ने कनह-विशयनो के सिर फोड़ दिये। राजा ने व्याख्या चाही तो माडलन् ने कोवलन् मादवि सबधी वृत्तात सुनाया। राजा ने मदुरै की स्थिति जाननी चाही। कोर्रकै नगर के शासक इळञ्जेळियन् ने मदुरै का शासन भार अपने ऊपर ले लिया। उसने हजार सुनारो की वलि देकर पत्नी देवी का अनुग्रह प्राप्त किया। तभी जाकर अकाल तथा रोग से पीड़ित मदुरै फिर समृद्ध हुआ। माडलन् को कितने अशुभ समाचार सुनने पडे। कोवलन् की मृत्यु, मादरि और कवुन्दि अडिहळ् का आत्मोत्सर्ग, फिर पुहार में कोवलन् की माता तथा कण्णहि की माता का सतान-वियोग के शोक से मरण, दोनों के पिताओ का वैरागी वनना। मृत्यु-समाचार-श्रवण से उत्पन्न सताप तथा पाप के शमनार्थ वह गंगा-स्नान करने आ गया था। राजा ने उसके मुख से अपने मातुल-कुल के शोळन् के राज्य की अच्छी हालत भी जान ली। माडलन् को अपने वजन का उतना सोना दान किया। राजा को युद्ध के लिए निकले अब तक बत्तीस दिन हो गये थे। अतः वापसी यात्रा की तैयारी हो गयी। राजा माडलन् को भी साथ ले आया। परास्त राजा भी शिला उठाये आये।

इधर रानी वेणमाळ् राजा की लंबी अनुपस्थिति से उद्विग्न हो रही थी। राजा आ पहुँचा। वेणमाळ् तथा नगरवासी सब खुश हुए। वीरों की पत्नियों ने वीरों का खुशी से स्वागत किया। शरीर-सुख, नाच-गान का मनोरजन आदि देकर मानो उनके घावों पर मरहम लगा दिया। उधर महल में भी राजा और रानी ने साथ रहकर नाच-गान का आनंद अनुभव किया। तभी नीलन् नाम का कंचुकी विजित राजाओं को साथ लेकर आया। राजा ने उन्हें अन्य राजाओ को दिखा लाने की आज्ञा दी थी। नीलन् ने उन राजाओं के रुख का निवेदन किया। छद्मवेश मे भागनेवाले शत्रुओं को कैदी बनाना उन्हें वीरता का श्लाघनीय उदाहरण नही जँचा। राजा यह सुनकर गरम हो उठा। तब माडलन् ने उसे शात करके हितवचन कहा कि आखिर सभी को एक दिन दुनियाँ से कूच करना ही पड़ता है।

तुम्हारे वंश में कितने ही वीर थे। अब वे कहाँ है। तुम भी काफी वृद्ध हो गये हो। शरीर नश्वर है और जवानी टिकती नही है। वीर्य-प्रदर्शन का युद्ध-यज्ञ बहुत कर चुके हो। अव धार्मिक यज्ञ कर अपने परलोक को सँवारो। राजा का मन मान गया। उसने यज्ञ के आयोजन की आज्ञा दे दी। साथ-साथ उसने परास्त उत्तर के राजाओं को छुड़ाया और निमंत्रण दिया कि वे यज्ञ में रहें और बाद अपने-अपने उत्कृष्ट नगर जाएँ। कारागृह भी खोल दिये गये। फिर कण्णहि का मंदिर बनाने के शुभ कार्य में लग गया। मदिर वही निर्मित हुआ जहाँ पत्नी देवी खडी रही। विग्रह-प्रतिष्ठा के दिन वह मदिर में ही रहा। उस उत्सव मे उत्तर के राजा, मालव देश का राजा और श्रीलका का राजा कयवाहु (गजबाहु) भी उपस्थित थे। कई राजाओ ने अपने उपहार भेजे थे।

पुहार् नगर की देवन्दि (कण्णहि की ब्राह्मण सखी) कण्णहि की धाई और अंतरग सखी तीनों भी आयी थी। वे मदुरै आकर वहाँ से ऐयै को भी साथ लायी थी। तीनो ने राजा को अपना परिचय दिया और मातम में विलाप किया। जैसे शोक-विलाप में यहाँ किया जाता है, वैसे उन्होंने कण्णहि से सबधित घटनाओं को याद करके तथा उसकी निकट जान-पहचान के लोगो के नाम ले-लेकर विलाप किया। मणिमेहलै के भिक्षुणी बनने का समाचार राजा ने उनके मुख से सुना। मादवि ने अपनी माता की सलाह न मानकर अपने महान त्यागी कोवलन्न की पुत्री को कुल के परंपरागत धंधे में न लगाकर भिक्षुणी बना दिया।

तब देवन्दि पर शात्तन्न देव उतर आया। अदृश्य रहकर उसने माडलन्न से कहा कि अपने कमण्डल से मेरा दिया हुआ जल हाथ में लो और यहाँ आयी अरट्टन्न शेट्टि की दोनो जुडवी बहनों तथा विरुवनन्द पुरम के मंदिर के पुजारी की लड़की पर छिडको। उन्हे जल पडते ही उनके पिछले जन्म की बात याद आयी। वे क्रमशः कोवलन्न की माँ, कण्णहि की माँ तथा मादरि थी। माडलन्न ने उत्सुक राजा को बताया कि जीव अपने कर्म तथा अंतिम इच्छा के अनुसार जन्म लेते है।

राजा देवी की परिक्रमा करके खड़ा रहा। अन्य राजा भी हाथ जोड़े खड़े रहे। तब एक ज्योति आकाश में उदित हो आयी। तेजोमय अपने दैवी रूप में कण्णहि देवी ने उन्हें अनुग्रहीत करने का वर दिया और सबसे कहा कि मै यही अपनी शक्ति-लीला दिखाती हुई रहूँगी। राजा पूजा-अर्चना का भार देवन्दि को सौपकर यज्ञशाला में चला गया। कण्णहि ने देवन्दि के द्वारा ग्रंथकर्ता इळङ्गो अडिहळ् को उनका चरित्र बताकर विस्मित किया और उनकी आध्यात्मिक उन्नति पर यों बधाई दी कि तुम इसके अनन्त सुख-साम्राज्य के सम्राट् हो।

इळङ्गो यहाँ अपना काव्य समाप्त करने से पहले लोगो को सदुपदेश देकर 'इति श्री' कह देते है।

यह प्रधान कथा है। कथा के सिलसिले मे लेखक अन्य कई उपकथाओं के अलावा, ऐतिहासिक वृत्तांत के साथ कुछ अलौकिक नई लगनेवाली बाते भी बताते है।

उपकथाएँ

निम्नलिखित कथाएँ या तो किसी पात्र के कथन द्वारा या लेखक की ओर से या तो संक्षिप्त संकेत के रूप में या कुछ विस्तार के साथ कही गयी है।

	कथाएँ	अध्याय	पद्य संख्या पंक्तियाँ से	तक
१	अगस्त्य मुनि के उर्वशी नारद और जयन्त को शाप देने की और शाप-मोचन की कथा।	३	१	३
		३	११६	१२०
		६	१८	२५
२	मुचुकुंद शोळन् के इंद्र की सहायता करने और इंद्र मुचुकुकुंद की सहायता के लिए भूत भेजने की कथा।	५	६५	६७
३	उत्तर के राजाओं के शोळन् को मंडप के तीन भाग देने की कथा।	५	९९	१०४
		२८	८५	८६
४	रजत पर्वत के विद्याधर-दंपति का पुहार में इंद्रोत्सव देखने आने की कहानी।	६	१	५
५	करिकालन् के नवप्रवाहोत्सव चालू करने की बात।	६	१४६	१५०
६	शोळन् के गंगा तट तक अपने राज्य के फैलाने की बात।	७	दूसरा गान	
७	मालदि और देवन्दि का वृत्तांत।	९	५	२१
८	पाण्डिय राजा के समुद्र को 'वेल्' फेंककर रोकने का और कुमरि प्रदेश को समुद्र के लीलने का वृत्तांत।	११	१७	२०
९	इंद्र को राजा उग्रवर्म को अपना बड़ा भारी हार पहनाना।	११	२४	२५
१०	उग्रवर्म के इंद्र के किरीट को तोड़ देना और उसके अधीनस्थ मेघों को बरसने को मजबूर करना।	११	२६	२९
११	पुहार्-मदुरै के मार्ग की अप्सराओं की बात।	११	११०	११५
		११	१४४	१४५
१२	ईश्वरी के महिषासुर-मर्दन का संकेत।	१२	८	९

१३	मणिमेहलै का जन्म; और कोवलन्न का नाम रखने में सुझाव।	१५	२१	४०
१४	एक ब्राह्मणी का धोखें में नकुल को मार देना, कोवलन्न का पाप-निवारणार्थ अनुष्ठान कराना।	१५	५४	५५
१५	एक मूर्ख धूर्त ने साध्वी सती के खिलाफ उसके पति के कान भरना; भक्षक भूत का उसे मारना।	१५	७६	७८
१६	वानर हस्त देवकुमार की कथा।	१५	१६२	१६९
१७	एक चोर की कल्पित कथा।	१६	१९०	१९९
१८	शिवि नामक शोळन् के बाज से कबूतर को बचाने स्वयं अपना शरीर देने की कथा।	२० २९	५२ १८	५३
१९	मनुनीदि कण्ड शोळन् के एक गाय को न्याय दिलाने, उसके बछड़े को मारनेवाले अपने पुत्र राजकुमार को रथ के नीचे लिटाकर उसपर रथ चलाने और उसे मरवा देने की कथा।	२० २९	५४ १८	५२
२०	कण्णहि के द्वारा कही गयी सात पत्नियों की कथाएँ।	२१	४	३३
२१	अपने हाथ को अज्ञान में किये गये अपराध के लिए काट देनेवाले पाण्डियन् का वृत्तांत (उसका नाम स्वर्णहस्त पाण्डियन्न हुआ, क्योंकि उसने सोने का हाथ लगा लिया था)।	२३	४२	५३
२२	पल्याग्नँच् चेलहॅळ्ळु कुद्दुवन् का पालै कौदमन्न नामक विप्र तथा उसकी पत्नी को यजन द्वारा स्वर्गवास दिला देना।	२३ २८	६३ १३७	६४ १३८
२३	वलम्पडु मुरशिर् चेरलादन् का समुद्र में कडम्व तरु को काटना (शायद द्वीप मे रहे शत्रु को उसके रक्षित तरु को काटकर परास्त करना)।	२५ २८	१ १३५	२ १३६
२४	शेंङ्गुट्टुवन्न के पाण्डियन्न और शोळन् दोनो को हराकर सम्राट बनने का वृत्तांत।	२५	१५३	१५४
२५	उसी राजा के कोंड्गणर्, क्रूर करुनाडहर् वङ्गाळर्, गंग, मालाधारी कट्टियर् और उत्तर के आरियर् आदि को युद्ध में हराने का वृत्तांत।	२५	१५६	१५७
२६	उसी के अपनी माता को गंगा-स्नान के लिये ले जाने का; और एक हज़ार राजाओं को अकेले हराने का हाल।	२५	१६२	१६३

२७	एक शेर राजा के यमदूतों को अंधाधुंध जानें हरा ले जाने के प्रयत्न को रोकने का वृत्तांत।	२८	१४०–	
२८	शेङ्गुट्टुवन्न के श्याल, किळ्ळि वळवन्न शोळन्न के छोटा होने के कारण नौ छत्रधर राजाओं ने विद्रोह किया। शेङ्गुट्टुवन्न के उनको दबाकर वळवन्न के शासन को स्थिर करने का वृत्तांत।	२७	११९	१२३
२९	उसके "मोहूर्" के "पळैयन्न" के रक्षित नीम के तरु को काटना यानी उसको अपदस्थ करना।	२७	१२४	१२५
३०	एक शेर राजा के यवन राज्य (सिंधु तटीय) जीत कर मेरु पर्वत के राज्य को भी अधीन कर लेने की कथा।	२८	१४१	१४२
३१	और एक शेरन्न के शत्रु के पर्व-गढ़ को वश में करने का वृत्तांत।	२८	१४३	१४४
३२	उस प्रसिद्ध शेर वंश में आये एक राजा का अयिरै पर्वत पर (या नदी के तट पर) रहती कोड्रवै देवी का दोनों समुद्रों के जल लाकर अभिषिक्त करना।	२८	१४५	१४६
३३	एक अन्य शेरन्न के चतुष्क भूतों को वंजि में लाकर सुरापान कराके सोमयज्ञ करने की बात।	२८	१४७	१४८

इनमें शुद्ध इतिहास की कथाएँ भी है और कल्पना द्वारा अतिरंजित की गयी कथाएँ भी है। साधारण पुरुष-स्त्रियों से संबंधित कहानियाँ सच्ची ही मानी जाती है।

अब हम इस प्रकरण को समाप्त करने के पहले उन कहानियो की ओर ध्यान दिलाना चाहते है जो मादवि के प्रसिद्ध ग्यारह नाट्यों का आधार है। वे श्रीकृष्ण, विष्णु, अर्धनारीश्वर शिवजी, पार्वती, मुरुगन्न, इंद्राणी आदि के सुर-शत्रु असुरो के संहार के अवसर पर आधारित पौराणिक घटनाएँ है, जो नृत्य द्वारा दरसायी जाती है। छठे अध्याय की उनचालीसवी पंक्ति से लेकर सड़सठवी पंक्ति तक के भाग में इन कहानियों का संकेत है।

सहायक स्रोत

मैंने अनेक स्रोतों से सहायता ली है जिनमें निम्नलिखित स्रोत मुख्य हैं।

टीका-व्याख्या सहित मूल ग्रंथः—

१ महामहोपाध्याय डा. उ. वे. स्वामीनाथय्यर का जिसमें अडियार्क्कु नल्लार की टीका के साथ अरुम्पदवुरै (कठिन शब्दार्थ) भी हैं;
२ सर आर् के षण्मुखम् चेट्टियार्-भूतपूर्व वित्तमंत्री, भारत सरकार, (जवाहर लाल के मंत्रिमण्डल में) का;
३ न. मु. वेंकटसामी नाट्टार् का;
४ पेरुमऴैप् पुलवर् का;
५ पुलियूर्क् केशिहन् का संपादित ग्रंथ।

अनुवाद ग्रंथः—

१ प्रो. वी. आर्. रामचंद्र दीक्षितर्-अंग्रेजी
२ डा. प्रो. शंकर राजुलु नायुडु-हिन्दी
३ आचार्य श्रीरामदेशिकन्-संस्कृत-केवल पहला काण्ड प्राप्त

अन्य सहायक पुस्तकेंः—

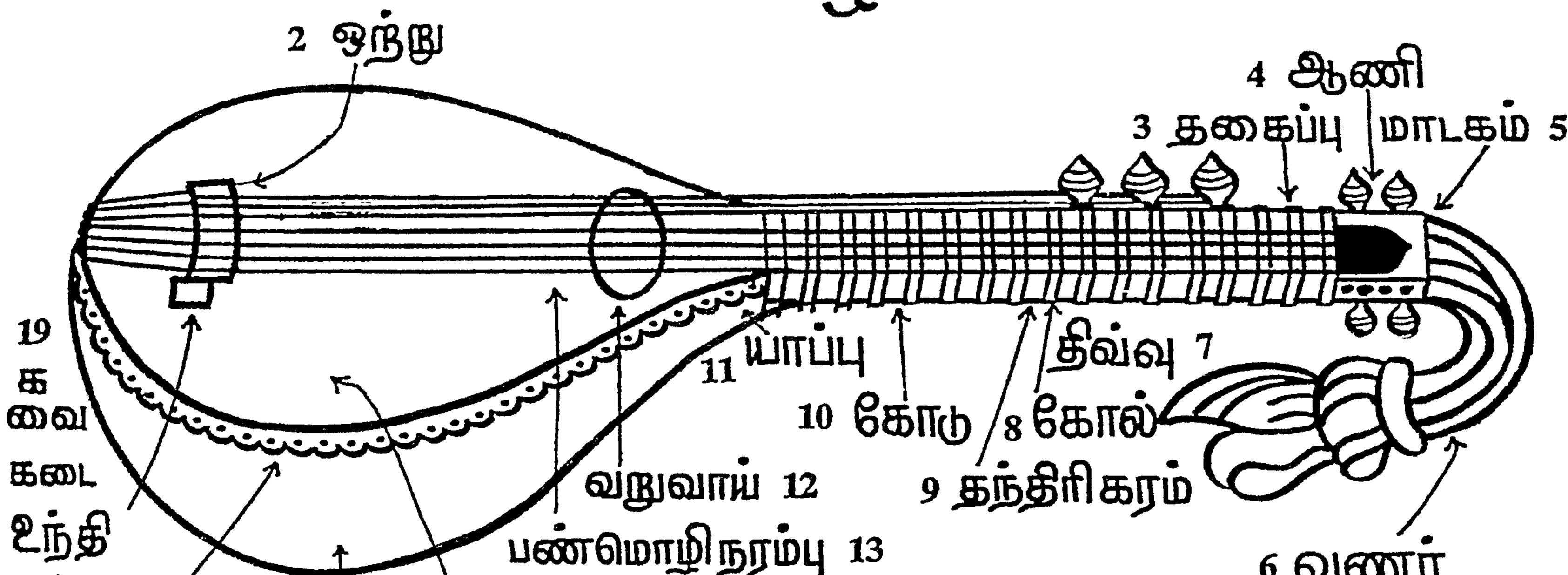
१ वरगुण पाण्डियन्-याऴ्-या पाणर् कै वऴि-तमिऴ्
२ डा. राजमाणिक्कनार्-तमिऴह वरलाऱुम् तमिऴर् पण्पाडुम्-तमिऴ्
३ डा. न. वि. जयरामन्-शिलप्पदिहारम्-छंद रचना-तमिऴ्
४ डा. शरच्चंद्र श्रीधर परांजपे-संगीत बोधः-हिन्दी

कई अन्य ग्रंथकारों के छुटपुट लेख ग्रंथ आदि

१ तमिऴ् इलक्कणत् तॆळिवु (तमिऴ् व्याकरण सरल बोधः) विद्वान मोसेस पोन्नैया
२ तमिऴ् इलक्किय वरलाऱ्ऱुक् कळञ्जियम्,

मधु. श. विमलाननदम् एम. ए.

उनके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रगट करता हूँ। उनसे क्षमा-याचना यह है कि मै उनका और अधिक उपयोग नही कर पाया।



1 याऴ्—(वीणा) 2 ओट्रु—श्रुति की तारें 3 तहैप्पु—अटी 4 आणि—खूंटियां 5 माडहम्—तारगहन 6 वणर्—वीणा का वक्रदण्ड भाग 7 तिववु—पर्वे 8 कोल्—अटी 9 तंदिरिहरम्—एक विशेष भाग 10 कोडु—डाण्ड 11 याप्पु—गुल्ल 12 वडुवाय्—खुला मुख सा भाग 13 पण् मौऴि नरम्बु—स्वर की तारें 14 पत्तल्—तूंबा 15 पोर्वै—तवली 16 आणि—कील् 17 नुण्तुळै—छोटे छिद्र 18 उन्दि—ब्रिज 19 कवै कडै—लंगोट ।

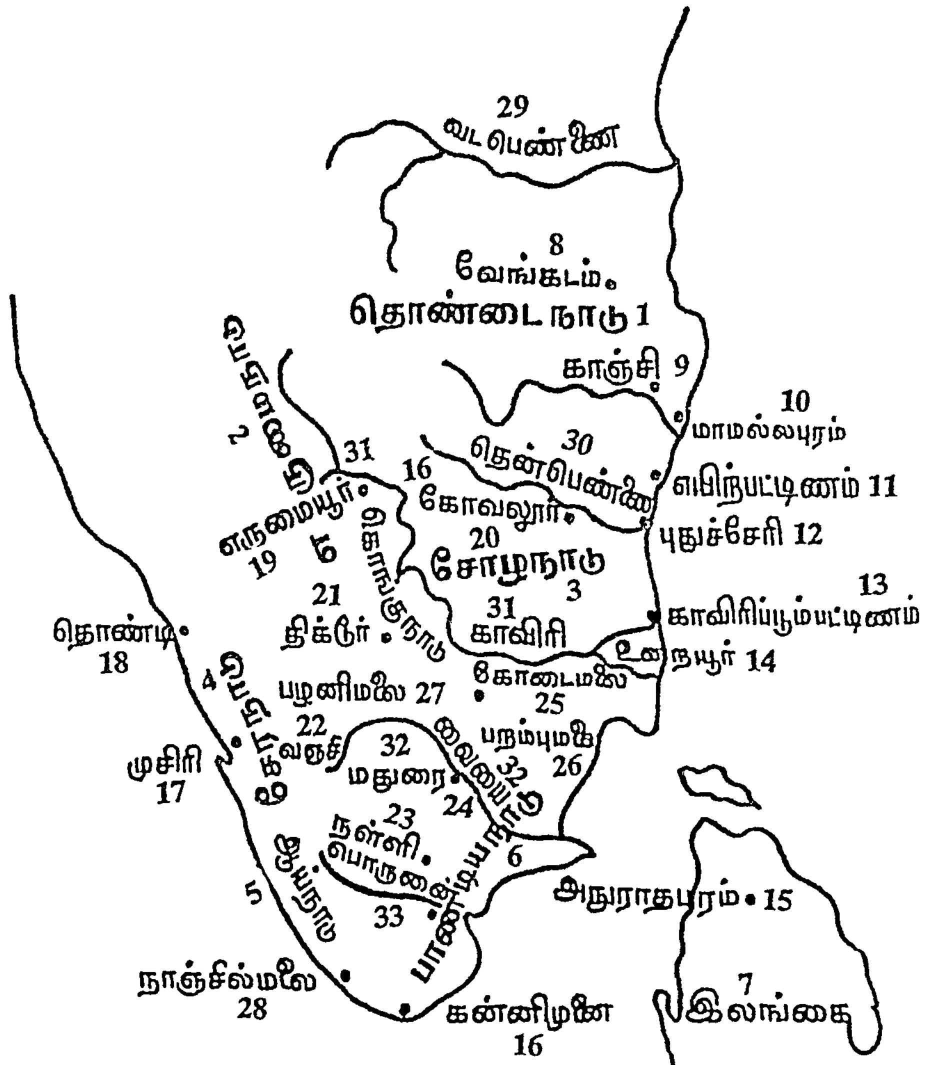
संघ कालीन तमिऴ् देश

देश नाडु—1 तॊण्डै नाडु 2 अॆरुमै नाडु 3 शोळ नाडु 4 शेर नाडु 5 आय् नाडु 6 पाण्डिय नाडु 7 इलङ्गै ।

नगर—8 वेङ्गडम् 9 काञ्जि 10 मामल्लपुरम् 11 ऍयिऱ्पट्टिणम् 12 पुदुच्चेरि 13 काविरिप्पूम्पट्टिणम् 14 उऱैयूर् 15 अनुरादपुरम् 16 कन्याकुमारी 17 मुशिरि 18 तॊण्डि 19 अॆरुमैयूर् 20 कोवलूर् 21 तिगडूर् 22 वञ्जि 23 नळ्ळि 24 मदुरै ।

पर्वत—25 कोडैमलै 26 परम्बुमलै 27 पळनिमलै 28 नाञ्जिल्मलै ।

नदियाँ—29 वड पॆण्णै 30 तॆन् पॆण्णै 31 काविरि 32 वैयै 33 पॊरुनै ।




भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी

भुवनग्रन्थ-गाथा
भु.वा.ट्र.
लखनऊ
भुवन सन्त-वाणी